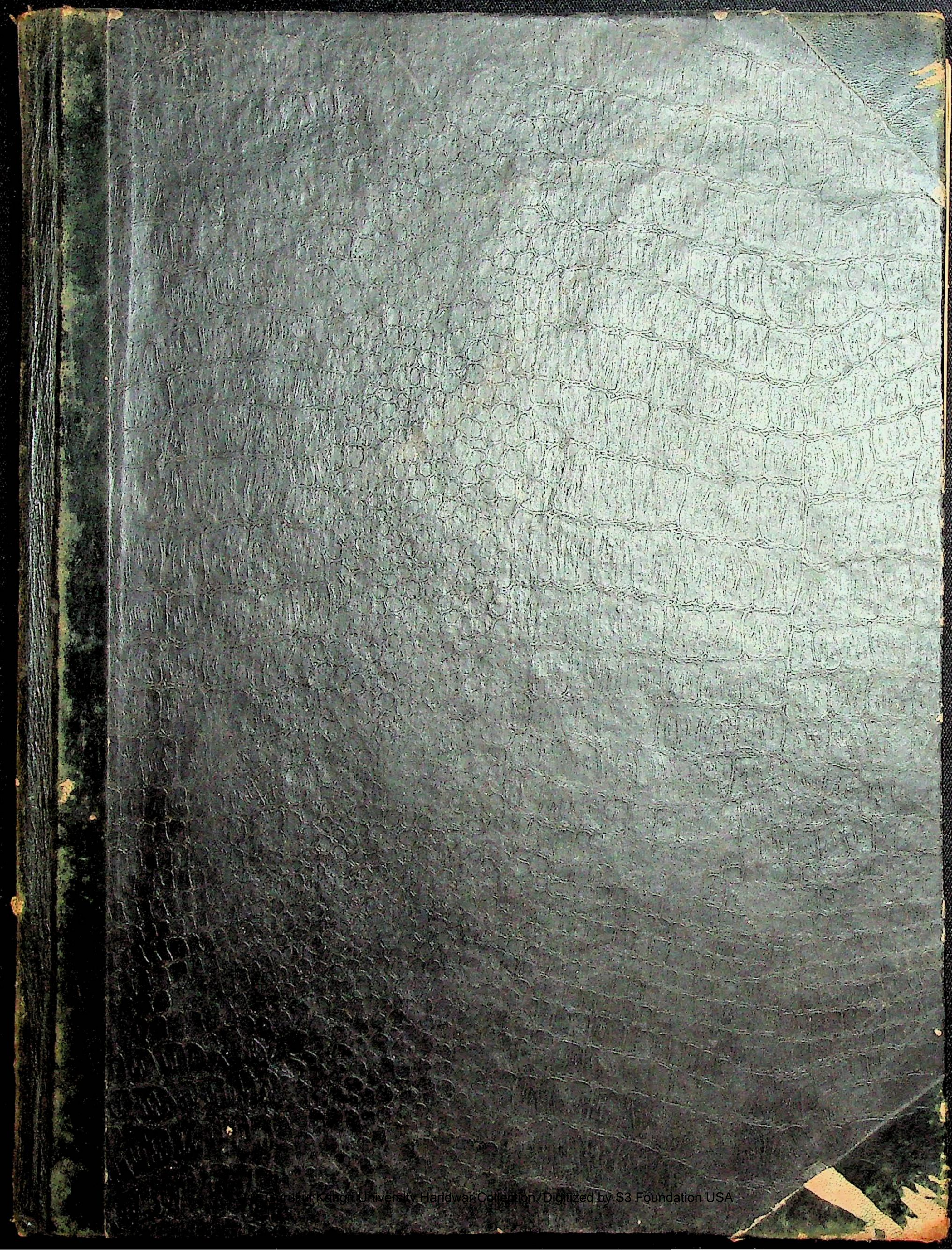


CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection / Digitized by S3 Foundation USA

GURUKUL PATRIKA APRIL-NOV 1956 G.K.U.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Mil-10
16 OCT 1999
D-4/51/78 Arm
NO
150861

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल पत्रिका



हमारे प्रधान मन्त्री

DIGITIZED C-DAC
2005-2006

वर्ष ९
अङ्क ४



मार्गशीर्ष
२०१३

## गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल-पत्रिका

पूर्णाङ्क १००

नवम्बर १९५६



व्यवस्थापक : श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादक समिति : श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति

श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार

श्री रामेश बेदी ( मन्त्री )


## इस अङ्क में



## अगले अङ्क में

| | |
|---|---|
| रामायण काल में भारतीय संस्कृति | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति |
| कालीदास का मथुरा-वृन्दावन वर्णन | श्री कृष्णदत्त वाजपेयी |
| वेद और गो-पालन | श्री प्रियव्रत वेदवाचस्पति |

अन्य अनेक विश्रुत लेखकों की सांस्कृतिक, साहित्यिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी रचनाएँ ।


मूल्य देश में ४) वार्षिक — एक प्रति

विदेश में ६) वार्षिक — छः आने



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ

# गुरुकुल-पत्रिका

[ गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका ]

भारतीय संस्कृति--३

## आर्यावर्त्त के आर्य

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

वह मनुष्य भारतवर्ष के वर्तमान को पूरी तरह नहीं समझ सकता, जो उस आदि काल के आर्यों को समझने का यत्न नहीं करता। आज के भारतवासी उन प्राचीन आर्यों के वंशज हैं, जिन्होंने युगों पहले भारत को आबाद किया था। बीच में व्यतीत हुए युगों में सहस्रों परिवर्तन हो गये। प्रकृति बदली और पुरुष भी बदला। नये-नये प्रभाव आये, और अपना अन्श छोड़ गये, परन्तु भारत को बसाने वाली आर्य जाति के वंशजों के मौलिक संस्कार नष्ट नहीं हुए। नये तथा मिश्रित प्रभावों की सतह के नीचे प्राचीन आर्यों की मौलिक भावनाएं आज भी विद्यमान हैं। यदि कोई व्यक्ति वर्तमान भारतवासियों की सभ्यता, संस्कृति और मनोवृत्ति को भली प्रकार समझना चाहता है तो उसे प्राचीनतम काल के इतिहास के पृष्ठों को खोल कर पढ़ना चाहिये। तभी वह वर्तमान को भली प्रकार समझ सकता है, अन्यथा सम्भावना यही है कि वह वर्तमान की परिधि के बाहर घूमता रहेगा। व्यतीतकाल के जिस पृष्ठ तक हमारी आँखें पहुंचती हैं, उस पर हम आर्य जाति का एक सरल और सुन्दर चित्र देखते हैं। उस चित्र को हम जहां एक ओर वेदों की ऋचाओं से पढ़ सकते हैं, वहां उत्तरकालीन भारतीय साहित्य की परम्पराओं से उस का अनुमान भी लगा सकते हैं। उस समय के आर्यों की धार्मिक, सामाजिक और नैतिक दशा वेदों के अनुकूल थी, अतः वेदों में उसका आभास मिल सकता है।

मैं इस स्थान पर प्राचीनतम आर्यों के जीवन का पूरा चित्र खींचने का यत्न नहीं करूंगा। वह इस लेखमाला के लक्ष्य से बाहर की बात है। यहां तो मैं उस जीवन से सम्बन्ध रखने वाली कुछ ऐसी बातों पर ही प्रकाश डालूंगा, जिन्हें हम आर्यत्व के मौलिक सत्य और अतएव भारतीय सभ्यता और भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व कह सकते हैं।

### आध्यात्मिक दृष्टिकोण

प्राचीन आर्य जीवन की सब से पहली और मुख्य विशेषता यह थी कि वह आध्यात्मिकता पर आश्रित था। आध्यात्मिकता से मेरा तात्पर्य यह है कि आर्य लोगों का दृढ़ विश्वास था कि जहां इस संसार में मनुष्य से ऊंची एक महती शक्ति है, जो इस का संचालन और नियन्त्रण करती है, वहां प्रत्येक मनुष्य में एक चेतन शक्ति विद्यमान है, जो उस के शरीर का संचालन और नियन्त्रण करती है। विश्व में ब्रह्म और शरीर में आत्मा की प्रभुता इसी को मैं आध्यात्मिकता के नाम से पुकारता हूं। प्राचीन आर्यों के विषय में हम जितना कुछ भी जान सके हैं, उस से यह परिणाम निकलता है कि आध्यात्मिकता उन के जीवनों की पृष्ठभूमि थी। वेदों का अध्ययन कीजिये। आप उन में बहुत कुछ पायेंगे। वह बहुत कुछ इतना अधिक है कि उस में भविष्य में होने वाली सब विद्याओं और प्रवृत्तियों के बीज प्रायः हो सकते हैं। उस बहुत के अन्दर जो एकता ओतप्रोत मिलेगी, वह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आध्यात्मिकता की है। आदि से अन्त तक आप अपने को एक परोक्ष शक्ति के दरबार में खड़ा पाते हैं। यही आध्यात्मिकता का सूक्ष्म रूप है। प्राचीनतम आर्यों की विचारधारा में आध्यात्मिकता ऐसे व्याप्त है, जैसे अन्तरिक्ष में वायु।

आध्यात्मिकता को आप अच्छा कहें या बुरा, आप को यह स्वीकार करना पड़ेगा कि प्राचीनतम भारतीय संस्कृति की सब से प्रकट और नित्य सचाई उस की आध्यात्मिकता है, यदि आप इस सचाई को भुला कर भारतवर्ष के इतिहास को या वर्तमान को समझना चाहते हैं, तो आप अवश्य धोखा खायेंगे।

## अनेकता में एकता

प्राचीनतम आर्य साहित्य के पढ़ने से हम जिस परिणाम पर पहुंचते हैं, वह यह है कि आर्य लोग संसार में अनेकता और एकता दोनों की सत्ता को स्वीकार करते थे। वे मानते थे कि इस ब्रह्माण्ड को चलाने वाली शक्तियां अनेक हैं—सूर्य, चन्द्र, पवन, विद्युत, जल आदि अनेक भौतिक शक्तियां हैं, जिन के आध्यात्मिक नाम आदित्य, सोम, वायु, चन्द्र, वरुण आदि हैं। ये अनेक शक्तियां अपने आप में अलग होती हुई भी वस्तुतः उस एक देव देवाधिदेव की शक्ति से ही अनुप्राणित हैं। और अतएव इन भौतिक शक्तियों के जो आध्यात्मिक नाम हैं, वे उस देवाधिदेव परम-पुरुष के भी नाम हैं।

'इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुः
अथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान्,
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति
अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः।'

इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, सुपर्ण, गरुत्मान्, यम, मातरिश्वा आदि अनेक नाम उसी एक के हैं। वह एक है, विप्र लोग उसे विविध नामों से पुकारते हैं। संसार में विचारों की, प्रवृत्तियों की और शक्तियों की अनेकता तो है ही, जो उस अनेकता को भुला देता है, वह संसार के वास्तविक रूप को ही भुला देता है। श्रेष्ठता उस वास्तविकता की उपेक्षा कर देने से नहीं, अपितु इस सत्य को समझ लेने में है कि संसार में विद्यमान सब शक्तियों को एक सूत्र में पिरोने वाली उन का समन्वय करने वाली और उन का संचालन करने वाली शक्ति एक है, जो सब शक्तियों की स्वामिनी आदि शक्ति और परम शक्ति है। अनेकता को अङ्गीकार करना और उस अनेकता को एकता के सूत्र में पिरोने वाली एक शक्ति पर विश्वास रखना यह आर्य जाति की जन्मसिद्ध विशेषता है। बाहर के जो लोग भारत-वासियों की धार्मिक उदारता को देख कर आश्चर्यित होते हैं, वे यदि भारतीय संस्कृति के आदिस्रोत्र की ओर जा कर देखें, तो उन्हें कुछ भी आश्चर्य नहीं होगा।

## संघर्षमय जीवन

आदियुग के साहित्य को देखने से यह बात स्पष्ट प्रतीत होती है कि उस समय के आर्यों का जीवन संघर्षमय था। उन का संघर्ष दुतरफी था। इधर प्रकृति से लड़ाई, और उधर पुरुष से लड़ाई। गर्मी, सर्दी, तूफान, बादल, अति वृष्टि, अनावृष्टि, हिंसक जन्तु और कृमि, सारांश यह है कि सभी प्रकार के प्राकृतिक उत्पातों से लड़ना पड़ता था, और साथ ही दुश्मनों से अपने को बचाना पड़ता था। बहुत से विदेशी विद्वानों का मत है कि दस्यु या दास किसी जाति विशेष के लोगों का नाम था। यह उन की भूल है। जो आर्य धर्म से विमुख हो कर जाति के शत्रु बन गये थे, यज्ञों का ध्वंस करते और लूटमार का व्यापार करते थे, वही दस्यु, दास आदि नामों से निर्दिष्ट किये जाते थे। उन से आर्यों का निरन्तर संघर्ष चलता रहता था। आर्य लोग ईश्वर विश्वासी थे। वे ईश्वर और उस की शक्तियों को अपना सहायक मानते थे। शक्तियों को वे देव या देवता के नाम से निर्दिष्ट करते थे और ईश्वर को देवाधिदेव के नाम से। प्रकृति और पुरुष के निरन्तर संग्राम का ही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परिणाम है कि हम प्राचीन आर्यों के सम्पूर्ण साहित्य में देवासुर संग्राम की चर्चा पाते हैं। उन की प्रार्थनायें उस घोर संघर्ष की सूचना देती हैं।

यह विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि प्राचीनतम आर्य इस समय-समय के निरन्तर जीवन संग्राम से कभी घबराए हुए या परास्त नहीं प्रतीत होते। हम सदा उन्हें शत्रुओं पर विजयी होने के लिए सन्नद्ध देखते हैं, 'विजय' उन का मूल मन्त्र था, तभी तो उन्होंने पहले हिमालय की घाटियों पर स्वर्ग राज्य की स्थापना की, फिर वहां से भूमि पर उतरे, तो पर्वती नदियों और घने जंगलों को पार करते और दस्युओं तथा राक्षसों को जीतते हुए समुद्र तक फैल गये। विजय और सफलता उन की नसनस में व्याप्त थी।

## राष्ट्र संगठन

वैदिक काल के राजनीतिक संगठन की एक सुन्दरता है। मध्य काल में राजा और प्रजा की जो भावना उत्पन्न हो गई थी, वह हमें अत्यन्त प्राचीन साहित्य में नहीं मिलती। उस समय प्रजा सन्तान को कहते थे। प्रजा शब्द का शब्दार्थ है भी यही। जिसे मध्यकालीन भारत में प्रजा के नाम से निर्दिष्ट किया गया है, उसे वैदिक काल में 'विशः' या और उन के समुदाय को 'राष्ट्र' कहा जाता था। 'राष्ट्र' की कल्पना अत्यंत प्राचीन है। उसे आदि कल्पना कहें तो अनुचित नहीं होगा। जब तक राष्ट्र छोटा रहा जब तक वह हिमालय और उस की घाटियों तक परिमित रहा तब तक उस का एक ही राजा 'इन्द्र' राजा रहा, परन्तु जब आर्य लोग सप्तसिन्धु में उतर आये तब राष्ट्र तो एक ही रहा, परन्तु उस के अनेक खण्ड हो गये, जिन के शासक राजा नृप आदि नामों से सम्बोधित होते थे। राजाओं की इस अनेकता में एकता की शृङ्खला बांधने वाला एक सम्राट् होता था, जो अपनी वीरता और धीरता के कारण उस पद को प्राप्त करता था। सम्राट का पद कुल क्रमागत नहीं होता था। जो क्षत्रिय राजसूय अथवा अश्वमेध यज्ञ द्वारा अपनी शक्ति को सिद्ध कर देता था, वही चक्रवर्त्ती सम्राट् की पदवी से विभूषित हो जाता था। वह सम्राट् आर्य राष्ट्र की एकता का रक्षक और भक्त एवं प्रतीक समझा जाता था।

## चातुर्वण्य

'चातुर्वण्य' की कल्पना प्राचीन आर्यों की सब से अधिक महत्वपूर्ण कल्पना थी। उस कल्पना को यदि मध्यकाल या वर्तमान काल की जातपांत की ऐनक लगा कर देखेंगे तो वह एक नितान्त भद्दी और घातक वस्तु प्रतीत होती है, परन्तु यदि प्राचीनतम वैदिक साहित्य में उस के विशुद्ध रूप का अन्वेषण करें, तो हम उस की सुन्दरता और व्यापकता पर मुग्ध हो जायेंगे। सम्पूर्ण मनुष्य समाज को कर्मानुसार चार बड़े भागों में बांट दिया गया है। वे भाग हैं—ज्ञान, शक्ति, धन, और सेवा। इन चारों के समन्वय से समाज चलता है। ये चार विभाग कर्मानुसार थे, जन्मानुसार नहीं। भगवद्गीता में कहा है—'चातुर्वर्ण्यं मया सष्टं गुणकर्म विभागशः।' गुणकर्मानुसार बनाये हुए वर्णविभाग में न किसी कापक्षपात था, और न किसी के साथ अन्याय। ब्राह्मण कुकर्म करके शुद्र बन सकता था और शुद्र ज्ञान और कर्मों द्वारा ब्राह्मण पदवी तक पहुंच सकता था। ब्राह्मण जानता था कि यदि मैं अपने योग्य कर्म न करूंगा, तो पतित हो जाऊंगा और शूद्र को विश्वास था कि विद्या और द्वारा मैं ब्राह्मण पदवी को प्राप्त कर सकता हूं। समाज में गुणों की प्रतिस्पर्धा थी, जो मनुष्य की सर्वोत्तम प्रतिस्पर्धा है। आज की दशा को देख कर प्रतीत होता है कि जातिबन्धन हमारी जाति का सब से बड़ा अभिशाप है, परन्तु जब तब चातुर्वण्य गुण कर्मों पर आश्रित था, तब तक आर्य जाति का सब से बड़ा वरदान था।

यह है मोटे शब्दों में वैदिक काल के आर्यों का एक सरल सा रेखाचित्र। उस चित्र में हम एक ऐसी जाति की झलक देखते हैं, जिस ने अपनी दुर्दान्त इच्छा शक्ति, अदम्य साहस और अनन्त विजय कामना के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बल से प्रारम्भ काल के प्राकृतिक और मानुषिक विघ्नों पर विजय प्राप्त कर के संसार में सभ्यता और संस्कृति का श्री गणेश किया है। वे मनुष्य जाति के पथप्रदर्शक और गुरु थे। वह युगों अनवरत बहती हुई ज्ञानगंगा के भागीरथ थे। यह हमारा सौभाग्य है कि हम उन के वशज हैं। संसार क्या कहता है, इसे भूल जाओ। हम में से जो लोग अज्ञानवश अपने इतिहास को भुला देने का उपदेश देते हैं, उन की भी बात मत सुनो। आओ, संसार विजय का संकल्प कर के विजय पर विजय प्राप्त करने वाले देवाधिदेव के पुजारी उन अपने पूर्वज आर्यों के सामने मस्तक झुका कर, हम प्रतिज्ञा करें कि हम उन के योग्य उत्तराधिकारी बनने का यत्न करेंगे। यदि हमारा संकल्प दृढ़ है, और आशय उत्तम है तो दुनिया की कोई शक्ति हमें विजयी होने से नहीं रोक सकती।



## सात नये तत्वों की खोज होने की सम्भावना

संसार के प्रमुख तत्व-अन्वेषक डा० ग्लैन टी० सीबौर्ग ने यह भविष्यवाणी की है कि आगामी ५ से १५ वर्षों तक सात नये तत्वों के निकल आने की संभावना है। कैलिफार्निया विश्वविद्यालय से इस वैज्ञानिक ने प्लूटोनियन तत्व की खोज में हाथ बटाया था। आपने कहा कि मेरा अभिप्राय यह है कि तब तत्वों की संख्या १०२ से १०८ तक पहुंच जायेगी।

डा० सीबौर्ग ने कहा कि कैलिफोर्निया विश्वविद्या- में आजकल जो नई किस्म का अणु-विखण्डन यन्त्र तैयार हो रहा है सम्भवतः उसी की सहायता से इन तत्वों को तैयार किया जायेगा। इस मशीन 'हिलेक' या ( हैवी आयन लाइनीयर एक्सेलरेटर ) कहा जाता है। यह मशीन 'नीओन' ( बिना रंग का, गैस वाला तत्व ) की तरह के हैवी न्यूक्लियाई या अणु-केन्द्र में– जिस का आणविक वजन २० होता है–तेजी पैदा कर देती है।

इन बड़े अणु-केन्द्रों को यूरेनि न की तरह के जब भारी अणुओं के केन्द्रों पर फेंका जाता है तब नये और भारी तत्वों का निर्माण सम्भव हो सकता है। हल्के वजन की आणविक गोली की सहायता से वैज्ञनिकों ने १९५५ में तत्वों की संख्या १०१ तक पहुंचा दी है। नये तत्व अणु की बनावट के बारे में हमारी जानकारी में वृद्धि करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

—

## पृथ्वी के जलवायु में परिवर्तन

क्या पृथ्वी का जलवायु बदल रहा है? हां, कुछ भूभौतिक शास्त्रियों का विचार है कि लगभग १९०० से पृथ्वी का जलवायु धीरे-धीरे गर्म होता जा रहा है और पिछले ५० वर्षों में पृथ्वी की उष्णता लगभग २. २ डिग्री फारेनहाइट बढ़ गई है। इस परिवर्तन का कारण यह बताया जाता है कि एशिया के धुर उत्तर की इन बर्फीली चोटियों की बर्फ पिघलने लगी है जहां की बर्फ पहले कभी नहीं पिघलती थी। इस के अलावा बर्फीला क्षेत्र और उत्तर की ओर सिकुड़ता जा रहा है। वैज्ञानिक अब इस बात की खोज में हैं कि यह परिवर्तन केवल उत्तरी गोलार्ध में ही हो रहा है या दक्षिणी गोलार्ध में भी। कई देशों के वैज्ञानिक, इस के लिए अटार्कटिक महासागर में ऋतुपर्यवेक्षण केन्द्र स्थापित करने की योजना कर रहे हैं।

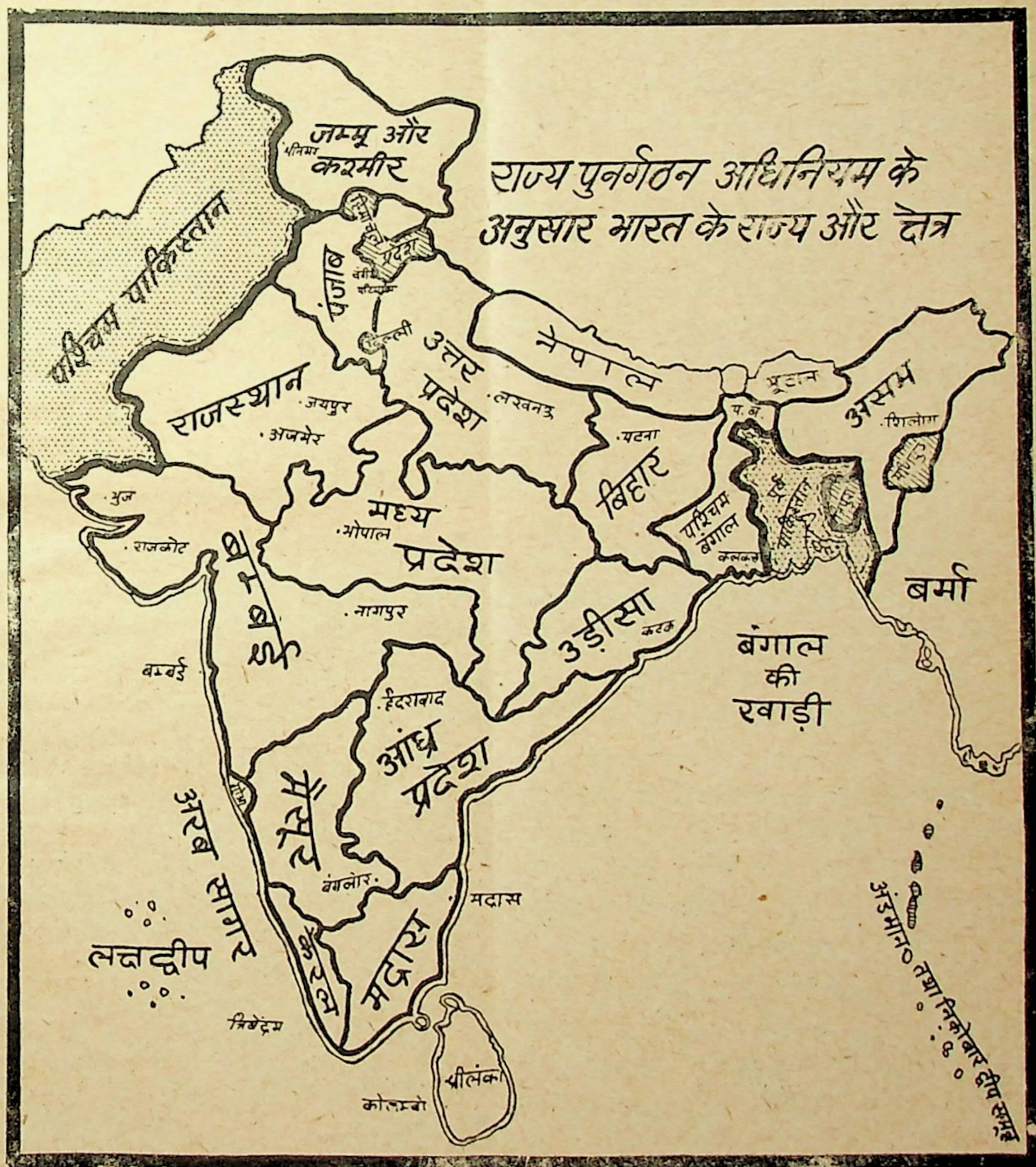
अभी तक पृथ्वी की गर्मी बढ़ने का कारण ठीक ठीक नहीं पता लग सका है। कुछ ऋतुविशेषज्ञों का विचार है कि वायुमंडल में कारबन डाइआक्साइड के बढ़ने से ऐसा हो रहा है। और कारबन डाइआक्साइड प्रति वर्ष उस करोड़ों मन कोयले और तेल से बनता है जो हम लोग फूंकते हैं। ——

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# भारत का नया मानचित्र

राज्य पुनर्गठन आयोग अधिनियम और बिहार-पश्चिम बंगाल ( क्षेत्रहस्तांतरण ) अधिनियम के अनुसार १ नवम्बर १९५६ से भारत में १४ राज्य हो गए। इन के नाम हैं : आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, बम्बई,

## भारत का नया नक्शा




CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जम्मू-कश्मीर, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, केरल, मध्य प्रदेश, मद्रास, मैसूर और उड़ीसा। इन राज्यों के अलावा ये ६ केन्द्र शासित प्रदेश होंगे : अन्दमान और निकोबार द्वीप, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, लक्षद्वीप और अमीन द्वीप, मणिपुर और त्रिपुरा।

राज्यप्रमुखों का पद समाप्त हो जाएगा और सब राज्य एक ही श्रेणी के होंगे अर्थात् 'क' 'ख' 'ग' श्रेणीवाला वर्तमान भेद अब नहीं रहेगा।

राज्यों का क्षेत्रफल और जन संख्या इस प्रचार होगी :

| राज्य | क्षेत्रफल (वर्गमीलों में) | जन संख्या (१९५१ जनगणना के अनुसार) |
|---|---|---|
| आंध्र प्रदेश | १,०५,९६२ | ३,१२,५९,८१५ |
| असम | ८५,०१२ | ९०,४३,७०७ |
| विहार | +६७,३०० | +३,८८,२७ ५१७ |
| बम्बई | १,९० ९१९ | ४,८२,६५,१२० |
| जम्मू-कश्मीर | ९२,७८० | ४४,००,००० |
| केरल | १५,०३५ | १,३५,४९,११८ |
| मध्य प्रदेश | १,७१,२०१ | २,६०,९५,६८० |
| मद्रास | ५०,११० | २,९९,७४,९३६ |
| मैसूर | ७४,३४७ | १,९४,०१, १२ |
| उड़ीसा | ६०,१३६ | १,४६,४५,९४६ |
| पंजाब | ४७, ५६ | १,६१,३४,८९० |
| राजस्थान | १,३२,०७८ | १,५९,४६,७३१ |
| उत्तर प्रदेश | १,१३,४०९ | ६,३२,१५,७ २ |
| पश्चिम बंगाल | +३३,८०९ | +२,६२,५८,६४७ |

+ = लगभग



# गुर्दे की आणविक परीक्षा

कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के चिकित्सा-केन्द्र द्वारा गुर्दे की क्रिया को जानने के लिए एक आणविक परीक्षा की खोज की गई है। इस परीक्षा में रोगी को कोई विशेष कष्ट नहीं होता और यह परीक्षा डाक्टर बड़ी आसानी और आराम से अपने कमरे में ही कर सकता है।

प्रचलित विधियों के अन्तर्गत गुर्दे की परीक्षा में एक्स-रे और निदान-कार्य के लिए खास किस्म की शल्य-क्रिया ( चीर-फाड़ ) की जरूरत पड़ती है। इन कार्यों में बहुत समय लगता है। रेडियो-सक्रिय आयोडीन के प्रयोग से ये सब परेशानियां दूर हो गई हैं।

आणविक परीक्षा विधि के अन्तर्गत रेडियो-सक्रिय आयोडीन के साथ 'डायोड्रास्ट' नामक एक पदार्थ प्रयुक्त किया जाता है। 'डायोड्रास्ट' शरीर में किस प्रकार काम करता है, यह बात रेडियो-सक्रिय आयोडीन की सहायता से पूरी तरह पता चल जाती है। इस कार्य के लिए 'सिण्टेलेशन काउण्टर' नामी उपकरण प्रयोग किया जाता है। 'डायोड्रास्ट' को सुई द्वारा नस में प्रविष्ट किया जाता है। 'सिण्टेलेशन काउण्टर' नामी उपकरण को गुर्दे के ऊपरी भाग पर रख कर रेडियो-सक्रियता को नापा जाता है और इस तरह गुर्दे द्वारा सोख ली जाने वाली 'डायोड्रास्ट' की मात्रा के बारे में पता चल जाता है।

इस के साथ ही रेनग्राम्स नामी विद्युदगुओं की सहायता से नक्शा तैयार करने वाले यन्त्र से प्रत्येक गुर्दे की रक्त प्रदान करने की शक्ति और उस की क्रिया के बारे में पता चल जाता है। यह बात भी पता चल जाती है कि गुर्दे का मार्ग खुला है या पत्थरी रसौली या किसी प्रकार के संक्रामक रोग से यह मार्ग बन्द हो गया है। —आज का अमेरिका।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# वेद और स्त्रियों की सामाजिक स्थिति

श्री प्रियव्रत वेदवाचस्पति

इस लेख में हम दिखायेंगे कि वैदिक धर्म में स्त्री की कुटुम्ब से बाहर की सामाजिक स्थिति किस प्रकार की रक्खी गई है।

## परदा नहीं है

यहां प्रारम्भ में ही यह स्मरण रख लेना चाहिये कि वैदिक धर्म में परदे की जगह नहीं है। विवाह के बाद जब वधू पहले-पहल पति-घर में आती है तो पति-ग्राम के लोगों से पति घर के वाले कहते हैं--"यह कल्याण मङ्गल बढ़ाने वाली वधू हमारे घर में आयी है, आओ इसे देखो।" परदे का न होना स्त्री के सामाजिक जीवन की एक भारी रुकावट को हटा देता है। इस के न रहने से उस का समाज में स्वच्छन्दता से मिलना और विचरना बहुत कुछ आसान हो जाता है।

## स्त्रियां राजा भी बन सकती हैं

किन्तु वेद यहीं तक नहीं ठहरा है। अगर हम ऋषि दयानन्द कृत ऋग्वेद और यजुर्वेद के भाष्यों को उठा कर देखें तो हमें वहां स्त्री की सामाजिक स्थिति के सम्बन्ध में जो कुछ मिलता है वह अद्भुत है। वहां हम देखते हैं कि एक स्त्री चाहे तो सेना या पुलिस का सिपाही बन सकती है, प्राड्विवाक अर्थात् वकील बन सकती है, उपदेशक, अध्यापक और व्याख्याता बन सकती है, यहां तक कि वह एक देश की राष्ट्रपति या राजा भी चुनी जा सकती है। वेदों का स्वाध्याय जिन्होंने गम्भीरता से किया है उन्हें पता है कि वेद के राजनैतिक प्रकरणों में राष्ट्र का प्रबन्ध ठीक ढंग से चलाने के लिये प्रत्येक राज्य में "सभा" और समिति नाम की दो नियामक सभाओं के स्थापित करने की आज्ञा है। इन में समिति नामक सभा ऊंची और अधिक शक्तिशाली होती है। अथर्व० ७। ३८। ४ और १२। ३। ५२ में क्रमशः सभा और समिति में जा कर स्त्रियों के भाग लेने और बोलने का वर्णन आया है। जब कोई स्त्री सभा और समिति में जाने के लिये चुनी जा सकती है, तो वह राष्ट्र के किसी भी ऊंचे से ऊंचे पद को सुशोभित करने के लिये भी चुनी जा सकती है, यह स्पष्ट ही है। यजुर्वेद के बीसवें अध्याय के प्रथम दस मन्त्रों में राजा के राज्यारोहण का वर्णन है। इन मन्त्रों में राज्यासीन हो रहा राजा अपने एक आलङ्कारिक शरीर का वर्णन कर रहा है। वह कह रहा है कि मैं राज्यासीन हो कर अपने राष्ट्र में अमुक-अमुक कल्याण-मङ्गल के कार्य करूंगा। वह अपने द्वारा राज्य में किये जाने वाले इन मङ्गल कार्यों के साथ अपने आप को तन्मय कर लेने की भावना व्यक्त करता है। इस तन्मयता की भावना को प्रकट करने के लिये वह राज्य में अपने द्वारा किये जाने वाले एक-एक कार्य को गिना-गिना कर उसे अपने शरीर का एक-एक अङ्ग बताता जाता है। वह रूपक से प्रजा के कल्याण के लिये किये जाने वाले कार्यों को ही अपना शरीर बना लेता है। इस रूपक का अभिप्राय यह है कि राजा यह बताना चाहता है कि राज्यासीन हो जाने के पश्चात् मुझे अपने शरीर के सुख-आराम की चिन्ता नहीं होगी, मुझे तो प्रजा के भांति-भांति के कल्याण करने की ही चिन्ता होगी, अब से प्रजा का कल्याण भी मेरा स्वरूप हो जायगा। राजा-प्रजा कल्याण-रूप शरीर के अपने इस रूपक में पुरुष शरीर के सब अङ्गों को तो गिनता ही है, वह स्त्री के विशेष अङ्ग को भी गिनता है। राजा के शरीर के इस रूपक में पुरुष के विशेष अङ्ग के साथ स्त्री के विशेष अङ्ग को गिनने का स्पष्ट रूप में यह संकेत है कि जिस प्रकार कोई पुरुष राजा चुना जा सकता है उसी प्रकार कोई स्त्री भी राजा चुनी जा सकती है और जैसे राजा चुने गये किसी पुरुष को प्रजा के कल्याण में तन्मय हो जाना चाहिये उसी प्रकार राजा चुनी गई स्त्री को भी प्रजा के कल्याण में तन्मय हो जाना चाहिये। यजुर्वेद के इस वर्णन से यह स्पष्ट है कि पुरुषों की भांति स्त्रियें भी राजा या राष्ट्रपति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चुनी जा सकती हैं। पाठकों को यह सदा स्मरण रखना चाहिये कि वेद में निर्वाचन की राज-पद्धति को ही स्वीकार किया गया है आनुवंशिक एकतन्त्र राजपद्धति को नहीं।

## सामाजिक आकांक्षा

यहां ऋग्वेद के १० वें मण्डल के १५९ वें सूक्त का सारांश दिया जाता है। वैदिकधर्म में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति को समझने में उस से अच्छी सहायता मिलेगी। एक गृहपत्नी प्रातःकाल उठते ही अपने उद्गार कहती है--"यह सूर्य उदय हुआ है, इस के साथ ही मेरा सौभाग्य भी ऊंचा चढ़ निकला है। मैं अपने घर और समाज की ध्वजा हूं, उस की मस्तक हूं। मैं भारी व्याख्यात्री हूं। मेरे पुत्र शत्रु विजयी हैं। मेरी पुत्री संसार में चमकती है। मैं स्वयं दुश्मनों को जीतने वाली हूं। मेरे पति का असीम यश है। मैंने वह त्याग किया है जिस से इन्द्र ( सम्राट् ) विजय पाता है। मुझे भी विजय मिली है। मैंने अपने शत्रु निःशेष कर दिये हैं--।"

वेद के इस सूक्त की व्याख्या की आवश्यकता नहीं है, वह स्वयं अत्यन्त स्पष्ट है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वैदिकधर्म में स्त्री की सामाजिक स्थिति पर किसी भी प्रकार की रुकावट नहीं है। वह जो कुछ भी चाहे बन और कर सकती है। उसे अपनी शक्ति को विकसित कर के संसार में कुछ भी बनने और करने का अधिकार है जो कि पुरुष बन और कर सकता है। उस के सब क्षेत्रों में अधिकार पुरुष के समान हैं। जो कुछ पुरुष प्राप्त कर सकता है वह स्त्री भी प्राप्त कर सकती है। जहां मनुष्य पहुंच सकता है वहां स्त्री भी पहुंच सकती है। दोनों के अधिकार समान हैं।

जहां तक स्त्री के अधिकारों का प्रश्न है वहां तक उन्हें कोई हड़प नहीं कर सकता। एक स्त्री अपनी इच्छा और शक्ति के अनुसार जो कुछ बनना चाहे बन सकती है। उसे रोका नहीं जा सकता। प्रत्युत समाज को उस की रक्षा करनी होगी।

## एक महान् कर्तव्य

परन्तु यदि हम स्त्री-पुरुष सम्बन्धी वेद के सारे प्रकरणों को मिला कर पढ़ें और उन की भिन्न-भिन्न शिक्षाओं का समन्वय करें तो हमें उन से एक विशेष निर्देश निकलता प्रतीत होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि मानों वेद स्त्रियों की सेवा में एक डेपुटेशन ले जाते हों और उन से कहते हों कि देवियो ! अधिकार और हक की दृष्टि से तुम सर्वथा पुरुषों के समान हो तुम्हारे हक छीने या रोके नहीं जा सकते। तुम जो चाहो बन सकती और कर सकती हो। इस में तुम्हारी सहा-की जायेगी। परन्तु हम तुम्हें आफिस की कुर्सियों, न्यायाधीशों के मंचों और राष्ट्रपतियों के सिंहासनों की की ओर जाने से जान-बूझ कर मना करना चाहते हैं। हम इन सब कामों से ऊंचा एक काम तुम्हारे सिपुर्द करना चाहते हैं उसे तुम्हीं कर सकती हो। पुरुष उसे नहीं कर सकते। वह काम है मनुष्य-समाज को सच्चे और वास्तविक मनुष्य पैदा कर के देना।

सज्जनो ! आज हमें घोड़ों की नस्ल की उन्नति करने के लिये अश्व-विशेषज्ञ की आवश्यकता है, हम उन्हें तैयार करते हैं। गौओं की नस्ल और कुत्ते-बिल्लियों की नस्ल को उन्नत करने के लिए गो-विशेषज्ञ, कुत्ता-विशेषज्ञ और बिल्ली-विशेक्षज्ञों की आव-आवश्यकता है, और हम उन्हें तैयार करते हैं। किंतु आज हम मनुष्यों की नस्ल को उन्नत करने के लिये मानव-विशेषज्ञों की आवश्यकता का अनुभव नहीं करते हैं। वेद कहता है कि देवियो तुम ! मनुष्यों की नस्ल को उन्नत करने वाले मानव-विशेषज्ञों का काम करो। मनुष्य-समाज को सच्चे मनुष्य तैयार कर के देना मनुष्य समाज की सब से भारी सेवा और सब से पवित्र काय है।

आप वेदों को पढ़ जाइये। वहां विवाह का एक मात्र उद्देश्य लम्पटता से बच कर सन्तान उत्पन्न करना बताया गया है। स्थान-स्थान पर स्त्री के लिये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रजावती, पुत्रवती, प्रजाकामा वीरसूः आदि विशेषणों का प्रयोग हुआ है। पचासों जगह उस से उत्तम सन्तान देने की प्रार्थनाएँ की गई हैं। वेद विवाह का प्रयोजन सन्तानोत्पत्ति बताते हुए स्त्रियों से इस प्रयोजन को विशेष रूप से पूरा करने का आग्रह क्यों करते हैं यदि यह जानना हो तो हमें ऋग्वेद के १० वें मण्डल का ४७ वां सूक्त उठा कर देखना चाहिये। उस सूक्त में सन्तान के अभिलाषी परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभो ! हमें अमुक-अमुक गुणों वाली सन्तान दी जये। आप के विनोद के लिये उस सूक्त का सारांश यहां दिया जाता है--'हे परमात्मन् ! हम आप से एक धन मांगते हैं। वह धन है, सर्वगुणसंपन्न सन्तान। आप तो सभी धन देने वाले हैं। हम ने आप का दाहिना हाथ पकड़ लिया है। आप हमें गोपति, आयुधारी, रक्षा देने वाले, सन्मार्ग पर ले चलने वाले, क्रियाशील, भारी-भारी आपत्तियों से बचाने वाले, वेदज्ञ, देवों के गुणवाले, लम्बे-चौड़े सुडौल शरीर वाले, गम्भीर, ऋषियों की आज्ञा सुनने वाले, उग्र, दुश्मनों का पराभव करने वाले, बल और अन्न के रक्षक, वीर, पार लगाने वाले, धनदाता, सुदक्ष, दस्युहन्ता, शत्रुओं के नगरों का भेदन करने वाले, सत्यशील, घोड़ों वाले, रथों वाले, वीरों वाले सैकड़ों और हजारों शक्तियों वाले, बलिष्ठ, सदाचारी लोगों से घिरा रहने वाले, सुख में रहने वाले और सुख देने वाले, पूर्णशक्ति से युक्त सातों इन्द्रियों वाले, व्रत को धारण करने वाले, सुमेधा, बृहस्पति अर्थात् बड़ों-बड़ों के रक्षक या ज्ञानी, औरों को बुद्धि देने वाले, लोगों को सब से बढ़ कर आश्रय और सहायता दे सकने वाले पुत्र-रूप धन को हमें दीजिये। हम आप से हृदय से प्रार्थना करते हैं।' सूक्त द्वारा प्रार्थना करने वाला मानो गुणावली गिनाते-गिनाते थक जाता है पर उस का सन्तोष नहीं होता। आखिर वह दो विशेषण प्रयुक्त करता है—'चित्रं वृषणम्'--अद्भुत और वर्षा करने वाला। 'चित्र' या अद्भुत में वे सारे गुण आ जाते हैं जो कि यहां गिनाये नहीं जा सके, और 'वृषण' या वर्षं करने करने वाला विशेषण सन्तान में अभिलषित सारी परोपकार-भावनाओं की सूचना दे देता है। सूक्त के शब्दों में जो रस, सुन्दरता और भाव हैं उन्हें हम अपने शब्दों में नहीं ला सके हैं। जब इतनी ऊंची सन्तान प्राप्त करना हमारा ध्येय हो तो उस के लिये हमें विशेष यत्नशील होना पड़ेगा। मनुष्य-समाज को मनुष्यों का समाज रखने के लिये हमें उत्कृष्ट सन्तान की कितनी आवश्यकता है यह आसानी से समझा जा सकता है। उत्कृष्ट सन्तानें मनुष्य-समाज को देवियें ही दे सकती हैं। यह कार्य पुरुषों से साध्य नहीं है। इसी लिये वेद में स्त्रियों के उत्कृष्ट सन्तान पैदा करने के कर्तव्य पर सब से अधिक बल दिया गया है।

यहां यह न समझ लेना चाहिये कि स्त्रियों से उत्तम मनुष्य घड़-घड़ कर समाज को देने की प्रार्थना विशेष रूप से कर के वेद उन्हें इस प्रकार की शिक्षाएं और विद्या-विज्ञान जानने से वंचित करना चाहता है। शिक्षा के क्षेत्र में वेद स्त्रियों की जो स्थिति रखता है वह हम ने संक्षेप से अच्छी तरह दिखा दी है। यहां तक वेद स्त्रियों की शिक्षा पर बल देता है कि विवाह के अवसर पर वेद कन्या के माता-पिता से दहेज में भी ऊंचे प्रकार की शिक्षा ही देने को कहते हैं। वस्तुतः देखा जाये तो सन्तानोत्पत्ति के मार्ग पर चलने वाली देवी को उच्च शिक्षा की भारी आवश्यकता है। एक घड़ा बनाने वाले कुम्हार को घड़ा बनाने से पहले घड़े और मिट्टी के सम्बन्ध में कितना ज्ञान अपेक्षित होता है यह हरेक जानता है। जो देवी मनुष्य बनाने का काम अपने ऊपर लेना चाहती है उसे मनुष्य-स्वभाव के विस्तृत ज्ञान की जो आवश्यकता है उसे आंखों से ओझल नहीं किया जा सकता। किस समय मनुष्य-समाज को कैसे मनुष्यों की आवश्यकता है यह समझ सकना और उस के अनुसार उपयुक्त मनुष्य पैदा कर के समाज को देना पूर्ण शिक्षित माताओं से ही बन सकता है। पूर्ण शिक्षित मातायें ही यह जान सकेंगी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि समय की आवश्यकताओं के अनुसार विशेष प्रकार के मनुष्य पैदा करने के लिये सन्तानों को किन परि-स्थितियों में रखना चाहिये, उन पर कैसे संस्कार किस तरह डालने चाहियें। इसीलिये वेद स्त्रियों की शिक्षा पर पूरा बल देता है और उन से अपनी शक्तियों और योग्यता को मनुष्य-समाज के कल्याण और संसार की उन्नति के लिये उत्कृष्ट सन्तानें पैदा करने में लगाने की मानो प्रार्थना करता है। स्त्रियें अपनी सारी योग्यता उत्तम सन्तानें तैयार करने में लगा दें। क्यों-कि यह कार्य वे ही कर सकती हैं। पुरुष से यह कार्य बन नहीं सकता। और पुरुष सब प्रकार की साँसारिक चिन्ताओं से स्त्रियों को मुक्त करने का भार अपने ऊपर ले लें। किन्तु यह कभी न भूलना चाहिये कि जो देवियें सन्तानोत्पत्ति के मार्ग में न पड़ना चाहें —विवा-हित जीवन में प्रवेश न करना चाहें—उन्हें पूरा अधि-कार है कि वे पुरुषों की तरह जो कुछ बनना चाहें बनें,—जिस तरह समाज की सेवा करना चाहें करें। विवाहित स्त्री भी यदि सन्तान के प्रति अपने कर्तव्य में किसी तरह की कमी न आने देते हुए समाज-सेवा का कार्य करना चाहे तो खुशी से कर सकती हैं।

इस से आप भली भांति समझ गये होंगें कि वैदिक धर्म में स्त्रियों की स्थिति कितनी स्वतन्त्र, कितनी सन्मान-जनक और कितनी गौरवमय है।

—

# माननीयः श्री जवाहरलालः

( ६८ तमं जन्मदिवसमुपलक्ष्याभिनन्दनम् )

[ १ ]

स्पष्टवक्ता राजनीतिज्ञाग्रणीर्लोके ऽखिले
शान्तिमानेतुं जगत्यां, यः सदा यतते ऽनिशम्।
यस्य हेतोर्भारतं, मान्यं पदं प्राप्तं भुवि
श्री जवाहरलालसंज्ञं, तं बुधं मुदिता नुमः॥

[ २ ]

शिल्पविज्ञानादिदृष्ट्या, भारतं सर्वोच्चतां
प्राप्नुयादुद्देश्यमेतद् मानसे धत्ते हि यः।
कर्मशीलो यो दिवारात्रं स्वदेशस्योन्नतौ
श्री जवाहरलालसंज्ञं, तं बुधं मुदिता नुमः॥

[ ३ ]

वर्तते दृष्टिर्विशाला, यस्य लोकैक्यान्विता
दृष्टि निखिलेष्वेव रूपेष्वत्र यः सङ्कीर्णताम्।
यो दिदृक्षुः सर्वजातीयेषु सौहार्दं सदा
श्री जवाहरलालसंज्ञं, तं बुधं मुदिता नुमः॥

[ ४ ]

संस्कृतं लभतांसुमानं, स्याच्च गोहिंसा निषिद्धा
राष्ट्रभाषा भारती स्याद्, यात्रहिन्दीतिप्रसिद्धा।
भारतीयासंस्कृतिः स्यात्, सर्वकार्येष्वत्र सिद्धा
श्री जवाहरलालमित्थं, प्रार्थयन्तस्तं नुमः॥

[ ५ ]

दीर्घमायुः शुद्धबुद्धिं, देवदेवेशः सदा
कीर्तिमारोग्यं प्रदद्याद्, देशनेत्रे सन्ततम्।
स्यात्समृद्धं राष्ट्रमेतत्, सर्वसुखभागुत्तमं
श्री जवाहरलालहेतोः प्रार्थयन्तस्तं नुमः॥

—धर्मदेवो विद्यामार्तण्डः।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

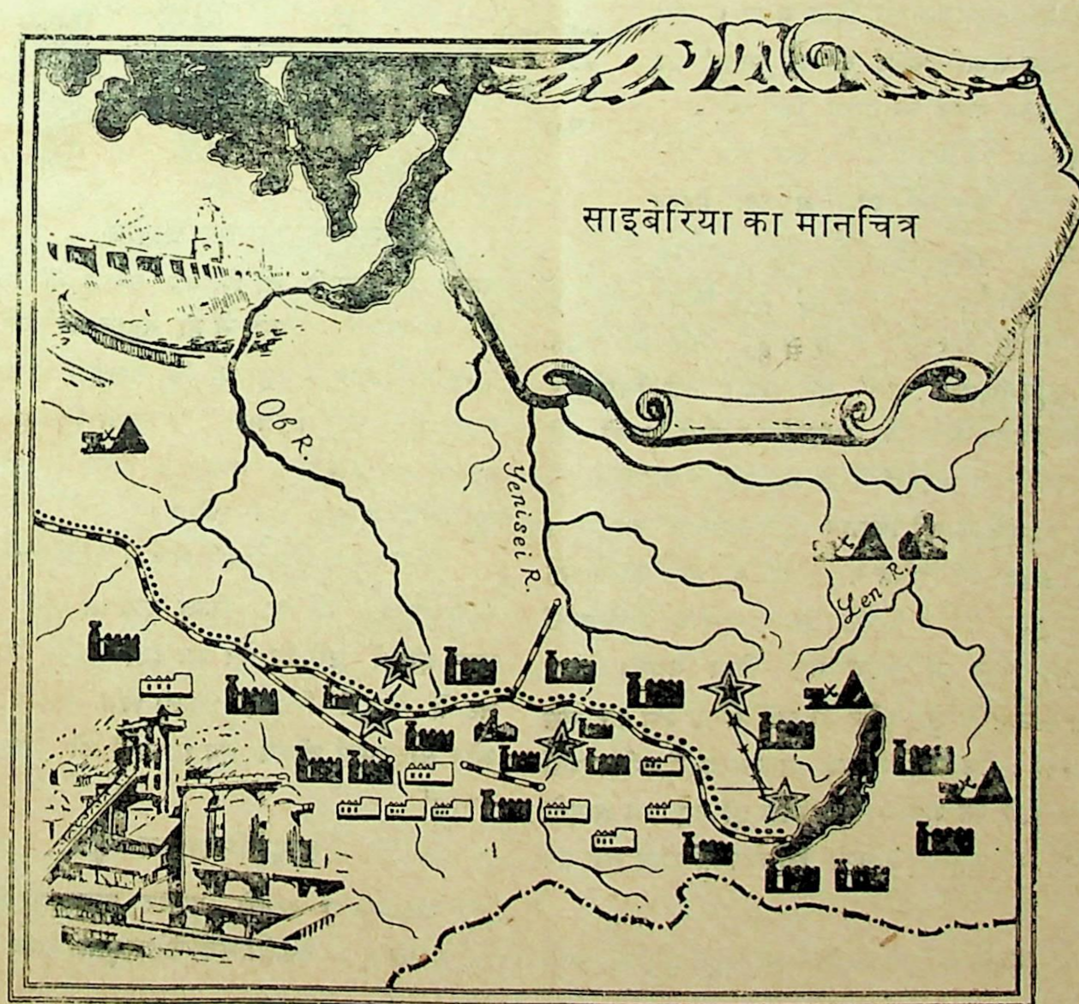
# कितनी विराट् है साइबेरिया की प्राकृतिक सम्पदा !

किसी प्राचीन लोकगीत की एक पंक्ति है--'अरी ओ तिक्त साइबेरिया, अरी ओ क्रोधी सौतेली माता !'

इतनी अकूत सम्पत्ति वाली यह धरती सौतेली माँ कह कर क्यों पुकारी गयी ? इस प्रश्न का उत्तर सीधा सा है--ज़ारशाही ने साइबेरिया को जीता तो पर जीत कर उसे अपना उपनिवेश बना लिया ।

ज़ारशाही अफ़सरों की एक पूरी फ़ौज बेशर्मी और बेदर्दी से स्थानीय आबादी के ऊपर टूट पड़ी । वह चिरकाल से साइबेरिया में बसे दर्जनों कबीलों और जातियों की मौत का पैगाम बन गयी । उन की मदद अन्य 'सभ्यता के वाहकों' ने की । मुख्यतः ये व्यापारी लोग थे जो स्थानीय जनता को ठग कर उन से लगभग मुफ्त में ही, ह्विस्की की एक बोतल पर, अमूल्य रोयेंदार खाल और कच्चे सोने के पिण्ड प्राप्त किया करते थे ।

प्रतियोगिता के डर से ज़ारशाही के सामाजिक आधार-स्तम्भ, रूसी जमींदारों ने साइबेरिया में उद्योग और कृषि के विकास में रुकावट डाली । मध्ययुग की भाँति देश के अन्दर चुङ्गी का एक घेरा था और साइबेरिया के अन्न का रूस के मध्य भागों में आयात करने पर चुङ्गी देनी पड़ती थी । सरकार साइबेरियाई उद्योगों में पूँजी लगाने को प्रोत्साहन नहीं देती थी और इस शताब्दी के प्रारम्भिक भाग में तो कुछ पुराने कारखाने भी बन्द होने लगे थे । १६०८ में




CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

साइबेरिया जैसे विशाल प्रदेश से रूस के कुल औद्योगिक उत्पादन का केवल साढ़े तीन प्रतिशत ही प्राप्त होता था। केवल सोना निकालने का लुटेरू धन्धा ही फल-फूल रहा था, पर वह भी ज़ारशाही सरकार द्वारा ब्रिटिश तथा अन्य अधिकार-पत्र-प्राप्त विदेशी कम्पनियों के हवाले कर दिया गया।

१७ वीं शताब्दी में ही ज़ारशाही साइबेरिया को एक विराट् जेलखाने में परिवर्तित करने लगी थी। जो भी उस के विरुद्ध ऊंची आवाज़ करने का साहस दिखाता उसे खास अवधि का सपरिश्रम कारावास-दण्ड दे कर या अनिवार्य रूप में जा बसने के लिए साइबेरिया निर्वासित कर दिया जाता। रूस के सर्वश्रेष्ठ सपूत 'क्रोधी सौतेली माता' का परिचय प्राप्त करने को बाध्य किये गये।

१९०५ की क्रांति से डर कर ज़ारशाही सरकार ने किसानों का, मुख्यतः गरीब किसानों का साइबेरिया के लिए व्यापक पैमाने पर निष्क्रमण कराने का यत्न किया ताकि वे देश के सब से महत्वपूर्ण केन्द्रों से हट जाँय और इस प्रकार कृषि-समस्या 'हल' हो जाय। बड़े पैमाने पर विज्ञापन किया गया कि साइबेरिया जाने वालों को वहां परती पड़ी ज़मीनों में से बड़े-बड़े टुकड़े मिलेंगे। ज़मीन के भूखे लाखों किसान इन बातों में आ गए। किन्तु, जैसा कि लेनिन ने लिखा है, यह निष्क्रमण नौकरशाहाना ढंग से संगठित किया गया था। किसानों को घर, पशु या नक़्द नहीं दिया गया। फलस्वरूप उन में से कुछ और भी क्रांतिकारी बन कर रूस लौट आये। शेष साइबेरियाई आवारा-गर्दों, भिखमंगों और डाकुओं की जमात में शामिल हो गए या साइबेरिया के आतिथ्यविमुख खुले आकाश के नीचे मर-खप गए।

पर साइबेरिया को सौतेली माँ कहते हुए भी रूसी



येनिसेई के तट पर चेखोव

जनता यह जानती थी कि वह दयालु माँ बन सकती है। अठारहवीं शताब्दी में ही महान् क्रांतिकारी-मार्गदर्शक रादिश्चेव ने कहा था कि, साइबेरिया का भविष्य महान् है। उस ने लिखा : 'कितनी विराट् है साइबेरिया की प्राकृतिक सम्पदा! विश्व के इतिहास में वह महती भूमिका अदा करेगा।

चेखोव साइबेरिया की गरीबी और जंगलीपन पर स्तम्भित रह गया था, किन्तु साथ ही वहां प्रकृति के भव्य रूप ने उसे विभोर कर दिया और येनिसेइ के तट से उस ने लिखा, 'किसी दिन तेजस्वी मेधावी और साहसपूर्ण जीवन इन किनारों को भासमान कर देगा।'

## साइबेरिया का सूर्य

साइबेरिया अपनी कठोर जलवायु के लिए विख्यात है। वेर्खोयान्स्क के याकूती कस्बे के निकट

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दुनिया का सब से अधिक सर्द स्थान पड़ता है। यद्यपि साइबेरिया का आकाश प्रायः सदा ही स्वच्छ रहा करता है किन्तु केवल अल्पकालीन पर बहुत गर्म ग्रीष्म ऋतु को छोड़ कर यहाँ की धूप में बहुत कम उष्णता होती है। एक 'बिजली का सूरज'——यह दुनिया का सब से बड़ा जल-विद्युत स्टेशन होगा——साइबेरिया में बन रहे दसियों हजार घरों तथा दर्जनों नए नगरों और सैकड़ों कारखानों को ताप और बिजली देगा। बैकाल झील से निकलने वाली अङ्गारा नदी पर दैयाकार जल-विद्युय स्टेशनों की एक मेखला का निर्माण हो रहा है। उक्त झील में तीन बाल्टिक सागरों के बराबर पानी है।

अङ्गारा इतनी गहरी नदी है और उस का पानी इतना खड़ा गिरता है कि लम्बाई में अधिक न होते हुए भी वह वोल्गा, कामा, नीपर और दान जैसी बड़ी नदियों से कुल मिला कर जितनी बिजली निकलेगी उस से अधिक पैदा कर सकती है।

जिस जगह अङ्गारा नदी बैकाल झील से निकलती है, वहीं इर्कुत्स्क का प्राचीन रूसी नगर है जिसे पूर्वी साइबेरिया की राजधानी कहते हैं। नगर के पास ही ६,६०,००० किलोवाट क्षमता का इर्कुत्स्क बिजली घर बन रहा है। वह इसी वर्ष काम करने लगेगा। और इर्कुत्स्क से ६०० किलोमीटर की दूरी पर, अङ्गारा के प्रवाह की दिशा में, ब्रात्स्क जल-बिजलीघर बन रहा है जो दुनिया के सब से बड़े बिजलीघरों में होगा। ३२,००,००० किलोवाट की क्षमता वाला यह बिजलीघर वोल्गा स्थित कुजबाइशेव और स्तालिनग्राद के जल-विद्युत स्टेशनों द्वारा उत्पादित कुल शक्ति से भी अधिक बिजली देगा।

ब्रात्स्क बिजलीघर द्वारा उत्पादित बिजली देश में सब से सस्ती होगी। उस से प्रतिवर्ष होने वाली कोयले की बचत दो करोड़ टन के बराबर होगी। ब्रात्स्क बिजलीघर की शक्ति १४ करोड़ आदमियों की शारीरिक शक्ति के बराबर है। अर्थात् एक बिजलीघर की धारा जितना काम कर सकती है उतना काम कोई बड़ा राष्ट्र भी हाथों से नहीं कर सकता!

## महासागर का भाई

अङ्गारा येनिसेई में, जो दुनिया की सब से बड़ी नदियों में हैं, गिरती है। येनिसेई नदी इतनी विराट् और गहरी है कि उसे प्रायः 'महासागर का भाई' कहते हैं। क्रास्नोयार्स्क बड़े साइबेरियाई नगर से थोड़ी दूर ही, येनिसेई में एक बड़ा जल-बिजलीघर बन रहा है। उस की क्षमता ब्रात्स्क बिजली-घर के बराबर होगी। वर्तमान पंच-वर्ष में उस का काम चालू हो जायगा। वर्तमान पंचवर्षीय योजना में एक और जल-बिजलीघर येनिसेइस्क नगर के निकट जहाँ अङ्गारा येनिसेई में मिलती है, बनने वाला है। इस बिजलीघर की क्षमता ऐसी होगी कि सुन कर हवाई ज्ञात होगा——लगभग ५० लाख किलोवाट।

क्रास्नोयार्स्क के पश्चिम, नोवोसिबिर्स्क, जिसे पश्चिमी साइबेरिया की राजधानी समझा जाता है, के निकट महान् ओब नदी पर विशाल नोवोसिबिर्स्क बिजलीघर बन रहा है। यह अगले साल चालू हो जायगा और ओब पर बनने वाले जल-बिजलीघरों की मेखला की प्रथम कड़ी होगा।

सोवियत वैज्ञानिक और इंजिनियर महान् साइबेरियाई नदियों के उपयोग के लिए इस से भी अधिक महत्वाकांक्षी योजनाएँ तैयार कर रहे हैं। वे इन में से कुछ नदियों की, उत्तरमुखी धारा को, जो आर्कटिक में गिर कर केवल वहां की बर्फ गलाने का काम करती हैं, दक्षिण मोड़ देना चाहते हैं जहाँ सोवियत संघ की भूमि के कुल सातवें भाग को छेंक रखने वाले विस्तीर्ण रेगिस्तान हैं।

यह मान लिया गया है कि हवाई ज्ञात होने वाली ये योजनाएँ पारमाणविक शक्ति की सहायता से कार्यान्वित की जा सकती हैं। इस समस्या से अगली पंचवर्षीय योजनाओं से निपटना है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## जादू की कुञ्जी

बिजली की शक्ति वह जादू की कुंजी है जो साइबेरिया के सभी खजानों के ताले खोलने में सहायक होगी। इस विरल आबादी वाले इलाके में विद्युत-शक्ति और उस से चलने वाली मशीन अपेक्षाकृत थोड़े लोगों द्वारा संचालित होंगी, परन्तु वे इतना काम करेंगी जितने के लिए पहले लाखों मजदूरों की ज़रूरत पड़ती।

साइबेरिया में अलौह-धातुओं तथा रसायनों के बड़े-बड़े कारखाने बनाने की योजना बनायी गयी हैं। लोहे और इस्पात की बड़ी-बड़ी खानें भी बनेंगी। दो या तीन पंचवर्षीय योजनाओं के भीतर देश के पूर्वी भाग में ऐसे कारखाने हो जायेंगे जो प्रतिवर्ष डेढ़ से दो करोड़ टन कच्चा लोहा तैयार करेंगे।

वृहत्तम चार नये कारखानों का कच्चे लोहे का उत्पादन इतना हो जायगा जितना इस समय पूरे ब्रिटेन या पश्चिमी जर्मनी का है।

साइबेरिया का उद्योग धन्धा ऐसे लम्बे डग भरेगा! इस के अलावा, पंचवर्षीय योजना के दौरान एक सौ से अधिक इंजिनियरिंग के कारखाने बनाये जायेंगे। वे हार्वेस्टर कम्बाइन (फसल काटने के यन्त्र विशेष) तथा खानों, धातुओं के कारखानों और रसायन के कारखानों में काम आने वाला साज-सामान तैयार करेंगे। इसी तरह साइबेरिया में छोटे उद्योगों का भी विकास किया जायगा। पाँच वर्षों के भीतर जो कारखाने चालू हो जायेंगे वे ये हैं: कन्स्क में बढ़िया ऊन की बड़ी मिलें, क्रास्नोयारर्क में रेशमी वस्त्रों की मिलें, तथा बर्नाल में सूती मिलों का दूसरा भाग। साइबेरिया अपने नकली रेशम के लिए प्रसिद्ध हो जायगा। इस का नकली रेशम के कपड़ों का उत्पादन फ्रांस या इटली के आज के उत्पादन से अधिक होगा। साइबेरिया की नदियों से प्राप्त विद्युत शक्ति खेती में बिजली का उपयोग सम्भव कर देगी। फलस्वरूप साइबेरिया की और भी लाखों हैक्टर उपजाऊ अछूती भूमि में खेती होने लगेगी।

साइबेरिया में सूखा नहीं पड़ता तथा यहाँ अभूतपूर्व फसल हो सकती है। अन्न-भाण्डार के रूप में, 'घी-दूध की नदियों वाले देश' के रूप में इस का महत्व निरन्तर बढ़ेगा।

## बड़े मार्गों से हो कर

पिछली शताब्दी के अन्त में बहुत ही थोड़े समय के भीतर साइबेरिया हो कर संसार की सब से बड़ी रेल-लाइन बना कर रूसी मज़दूरों और इंजिनियरों ने बड़ी बहादुरी का काम कर दिखाया। सोवियत काल में साइबेरिया में और भी कई सौ किलोमीटर में नयी लाइनें बनायी गयीं। सोवियत संघ के सुदूर-उत्तर में महान् उत्तरी सागरीय मार्ग को जहाजों के जाने के लायक बनाया गया और साइबेरिया की उन नदियों के मुहानों पर जो अपना पानी आर्कटिक सागर में गिराती हैं, बड़े-बड़े बन्दरगाह बनाये गए। आर्कांजेल्स्क से व्लादीवोस्तक को जाने वाले जहाज इन बन्दरगाहों में अपना माल पहुंचाने लगे।

साइबेरिया में एक तीसरा बड़ा मार्ग भी खुला। यह आकाश-मार्ग था। रेल में जहाँ पैदल जाने की अपेक्षा यात्रा-काल दस गुणा कम कर दिया, विमान ने यात्रा-काल अस्सी गुणा कम कर दिया।

छटी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत तीनों बड़े उत्तरी मार्गों का पुनर्निर्माण किया जाएगा तथा मास्को इर्कुत्सक लाइन में, जो ५००० किलोमिटर लम्बी है, गाड़ियाँ बिजली से चलेंगी। बन्दरगाहों का पुनर्निर्माण किया जा रहा है तथा महान् उत्तरी सागर मार्ग में जहाजों की संख्या बढ़ाई जा रही है। संसार का पहला परमाणु चालित बर्फ-तोड़क इसी मार्ग पर चलेगा। बड़े-बड़े जेट विमान विमान अब साइबेरिया के आकाश-मार्ग से यात्री ले जाते हैं। कुछ ही दिन पहले एक टीयू-१०४ विमान मास्को से इर्कुत्सक छः घण्टे से कम समय में गया। मानव साइबेरिया की दूरी पर विजय प्राप्त कर रहा है। —सोवियत भूमि।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# समर्पण-पत्र

श्री पीताम्बर नारायण शर्मा

एक महादानी––उदारचेत्ता ने किसी भिखारी से से कहा––हम तुम्हें कुर्ता देते हैं, जिस का अगला-पिछला हिस्सा नहीं है। बाहें स्वयं लगवा लेना, तुम्हारा काम चल जाएगा। हाँ! अब ज्यादा अधिक देर न करो, जाओ!

भिखारी चला गया बड़ा दुःखी हो कर, पर आप सुन कर हंस रहे हैं?

किन्तु, हंसिये नहीं। आप न भिखारी पर दया कीजिए और न दाता पर कुढ़िये। देखिये उस की भावना को, जिसमें कुछ देने का भाव ही निहित है लेने का नहीं। दान की बड़ी महिमा है पर उस की कई कोटियाँ हैं। ऐसे भी दान हैं जिन में प्रत्यक्ष में कुछ लिया दिया नहीं जाता, फिर भी उनका व्यक्ति तथा समाज पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है। जैसे कोई किसी को विद्या देता है, उपदेश देता है, किसी की प्रशंसा करता है पर किसी को गालियां देता है। प्रशंसा-उपदेश का प्रभाव चाहे तत्काल न भी दीखे पर गाली का प्रभाव तो हमें उसी समय दीख जाता है। ईश्वर की भक्ति जिसमें नाम गुण कीर्तन-स्मरण आते हैं––भी इसी प्रकार का आदान-प्रदान है। यह सब दो-चार बोल का ही खेल है जो केवल मात्र हवा ही हवा है। जो मुख्य बात है, वह है भावना और उसका प्रभाव। सो, दीनी की उदात्त भावना को देखिये और उस की सराहना कीजिए।

दान दाता की उदात्त वृत्तियों का द्योतक है, ऐसा माना जाता है। वह उदात्त शक्तियां हैं—जैसे करुणा, ममता, उदारता, स्नेह, प्रेम, श्रद्धा आदि। लेकिन यह गलत भी है। दान उदात्त वृत्तियों का ही द्योतक न हो कर कई ार मनुष्य की उन वृत्तियों की ओर भी उद्घाटन करता है जिन्हें हम नैतिक भाषा में अनुदात्त-हीन अथवा राक्षस कहा करते हैं, जैसे––राग, द्वेष, मोह आदि। इन में से 'गाली दान' की चर्चा हो चुकी है, शेष की आगे यथा स्थान होती रहेगी।

दान की चर्चा यहां इस लिये चलाई गई है कि 'समर्पण' का भाव भली प्रकार हृययंगम हो सके, क्योंकि 'समर्पण' भी इसी दान की एक कोटि है। और 'समर्पण-पत्र' से हमारा अभिप्राय उस पृष्ठ से है जो लेखक की किसी रचना के साथ, मुख पृष्ठ के बाद और उस के आरम्भिक परिच्छेद से पहले, जुड़ा-लगा होता है।

किसी भी रचना का सम्बन्ध इन तीनों से रहता है—लेखक, प्रकाशक-वितरक और पाठक। समस्त पुस्तक का सम्बन्ध इन तीनों से अनिवार्य तथा आवश्यक रूप से रहता है किन्तु आश्चर्य, महान् आश्चर्य का विषय है कि उसी रचना का वह अभागा 'समर्पण पत्र' तीनों के भाग्य से बंधा न हो कर के वह लेखक से ही सम्बन्ध रखता है। पाठक चाहे तो उस रचना को उस में दिये गये 'समर्पण पत्र' को बिना पढ़े ही, भरपूर लाभ उठा सकता है। इसी प्रकार प्रकाशक-वितरक को भी समर्पण-पत्र' के न रहने से ही अधिक लाभ होता है कि ग्रन्थ की ज्यादा विक्री हो और 'न रहने' से ही कोई घाटा कि खपत में कमी हो। किन्तु, लेखक के लिए उसका महत्व अत्याधिक रहता है। अत्यधिक महत्व रहता है तभी तो वह देता है! कि उस लेखक के लिए यह घोर अपमान की और एक विचारक के के लिए बड़े आश्चर्य की बात है कि 'समर्पण पत्र को जो लेखक की परम प्रिय तथा अति महत्वपूर्ण वस्तु है, उसी पर उप जी वा व्यक्ति-प्रकाशक-पाठक––इतना तुच्छ और व्यर्थ समझते हैं। और वह लेखक है जो समस्त रचना का निर्माण-कर्ता, उस के अस्तित्व में लाने वाला है, उसी की प्रिय महत्वपूर्ण वस्तु की इतनी अवहेलना! इतनी उपेक्षा!!

किन्तु किसी रचना के 'समपण पत्र' के प्रति प्रकाशक-पाठक की यह उपेक्षा, यह उदासीनता यों ही नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हो सकती। प्रकाशक-पाठक इतने न निर्मोही हैं और न अकृतज्ञ ही। उस का भी कोई कारण होगा। होगा क्या, यही है।

बस यही हमारे 'समर्पण पत्र' पर कुछ लिखने की, कुछ विचार करने की प्रेरणा का मूल उत्सर है।

हमने उपर्युक्त विवेचन से निचोड़ निकाला कि 'समर्पण पत्र' लेखक की किसी के प्रति हृदय में उत्पन्न 'भावना' का प्रतीक है जो शब्दों द्वारा वह इस माध्यम से प्रकट करता है और जिसे जग देखे, वह व्यक्ति देखे, और उन्हें देखते, देख कर 'समर्पक-लेखक सन्तुष्ट व प्रसन्न होता रहे। अब हम देखते हैं कि 'समर्पण पत्र' कई अवयवों से निर्धारित होता है, और उन की गिनती की संख्या तीन ठहरती हैं--

१. पात्र--जिसे समर्पण किया जाता हैं।

२. भावना--लेखक का वह मनोविकार जिस से अभिभूत हो कर वह समर्पण करता है।

३. माध्यम--पात्र के प्रति ( समर्पण की ) प्रेरक भावनाओं के द्योतक 'समर्पण पत्र' में प्रयुक्त शब्द।

आइए हम एक-एक अङ्ग को ले कर उस पर विचार करते हुए अपने गन्तव्य तक पहुंचें।

## पात्र

कुछ एक ग्रन्थों को जिन में 'समर्पण पत्र' दिए गए हैं, एकत्र कर के यदि हम उन का आद्योपान्त तथा सूक्ष्म-गंभीर अध्ययन करें तो हमें समर्पण के पात्र एक तरह के नहीं कई श्रेणी के मिलेंगे। कई वार तो उन की न जाति मिलती है, न स्वरूप न नाम, न गुण, न स्वभाव, न कोई कर्म ही। कभी वह एक व्यष्टि है तो कभी समष्टि, कभी स्त्री जाति है तो कभी पुरुष जाति, तो कभी-कभी न स्त्री न पुरुष फिर भी जाति है। कभी वह जड़ है, कभी जङ्गम। कभी वह शिशु है, तो युवा है, तो कभी वृद्ध। और भी वह गत सब कुछ भी न होकर अमूर्तरूप-भावना रूप ही रहता है। उदाहरण के तौर पर हम देखते हैं--कहीं समर्पण एक मित्र को किया गया है, कहीं गुरू जन, कहीं माता-पिता को तो कहीं प्रियतमा को और अपने नन्हें मुन्ना-मुन्नियों को। जीवित ही नहीं मृत व्यक्ति भी इस के पात्र बना करते हैं। अधिकांश तो दिवङ्गत ही! यह समर्पण के बलआत्मिय जनों तक ही सीमित हैं। आप कभी-कभी हरगिज न समझ बैठें, नहीं तो कई उदारवेत्ता 'वसुधैव-कुटुम्बकम्' की उदात्त भावना वाले समर्पक के प्रति यह भारी अन्याय, अत्याचार होना गुरुतर अपराध भी हो सकता है तो कई वार अपने परिवार से अन्य व्यक्यों जैसे--नेता, कवि, विचारक, जादूगर, सत्ता सौदागर, दानी आदि को भी समर्पण का अधिकारी बनाया जाता हैं।

व्यक्ति ही नहीं कभी-कभी किसी जाति अथवा वर्ग को भी समर्पण का विषय ( पात्र ) बनाया जाता है। यह जाति-वर्ग भी आगे चल कर कई वर्गों में, उप वर्गों में विच्छिन्न हो कर अधिकारी के रूप में हमारे समक्ष आता है। कभी हम देश अथवा राष्ट्र को भी इस का पात्र बनते देखते हैं, फिर चाहे वह स्वदेश हो अथवा स्वदेश को मिला कर समस्त विश्व।

कभी-कभी पात्र अमूर्त रूप व विचित्र रहते हैं जैसे--किसी की 'स्मृति को', 'युवकों के उत्साह को', अथवा उन की 'जवानी को' या फिर शोषित वर्ग की 'जागृति', 'साहस', इस के बाद की पाण्डुलिपि साथ नहीं भेजी गई। प्रगति आदि किसी भावना को। कहीं-कहीं वह 'दिल जले की आह' तो कहीं पीड़ित की कराह, अथवा असहाय के आंसू बनता है। गिनाएं कहां तक! थोड़ में कहो तो कह सकते हैं समूचा विश्व और उस के कार्य के समूचे पदार्थ सभी 'समर्पण पत्र' के अधिकारी बनते हैं और बन सकते हैं। अन्तर केवल भावना का है वह कितनी उदार है अथवा अनुदार संकीर्ण है अथवा विस्तृत!

'समर्पण पत्र' को पात्र के विषय में यदि हम सब कुछ मिला कर संक्षेप में तथा और अधिक स्पष्ट रूप से जानना चाहें तो हमारा वह रूप कुछ निम्न प्रकार होगा--

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१. व्यक्ति, पारिवारिक—मां, बाप, भाई आदि पत्नी, प्रियतमा, शिशु, पुत्र आदि ।
अन्य—नेता, विचारक, गुरुजन आदि ।
सखा, दानी आदि, अन्य ।
२. जाति (वर्ग)—उच्च पूँजी-पति, मठाधीश, शसित्रक आदि । मध्यम, मध्यविन्तका समाज ।
निम्न-शोषित-पीड़ित किसान, मज़दूर, हरिजन आदि ।
३. देश— स्वदेश, अन्य देश, विश्व ।
४. भावना-दशा—उच्च-उदारता, उत्साह, जागृति आदि
मध्यम-स्मृति, राग, कर्मशीलता आदि
निम्न-द्वेष, मोह, नीचता आदि ।

## भावना

भारतीय अथवा विदेशी विश्व कोषों में समर्पण के अन्तर्गत अर्थ देतें हुए जिस भावना का उल्लेख मिला वह हमें किसी भी प्रकार नहीं जंचा । जंचता कैसे वहां तो मक्खी पर मक्खी मारी गई है, उस की पूंछ-मूंछ अथवा पर की खाल निकाल कर नहीं देखा गया, गल्ती यही और यहीं पर हो गई । वरना विश्व के विश्व-कोष बड़े ही प्रामाणिक माने जाते हैं माने क्या जाते असल में होते ही हैं त्रुटि तो भगवान के काम में भी निकालने वाले निकाला ही करते हैं । सो कोषों में जो 'समर्पण' का अर्थ दिया गया है वह सब मिला कर इस प्रकार है—"सम्यक् प्रकार से अर्पण, किसी को कोई चीज़ आदरपूर्वक भेंट करना । दान देना ।" एक भारतीय विश्वकोषकार कुछ विशेष कहते लिखते हैं—प्रतिष्ठापूर्वक देना । जैसे वे यह पुस्तक किसी राजा या रईस को 'समर्पण करना चाहते हैं । हमने 'प्रतिष्ठा' का अर्थ देखा तो लिखा था—"गौरव, मान-मर्यादा प्रख्याति-प्रसिद्धि, यश-कीर्ति, आदर-सत्कार ।"

हमने सोचा भारतीय कोषकार स्वतन्त्र होने पर भी पिछली अंग्रेजों की दो सौ साल की गुलामी के कारण बुद्धि कुण्ठित होने से कदाचित् ठीक-सही तौर पर न सोचे-लिख सके हों, लाओ, आजाद व आला लोगों की दिमागी हरकत भी देख लें कि कोई काम की बात मिले । पर, पढ़ कर, न हम उन की पीठ पर हाथ रखने लपक सके न, अपनी छाती पीट सके, न माथा सहला सके दोनों हाथों के बीच हमारा सर आप ही आप आ गया और हम बैठे सोचने लगे कि हम बुद्धू हैं कि हमारा दिमाग फेल हो गया है कि यह हमें चैलेंज है कि लिखा था डेडीकेशन—···किसी पुस्तक आदि के पूर्व जोड़ा हुआ वह उल्लेख ( पत्र ) जो किसी व्यक्ति विशेष को सम्बोधन किया गया हो, जिस का कि ( मुख्य ) ध्येय संबोधित व्यक्ति की संरक्षता प्राप्त करना होता है ।

अब इन सब अर्थों से लगता है कि 'समर्पण' करते हुए लेखक का भाव केवल पात्र के प्रति प्रतिष्ठा केवल दान उस का गौरव-गान, अथवा उस की संरक्षता प्राप्त करना ही रहता है । यह बात पात्रों के विवेचन से तो आप जान ही गए होंगे कि ससर्पपण का अधिकारी चाहे वह विदेशी कोषकारों का व्यक्ति विशेष हो, और चाहे भारतीय कोषकारों का राजा अथवा रईस, केवल वही नहीं होता । व्यक्तियों में शिशु भी रहते हैं, प्रियतमा भी, जिनके प्रति स्नेह-प्रेम का भाव रहता है । गुरुजनों के प्रति श्रद्धा भाव होता है । दानी, राजा-रईस के प्रति सम्मान भावना रहती है, किन्तु उस का कोप व भय लिये हुए । गुरुजन अथवा ईश्वर के प्रति जो श्रद्धा भक्ति है उस में निर्भयता के कारण हृदय का, आनन्द का मिश्रण है । इधर, राजा-रईस के प्रति भय के कारण लोकाचार एवं स्वार्थपन का पुट दिया रहता है । इसी प्रकार की निम्न वर्ग के प्रति अर्थात् दीन-दुखियों के प्रति किया गया समर्पण दया तथा करुणा भाव का द्योतक है, जो अत्यन्त पवित्र व सराहनीय है । यद्यपि, कई दूषित मनोवृत्ति वाले उसे भी अपने स्वार्थ का साधन बनाते हैं किन्तु ऐसे लोग अपवाद कहे जायेंगे, वैसे हमें किसी की नियत पर शक नहीं करना चाहिये ।

व्यक्ति-विशेष अथवा राजा-रईस के अतिरिक्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

व्यक्ति तथा जाति देश एवं कोई भावना-स्थिति विशेष भी समर्पण के पात्र हैं यह भी विवेचन से स्पष्ट व सिद्ध है। अब विश्व कोषकार अपने कोषों को पलट दें। यही कहने को जी चाहता है। आप भी साथ हैं न ?

'समर्पण एक शृङ्गारी वस्तु है। आप आश्चर्य न कीजिए, मेरी अल्पज्ञता कह कर मुझ पर हंसिए भी नहीं। पहले सुनिए फिर निर्णय दीजिए। तो मैंने कहा 'समर्पण-पत्र' शृङ्गार रस से परिपूर्ण रहता है। यह एक दान है, दान में राग की भावना रहती है। राग को रति कहते हैं। रति स्थायी भाव है शृङ्गार का। रति भाव ही विभाव, अनुभाव, संचारी भावों से अंकुरित पुष्पित तथा पुष्ट ही कर शृङ्गार रस रूप में फलिभूत होता है। साहित्य शास्त्री हमारे गवाह हैं। रति नाम प्रेम का है। प्रेम पांच प्रकार का माना गया है, देखिये—सानुराग, सौहार्द, भक्ति और वात्सल्य। प्रेम पांचविधि कहत हैं कार्पण्यवैकल्प।

खुलासा इस तरह जानिये—

१. सानुराग—शृङ्गार ( स्त्री ) सम्बन्धी प्रेम ( दाम्पत्यप्रेम )।
२. सौहार्द—स्वजन तथा परजन पर प्रीति ( मैत्री )।
३. भक्ति—छोटों का बड़ों के प्रति प्रेम (श्रद्धा)।
४. वात्सल्य—बड़ों का छोटों के प्रति प्रेम ( स्नेह )।
५. कार्पण्य—दुःख से दुखित हो कर प्रेम ( दया, करुणा )।

साहित्य शास्त्री यह भी बताते हैं कि 'रस' नौ हैं और वह भाव, जिन्हें वह अपनी भाषा में स्थायी-भाव कहते हैं, तथा जिन के परिणाम यह 'रस' हैं की संख्या भी नौ ही है। जैसे—

१. रति—( स्त्री पुरुष का ) प्रेम भाव।
२. हास—अंगादि विकारों द्वारा प्रफुल्लता।
३. क्रोध—अपराधी को दण्ड देने की उत्तेजना देने वाली मनोवृत्ति।
४. उत्साह—दान, सूखा, आदि से उत्तेजित होने वाली वृत्ति।
५. भय—अनिष्ट की आशंका।
६. जुगुप्सा—घृणा, लज्जा।
७. विस्मय—आश्चर्य विमूढ़ता।
८. शोक—वियोग की व्याकुलता।

इन्हीं भावों के परिणाम स्वरूप उन्होंने नव रस कहे हैं (जैसे—शृङ्गार, हास्य, करुण, वीर, अद्भुत, वीभत्स, भयानक, रौद्,करुण,शांत)। किन्तु कहा है—

प्रकृति पुरुष-शृङ्गार में, नौ रस को संचार।
जैसे मीठे प्रकाश में घटत अकास-प्रकाश॥

और इ० 'रसराज' इसी लिए कहा गया है कि रति ( प्रेम-राग ) का सम्बन्ध इन सब के साथ किसी न किसी प्रकार जुड़ा ही है। कुछ उसी तरह जैसे किसी मौजी ने कहा था—

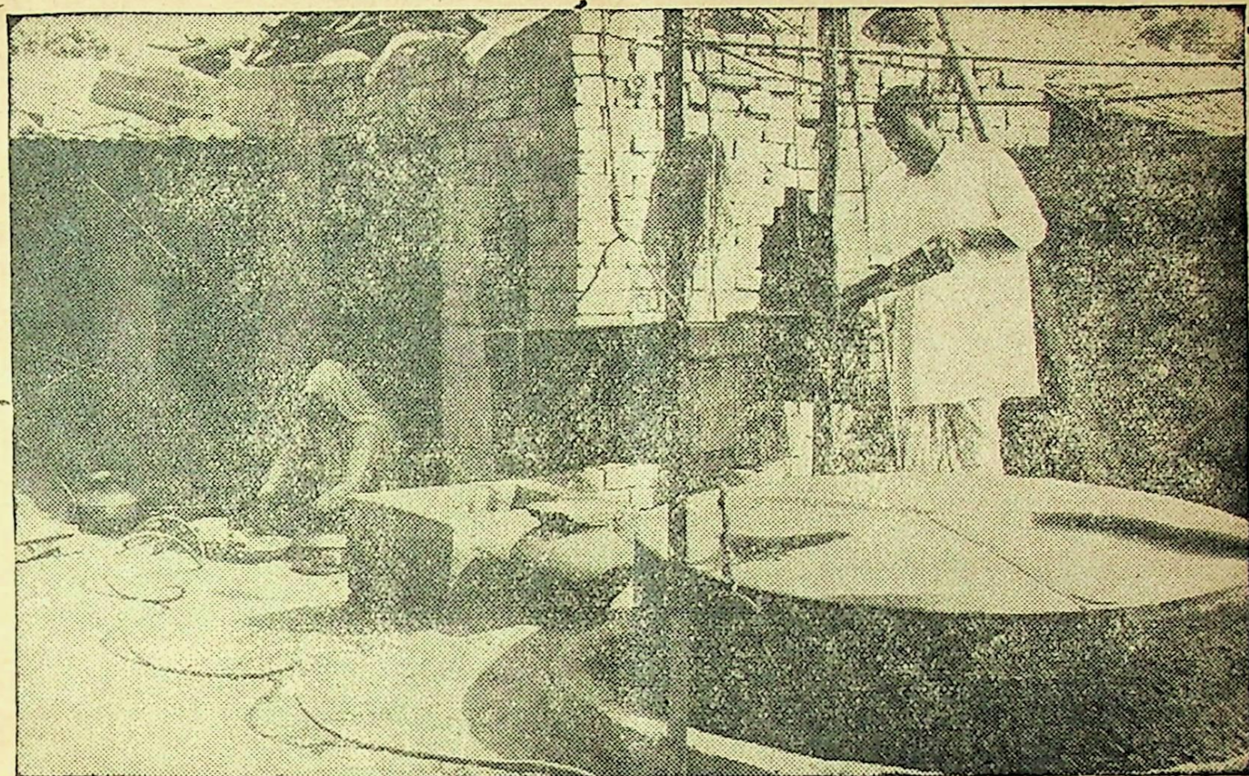
बदनाम होंगे तो क्या ! नाम न होगा ?



० भारत में बड़ी दीवार-घड़ियां बनाने वाले तीन कारखाने हैं, जिन की उत्पादन-क्षमता इस समय लगभग २८,००० घड़ियां प्रतिवर्ष है।

० १९५५ में भारत से ब्रिटिश ईस्ट अफ्रीका को ५ लाख ३३ हजार रुपये के मूल्य की फ़िल्मों का निर्यात किया यगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



गांव की एक महिला गोबर गैस की ज्वाला पर भोजन पका रही है। बांई ओर गोबर गैस का उपकरण दिखाया गया है।

# गोबर से गैस

**श्री रामेश बेदी**

भारतीय कृषि-अनुसन्धान संस्था ने निरन्तर किए गए परीक्षणों से एक विधि ज्ञात की है जिस से गोबर में से ईंधन और खाद दोनों ही प्राप्त किए जा सकें। इन अनुसन्धानों ने यह बताया है कि ताज़े गोबर को जब बन्द पात्र में सड़ने दिया जाता है तो एक गैस प्राप्त होती है जिसे मिथेन कहते हैं। इसे जलाया जाय तो नीली ज्वाला में जलती है और ताप भी देती है। अन्धेरे को दूर करने के लिए यह प्रकाश का स्रोत है। रसोई की तथा दूसरी ताप सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह बढ़िया आग भी है। आधा सेर गोबर से एक घनफुट गैस निकलती है। एक किसान के पास यदि चार से छह तक पशु हैं तो वह प्रति दिन लगभग सौ घनफुट मिथेन प्राप्त कर सकता है। इस परिमाण द्वारा चार-पांच जनों के एक औसत परिवार का भोजन मज़े में पक जायगा। इस अन्वेषण की एक बड़ी उपयोगिता इस बात में निहित है कि गोबर में विद्यमान वे सब तत्व जिन के कारण उत्तम खाद बनता है, सब वैसे के वैसे ही बने रहते हैं। गैस निकल जाने के बाद प्राप्त अवशेष वैसे ही बढ़िया खाद का काम देता है जैसा बिना गैस निकाला गोबर।

गैस निकल गए गोबर में कई विशेषताएं हमारा ध्यान खींचती हैं। यह मक्खियों को आकृष्ट नहीं करता। दुर्गन्ध नहीं फैलाता। इसलिए गैस पैदा करने वाले उपकरण से निकलने के बाद गीले गोबर को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तुरन्त खेतों में फैलाया जा सकता है । खाद बनाने के लिए इसे बन्द गड्ढों में सड़ाने की आवश्यकता नहीं होती ।

हमारे देहातों में इस आविष्कार का परिचलन एक क्रान्तिकारी परिवर्तन होगा । सहकारी प्रयत्नों से हर गांव में गोबर गैस के उपकरण लगाए जा सकते हैं । सड़कों की गलियों के प्रकाश की समस्या को दूर करने में इस से बड़ी सहायता मिल सकती है ।

इस उपकरण में धातु का एक ढोल रहता है जिस का व्यास लगभग पांच फीट और ऊंचाई चार फीट होता है । पन्द्रह फीट गहरे कुएं के ऊपर यह सुंधा रखा जाता है । इस कुएं में गोबर डाला जाता है । सड़ांद से पैदा हुई गैस ढोल में जमा होती है । एक नली द्वारा यह रसोई में ले जा कर जलाई जाती है ।



# हमारे देश की प्रगति

इस समय हमारे देश में शिक्षित धात्रियों की बहुत कमी है । प्रति ५० ० की आबादी के पीछे एक नर्स और एक मिडवाइफ़ की आवश्यकता है ।



द्वितीय पंचवर्षीय योजना में धात्री सेवाओं के लिए छह करोड़ रुपया रखा गया है ।



० केन्द्रीय सरकार ने विभिन्न राज्यों के गोसदनों को अब तक ३ लाख ३६ हज़ार रुपये की आर्थिक सहायता मंजूर की है ।

० जनवरी, १९५६ में भारत की कपड़ा-मिलों में कुल मिला कर २०२६०१ करघे लगे हुए थे । जनवरी, १९५५ में इन की संख्या २०२७१४ थी ।

० आजकल अफ्रीका के १७७ छात्र भारत में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं । इन में से १९ छात्र हिन्दी पढ़ रहे हैं ।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गोरक्षा में गो-सदन का महत्व

श्री कृपाल सिंह एम. ए. बी. एस. सी.

'भारत में गाय ही मनुष्य की सब से निकटतम साथी है। वह धन-धान्य की प्रदात्री है और उस से हमें न केवल दूध मिलता है वरन् कृषि-कार्य भी उसी की सहायता से सम्भव होता है। गो मूर्तिमती करुणा है। वह सरल पशु करुणा से ओतप्रोत दिखाई देता है। गाय की रक्षा का अर्थ है जगन्नियन्ता के बनाये सभी मूक जीवों की रक्षा। गो-संरक्षण सम्पूर्ण जगत् के लिये हिन्दुत्व की बहुत बड़ी देन है।

——महात्मा गांधी।

मनुष्य के साथ गाय का सम्बन्ध पुराने जमाने से चला आया है। ऋग्वेद में गोमाता की स्तुति करते हुए कहा गया है——

यन्नियाने न्ययेन सज्ञाने यत् परायणे।
आवर्तनं निवर्तनं यो, गोपा अर्पितं हुवे॥

अर्थात् मैं गो सहित गोष्ठ की प्रार्थना करता हूं। गौओं के गृह आने की प्रार्थना करता हूं। गो-सम्मेलन की भी प्रार्थना करता हूं। चर कर उन के घर आने की प्रार्थना करता हूं। गोपाल की प्रार्थना करता हूं।

भारत के सांस्कृतिक इतिहास में तो मनुष्य के साथ गाय के सम्बन्ध को एक विशेष स्थान प्राप्त है। गाय भारत के आर्थिक तथा सामाजिक जीवन की आधार-शिला के रूप में सदैव सम्मान पाती रही है। संस्कृत ग्रन्थों में अनेक स्थलों पर देवी देवताओं से भी कहीं अधिक गोमाता की अभ्यर्थना की गयी है। उपनिषद् में वर्णित सत्यकाम बालक की कथा तथा पद्म-पुराण के पाताल खंड में राजा ऋतंभर की गाथा गो-सेवा की भावना से अनुप्राणित है। धार्मिक विश्वास, संस्कारों एवं विचारों में भिन्नता होते हुए भी गो के प्रति सब ने अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। गाय के लिये आस्था तथा भक्ति-भावना हमारी विभिन्नताओं में भी एकरूपता की प्रतीक है। चार्वाक् के समान नैतिकता विहीन दार्शनिक ने भी गोमाता के प्रति, अपनी सच्ची भक्ति प्रकट की है। 'ब्रह्मण धर्ममय सुत, जातक ग्रंथ', 'उपासक दशांग-सूत्र', आदि ग्रन्थों में जिस सम्मान से साथ गोमाता का उल्लेख है, वह यह प्रमाणित करता है कि शैव ब्राह्मण तथा शाक्त सभी गोभक्त थे।

पुराने काल में किसी व्यक्ति की समृद्धि का अनुमान इसी बात से लगाया जाता था कि उस के पास कितना गोधन है। आज भी बहुत से स्थानों में कृषक के वैभव का अनुमान उस की भूमि तथा अन्य वस्तुओं से नहीं होता है, वरन् उस के गोधन द्वारा होता है। यह साधारण मापदण्ड वास्तव में उपयुक्त भी है, यदि यह ध्यान में रखा जाय कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश में कृषक भूमि तथा पशु ( गोधन ) तीनों में एक गहरा सम्बन्ध है, जैसे कि इस प्रसंग में आगे चल कर बतलाया जायेगा। भारतवर्ष की अर्थ-व्यवस्था में जितना महत्वपूर्ण स्थान कृषि व्यवसाय का है, उस से भी अधिक गाय का है, क्योंकि वही कृषि व्यवसाय की रीढ़ है तथा हमारे जीवन के मूल व्यापारों में संबन्धित है। कुछ वर्ष पूर्व की गयी पैमाइश के आधार पर सारे देश की स्थिति को आंकते हुए भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् ने यह पता लगाया कि हमारे पशुओं तथा उन के पदार्थों से होने वाली आय, फसलों से प्राप्त होने वाली आय के बराबर या उस से अधिक है। पशुओं से होने वाली वार्षिक आय निम्न तालिका से स्पष्ट हो जाती है——

| | | |
|---|---|---|
| दुग्ध तथा दुग्ध पदार्थ | ८०० | करोड़ रुपये |
| जुताई तथा कृषि श्रम | १२०० | ,, |
| यातायात आदि | ३०० | ,, |
| गोश्त | १२० | ,, |
| खाल हड्डी आदि से | ५० | ,, |
| खाद के लिये गोबर आदि | १००० | ,, |
| योग | ३४७० | करोड़ रुपये |

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उपरोक्त तालिका से गाय का मनुष्य के आर्थिक जीवन तथा कृषि से सम्बन्ध स्पष्ट हो जाता है ऋग्वेद में गाय को मां तथा उस के बछड़े या बैल को पिता कहा गया है। कृषि व्यवसाय की बैल ही मशीन है। इन्जन ट्रैक्टर, मोटर आदि कई गुण निहित हैं। खेत का जोतना, सिंचाई करना, फसल की मडांई करना, उसे ढोकर मण्डियों में ले जाना आदि सब बैल पर निर्भर है। जिस किसान का बैल मरा तो उस की खेती बारी चौपट। खेती का कोई कार्य बिना उस की सहायता लिये नहीं चल सकता। हमारे देश में जहां पर किसान की जोत ढाई एकड़ से अधिक भूमि नहीं है तथा जहाँ का किसान साधन हीन है, मशीनों द्वारा खेती सम्भव नहीं है। यही नहीं कृषि से सम्बन्धित अन्य व्यवसायों में भी बैल की जरूरत पड़ती है, जैसे तेल पेलना, गाड़ी खींचना, चीजों की ढुलाई करना आदि। इस प्रकार भारत की अधिकतर कृषक जनता का जीवन निर्वाह बैल पर ही निर्भर है और प्राचीन वेदों का बैल को बाप कहना ठीक है।

उपरोक्त कारणों से गाय हमारी संस्कृति का एक अङ्ग बन गई है धार्मिक प्रवृत्ति वाले भारतीयों ने इसे धार्मिक रूप भी दे दिया और गाय को इन्ही कारणों से हिन्दुओं ने मां का स्थान दिया है। गाय से हमें दूध, दूध से बने पदार्थ, कृषि के लिये बैल, गोबर आदि उस के जीवन काल में प्राप्त होते रहते हैं तथा मरने पर वही अपना चमड़ा देकर मनुष्यों की सेवा करती है। हमारे सभी महापुरुषों ने धार्मिक ग्रन्थों में गोवंश की तथा उससे होने वाले सभी लाभों के विषय में चर्चा की है। देश के महापुरुषों के जीवन में सम्भवतः इन्हीं आधारों से गो सेवा के परम आदर्श मिला करते हैं। यहां तक कि श्रीकृष्ण जी को भी गो सेवा करने के आधार पर ही गोपाल या गोविन्द कहा जाता है।

बड़े दुःख की बात है कि जिस भारत में गाय को माता माना जाता था वहां आज गोवंश की दशा बड़ी चिन्ताजनक है पशुओं के कद छोटे होने लगे हैं, बैलों के काम करने की शक्ति क्षीण हो गई है और वे रोगों से शीघ्र ग्रसित हो जाते हैं। इन की विभिन्न जातियां खराब हो गई हैं। गोवंश की अवन्नति यहां तक हो गई है कि उस भारत में जहां किसी समय दूध की नदियां बहती थीं आज कल उस देश की गाय प्रति दिन औसतन लगभग एक सेर दूध के हिसाब से देती है। इस प्रकार आज गोवंश की बहुत ही क्षीण दशा है।

इस क्षीण दशा के कई कारण हैं। मेरे विचार में सब से बड़ा कारण रोगों का बढ़ना है। हमारे यहां के पशुओं में जितना रोग फैलता है इतना संसार में कहीं भी नहीं है। रोगों में भी संक्रामक रोगों की संख्या बहुत अधिक होती जा रही है। हमारे देश में रोगों के रोकने का कोई विशेष प्रबन्ध नहीं है। इस गोवंश का प्रति वर्ष रोगों से बहुत ह्रास होता है।

गोधन की हीन दशा होने का एक मुख्य कारण गोवध भी है। पिछले बहुत सालों से देश अंग्रेजों के आधीन था। उन्होंने अपनी अंग्रेजी सेना के लिए मांस की आवश्यकता की पूर्ति के लिये गो तथा उस की संतति का वध बे रोक-टोक होने दिया। जिस से उपयोगी पशुओं की कमी हो गई और बेकार तथा बिमार व कमजोर पशुओं की संख्या बढ़ गई।

किसानों की तथा और लोगों की दरिद्रता के कारण गो के पालन-पोषण की उचित व्यवस्था न रही और उन को उचित आहार मिलना बन्द हो गया। दूसरे चरागाहों की भूमि की कमी होने के कारण पालन-पोषण की समस्या और भी जटिल हो गई। इस के फल स्वरूप गोधन से दूध की उत्पत्ति कम होने लगी और गाय आर्थिक दृष्टिकोण से बजाय लाभकारी के हानिकारक ही गई। इस से बेकार तथा अनुपयोगी पशुओं की संख्या में दिन पर दिन वृद्धि होने लगी।

इसी प्रकार और भी बहुत से कारण हैं जिन से सिद्ध होता है कि हमारी गोमाता की प्रतिदिन हीन दशा होती जा रही है। यदि इस की दशा सुधारने के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रयत्न न किये गये तो कुछ वर्षों में गोवंश की बहुत ही हीन दशा हो जावेगी । इस लिये आज प्रत्येक भारतीय के सामने गो रक्षा का प्रश्न है । अब तक भारत एक पराधीन देश था और इस लिये गो-रक्षा का कोई कार्य करने में असमर्थ था । परन्तु आज वह स्वतन्त्र है । और यही कारण है कि देश में गोरक्षा तथा पशु-धन की उन्नति करने के हेतु सरकार बहुत से कार्य कर रही है ।

इस में कोई सन्देह नहीं कि गाय भारतीय सभ्यता की निशानी है और उस की रक्षा करना प्रत्येक भारतीय नागरिक का पहिला कर्तव्य है । यजुर्वेद के प्रथम मन्त्र में परमात्मा की आज्ञा है कि 'अघ्न्या पशून्पाहि' अर्थात् हे पुरुष ! तू इन पशुओं की रक्षा कर । जिस से तेरी रक्षा होवे । महर्षि जमदग्नि तथा वसिष्ट ने गो रक्षा के लिये अहिंसक तरीके पर अपने प्राणों तक की बाजी लगाई । चक्रवर्ती राजा दिलीप ने गायों को चरा कर केवल गो सेवा ही नहीं की बल्कि गो-रक्षा के लिए अपने प्राणों तक की बाजी लगाने को तैयार हुए । महर्षि च्यवन ने अपने शरीर का मूल्य राजा नहुष का चक्रवर्ती राज्य नहीं एक गाय ही निश्चित किया था । भगवान श्रीकृष्ण की गो सेवा तो प्रसिद्ध है ही । महात्मा बद्ध, भगवान महावीर, गुरु गोविन्दसिंह, सन्त कबीर, गोस्वामी तुलसीदास जी, चैतन्य महाप्रभु, महर्षि दयानन्द जी सरस्वती, पण्डित मदन मोहन मालवीय, महात्मा गांधी तथा देश के अन्य महापुरुषों ने गोरक्षा का जो महत्व भारतीय जनता के सम्मुख रखा है वह हमारे लिये आदर्श है । इस लिये हर व्यक्ति को गो रक्षा के प्रत्येक प्रयत्न को सफल बनाने की चेष्टा करनी चाहिये ।

गो रक्षा का सर्वोत्तम उपाय जो मेरे विचार में आता है वह है गो-सदन । गो-सदनों की स्थापना से गो-रक्षा के सभी प्रयत्न सफल हो जायेंगे । गो रक्षा के और भी बहुत से उपाय हैं । परन्तु मेरे विचार में यह उपाय सब से अच्छा है, क्योंकि वे सभी उपाय जो इस के अतिरिक्त किये जाते हैं इस के अन्तर्गत आ जाते हैं । मैं अब यह बता देना उचित समझता हूं कि गो-सदन क्या हैं ? जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि हमारे देश के पशुओं की वर्तमान हीन दशा का सब से बड़ा कारण यह है कि वृद्ध, बेकार और अनुत्पादक पशुओं की संख्या दिन प्रति दिन बढ़ती जाती है । ऐसे पशुओं के रखने से न तो दुग्ध उत्पादन में वृद्धि होती है और न उस की सन्तति खेती आदि के ही योग्य रहती है । हमारे यहां गो-वध बन्द होने पर यह समस्या और भी जटिल बन गयी है । अतः इन बेकार छुट्टे पशुओं को आबादी से दूर रखने के लिये केन्द्रीय गोसंवर्द्धन परिषद् की सहायता से हमारी प्रदेशीय सरकार ने गो-सदन स्थापित करने की योजना बनाई है । इन गो-सदनों में छुट्टे तथा बेकार पशु रखे जावेंगे । जो कि जनता पर भार बने हुये हैं । फिलहाल दो ही गो-सदन स्थापित किए गये हैं । एक गरजियासोत जिला नैनीताल में और दूसरा मलगवां, जिला इटावा में है । भविष्य में ६ और गो-सदन खोलने का प्रबन्ध किया जा रहा है जिन में गढ़मुक्तेश्वर जिला मेरठ में, एक गुरुकुल कांगड़ी पुण्य भूमि जिला सहारनपुर में, और एक जिला कानपुर आदि में होंगे ।

गोसदन का गोरक्षा में बहुत अधिक महत्व है । क्योंकि इन की स्थापना से गोरक्षा के अधिकतर उपाय सफल हो जाते हैं । सर्व प्रथम तो अपाहिज अनुत्पादक पशुओं की संख्या बढ़ गई है उन को रखने की समस्या हल हो जाती है । आजकल के पशु सड़कों की गलियों व सड़कों पर पत्ते तथा झूठन चाटते फिरते हैं, यातायात में इन के कारण बहुत असुविधा होती है । अनियमित प्रजनन कर के ये नसल को और खराब करते हैं । गोसदनों में इन्हें रख कर ये सब खराबियां दूर हो जायेंगी ।

जो बेकार व अपाहिज पशु गो-सदनों में भेज दिये जाते हैं उनके पालन-पोषण का भार जनता से हट जाता है । जो चारा दाना आदि ये बेकार पशु

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

खाते हैं वह अब बच जाता है और स्वस्थ व उत्पादक पशुओं के लिये प्राप्त हो जाता है जिससे दुग्ध उत्पादन में भी वृद्धि हो जाती है और उस चारे दाने का भी जो पहिले बेकार पशुओं को खिलाया जाता था सदुपयोग हो जाता है।

गो-रक्षा के प्रयत्नों में गो-वध को बन्द करने का उपाय भी मुख्य है। परन्तु यदि गो-वध न किया जाय तो बेकार पशुओं की संख्या में वृद्धि होती है। दूसरे गो-वध से हानि यह है कि जो अच्छे और बढ़िया पशु होते हैं उनका वध हो जाता है और उत्पादक व अच्छे पशुओं की संख्या घट जाती है। गो-सदन की स्थापना से ये दोनों बातें दूर हो जाती हैं। गो-वध बन्द हो जाने के पश्चात् जो बेकार पशुओं की संख्या में वृद्धि होगी तो उनकी समस्या उनको गो-सदनों में भेज कर हल हो जाती है। दूसरे जब गो-वध ही नहीं होगा तो अच्छे व उत्पादक पशुओं का वध भी नहीं होगा। जो बेकार व अनुत्पादक पशु होते हैं वे खुले छुटे रहने के कारण अवारा फिरते हैं और फसलों को उजाड़ते फिरते हैं। जब उनको गो-सदनों में भेज दिया जावेगा तो उनसे होने वाली फसलों की यह हानि भी बच जावेगी।

अब जो बेकार तथा अपाहिज पशु मरता है तो उसको बहुधा आवादी के पास नदी नालों के किनारे या आस-पास के जंगल में यों ही छोड़ दिया जाता है। बहुत हुआ तो उसकी खाल निकाल ली जाती है और मांस पिण्ड कौवों, गिद्धों, सियार और कुत्तों के लिये छोड़ दिया जाता है। इन लाशों की दुर्गन्ध बहुत दिनों तक वहां से गुजरने वाले व्यक्तियों को नाक बंद करके चलने को विवश करती है। इस गन्दगी तथा दुर्गन्ध से बहुत से रोग फैलते हैं जो दूसरे स्वस्थ पशुओं को रोग ग्रस्त कर देते हैं। गो-रक्षा का एक उपाय गो-धन को रोगों से बचाने का भी है। तो यह भी उपाय गो-सदनों से हल हो जाता है। क्योंकि वहां पर जो पशु अपनी मौत मरता है तो मरने के बाद उसका उचित प्रबन्ध हो जाता है। गो-सदन में ही चमड़े के कारखाने खोल दिये जाते हैं। जहां पर मरे पशुओं की खाल, सींग, बाल व खुर आदि का उचित उपयोग हो जाता है। इससे मरे पशु मरने के बाद भी मनुष्य को आर्थिक लाभ पहुंचाते हैं तथा बीमारी फैलने के कारण भी नहीं बनते।

गो-रक्षा का एक मुख्य उपाय यह भी है कि गोधन के गोमूत्र तथा गोबर को बेकार न जाने दिया जाय और इसका सदुपयोग करके जो लाभ गो-माता दे सकती है लिया जाय। इसके बारे में महा-भारत में भी लिखा है "लक्ष्मी मूत्रे पुरीषे तथा" अर्थात् गोबर और मूत्र में साक्षात् लक्ष्मी का निवास है। यह कथन केवल अलंकारिक ही नहीं है बल्कि यथार्थ में सही भी है क्योंकि कम्पोस्ट खाद ( जो गो-मूत्र व गोबर से बनाया जाता है ) में पौधों के तीनों आवश्यक अंग नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश विद्यमान होते हैं। यही धरती का बैंक है। इसमें गोबर, गो-मूत्र, कूड़ा या और भी जो कुछ किसान के पास धरती की अमानत हो प्रतिदिन नियमपूर्वक जमा की जाती है। जब-जब आवश्यकता पड़े इस बैंक में से लक्ष्मी रूपी गोबर, गो-मूत्र की खाद निकाल कर धरती की भेंट की जा सकती है और बैंक को फिर भर दिया जाता है। इस प्रकार जहां गो-सदन की स्थापना होगी वहां पर ऐसे के धरती के बैंक अर्थात् कम्पोस्ट बनाने का कार्य बहुत बड़े पैमाने पर चलाया जा सकता है और गो-रक्षा का यह लाभ भी इन गो-सदनों की स्थापना करके प्राप्त किया जा सकता है।

यहां पर यह भी आवश्यक है कि गो-सदनों की सफलता के लिये उनके विषय में संक्षेप में बता दिया जावे। गो-सदनों को ऐसी जगह पर बनाया जाय जहां घास की अधिकता हो। वहां पर पशुओं के रहने के लिये बाड़े बनवाए जांय और उनकी देख रेख के लिये कर्मचारी रखे जांय जिनको पशु उपचार की शिक्षा दी गई हो। ★

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# अंग्रेज़ी-संस्कृत-हिन्दी शब्दकोष

[ गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय से तय्यार किये जा रहे कोष का नमूना यहां दिया जा रहा है। इस से हमारे पाठकों को इस की उपयोगिता का ज्ञान होगा। इस सम्बन्ध में यदि कोई विद्वान् कुछ सुझाव देंगे तो उस का भी हम स्वागत करेंगे। ——सम्पादक। ]

| English | संस्कृत शब्दाः | हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाएँ |
|---|---|---|
| A. a ( n ) | १. आंग्लवर्णमालायाः प्रथमाक्षरम् । ( बी० ग० ) प्रथमं ज्ञातपरिमाणम् । ( त० शा० ) प्रथमकल्पितव्यक्तिर्वस्तु वा। ( सं० शा० ) पाश्चात्यसंगीतपद्धतौ स्वरविशेषः। | १. अङ्गरेजी वर्णमाला का प्रथम अक्षर। ( बी० ग० ) प्रथम ज्ञातपरिमाण वा राशि। ( त० शा० ) पहला कल्पित व्यक्ति वा पदार्थ। (सं० शा०) पश्चिमी संगीतशास्त्र में स्वर विशेष। |
| A. an. | २. अनियतोपपदं यद् व्यंजनैः सह ए इति, स्वरैश्च सह ऐन् इति रूपेण प्रायः प्रयुज्यते। | २. अनियत उपपद जो व्यंजनों के साथ प्रायः ए रूप में तथा स्वरों के साथ ऐन् रूप में प्रयुक्त किया जाता है। |
| | ३. ( पु० ) एकः। ( नपुं० ) एकम्। (स्त्री०) एका। ( पु० ) कश्चित्। ( नपुं० ) किंचित्। ( स्त्री० ) काचित्। | ३. एक, कोई। |
| | ४. प्रत्येकम्। | ४. प्रत्येक। यथा—— |
| Twice a day. | प्रतिदिवसं द्विः। | दिन में दो वार। |
| Thrice a month. | प्रतिमासं त्रिः। | महीने में तीन वार। |
| | ५. जातिवर्गादिसूचकम्। | ५. जाति अथवा वर्ग विशेष का सूचक। |
| Dog is an animal. | श्वा प्राणिविशेषः। | जैसे——कुत्ता एक प्राणी है। |
| A ( prep. ) | ६. उपसर्गरूपेण क्वचित् प्रयुज्यते। यथा चतुर्थ्यर्थ— | ६. उपसर्ग रूप में भी कहीं-कहीं ए का प्रयोग होता है। जैसे—चतुर्थी के अर्थ में |
| a-hunting | मृगयां कर्तुम्। | शिकार खेलने के लिये। |
| a-begging. | भिक्षां याचितुम्। | भीख मांगने के लिए। |
| | सप्तम्यर्थे यथा— | सप्तमी के अर्थ में यथा— |
| a-bed | शय्यायाम्। | शय्या वा बिछौने पर, |
| a-board | पोतफलके। | जहाज के तख्ते पर, |
| a-shore | तीरे। | (समुद्रादि) के किनारे पर। |
| Al ( Naut. ) | (नौ०) प्रथमवर्गपोतः। (प्रचलितभाषायाम्) | (नौ०) लायड् के रजिस्टर में प्रथम श्रेणी का जहाज। |
| ( adj. ) | अत्युत्तमः, श्रेष्ठः, आदर्शभूतः। | (प्र०भा०) बहुत ही अच्छा, सब से उत्तम, आदर्श रूप। गु० म० बं० एक। |

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

| | | |
|---|---|---|
| Aar. ( n ). | अन्तर्नदी । | अन्तर्नदी——भूमि के अन्दर अन्दर बहने वाली नदी । |
| Aard vark ( n ). | भूशूकरः——दक्षिण अफ्रीकादेशीयो वराह-सदृश एकः प्राणिविशेषः । | भू-शूकर——दक्षिण अफ्रीका का सूअर जैसा एक चौपाया जानवर । |
| Aard wolf. ( n ) | चित्रवृकः——दक्षिणाफ्रीकादेशीयो वृकसदृशो जन्तुविशेषः । | चित्रवृक——भेड़िये की सी आकृति वाला एक जानवर । |
| Aaron's beard ( n ). | वृद्धकूर्चो वनस्पतिवर्गविशेषः । | वृद्धकूर्च——एक प्रकार के पौदों का वर्ग जो गमलों में बो कर छत, वृक्ष आदि से लटका दिए जाते हैं और जो दाढ़ी के समान आकृति के होते हैं। |
| Aaronic ( adj ) | यहूदीमते प्रथममहापुरोहितविषयकम् । | यहूदियों के बड़े पादरी से सम्बन्ध रखने वाला । |
| Aaron's rod (n) | ( वन० ) प्रांशुको वनस्पतिवर्गविशेषः । ( धर्म० ) बाइबलग्रंथानुसारं यहूदीपुरोहितस्यैरनस्य चामत्कारिको दण्डः । | ( वन० ) ऊँचे पुष्पित तनों वाले पौधों का एक वर्ग । ( धर्म० ) बाईबल के अनुसार यहूदी पुरोहित ऐरन का चमत्कार-पूर्ण डण्डा । |
| Aasvogel ( n ). | गृध्रः । द्राक्षाय्यः । | गीध । |
| Ab. ( n ). | यहूदी संवत्सरस्यैकादशो मासः । | यहूदियों के वर्ष का ग्यारहवाँ मास । |
| Ab ( pref ). | लैटिन उपसर्गः । अप दूरे, परे इति वाचकः । | दूर परे, अलग वाचक लैटिन का उपसर्ग । |
| Aba ( n ) | सीरियाप्रदेशीयमूर्णामयं वस्त्रम् । | सीरिया देश का ऊनी वस्त्र । |
| Aback ( adv ). | क्रिया विशेषणम्——पृष्ठतः इति वाचकम् । | ( क्रि० वि० ) पीठ की ओर, पिछली ओर । |
| Taken aback | चकितः, विस्मितः, परिस्तब्धः । | आश्चर्यान्वित या हैरान । क० चकित । बं०–अवाक् । |
| Abaction ( n ). | पशुचौर्यम्, पशुस्तेयम्, यूथहरणम् । | पशुओं की चोरी । |
| Abactor ( n ). | पशुचौरः, पशुस्तेनः । | पशुओं की चोरी करने वाला । |
| Abaculus ( n ). | ( स्था० शा० ) चित्रखर्परिका । | (स्था० शा०) चित्रखर्परिका-एक प्रकार का खपरैल । |
| Abacus ( n ) | ( शि० शा० ) गणनायन्त्रविशेषः, गोलकचतुरस्त्रम्, अंकगणकम् । ( स्था० शा० ) स्तम्भशीर्षतलम्, शीर्षफलकम् । ( त० शा० ) पदसमूहयंत्रम् । | ( शि० शा० ) तारों पर मनकों या लट्टुओं के रूप में बच्चों को गिनती सिखाने का एक उपकरण । (स्था० शा०) स्तम्भशीर्षतल या खंभे के ऊपर लगाने का चौरस पत्थर । ( त० शा० ) पद- |

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

| | | |
|---|---|---|
| | | समूह यंत्र अथवा शब्द समूह दिखाने वाला एक यंत्र विशेष । ते० गणना यंत्रमु अथवा गणना फलकमु । मल० गणनोपकरणम् । |
| Abaddon ( n ) | पातालम्, नरकः, विनाशस्थलम् । | पाताल, नरक, विनाश का स्थान । |
| Abaft ( adv. pre. ) | ( क्रि० वि० ) पश्चात्, प्रत्यक् ( वै० सं० ) अव्ययपदम् । | जहाज की पतवार की ओर, पिछली ओर, पीछे । |
| Abalienate ( v. t. ) | ( विधि० शा० ) अन्यस्मै संक्रम् प्रे० ( संक्रामयति ) क्रमु—पाद विक्षेपे, भ्वा० प० । | ( वि० शा० ) किसी संपत्ति का अधिकार दूसरे व्यक्ति को देना । |
| Abalienation ( n ) | ( वि० शा० ) अन्यसंक्रमणम् । | ( वि० शा० ) किसी सम्पत्ति का अधिकार दूसरे को देने का कार्य । |
| Abandon (v. t.) | परि+त्यज्—भ्वा० प० ( परित्यजति ) ओहाक्-त्यागे—जुहोत्यादिः प० ( जहाति ) उज्झ् तुदादिः प० ( उज्झति ) अप+अस् दिवादिः प० ( अपास्यति ) मुच् तुदादि० प० ( मुञ्चति ) उत्+सृज् तुदादिः प० ( उत्सजति ) । | त्यागना, छोड़ देना, बन्द कर देना । क्रूरता या निर्दयता से छोड़ देना । ता० अलक्ष्यम् चेय । बं० परित्याग करा । मल० उपेक्षिक्क, त्यजिक्क, उत्सर्जिक्क । आ० त्याग करा । |
| Abandon one self to despair. | नैराश्यप्रवाहे निमज्जनम् । | निराशा के प्रवाह में बह जाना । अपनी भावनाओं को वश में न रखना । |
| He was abandoned to his fate. | स दैवाधीनः कृतः । स दैवायत्तः कृतः । | वह भाग्य पर छोड़ दिया । |
| Abandon. | नियन्त्रणस्य संयमस्य वा परित्यागः । | नियन्त्रण वा संयम का परित्याग । |
| Desert. | मित्रपोष्यादिकं प्रति कर्त्तव्यपरित्यागः । | मित्र, स्त्री आदि के प्रति कर्त्तव्य का परित्याग करना । |
| Forsake. | सम्बन्धविच्छेदः । | सम्बन्ध विच्छेद करना । |
| Abandoned ( adj ) | परित्यक्तः, पापात्मा, हीनः, भ्रष्टचरितः, उछृङ्खलः । 'त्यक्तं हीनं विधुतं समुज्झितं धूतमुत्तसृष्टम्' इत्यमरः । | त्यागा हुआ, हीन, दुष्ट, पापी, बदमाश । म० व्यसनासक्त, धर्मबाह्य, नीतिभ्रष्ट । क० भ्रष्ट, दुष्ट, विषयान्ध । बं०—लम्पट । मल० हीन, त्यक्त, परिवर्जित, उपेक्षित । |
| Reprobate | घोरपापकरणाज्जनैर्बहिष्कृतः । घोरपापी । | घोर पाप के कारण लोगों द्वारा बहिष्कृत । |

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

| | | |
|---|---|---|
| | | क० परमपापी । ते० नीचातिनीच । |
| Profligate | निर्लज्जतया पापाचरणे प्रवृत्तः, निर्लज्ज-पातकी । | निर्लज्जतापूर्वक पापाचार में प्रवृत्त । क० विषय लम्पट । मल० दुष्ट, धूर्त, विषयी । |
| Dissolute | परित्यक्तसर्वसंयमो दुराचारी, विषयान्धः । | ऐसा दुराचारी जिस ने सारे संयम का त्याग किया हो । विषयान्ध । क० दुर्व्यसनी । ते० दुष्प्रवर्तनगल । म० भोगासक्त, विषयसुख निरत, इन्द्रिय तत्पर । |
| Abandonment (n) | परित्यागः, उत्सर्गः, परित्यजनम् । | परित्यजन, परित्याग । गु० परित्याग । म० स्वसत्ता विमुक्ति । ते० सम्पूर्ण त्यागमु । क०–परित्याग । मल० त्यागम्, उत्सर्गम् । |
| Abandonment of Claim | अधियाचनायाः परित्यागः, परित्यजनं वा । | दावे का त्याग । |
| Abase (v. t.) | अभि+भू० प० ( अभिभवति ) स्व स्थानात् नि+पत् प्रे० ( निपातयति ) लघु+कृ० तनादि० उ० प० ( लघूकरोति, लघूकुरुते ) अप+कृष्, भ्वा, प० ( अपकर्षति ) । | मान घटाना, पद या मान की दृष्टि से नीचे गिराना, अनादर करना, ज़लील करना । |
| Abasement (n) | अपकर्षः, मानभंगः, अभिभवः, अवज्ञानम्, अवमानम् । | अनादर, अपमान, बेइज्ज़ती । गु० म० क० मानभंग, अवज्ञा, हीनता, अपमान । मल० अवज्ञानम् । |
| Abash. (v. t.) | ओलजि० तु० आ० ( लज्जते ) ह्री० जु० प्रे० ( ह्रेपयति ) त्रप्० भ्वा० आ० प्रे० ( त्रपयति ) । | लज्जित करना, लजाना, शर्माना, शर्मिन्दा करना, घबरा देना, पानी पानी करना । |
| Abaseed (adj) | लज्जितः, त्रपितः, व्रीडितः, ह्री–परिगतः, ह्रीणः, ह्रीतः । "ह्रीण ह्रीतौ तु लज्जिते" इत्यमरः । | लज्जित, शर्मिन्दा, हयादार । क० लज्जित, भंगित । मल० व्रीडित । बं० सलज्ज । |
| with an abashed countenance. | त्रपाधोमुखः । | लज्जा से नीचे मुखवाला । |
| Abashment (n) | लज्जा, त्रपा, ह्रीः, व्रीडा । | लज्जा, शर्म, लाज, हया । क० लज्जे । मल० लज्जा, व्रीडा । |

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# साहित्य-परिचय

[ समालोचना के लिये प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ आनी आवश्यक हैं—सम्पादक ]

## आँन दि वेदाज़

लेखक—श्री अरविन्द। प्रकाशक श्री अरविन्द आश्रम, पाण्डिचेरी। पृ० ६६६, मल्य १०)

श्री अरविन्द ने वेदों के विषय में विशेष अनुशीलन कर के 'आर्य' नामक त्रैमासिक पत्र में वेद रहस्य के नाम से एक लेखमाला कई वर्षों तक प्रकाशित की थी। उस में वेदों के मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक रहस्य बताये गये थे और सायणाचार्य तथा पाश्चात्य विद्वानों की वेद विषयक अशुद्ध कल्पनाओं का सप्रमाण-निराकरण किया गया था। इसके साथ ही सिलेक्टेड हिम्स के नाम से अगस्त १९१४ से जुलाई १९१५-तक एक लेखमाला में श्री अरविन्द ने अनेक वैदिक-सूक्तों की व्याख्या की थी। हिम्स ऑफ़ दि अत्रीज़ के नाम से अगस्त १९१५ से दिसम्बर १९१७ तक एक लेखमाला में श्री अरविन्द ने अग्न्यादि विषयक अनेक वैदिक सूक्तों की व्याख्या की थी जिन में से अग्नि देवता के सूक्तों की व्याख्या हिम्स आँफ़ दि-मिस्टिक फायर के नाम से पृथक् रूप में भी प्रकाशित की जा चुकी है।

अदर हिम्स के नाम से अन्य कई वैदिक सूक्तों की व्याख्या अगस्त १९१५ से जनवरी १९२० तक 'आर्य' में प्रकाशित होती रही। इस पुस्तक में श्री-अरविन्द के वेद विषयक इन सब लेखों और वैदिक-सूक्त व्याख्याओं के संग्रह के अतिरिक्त अन्त में ओरिजन आँफ़ दि आर्यन स्पीच पर एक अत्यन्त महत्वपूर्ण लेख है जिस में पाश्चात्य भाषाविज्ञान की अनेक अशुद्धियों का निर्देश करते हुए आर्यभाषाओं के मूल पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। इस प्रकार यह पुस्तक अंग्रेज़ी जानने वाले सुशिक्षित लोगों के लिये अत्यन्त उपयोगी हो गई है जिस से मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक दृष्टि से वेदों का महत्व उनके हृदय पर अङ्कित होगा इस में कोई सन्देह नहीं।

श्री अरविन्द महर्षि दयानन्द की वेदभाष्य शैली के अत्यन्त प्रशंसक थे। इस पुस्तक के पृ० ३७ से ३९ तक उस के विषम में विवेचन करते हुए उन्होंने लिखा है कि तीसरी भारतीय सहायता तिथि में अपेक्षया कुछ पुरानी है परन्तु मेरे वर्तमान प्रयोजन के अधिक समीप है। यह है वेद को फिर से एक सजीव धर्मग्रन्थ के रूप में स्थापित करने के लिये आर्य-समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द के द्वारा किया गया अद्भुत प्रयत्न। दयानन्द ने पुरातन भारतीय भाषा-विज्ञान के स्वतन्त्र प्रयोग को अपना आधार बनाया जिसे कि उसने निरुक्त में पाया था। स्वयं संस्कृत का एक महा विद्वान् होते हुए, उसने अपने पास जो सामग्री थी उस पर अद्भुत शक्ति और स्वाधीनता के साथ विचार किया। ......दयानन्द ने ऋषियों के भाषा सम्बन्धी रहस्य का मूल-सूत्र हमें पकड़ा दिया है और वैदिक धर्म के एक केन्द्र भूत विचार पर फिर से बल दिया है, इस विचार पर कि जगत् में एक परमेश्वर की सत्ता है और भिन्न-भिन्न देवता अनेक नामों और रूपों से उस देव की ही महिमा को पुकारते हैं। इत्यादि

अनेक वैदिक अलंकारों की आध्यात्मिक और मनोवैज्ञानिक व्याख्या इस ग्रन्थ में की गई है, जिनको सायणाचार्यादि मध्यकालीन भाष्यकार तथा यूरुप के विद्वानों ने समझने में भूल की थी। अग्नि, इन्द्र, सोम, सूर्य, उषा, सरस्वती, वरुण, बृहस्पति इत्यादि देवताओं पर पर्याप्त विस्तृत विचार करते हुए और अनेक सूक्तों की व्याख्या करते हुए उनके क्रमशः Divine or illumined will, Divine mind, Intoxication of the Ananda, The Sun of the Superconscient Truth The Divine Dawn who is

( शेष पृष्ठ १२८ पर )

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल समाचार

## ऋतु-रङ्ग

दीपावली के बाद से करारा जाड़ा पड़ रहा है। दीपावली से दो दिन पूर्व ही अच्छी बारिश हो जाने से प्रकृति में शीत की मात्रा बढ़ गई थी। उक्त बारिश के कारण ही गेहूं, चने आदि की बुआई में पन्द्रह दिन का विलम्ब हो गया। वर्षा के वातावरण के कारण खाँसी, जुकाम, श्लेष्मज्वर आदि का भी उपद्रव बना रहा। अब मौसम अच्छा है। हेमन्त ऋतु की अच्छी सर्दी पड़ रही है। पूर्व दिशा से आने वाली ढाढू-पवनें भी अपने जोर पर हैं। कुलवासियों का स्वास्थ्य अच्छा है।

## विशेष व्याख्यान

श्री अरविन्द आश्रम पांडिचेरी के अन्तर्राष्ट्रिय विद्या-मंदिर में अन्तर्राष्ट्रिय विषयों के प्रोफेसर डाक्टर जय-होम स्मिथ (मूलतः अमेरिकावासी) महाशय ने गुरुकुल कांगड़ी की शरत्कालीन व्याख्यानमाला के सिलसिले में "शांति की साधना" विषय पर एक विचारोत्तेजक व्याख्यान दिया। आपने बतलाया कि विश्व में शांति स्थापना के उपायों पर अनेक महापुरुषों और विद्वानों ने गहन विचार-मंथन किया है। प्रभावशाली पुरुषों ने शांति-साधना के लिये अनेक राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक योजनाएं प्रस्तुत की हैं। परन्तु विश्वशांति अभी तक एक चिन्तनीय समस्या बनी हुई है। हार्वर्ड विश्वविद्यालय के एक विख्यात समाज-शास्त्री इस दिशा में अपने गहरे चिन्तन और प्रयोगों द्वारा इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि मानव जाति के संत, महात्मा और आध्यात्मिक महापुरुष अपनी तप-साधना द्वारा जीवन-विकास की जिस सात्विक उर्ध्वभूमिका और चित्तवृत्ति पर पहुंचते रहे हैं उसी प्रकार के चेतना-स्तर पर पहुंचे बिना मनुष्य व्यक्तिगत रूप में और सामाजिक रूप में शांति नहीं प्राप्त कर सकता। विद्वान् व्याख्याता महोदय की सम्मति में भारत के दार्शनिक शिरोमणि श्री अरविन्द जी अपनी योग-पद्धति से उसी प्रकार की ऊंची चेतना का साक्षात्कार कर रहे थे। उनकी साधना को हम अधिमानस की साधना कह सकते हैं। उसके द्वारा मनुष्य की चेतना का उर्ध्वीकरण संभव है और उसी के द्वारा मानव की आत्मा का दिव्य रूपान्तर हो सकता है। उस पद्धति से निश्चय से ही मानव व्यक्ति और समष्टि रूप में शांति लाभ कर सकता है। व्याख्याता महोदय ने यह भी सूचित किया कि असांप्रदायिक राज्य होते हुए भी भारत को अपने महापुरुषों द्वारा किये गये सफल आध्यात्मिक प्रयोगों का प्रचार और उनका–स्पष्टीकरण पश्चिम के राष्ट्रों के सामने करना चाहिये। जिससे भारत की साधना का लाभ अन्यराष्ट्र और व्यक्ति भी उठा सकें।

२४ नवंबर को उत्तर प्रदेशीय पशुपालन विभाग के संचालक श्री पी० जी० पांडे का पशुपालन की समस्या पर अनुभवपूर्ण व्याख्यान हुआ। विदेशों में पशुपालन की रीतियों के मनोहर उदाहरणों से भाषण-अधिक आकर्षक बन गया था। समस्त कुलवासियों ने दिलचस्पी से व्याख्यान सुना।

## ज्ञानयात्री मंडलियाँ

दीपावली छुट्टियों में प्रतिवर्ष अनेक शिक्षण संस्थाओं के छात्र अपने गुरुजनों के साथ ज्ञानयात्रा के लिये निकल पड़ते हैं। पिछले दिनों निम्नलिखित संस्थाओं के छात्र गुरुकुल अवलोक के लिए आये।

१. प्रशिक्षण महाविद्यालय—भागलपुर।
२. विद्यामंदिर, कारवण, बडोदा।
३. जोडिया हाईस्कूल, जोडिया, सौराष्ट्र।
४. औफ हाईस्कूल, बड़ोदा।
५. सरस्वतीमंदिर हाईस्कूल, अहमदाबाद।
६. वुडस्टाक स्कूल, मसूरी।
७. महाराष्ट्र शिक्षण मंडल, अहमदाबाद।
८. नीलरतन सरकार मेडिकल कालेज, कलकत्ता।
९. लॉ कालेज, अहमदाबाद।
१० हिन्दू इन्टर कालेज, नगीना, बिजनौर।
११. हरिपुरा गर्ल्स स्कूल, सूरत।
१२ नूतन सर्व विद्यालय, विसनगर; गुजरात।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१३ आयुर्वेद विद्यालय, उदयपुर।
१४ आयुर्वेद महाविद्यालय, बेगूसराय, बिहार।
१५ सैनिक स्कूल, देहरादून।
१६ आयुर्वेद महाविद्यालय, जयपुर।
१७ सरकारी कृषि विद्यालय, झाँसी।
१८ सरकारी कृषि विद्यालय, इटावा।

## वाक्स्पर्धा में विजय

मुजफ्फरनगर के डी० ए० वी० कालेज द्वारा आयोजित हिन्दी भाषण प्रतियोगिता में गुरुकुल के प्रतिनिधि ब्र० नपेन्द्रकुमार और ब्र० प्रशांतकुमार विजयी हुए हैं और चाँदी का विजयोपहार लाये हैं। वादविवाद का विषय यह था—'पंचशील द्वारा ही विश्वशांति सम्भव है।' इस स्पर्धा के साथ आशु-भाषण प्रतियोगिता भी शामिल थी। दोनों प्रकार की स्पर्धाओं में सब से अधिक अङ्क प्राप्त करने वाली संस्था को विजयचिह्न देना नियत किया गया था। सो नियमानुसार गुरुकुल के प्रतिनिधि ही दोनों में प्रथम आये और विजयोपहार के अधिकारी बने। बधाई है।

## प्रेमोपहार

हिन्दी के प्रतिष्ठित उपन्यास लेखक श्री गुरुदत्त जी ( दिल्ली ) ने अपनी समस्त कृतियाँ ( जिन का मूल्य कोई सवा सौ रुपये होगा ) प्रेम-पूर्वक गुरुकुल के ग्रंथालय को भेंटस्वरूप प्रदान की हैं। श्री गुरुदत्त जी गुरुकुल के पुराने स्नेही हैं। सदा ही कुल के प्रति उनकी प्रीति रही है। समस्त कुलवासी उन के इस सात्विक और स्नेह-पूर्ण उपहार के लिए उन के वंशवद और कृतज्ञ हैं।

## अभिनन्दन

प्रतिष्ठित लोक-सेवक और कुल के सुयोग्य स्नातक श्रीयुत अमरनाथ जी विद्यालंकार पिछले दिनों पंजाब के आरोग्य-मन्त्री बनाये गये हैं। श्री अमरनाथ जी ने सन् १९२५ में स्नातक बनते ही पंजाब में लोकसेवा करने के लिए दीक्षित हो गए थे। वे पंजाब-केसरी लाला लाजपतराय जी द्वारा संस्थापित लोक-सेवक संघ के सदस्य बने और सर्वात्मना लोकसेवा के व्रती बन गये। वे अर्थशास्त्र और राजनीति-शास्त्र के अच्छे ज्ञाता हैं। सार्वजनिक जीवन में उन्होंने अपने शील, चारित्र्य और तप से अच्छी प्रतिष्ठा और लोकप्रियता प्राप्त की है। कुलवासी उनकी इस यशःपूर्ण उपलब्धि पर उन का प्रेमपूर्वक अभिनन्दन करते हैं।

## गोपाष्टमी

गोपाष्टमी के दिन गुरुकुलीय कृषि-विद्यालय के तत्वावधान में एक गोप्रदर्शनी का आयोजन किया गया था। उस में गुरुकुल के कार्यकर्त्ताओं ने तथा समीपस्थ ग्रामों के किसानों ने अपनी बछड़ियाँ, बछड़े, बैल और गौएँ प्रस्तुत की थीं। बढ़िया नमूनों वाले कई गोपालकों को पुरस्कार दिए गए।

## श्रद्धानन्द जन्म-शताब्दी

पाठकों को यह जान कर प्रसन्नता होगी कि आर्य सार्वदेशिक सभा ने इस वर्ष गुरुकुल के वार्षिक उत्सव के अवसर पर कुलपिता स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज की जन्म-शताब्दी मनाने का निश्चय किया है। शताब्दी के देश व्यापी विविध आयोजनों में हमारी योजना गुरुकुल-पत्रिका का एक विशाल विशेषांक निकालने की है। इस में स्वामी जी के जीवन के सम्बन्ध में तथा उन के कार्यकलाप के बारे में अधिकारी विद्वानों, समाज व देश के नेताओं के लेख, कविताएँ, संस्मरण आदि प्रकाशित किए जावेंगे। अपने कृपालु लेखकों से हमारी प्रार्थना है कि वे अपनी रचनाएँ यथासम्भव शीघ्र भेजने की कृपा करें।

स्वामी जी के जीवन के विविध पहलुओं से संबद्ध फोटो, चित्र या स्कैच जिन महानुभावों के पास सुरक्षित हों वे हमें प्रकाशित करने के लिए भेज देंगे तो बड़ी कृपा होगी। यदि वे चाहेंगे तो चित्रों का उपयोग करने के बाद हम उन्हें सुरक्षित लौटा देंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## शोक-वार्ता

आर्यजगत् के विख्यात विद्वान् और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामन्त्री श्री स्वामी वेदानन्द जी के एकाएक अवसान का समाचार जान कर सब कुलवासी बहुत शोकित हुए। उन के सम्मान में गुरुकुल के सब विभाग बन्द कर दिये गये। आचार्य श्री प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति की अध्यक्षता में कुलवासियों ने एक शोकसभा कर के निम्नलिखित प्रस्ताव द्वारा उन की महान् सेवाओं के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की।

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय के समस्त निवासियों की यह सभा गुरुकुल की स्वामिनी सभा के महामन्त्री और आर्य-जगत् के सुविदित विद्वान् श्री स्वामी वेदानन्द जी के अवसान पर अतिशय खेद प्रकट करती है। प्रशंसित स्वामी जी ने अपना समस्त जीवन विद्यानुशीलन, धर्मसेवा और लोकसेवा में व्यतीत किया था। वाणी और लेखनी द्वारा उन्होंने आर्य-समाज की कीमती सेवाएँ की थी। उन के उठ जाने से आर्य-जगत् में एक जागरूक विद्वान् और पुरुषार्थी मिशनरी का स्थान खाली हो गया है। कुलवासी उन की क्षति को अपूरणीय समझते हैं। आर्य संन्यासी के नाते समस्त जगत् ही उन का परिवार था। अतः आर्यजगत् के प्रति कुलवासी अपनी समवेदना प्रकट करते हुए भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि वह श्री स्वामी जी की दिवंगत आत्मा को शान्ति और सुगति प्रदान करें।

---

## साहित्य-परिचय

१२५ पृष्ठ का शेष

bringer of illumination, Divine Word, who represents the stream of inspiration, that descends from the Truth consciousness, Power of wideness and Purity, The Power of Soul or the master of the creative word आदि अर्थ किये हैं जिन से वेदों के रहस्य समझने में बड़ी सहायता मिल सकती है।

श्री अरविन्द ने वेदों को ईश्वर प्रेरित पवित्र ज्ञान के रूप में स्वीकार किया है। यद्यपि किसी-किसी वाक्य से पाठकों को यह भ्रम हो सकता है कि श्री अरविन्द के अनुसार ऋषि मन्त्रकर्ता है पर उन्होंने अन्यत्र इस बात को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि 'ऋषि सूक्त का वैयक्तिक रूप से स्वयं निर्माता नहीं था। वह तो द्रष्टा था एक सनातन सत्य का और एक अपौरुषेय ज्ञान का।

हम इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ का अभिनन्दन करते हैं जिस से अङ्ग्रेज़ी शिक्षित जनता के वेदविषयक अनेक अशुद्ध विचार दूर होंगे और उसे वेदों का महत्व ज्ञात होगा। यह दुःख की बात है कि जहाँ वैदिक सूक्तों की व्याख्या है वहां वेदमन्त्र देवनागरी लिपि में नहीं दिये गये। यद्यपि व्याख्या में कहीं कहीं रोमन लिपि में सम्पूर्ण मन्त्रों अथवा मन्त्रांशों को उद्धृत किया गया है। हमारे विचार में यह अच्छा होगा कि अगले संस्करण में वैदिक सूक्तों को देवनागरी लिपि में भी उद्धृत कर दिया जाय ताकि उन की व्याख्या मूल के साथ मिला कर पढ़ने में सुविधा हो। जब तक ऐसा नहीं हो सकता यह उत्तम होगा कि इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ के परिशिष्ट के रूप में इस में उद्धृत वेदमन्त्रों का संग्रह प्रकाशित कर दिया जाए जैसे कि लाइफ़ डिवाइन में प्रकाशित संस्कृत वाक्यों का संग्रह पृथक् पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किया गया था। हम समस्त अङ्ग्रेज़ी शिक्षितवर्ग में इस पुस्तक का प्रचार चाहते हैं।

—धर्मदेव विद्यामार्तण्ड।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# स्वाध्याय के लिए चुनी हुई पुस्तकें

## वैदिक साहित्य

| | | |
|---|---|---|
| ईशोपनिषद्भाष्य | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | २) |
| वेद का राष्ट्रिय गीत | श्री प्रियव्रत | ५) |
| वेदोद्यान के चुने हुए फूल | श्री प्रियव्रत | ५) |
| वरुण की नौका, २ भाग | श्री प्रियव्रत | ६) |
| वैदिक विनय, ३ भाग | श्री अभय | २), २), २) |
| वैदिक वीर-गर्जना | श्री रामनाथ | ।।।=) |
| वैदिक-सूक्तियां | ,, | १।।।) |
| आत्म-समर्पण | श्री भगवद्दत्त | १।।) |
| वैदिक स्वप्न-विज्ञान | ,, | २) |
| वैदिक अध्यात्म-विद्या | ,, | १।) |
| वैदिक ब्रह्मचर्य गीत | श्री अभय | २) |
| ब्राह्मण की गौ | श्री अभय | ।।।) |
| वेदगीताञ्जलि ( वैदिक गीतियां ) | श्री वेदव्रत | २) |
| सोम-सरोवर, सजिल्द, अजिल्द | श्री चमूपति | २), १।।) |
| वैदिक-कर्त्तव्य-शास्त्र | श्री धर्मदेव | १।।) |
| अग्निहोत्र | श्री देवराज | २।) |

## संस्कृत ग्रन्थ

| | | |
|---|---|---|
| संस्कृत-प्रवेशिका, १, २ भाग | | ।।।), ।।।=) |
| साहित्य-सुधा-संग्रह, १, २, ३ बिन्दु | | १।), १।), १।) |
| पाणिनीयाष्टकम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध | | ७), ७) |
| पञ्चतन्त्र ( सटीक ) पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध | | २), २।।) |
| सरल शब्दरूपावली | | ।।=) |

## ऐतिहासिक तथा जीवनी

| | | |
|---|---|---|
| भारतवर्ष का इतिहास ३ भाग | श्री रामदेव | ६) |
| बृहत्तर भारत (सचित्र) सजिल्द, अजिल्द | | ७), ६) |
| ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार, २ भाग | | ।।।) |
| अपने देश की कथा | श्री सत्यकेतु | १।=) |
| हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के अनुभव | | ।।) |
| योगेश्वर कृष्ण | श्री चमूपति | ४) |
| सम्राट् रघु | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | १।) |
| जीवन की झांकियां ३ भाग | ,, | ।।) ।।), १) |
| जवाहरलाल नेहरू | ,, | १।) |
| ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित्र | ,, | २) |
| दिल्ली के वे स्मरणीय २० दिन | ,, | ।।) |

## धार्मिक तथा दार्शनिक

| | | |
|---|---|---|
| सन्ध्या-सुमन | श्री नित्यानन्द | १।।) |
| स्वामी श्रद्धानन्द जी के उपदेश, तीन भाग | | ३।।) |
| आत्म-मीमांसा | श्री नन्दलाल | २) |
| वैदिक पशुयज्ञ-मीमांसा | श्री विश्वनाथ | १) |
| अथर्ववेदीय मन्त्र-विद्या | श्री प्रियरत्न | १।) |
| सन्ध्या-रहस्य | श्री विश्वनाथ | २) |
| जीवन-संग्राम | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | १) |

## स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें

| | | |
|---|---|---|
| आहार (भोजन की जानकारी) | श्री रामरक्ष | ५) |
| आसव-अरिष्ट | श्री सत्यदेव | २।।) |
| लहसुन:प्याज़ | श्री रामेश बेदी | २।।) |
| शहद ( शहद की पूर्ण जानकारी ) | ,, | ३) |
| तुलसी, दूसरा परिवर्द्धित संस्करण | ,, | २) |
| सोंठ, तीसरा ,, | ,, | १।।) |
| देहाती इलाज, तीसरा संस्करण | ,, | १) |
| मिर्च ( काली, सफेद और लाल ) | ,, | १) |
| सांपों की दुनियां, (सचित्र) सजिल्द | ,, | ५) |
| त्रिफला, तीसरा संवर्द्धित संस्करण | ,, | ३।) |
| नीम:बकायन (अनेक रोगों में उपयोग) | ,, | १) |
| पेठा : कद्दू (गुण व विस्तृत उपयोग) | ,, | ।।) |
| देहात की दवाएं, सचित्र ।।।) | बरगद | ।।।) |
| स्तूप निर्माण कला | श्री नारायण राव | ३) |
| प्रमेह, श्वास, अर्शरोग | | २।) |
| जल चिकित्सा | श्री देवराज | १।।।) |

## विविध पुस्तकें

| | | |
|---|---|---|
| विज्ञान प्रवेशिका, २ भाग | श्री यज्ञदत्त | २) |
| गुणात्मक विश्लेषण ( बी एस्. सी. के लिए ) | | २) |
| भाषा-प्रवेशिका ( वर्धायोजनानुसार ) | | ।।।) |
| आर्यभाषा पाठावली | श्री भवानी प्रसाद | १।।) |
| आत्म बलिदान | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | २) |
| स्वतन्त्र भारत की रूप रेखा | ,, | १।।) |
| जमींदार | ,, | २) |
| सरला की भाभी, १, २ भाग | ,, | २), ३।।) |

प्रकाशन मन्दिर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शरद् ऋतु में स्वास्थ्य लाभ कीजिये

# हमारी कुछ अनुभूत प्रसिद्ध औषधियां

## च्यवनप्राश

पुष्टि कर रसायन है। दिल, दिमाग व फेफड़ों को शक्ति देकर पुष्ट करता है। मू० २।) पाव

## सिद्ध मकरध्वज

शरीर की प्रत्येक कमज़ोरी को दूर कर के शक्ति व स्फूर्ति पैदा करता है। मूल्य ३।।) माशा

## बादाम पाक

यह स्वादिष्ट बलवर्धक पाक है। इस से मानसिक व शारीरिक शक्ति बढ़ती है तथा दिमाग तेज़ होता है। मूल्य ५) पाव

## चन्द्रप्रभा वटी

नवयुवकों के विशेष रोग तथा बवासीर, पथरी, भगन्दर, खून की कमी में यह गोलियाँ लाभदायक हैं। मूल्य १) तोला

## गुरुकुल चाय

दैनिक प्रयोग के लिये सुन्दर पेय है। खाँसी, नजला जुकाम तथा थकावट को दूर कर के स्फूर्ति लाती है। मूल्य ।=) छटांक

## सुपारी पाक

स्त्री रोगों में लाभदायक है। यह मासिक खराबी को दूर कर के शरीर में चुस्ती लाता है।

मूल्य ३) पाव

## बसन्त कुसुमाकर

शरीर की कमज़ोर नसों को बलवान बनाता है और अधिक पेशाब आने को रोकता है।

मूल्य ३) माशा

## सत शिलाजीत

कमर दर्द, रीढ़ अथवा जोड़ों के दर्द में शिलाजीत पूर्ण लाभ देती है। बुढ़ापे की कमज़ोरी में विशेष लाभदायक है।

मूल्य १) तोला

## बादाम रोगन

पीने और मालिश में प्रयोग होता है। इस से कब्ज, आँतों की खुश्की दूर होती है और दिमागी शक्ति बढ़ती है।

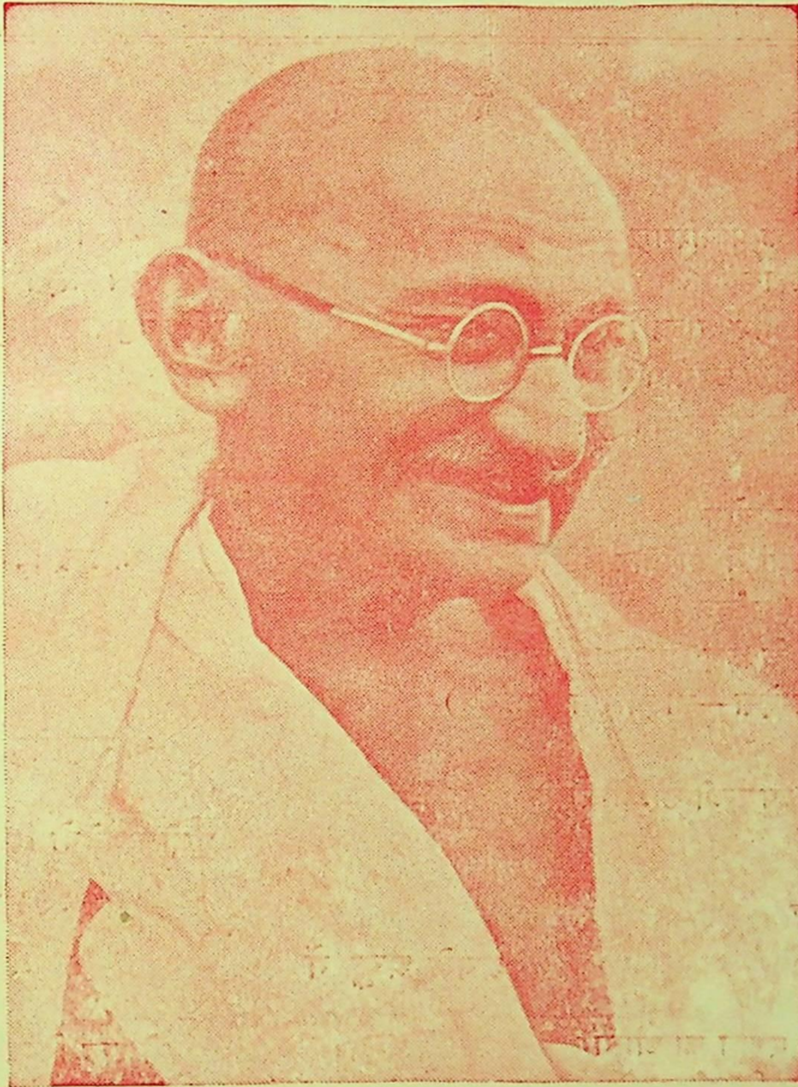
मूल्य १।।) औंस

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार।


मुद्रक : श्री रामेश बेदी, गुरुकुल मुद्रणालय, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।
प्रकाशक : मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल पत्रिका


DIGITIZED C-DAC 2005-2006

महात्मा गाँधी की जयन्ती गुरुकुल में मनाई गई ।

वर्ष ९
अङ्क ३



कार्तिक
२०१३

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल-पत्रिका

पूर्णाङ्क ९९

सितम्बर १९५६
अक्तूबर





व्यवस्थापक : श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादक समिति : श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति
श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार
श्री रामेश बेदी ( मन्त्री )


## इस अङ्क में



## अगले अङ्क में

| | |
|---|---|
| भारत की मौलिक एकता का आधार | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति |
| वेद और स्त्रियों का विवाहित जीवन | श्री प्रियव्रत वेदवाचस्पति |
| गो-रक्षा और गो-सदन | श्री किरपालसिंह |
| समर्पण-पत्र | श्री पीताम्बर नारायण शर्मा |

**अन्य अनेक विश्रुत लेखकों की सांस्कृतिक, साहित्यिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी रचनाएँ।**

---


मूल्य देश में ४) वार्षिक — एक प्रति
विदेश में ६) वार्षिक — छः आने


CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ

# गुरुकुल-पत्रिका

[ गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका ]

## आपस्तम्ब-धर्मसूत्र के प्रायश्चित्त

श्री रामनाथ वेदालंकार

जिन कर्मों को करने से मनुष्य पतित तथा जाति-बहिष्कृत हो जाता है उन्हें पतनीय कर्म कहते हैं। इन्हें महापातक भी कह सकते हैं। इन्हें करने वाला बिना प्रायश्चित के शुद्ध नहीं होता। प्रायश्चित्त न करने पर जन्मान्तर में भी ये उस के साथ जाते हैं। इस के अतिरिक्त कुछ कर्म ऐसे भी हैं जो पतनीयों की श्रेणी में तो नहीं आते, किन्तु उन के करने से मनुष्य अपवित्र हो जाता है। इन्हें अशुचिकर कर्म कहते हैं। अशुचिकर कर्म करने वाला जातिबहिष्कृत नहीं होता, पर शुद्ध होने के लिए प्रायश्चित्त उसे भी करना पड़ता है। आपस्तम्ब के अनुसार पतनीय कर्म ये हैं—चोरी, ब्रह्म-हत्या ( आभिशस्त्य ), किसी भी मनुष्य का वध, वेद का त्याग, गर्भपात, माता और पिता की सयोनि मौसी, बुआ आदि में तथा उन की संतानों में गमन, और जिन के साथ मेल-जोल वर्जित है उन के साथ मेल-जोल। गुर्वीसखी और गुरुसखी तथा अन्य परस्त्रियों में गमन करने से भी पतित होता है। इन पतनीय कर्मों के अतिरिक्त दूसरे धार्मिक कर्मों को भी यदि मनुष्य बार-बार करे तो पतित कहलाता है। त्रैवर्णिक स्त्रियों का शूद्र में गमन करना, मनुष्य–कुत्ता–ग्राम्यकुक्कुट–ग्राम्यशूकर–मांसभक्षी जन्तु आदि प्रतिषिद्ध मांस वाले प्राणियों का मांस भक्षण करना, मनुष्यों का मूत्र-पुरीष खा लेना, शूद्र का उच्छिष्ट खा लेना, आर्यों का अपपात्र स्त्रियों में गमन करना ये अशुचिकर कर्म हैं। किन्तु आपस्तम्ब कहते हैं कि कुछ का मत है कि ये कर्म, भी पतनीयों में ही सम्मिलित किये जाने चाहिएं। उन के मत में इन से अतिरिक्त जो अन्य दोषयुक्त कर्म हैं वे अशुचिकर कहलाते हैं।

आगे इन पतनीय तथा अशुचिकर कर्मों के प्रायश्चित लिखे जाते हैं। इन्हें पढ़ते हुए यह ध्यान रखना आवश्यक है कि ये प्रायश्चित्त हैं, दण्डविधान नहीं। प्रायश्चित्त और दण्डविधान में बहुत अन्तर है। प्रायश्चित शुद्ध होने के लिए स्वेच्छा से किया जाता है, यदि कोई गलती अनुभव नहीं करता और शुद्ध होना नहीं चाहता तो उस की इच्छा पर है कि वह प्रायश्चित्त न करे, किन्तु दण्ड तो भोगना ही पड़ता है। आपस्तम्ब के अनुसार नीचे जो प्रायश्चित्त लिखे जा रहे हैं उन में कुछ अत्यन्त कठोर हैं, पर साथ में विकल्प रूप में उन के बदले अपेक्षाकृत कम कठोर प्रायश्चित्त भी हैं। यह अपराधी की अपनी भावना पर है कि वह किसे चुनता है। कई अपराधी ऐसे भी हो सकते हैं जो अपने अपराध पर पश्चात्ताप कर आत्मा को शुद्ध करने के लिए कठोरतम प्रायश्चित्त की भट्ठी में जलना ही पसन्द करें। इन में कुछ प्रायश्चित्त ऐसे भी हैं जिन में प्रायश्चित्त करते-करते प्रायश्चित्तकर्ता का प्राणान्त हो जाता है, जैसे कि आजकल भी कोई-कोई आत्मशुद्धयर्थ आमरण अनशन करने वाले देखे जाते हैं। उन प्रायश्चित्तों का ऐहलौकिक फल तो केवल इतना ही है कि उन्हें करने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वाले समाज की दृष्टि में शुद्ध मान लिये जाते हैं और कलंक से बच जाते हैं; विशेष फल पारलौकिक है कि जन्मान्तर में वे अशुद्ध आत्मा के साथ नहीं जाते और उन्हें पारलौकिक यातनाएं नहीं सहनी पड़तीं। किन्तु आत्मघात वाले प्रायश्चित आपस्तम्ब के काल में भी सर्वसम्मत नहीं थे। कुछ आचार्य उन का विरोध करते थे। वे कहते थे कि एक पातक का प्रायश्चित्त करने के लिए आत्मघात रूपी एक और नया पातक कर बैठना कहाँ तक ठीक है। अस्तु, अब प्रायश्चित्तों का उल्लेख करते हैं।

क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र की हत्या करने पर क्रमशः सहस्र, सौ और दस गौएं पापशुद्धि के लिए दान करे। गौओं के साथ में एक-एक वृषभ भी दे। इन वर्णों की स्त्रियों की हत्या करने पर भी यही प्रायश्चित है।

क्षत्रिय, वैश्यों में जो वेदाध्यायी हो या जिसने सोमयाग की दीक्षा ली हो उस की तथा किसी भी ब्राह्मण की हत्या करने पर अभिशस्त ( ब्रह्म-हत्यारा ) कहाता है। ब्राह्मण के उस गर्भ की जिस में अभी स्त्री या पुरुष के लक्षण प्रकट नहीं हुए हैं तथा ऋतुस्नाता ब्राह्मणी की हत्या कर के भी अभिशस्त होता है। उस का प्रायश्चित्त यह है कि जंगल में कुटी बना कर, मौनी होकर, अपने मारे हुए शव के सिर की ध्वजा बना कर, सन की धोती का चौथाई टुकड़ा नाभि से नीचे घुटनों से ऊपर लपेट कर रहे। गांव को जाते समय रथ के पहियों से पड़ी हुई दोनों लकीरों के बीच में चले सामने से किसी अन्य को आता हुआ देख कर मार्ग से दूर हट जाये। टूटा हुआ, कुछ-कुछ ताम्र वर्ण का मृत्पात्र लेकर गाँव में जाये। 'कौन अभिशस्त को भिक्षा देगा' यह कहता हुआ सात घर घूमे। इस प्रकार जो कुछ प्राप्त हो उसी से जीविका करे। कुछ न मिले तो उपवास कर के ही रहे। इस प्रायश्चित्त काल में गौओं की रक्षा में तत्पर रहे। भिक्षा के अतिरिक्त गौओं के गाँव से निष्क्रमण तथा प्रवेश के समय वह दूसरी वार गाँव में जाये। शेष सारा समय जंगल में रहे। बारह वर्ष उस के इस प्रकार व्रत करने के पश्चात् शिष्टजन उस की परीक्षा करें। परीक्षा में खरा उतरने पर वह शुद्ध समझा जाये। अथवा बारह वर्ष के व्रत के बाद वह जिस रास्ते से दस्यु लोग गौएँ चुराने के लिये गाँव में आते-जाते हों उस रास्ते में कुटी बना कर दस्युओं से अपहृत ब्राह्मणों की गौओं को वापिस छीन लेने की इच्छा से रहे। तीन वार दस्युओं से लड़ लेने के बाद, चाहे वह उन से हार जाये चाहे उन्हें हरा दे, पाप से मुक्त हो जाता है। अथवा बारह वर्ष का उपर्युक्त व्रत कर के अश्वमेध के यज्ञान्त स्नान में ऋत्विजों के साथ स्नान कर लेने पर भी पाप मुक्त हो जाता है। धर्म और अर्थ ( धन ) का संघर्ष उपस्थित होने पर जो धर्म को त्याग कर अर्थ को चुनता है उस के लिए भी यही प्रायश्चित्त है। गुरु[1] की हत्या करने पर या जो वेद पढ़ चुका है और सब कर्म समाप्त कर चुका है ऐसे ब्राह्मण की हत्या करने पर इसी विधि से अन्तिम श्वास तक आचरण करता रहे। इस लोक में उस की शुद्धि नहीं हो सकती, आमरण प्रायश्चित्त से मृत्यु के बाद पाप अवश्य नष्ट हो जाता है।

जो गुरुपत्नी में गमन करे वह अण्डकोषों सहित अपने शिश्न को काट कर अंजलि में रख कर कभी न लौटने के लिए दक्षिण दिशा की ओर मुख कर के चलता चला जाये, जब तक गिर कर मर न जाये। अथवा तपी हुई मूर्ति का आलिङ्गन कर अपने को समाप्त कर दे। सुरापान करने वाला अग्नि से खौलती हुई सुरा पिये।

चोरी करने वाला अपने बाल बिखरा कर कन्धे पर मूसल रख कर राजा के पास जाकर अपनी करतूत कहे। राजा उसी मूसल से उसे मार डाले। मर कर

---

१. गुरु=पिता, आचार्य आदि--हरदत्त।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वह पापमुक्त हो जाता है। अथवा वह अग्नि में प्रविष्ट हो जाये। अथवा तीक्ष्ण तप करे। अथवा शनैः शनैः अन्न कम करता हुआ अपने को समाप्त कर दे। अथवा कृच्छ्र–संवत्सर[1] व्रत करे। इस प्रसङ्ग में एक श्लोक उद्धृत किया जाता है जिस का भाव यह है—"जो चोरी करे, सुरा पिये और गुरुपत्नी में गमन करे वह चौथे काल ( बीच में दो भोजन-काल छोड़ कर ) थोड़ा सा भोजन लिया करे, प्रातः मध्यान्ह, सायम् स्नान करे, दिन में खड़ा रहे, रात्रि बैठ कर बिताये, इस प्रकार तीन वर्ष तक आचरण करता रहे तब उस पाप से छूटता है। किन्तु ब्रह्महत्या करने वाले के लिए यह प्रायश्चित्त नहीं है।" ब्राह्मण के अतिरिक्त कोई अन्य वर्ण यदि ब्राह्मण की हत्या करे तो उस का प्रायश्चित्त है कि वह युद्धभूमि में जाकर सेनाओं के बीच में खड़ा हो जाये और मारा जाये। अथवा अपने लोम, त्वचा, मांस आदि का अग्नि में होम करवा कर फिर स्वयं भी उस अग्नि में प्रविष्ट हो जाये।

कौआ, गिरगट, मोर, चकवा, हंस, भास, मेंडक, नेवला, गन्धमूषिका, कुत्ता इनकी हिंसा करने पर वही प्रायश्चित्त है जो शूद्र की हिंसा करने पर कहा गया है अर्थात् दस गौवों और एक वृषभ का दान। दूध देने वाली गौ और बैल की अकारण हिंसा करने पर भी यही प्रायश्चित्त है। अन्य प्राणी इतने परिमाण में मारे जायें कि एक शकटवाही बैल के उठाने योग्य बोझ हो जाये तब भी यही प्रायश्चित्त है।

अनिन्द्यों की निन्दा करने पर अथवा अनृतभाषण करने पर तीन दिन दूध, क्षार और लवण से रहित भोजन करे। किन्तु शूद्र यदि यही अपराध करे तो वह सात दिन का उपवास करे। अब तक जो प्रायश्चित्त कहे हैं वे स्त्रियों के लिए भी वैसे ही हैं।

जिनकी हत्या करने से मनुष्य अभिशस्त कहलाता है उन का एक अङ्ग यदि काट दे, जिसके काटने पर भी उसके प्राण बचे रहें, तो वह पूर्वोक्त दस गौओं तथा एक वृषभ के दान का ही प्रायश्चित्त करे। अनार्य व्यवहार, परदोषकथन, प्रतिषिद्धाचार, अभोज्य-अपेय वस्तुओं का खान-पान, शूद्रा में वीर्यसेचन, अयोनि में वीर्यसेचन करने पर तथा बुद्धिपूर्वक या अबुद्धिपूर्वक दोषवत् कर्म करने पर अब्देवता वाली ऋचाओं से, वरुण देवता वाले मन्त्रों से अथवा 'पवित्र' नामक अनुवाक के मन्त्रों से, जैसा कार्य किया हो उसी के अनुपात में जलस्नान या जलप्रोक्षण करे। जो ब्रह्मचारी अपना ब्रह्मचर्यव्रत तोड़े वह गर्दभयाग करे।

मिथ्याधीत ( अध्ययन के नियमों का अतिक्रमण कर के पढ़ने ) का प्रायश्चित्त यह है कि एक वर्ष तक आचार्यसेवा में रहता हुआ मौन रहे, केवल स्वाध्याय के समय या जब आचार्य अथवा आचार्यपत्नी से कुछ निवेदन करना हो तब या भिक्षाचरण के समय मौन तोड़े। इसके अतिरिक्त निम्न प्रायश्चित्त मिथ्याधीत के भी हैं तथा पतनीयों को छोड़ कर अन्य दोषवत् कर्मों के भी हैं। 'कामः आकर्षीत् स्वाहा', 'मन्युः अकार्षीत् स्वाहा' इन मन्त्रों का उच्चारण कर काम और मन्यु के लिए हवि दे, अथवा उक्त मन्त्रों का जप करे। अथवा पर्व ( पौर्णमासी, अमावस्या ) के दिन केवल तिलभोजी होकर या उपवास करके अगले दिन स्नान करके, प्राणायाम करके या बिना प्राणायाम के सहस्र वार गायत्री का पाठ करे। अथवा श्रावणी पूर्णिमा के दिन तिलभोजी होकर या उपवास करके, अगले दिन महानदी के जल में स्नान करके गायत्री मन्त्र से सहस्र वार समिधाएं आधान करे या जप करे। अथवा पवित्रता के लिए इष्टियाँ तथा सोमयाग करे।

अभोज्य भोजन करके तब तक उपवास करे जब तक आँतें मलरहित हो जायें। वे मलरहित सात रात्रियों

१. तीन दिन रात्रि का भोजन बन्द, तीन दिन दिन, का भोजन बन्द, तीन दिन बिना मांगे जो मिले सो खाना, तीन दिन कुछ न खाना—इसे 'कृच्छ्र द्वादशरात्र' कहते हैं। यही व्रत एक वर्ष तक किया जाये तो वह 'कृच्छ्र संवत्सर कहलाता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में होती हैं। अथवा हेमन्त-शिशिर ऋतु में दोनों सन्ध्या-कालों में जल स्नान करे, अथवा 'कृच्छ्रद्वादशरात्र' व्रत करे।

इकट्ठे बहुत से अपतनीय दोषवत् कर्म करने पर बिना भोजन किए तीन बार वेदपारायण करने से पापमुक्त हो जाता है। अनार्या के साथ शयन करे, ब्याज पर रुपया दे कषायपान करे, अब्राह्मण के समान प्रत्येक व्यक्ति की वन्दना करे तो उस का प्रायश्चित्त यह है कि घास पर बैठ जाये और सूर्योदय से तब तक बैठा रहे जब तक पीठ तपने न लगे। ब्राह्मण शूद्रवर्ण की सेवा करके एक दिन रात में जो पाप संचित करता है। उसे वह तीन वर्ष बीच में दो-दो भोजनकाल छोड़ कर प्रति चौथे काल स्नानोपरान्त भोजन करता हुआ दूर कर पाता है।

चोरी का प्रायश्चित्त पहले कह चुके हैं। उसी का दूसरा प्रायश्चित्त यह है कि चुरा कर लाई हुई अधर्मा-हृत वस्तुओं को छोड़ दे, वह कहे 'मैं और अधर्म साथ नहीं रह सकते'। नाभि से नीचे और घुटनों से ऊपर वस्त्र लपेट कर, प्रति दिन तीन वार प्रातः, मध्यान्ह, सायं स्नान करता हुआ दूध, क्षार, लवण रहित भोजन करता हुआ बारह वर्ष तक घर में प्रवेश न करे तब वह शुद्ध हो जाता है। यही प्रायश्चित्त अन्य पतनीय कर्मों का भी हो सकता है। किन्तु गुरुपत्नीगामी के लिए यह प्रायश्चित्त नहीं है। उसे तो यही उचित है कि वह सुच्छिद्र मूर्ति के अन्दर बैठ कर, उसमें दोनों ओर से अग्नि लगवा कर अपने आप को जला दे। पर हारीत का मत है कि यह प्रायश्चित्त व्यर्थ है क्योंकि परहत्या के समान आत्महत्या करना भी महापाप है। अतः उस का कथन है कि गुरुतल्पगामी चोरी के लिए निर्दिष्ट उपर्युक्त प्रायश्चित्त को ही अन्तिम श्वास पर्यन्त करता रहे, इस लोक में उसकी शुद्धि नहीं हो सकती, मरणो-त्तर वह पापमुक्त हो जाता है।

जो अपनी स्त्री का त्याग करे वह गधे की खाल, जिसके बाल बाहर रहें, ओढ़ कर 'मुझ दार-त्यागी को भिक्षा दो' यह कहता हुआ सात घर घूमे। छः महीने इसी प्रकार जीविका करे, तब शुद्ध होता है। किन्तु यदि स्त्री पति का त्याग करे तो वह उतने ही समय कृच्छ्र द्वादशरात्र व्रत करने पर शुद्ध हो सकती है।

भ्रूणपात करने वाला[1] कुत्ते या गधे की खाल, जिसके बाल बाहर रहें, पहन कर पानी पीने के लिए पुरुष की खोपड़ी लेकर, दण्ड के रूप में खाट की पाटी लेकर 'कौन मुझ भ्रूणघाती को भिक्षा देगा' इस प्रकार अपने कर्म का नाम लेता हुआ घूमे। गांव में अपनी जीविका पाकर फिर वह किसी शून्यगृह में या वृक्ष के नीचे वास करे और समझे कि आर्यों के साथ मेरा मिलना-जुलना नहीं हो सकता। इसी प्रकार अन्तिम श्वास तक करता रहे। मरणोपरान्त वह पाप से छूट जाता है।

पतित लोग गांव से बाहर इकट्ठे घर बना कर रहें, वे आपस में ही एक-दूसरे को पढ़ायें, यज्ञ करायें, आपस में ही विवाह करें। प्रायश्चित्त से शुद्ध होने के पश्चात् वे आर्यों के समाज में आ सकते हैं।

अशुचिकर कर्मों में से जिन का प्रायश्चित्त नहीं कहा उन का प्रायश्चित्त अपराध की लघुता-गुरुता के अनुसार उपर्युक्त कर्मों के प्रायश्चित्त के समान ही जानना चाहिए। उस की अवधि एक वर्ष से लेकर एक दिन तक की हो सकती है।

---

१. भ्रूणहा = षडङ्ग वेद के अध्येता, अर्थवित्, कर्म-काण्डी ब्राह्मण की हत्या करने वाला—हरदत्त।



० १९५०–५१ से बुनियादी स्कूलों की संख्या ३३, ५३० थी। १९५५–५६ में यह संख्या बढ़ कर ४१, १२४ तक पहुंच गई।

० थोड़ी आमदनी वालों की आवास योजना नवम्बर १९५४ में शुरू हुई थी तब से अब तक केन्द्रीय सरकार ने इस योजना के अन्तर्गत विभिन्न राज्यों को लगभग १२ करोड़ ७४ हजार रुपये के ऋण दिए हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# शिक्षा में व्यवहारवाद

श्री महेशचन्द्र एम. ए., एम. एड.

इस सिद्धान्त में व्यावहारिक वस्तुओं को महत्व दिया गया है। इसका दूसरा नाम प्रयोगवादी सिद्धान्त भी है क्योंकि इस में प्रयोगों पर ज़ोर दिया गया है, वास्तव में व्यवहारवाद में दो सिद्धान्त सम्मिलित कर दिये गये हैं, एक तो प्रयोगवाद और दूसरी प्रोजेक्ट पद्धति। इस के पीछे विचारधारा यह है कि शिक्षा में वही विषय रखे जाँय जो व्यावहारिक महत्व के हैं तथा उन्हीं प्रणालियों का उपयोग किया जाय जो विज्ञान की शिक्षा में प्रयुक्त की जाती हैं।

व्यवहारवाद सिद्धान्त दृष्टि से प्रकृतिवादी है और परिणामवाद की दृष्टि से आदर्शवादी है। इसकी विचार-धारा प्रकृतिवाद या विज्ञानवाद पर आधारित है लेकिन इसका लक्ष्य आदर्शवाद पर आश्रित है। स्पष्ट करने के लिये हम कह सकते हैं कि एक ओर तो यह ईश्वर या आत्मा में आस्था न रख कर प्रकृति में विश्वास रखता है और इसलिए प्रकृति तथा मनुष्य को अपूर्ण समझता है। दूसरी ओर इस का मत है कि मनुष्य को अपूर्ण समझता है। दूसरी ओर इस का मत है कि मनुष्य का लक्ष्य पूर्णतया को प्राप्त होना चाहिए जो भविष्य में सम्भव है। उन का कहना है कि प्रकृति प्रयोग कर रही है। मनुष्य को भी प्रयोग करना चाहिए। प्रकृति अभी अपूर्ण है लेकिन एक दिन पूर्णता प्राप्त कर लेगी, इसी प्रकार मनुष्य को उन्नति करते जाना चाहिए जिस से एक दिन वह स्वयं तथा उस का समाज पूर्णता प्राप्त कर सके।

व्यवहारवादी कहते हैं कि उपयोगिता के व्यावहारिक दृष्टिकोण से शिक्षा दी जानी चाहिए। साथ ही मनुष्य को एक आदर्श भविष्य में विश्वास रखना चाहिए जब कि अमीर गरीबों का शोषण न करेंगे और सब नागरिक सुखी तथा शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करेंगे।

इस में नैतिकता और धर्म को महत्व नहीं दिया गया। प्रोफेसर ड्यूई ने इस ओर संकेत मात्र किया है। उस का विचार प्रतीत होता है कि शिक्षा के क्षेत्र में धर्म का कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है।

उस के अनुसार जो व्यावहारिक है वही सत्य है, जो उपयोगी है वही ठीक है। ऐसा कोई अमर सत्य नहीं है जिस को ईश्वर या किसी अन्य ने स्थापित कर दिया हो बल्कि समयानुसार सत्य ही बदलता रहता है। कर्तव्य दृष्टि से ही कर्तव्य करना, उस के लिए कोई महत्व नहीं रखता। कर्तव्य तभी महत्वपूर्ण है जब उस से किसी लक्ष्य की सिद्धी होती हो। इसी प्रकार उस का विश्वास है कि कलाएं तथा नैतिकता भी व्यावहारिक जीवन में उपयोग में आनी चाहिए यदि महत्वपूर्ण बनाना है तो आदर्शवादियों की भांति इन्हें केवल आनन्द या कर्तव्य के लिए स्वीकृत को तैयार नहीं है। उस की दृष्टि में--कला, लिए सौन्दर्य, सौन्दर्य के लिए तथा नैतिकता के लिए ये विचार कोई महत्व नहीं रखते।

वह समस्त गूढ़ताओं, शाब्दिक तथा अनुमा सिद्धान्तों के विरुद्ध है अर्थात् उन काल्पनिक विचार को पसन्द नहीं करता जिनका वास्तविक जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है। मानसिक विकास या आदर्शवादी सिद्धान्त जो मानवीय विषयों तथा कला और साहित्य पर ज़ोर देते हैं उन के विरुद्ध पड़ते हैं। इन के स्थान पर वह निश्चित स्पष्ट तथा वास्तविक तथ्यों को महत्व देता है और कार्य तथा शक्ति में विश्वास रखता है उस का कथन है कि पूर्णसत्य नाम की कोई वस्तु नहीं है। सत्य का निर्माण हो रहा है और अभी तक उस की प्राप्ति नहीं हुई है। इस लिए भूतकाल की ओर नज़र रखना तथा प्राचीन लोगों ने जो बातें कही हैं उन में विश्वास रखना उचित नहीं है। उस का कथन है कि यह हमारा कर्तव्य और गौरव है कि हम जगत के निर्माण में योग दें और प्रयोगों के द्वारा सत्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को खोज निकालें जिस से कि मनमाने विश्व का निर्माण कर सकें।

वह व्यवहार और कार्य की तुलना में विचार को गौण स्थान देता है। उस के अनुसार ज्ञान जब तक व्यवहार में न आ सके तब तक अपूर्ण है। उस के अनुसार ज्ञान तथा विचार बिना व्यावहारिक महत्व के बेकार हैं।

शिक्षा में निगमन तथा प्रयोगवादी पद्धति का उपयोग होना चाहिए। पहली पद्धति के अनुसार मूर्त वस्तुएँ या विषय छात्र के सम्मुख उपस्थित कर दिये जाते हैं और परिभाषाएँ अन्त में बनाई जाती हैं। परी पद्धति में बालक को इस बात के लिए प्रोत्साहित ा जाता है कि वह स्वयं प्रयोग कर के या अव- न, तुलना, विश्लेषण, चुनाव आदि के द्वारा सत्य ज निकाले। पहली पद्धति का उपयोग व्याकरण दूसरी का विज्ञान में होता है। व्यवहारवाद ुसार शिक्षा में इन दोनों पद्धतियों का उपयोग चाहिए।

इतना ही नहीं बल्कि शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण कार्य रूप में होनी चाहिए। उद्देश्य रहित कार्य का कोई अर्थ नहीं होता है। आधुनिक शिक्षक पूर्णतया उद्देश्य विहीन है। विद्यार्थियों को पता तक नहीं होता कि विभिन्न विषय किस लिए पढ़ाए जा रहे हैं। शिक्षा तथा व्यावहारिक जीवन के मध्य कोई सम्बन्ध नहीं है। अतः शिक्षा प्रभाव रहित और एक दबावपूर्ण कार्य है। प्रोजेक्ट प्रणाली में विद्यार्थियों के सामने सदैव एक लक्ष्य रहता है। इस लिए ड्यूई ने इस पद्धति को अपनाया है।

व्यवहारवाद के अनुसार शिक्षा का केन्द्र बालक होना चाहिए न कि अध्यापक या पाठ्य विषय, पाठ्यक्रम, समय विभाग आदि का निर्माण बालक की रुचि तथा आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए होना चाहिए। दूसरे शब्दों में शिक्षा तर्क के स्थान पर मनोविज्ञान के आधार पर दी जानी चाहिए। आदर्शवाद के अनुसार संस्कृति और ज्ञान महत्वपूर्ण माने जाते हैं। बालक के विचारों, आवश्यकताओं और रुचियों का कोई ध्यान नहीं दिया जाता। लेकिन व्यवहारवाद में इस का उल्टा है।

ड्यूई का कथन है कि कक्षा में क्रिया का जोर रहना चाहिए अर्थात् बालक केवल अध्यापक की बातों को ही सुनते न रहें, बल्कि वे पुस्तकालय की पुस्तकों को हाथ से छुएँ, शिक्षा सम्बन्धी वस्तुओं का उपयोग करें। तथा स्वयं प्रयोग करें। इस प्रकार वह बैठे हुए सुनते रहने के स्थान पर क्रिया पद्धति या कार्य सीखने के सिद्धान्त को अच्छा समझता है।

ड्यूई के अनुसार बच्चे परस्परिक वार्त्तालाप तथा सहयोग में विशेष रुचि रखते हैं। वे पूछ-ताछ, प्रश्न करने, वस्तुएँ बनाने, कार्य करने खेलने, अभिनय तथा कलात्मक अभिव्यजंना में बहुत आनन्द लेते हैं। शिक्षा में इन सब बातों को स्थान मिलना चाहिये ताकि शिक्षा कार्य प्रभावपूर्ण और रुचिपूर्ण हो सके। बच्चों को अच्छी आदतें सिखानी चाहिएँ। उन्हें कपड़े पहनना, भोजन करना, बैठना तथा उठना आना चाहिए। उन्हें आत्म निर्भरता तथा सहयोगपूर्ण सामाजिक जीवन व्यतीत करना चाहिए। पठन, लेखन तथा गणित शिक्षा के साधन होने चाहिएँ न कि साध्य। इस प्रकार उसने प्राचीन शिक्षा पद्धति की कटु आलोचना की है और बालक की मूल प्रवृत्तियों तथा रुचि को महत्व प्रदान किया है।

विषयों को एक दूसरे से सम्बद्ध कर देना चाहिए। उन्हें अलग-अलग कक्षों में कठोरता से बन्द नहीं कर देना चाहिए क्यों कि इस से विशृङ्खलित व्यक्तित्व का निर्माण होता है। विश्व में ज्ञान परस्पर सम्बद्ध दिखाई पड़ता है। इसी प्रकार विद्यालयों में शिक्षा भी परस्पर सम्बद्ध रूप में दी जानी चाहिए। यदि विषयों में पूर्णतया पृथक्-पृथक् पढ़ाया जाता है तो एक ओर तो बालक उनमें रोचकता का अनुभव नहीं करता और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दूसरी ओर सचाई को स्पष्ट रूप में नहीं समझ पाता।

व्यवहारवाद के अनुसार उपयोगी कार्यों को शिक्षा में सब से अधिक महत्व प्राप्त होना चाहिए। समाज में किये जाने वाले कार्यों के समान स्कूल में भी दूकानदारी, रसोई पकाना, बुनना, बढ़ई गीरी तथा घरेलू दस्तकारियाँ आदि सिखाई जानी चाहिएं। इन कार्यों के करने से मानसिक तथा शारीरिक शिक्षा में सामंजस्य उत्पन्न होता है। मस्तिष्क के साथ-साथ नेत्रों तथा हाथों की भी साधना हो जाती है। अवलोकन संयोजन, विवेचन तथा कल्पनाशक्ति का विकास होता है। व्यक्तिगत प्रयोगों, योजनाओं तथा पुनः आविष्करण का अवसर मिलता है। बालक आविष्कर्ता तथा खोजकर्त्ता का रूप धारण कर लेता है। शीघ्र सोचने तथा सावधान रहने के गुणों का विकास होता है। सामाजिक ज्ञान, इन्द्रिय साधना, विचार तथा कार्यों में अनुशासन आदि की वृद्धि होती है। उपयोगी कार्यों में बालकों को एक वास्तविक प्रेरणा मिलती है। जब उन्हें आविष्करण, संयोजन, निर्माण आदि करना पड़ता है तो बड़ा आनन्द प्राप्त होता है।

बालक को अपने बड़ों का अनुकरण करने में आनन्द आता है। जो कुछ वह देखता है, सुनता है या को करना चाहता है। जब वह किसी को कुछ करते देखता है तो वैसा ही करने की उस की भी इच्छा होती है। इस कार्य में वह अपनी शक्ति लगा देता है। उदाहरण के लिए किसी को सन्दूक बनाते देख कर उसकी भी इच्छा हो आती है। इस के लिये उस इच्छा को कार्य में परिणत करने का प्रश्न उठता है। अतः अनेक समस्याएं सामने आती हैं जैसे--संयोजना, ठीक प्रकार की लकड़ी छाँटना, आवश्यक अङ्गों को नापना, सामग्री तैयार करना, किनारों और कोनों को ठीक करना इत्यादि। इस के लिए औज़ारों और निर्माण की क्रियाओं का ज्ञान आवश्यक है। इस के अतिरिक्त उपस्थित होने वाली कठिनाइयों को हल करने के लिए पर्याप्त अनुशासन और धैर्य की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार इन उपयोगी कार्यों के करने में ठीक प्रकार की शिक्षा प्राप्त होती है।

विद्यालय में जीवन का वास्तविक अनुभव प्राप्त होना चाहिए जो आनन्दपूर्ण भी हो। बालक भोजन बनाने, मकान बनाने क्रय-विक्रय करने, हाथ से वस्तुएँ बनाने आदि कार्यों में आनन्द लेता है। बालक के जीवन को सुखी तथा उपयोगी बनाने के लिए ऐसे कार्य विद्यालय में सिखाने चाहिएँ।

विद्यालय में प्रकृति और समाज का सम्मिश्रण होना चाहिए। बालक की प्रकृति या मूल प्रवृत्तियाँ शिक्षा का आधार बनानी चाहिएँ और समाज में किये गये कार्यों को विद्यालय में कराना चाहिए। इस प्रकार बालक की प्रकृति तथा समाज के कार्यों को शिक्षा में सम्मिलित कर लेना चाहिए।

शिक्षा की गति धीरे-धीरे क्रम पूर्वक होनी चाहिए अर्थात् साधारण वस्तुओं से आरम्भ कर के छानबीन के विशाल क्षेत्रों में प्रविष्ट कराना चाहिए। उदाहरण के लिए बालक आरम्भ में सन्दूक या खिलौने बनायें और बाद में रेडियो सेट, ग्रामोफोन तथा अन्य कठिन वस्तुएँ तैयार करें।

ड्यूई प्रचीन ढंग की शिक्षा का विरोधी है। वह आजकल की निष्क्रिय शिक्षा को पसन्द नहीं करता। पाठ्य विषय, पाठ्यक्रम, पाठ्य पुस्तक आदि में अध्यापकों या शिक्षा अधिकारियों द्वारा पहले से ही जो तैयार हुई सामग्री रख दी जाती है उस की वह कड़ी आलोचना करता है। उस के विचार में जब आवश्यकता पड़े या परिस्थितियाँ उपस्थित हों तभी विद्यार्थी और अध्यापक मिलकर इन वस्तुओं को तैयार कर लें। वह आजकल के कक्षा अध्यापन को जहाँ स्थान की कमी होती है एक ही स्थान पर डेक्स लगे रहते हैं तथा एक सा ही पाठ्यक्रम तथा पाठ्य पद्धति प्रयुक्त किये जाते हैं--बिलकुल पसन्द नहीं करता है।

वह विद्यालय में प्रजातन्त्रीय जीवन का पक्षपाती है अर्थात् विद्यालयों में स्वतन्त्र अनुशासन और पूर्ण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वतन्त्रता का वातावरण होना चाहिए। बालकों को अपना कार्य स्वयं करने तथा क्रियाओं को स्वयं चुनने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। उन्हें किसी विशेष विषय या लेख को पढ़ने का बन्धन नहीं होना चाहिए। शिक्षा उन की रुचि तथा शक्ति के अनुसार होनी चाहिए। अध्यापक को विद्यार्थियों के एक मित्र तथा पथप्रदर्शक के रूप में कार्य करना चाहिए। उस को उन के कार्य में बिना आवश्यकता के हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। वह उन्हें प्रेरित करने तथा अध्ययन के लिए विषय का चुनाव करने के उद्देश्य से उचित परिस्थिति प्रदान कर सकता है। वह आवश्यक सामग्री तथा सहायक पुस्तकें भी सुझा सकता है तथा जहाँ आवश्यक हो वहाँ मार्ग-दर्शन तथा परामर्श का कार्य भी कर सकता है। लेकिन उसे अपने आपको सर्वेसर्वा नहीं समझना चाहिए।

ड्यूई विद्यार्थियों के पारस्परिक सहयोग को बहुत महत्व देता है। उस के अनुसार विद्यालय को एक युद्ध-भूमि, स्टुडियो तथा प्रयोगशाला समझना चाहिए जहाँ सब विद्यार्थी एक साथ शिक्षा प्राप्त करें और एक-दूसरे की सहायता करें। वह कक्षा के विद्यार्थियों में रहने वाली प्रतिद्वन्दता तथा ईर्ष्या द्वेष की भावना को जिसमें एक-दूसरे की सहायता करना अपराध माना जाता है, बहुत बुरा समझता है। वर्तमान कक्षा प्रणाली अत्यधिक व्यक्तिगत और स्वार्थ पूर्ण है बालक एक दूसरे की उन्नति देखकर जलते हैं। यह भावना प्रजातन्त्र तथा समाज सुधार के लिए हानिकारक है। वह इस प्रकार की शिक्षा पसन्द करता है जहाँ विद्यार्थी अलग-अलग नहीं बल्कि एक-दूसरे की सहायता करते हुए मिलकर शिक्षा प्राप्त करते हैं।

लाभ--व्यवहारवाद के अनुसार दी जाने वाली शिक्षा रोचक तथा सक्रिय होती है। बालक कार्य के द्वारा शिक्षा प्राप्त करते हैं। इस में उपयोगिता और व्यावहारिक जीवन को महत्त्व दिया गया है। इस के द्वारा उपयोगी तथा स्वावलम्बी नागरिक पैदा होते हैं। शिक्षा को नवीन रूप प्राप्त होता है और उस में व्यवसायिक पुट आ जाता है। आजकल समस्त योजनाएँ जैसे वारधा योजना, सारजेन्ट योजना आदि इस पर आधारित हैं। यह शिक्षा वैज्ञानिक भी है क्यों कि प्रयोगों को महत्व दिया जाता है। इस के अतिरिक्त यह मनोवैज्ञानिक भी है क्यों कि इस में बालक को शिक्षा का केन्द्र माना जाता है। यह प्रभावपूर्ण भी है क्यों कि इस में सामग्री या मूर्त वस्तुओं का बहुत उपयोग होता है। यह शिक्षा मस्तिष्क तथा शरीर में सामंजस्य उत्पन्न करती है, निरे आदर्शवादी विद्वान् उत्पन्न नहीं करती। शिक्षा उद्देश्यपूर्ण होने तथा निगमन पद्धति के उपयोग के कारण बालक सरलता और प्रसन्नता से इसे ग्रहण करता है। विषयों के परस्पर सम्बद्ध होने के कारण बालक का व्यक्तित्व भी सम्बद्ध-रूप में विकसित होता है इस में सामान्य तथा दस्तकारी की शिक्षा साथ-साथ दी जाती है। दस्तकारी को महत्व देने तथा व्यवसायिक शिक्षा की प्रधानता के कारण आधुनिक समय में यह बहुत उपयोगी है। इस में प्रजातन्त्र की भी शिक्षा दी जाती है इस से बालकों का चरित्र भी बनता है क्यों कि ईर्ष्या द्वेष के स्थान पर वे एक-दूसरे की सहायता करते हैं।

दोष—व्यवहारवादी शिक्षा उपयोगिता को बहुत महत्व देती है और दस्तकारी को प्रधानता देती है। इस का उद्देश्य मिस्त्री या कारीगर तैयार करना है। इसमें सैद्धान्तिक पक्ष तथा मानसिक शक्तियों, जैसे तर्क विचार, तर्क आदि का बिकास नहीं होता है। इस में कला तथा तथ. संस्कृति को कोई महत्व नहीं दिया जाता है। धर्म तथा नैतिकता के लिए, जो चरित्र निर्माण करते हैं, कोई स्थान नहीं है। यह शिक्षा मंहगी भी बहुत है क्योंकि मूर्त सामग्री बहुत चाहिए। इस के अतिरिक्त बालक दस्तकारी सीखते समय वस्तुओं को बहुत बिगाड़ते हैं। ज्ञान की दृष्टि से यह शिक्षा अधूरी रहती है क्योंकि क्रियाओं तथा विषयों की सम्बद्धता पर बहुत जोर दिया जाता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# पारिभाषिक शब्द और आचार्य रघुवीर

श्री विजय कुमार माथुर एम० ए०

पिछले बीस वर्षों में हिन्दी को राष्ट्र एवं राज्य भाषा बनाने तथा उसकी समृद्धि के लिये जिन विद्वानों और साहित्य सेवियों ने अधिकतम प्रयास किया है उनमें नागपुर की इन्टर नेशनल एकेडमी आफ इन्डियन कल्चर (सरस्वती-विहार के संचालक डाक्टर रघुवीर का नाम चिरस्मरणीय रहेगा। उनके अथक परिश्रम और घोर लगन के प्रताप से हिन्दी केवल हमारी राज्य भाषा ही नहीं बनी किन्तु उसमें वैज्ञानिक साहित्य की सृष्टि के लिये मार्ग भी प्रशस्त हो चुका है।

आचार्य रघुवीर ने १६३६ के लगभग लाहौर में हिन्दी तथा अन्य भाषाओं में वैज्ञानिक शब्दावली के निर्माण का श्री गणेश किया था। उस समय तक इस दिशा में कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं किया गया था। दो-चार छुट-पुट प्रयास अवश्य हुये थे किन्तु उनसे किसी प्रकार भी इस समस्या का हल नहीं होता था। अँग्रेजी तथा यूरोप की अन्य भाषाओं में विज्ञान का जो अनन्त भन्डार है उसे हम अपनी भाषा में ला कर किस प्रकार आत्मसात् करें तथा उसमें वैज्ञानिक साहित्य का सृजन किस प्रकार हो—इसी प्रश्न को लेकर हमारी भाषा के सामने एक प्रकार का अनिष्टकारी गत्यवरोध उत्पन्न हो गया था। अनेक मनीषियों का मत था कि अँग्रेजी में जितनी पारिभाषिक शब्दावली है उसे अक्षुण्ण रुप में हिन्दी में रख लेना चाहिए किन्तु ऐसा करने का अर्थ यह होता कि भरती के इस प्रकार के विदेशी शब्दों को, जिनकी संख्या लाखों तक पहुंचती है, ले लेने से हमारी भाषा का रुप सर्वथा ही बिगड़ जाता। इतना अधिक बिगड़ जाता कि उसे पहचानने में भी कठनाई होती। और फिर विदेशी शब्दों के समूह के समूह अपरिवर्तित रुप में लेकर हमारा सारा वैज्ञानिक साहित्य विदेशी साहित्य की अनुकृति मात्र रह जाता। शब्दों से ही भाषा बनती है और शब्द बनते हैं हमारे विचारों से और वें हमारे विचारों के प्रतीक हैं। विदेशी शब्दावली को अपनी भाषा में भर कर हम सदा के लिये अपने मौलिक व स्वतंत्र चिन्तन का मार्ग बंद कर देते।

किन्तु दूसरी ओर यूरोपीय वैज्ञानिक शब्दावली इतनी विशाल तथा विस्तृत है और प्रति दिन इतनी अधिक सम्पन्न होती जाती है कि अपनी भाषाओं में जिनमें अभी तक इतने महान् उपक्रम की कल्पना भी नहीं की गई थी इस शब्दावली के समकक्ष शब्दावली बनाना भगीरथ प्रयास से कम नहीं था। अपनी भाषाओं में इस अभूत पूर्व कार्य को करने की शक्ति किस प्रकार उत्पन्न की जाए यह प्रश्न भी कुछ कम टेढ़ा नहीं था। इस प्रकार हमारी भाषा की उन्नति के दोनों ही रास्ते बंद थे।

डा० रघुवीर ने इस गत्यवरोध को दूर करने के लिये एक नई विचार धारा का सूत्रपात किया। उन्होंने विदेशी पारिभाषिक शब्दावली को अपनी भाषा में केवल अनुवाद रुप में स्वीकार करने का निश्चय किया। इस कार्य के लिये उन्होंने भारत की प्रायः सभी भाषाओं की जननी तथा इस महान् देश की संस्कृति के मूलस्रोत, संस्कृत भाषा को आधार बनाया। उन्होंने अपनी बहु भाषा विज्ञता तथा नैसर्गिक प्रतिभा के बल पर इस महान् भारतीय भाषा की संरचना के तत्वों में निहित उस विराट् शक्ति को शीघ्र ही पहचान लिया जिसके प्रयोग से वे यूरोप के वैज्ञानिक साहित्य की समग्र शब्द तथा विचार सम्पदा को भारतीय रुप में अभिव्यक्त करने की क्षमता प्राप्त कर सकते थे। यह सन्तोष का विषय है कि प्रायः बीस वर्षों के सतत् प्रयत्न और देश के गण्यमान

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विद्वानों की सहायता से वे इस दिशा में एक प्रशस्त मार्ग का निर्माण करने में सफल हुये हैं।

संस्कृत में लगभग दो सहस्र मूल धातुएं हैं जिनमें से केवल पांच सौ ही अधिकतर काम में आती हैं। इस भाषा के विशाल भवन की ये ईटें हैं। इनके अर्थ बहुत कुछ तरल तथा आनम्य हैं। जिस प्रकार कपास के पिण्ड में से तकुवे के घूमने से डोरा तेज़ी से निकलता रहता है उसी प्रकार इन धातुओं के रुपहीन पिण्ड में से बीस उपसर्गों और प्रायः अस्सी प्रत्ययों के प्रयोग से नए-नए अर्थ तथा निश्चित रूप वाले शब्द निकलते चले जाते हैं—हृ धातु का केन्द्रीय अर्थ है 'हरना' ओर इसी से 'हरण' बना है—अब इस में प्र आ, सम्, वि, परि उपसर्ग जोड़ने से क्रमशः प्रहार, आहार, संहार,विहार और परिहार शब्द बनते हैं जिनके अर्थ केन्द्रीय भाव से मूल रूप में सम्बद्ध होते हुए भी सर्वथा भिन्न हैं। इनके अतिरिक्त शेष उपसर्ग ये हैं—अति, अधि, अनु, अप, अपि, अभि, अव, उद्, उप, दुः, नि, निः, परा, प्रति और सु।

इसी प्रकार तव्य ( गंतव्य ), अनीय ( भेदनीय ), तर, तम (अधिकतर, तम), मय ( स्वर्णमय), शः (अल्पशः), ता (जनता) क (बालक) इत्यादि कृदन्त तथा तद्धित प्रत्ययों के संयोजन से धातुओं तथा संज्ञाओं के अर्थों में विभेद उत्पन्न हो जाता है। डा० रघुवीर ने इसी रीति को अपना कर जो वास्तव में संस्कृत की संरचना का प्राचीन आधार है, वैज्ञानिक एवम् पारिभाषिक शब्दावली के लिये नए-नए शब्दों का निर्माण प्रारंभ किया। इस रीति का विशेष लाभ यह था कि अंग्रेजी की वैज्ञानिक शब्दावली का, जहां प्रत्येक शब्द का अर्थ निश्चित और अनेक सम्बन्धी शब्दों से भिन्नता लिये हुये हैं भारतीय भाषा में अनुवाद करते समय बड़ी सुविधा होती है। इस प्रकार इस रीति से पारिभाषिक शब्दावली का केवल एक-एक शब्द अलग-अलग नहीं किन्तु अपने संबंधी शब्दों के समूह के साथ अनुदित किया जा सका जिससे डा० रघुवीर अपनी शब्दावली को एक क्रमबद्ध तथा संघटित रूप प्रदान कर सके। यही विशेषता आगे चल कर उन की इस क्षेत्र में अपूर्व देन साबित हुई क्योंकि इसी विशेषता के कारण भारतीय भाषाओं खास कर हिन्दी में, अंग्रेजी शब्दावली की भांति ही विज्ञान के अनन्त शब्दों का निर्माण किया जा सकता है और इस प्रकार विज्ञान के विदेशी रूप को भारतीय बना कर हम उसे सरल तथा सुगम भी बना सकते हैं - इस प्रकार हिन्दी के पुराने ढांचे को नवीन विचारों के लिए विस्तृत तथा सुदृढ़ बनाने के कारण यदि आचार्य रघुवीर को आधुनिक हिन्दी का पाणिनि कहा जाए तो शायद अतिशयोक्ति न होगी।

जून १६५५ में नागपुर से ए कम्प्रिहेन्सिव इङ्गलिश हिन्दी डिक्शनरी प्रकाशित हुई। इसमें बृहदाकार के प्रायः १८०० पृष्ठ हैं और एक लाख से ऊपर पारिभाषिक शब्द जिनका सम्बन्ध आधुनिक विज्ञान की अनन्त शाखा-प्रशाखाओं से हैं। इससे पहले श्री डा० रघुवीर ने विषयों के अनुसार कई छोटे कोष प्रकाशित किए थे। इन के साथ ही नागपुर विश्वविद्यालय के लिए इंटरमीडिएट-विज्ञान की लगभग ३४ पाठ्य पुस्तकें नई शब्दावली में लिख कर प्रकाशित हो चुकी थीं। इस विश्वविद्यालय में विज्ञान की शिक्षा इसी शब्दावली द्वारा इन्टर की कक्षाओं में सफलता पूर्वक दी जाती रही है। इस कोष के प्रकाशन से तो इस क्षेत्र में क्रान्ति ही उत्पन्न हो गई है क्यों कि इतनी वृहत् शब्दावली,जिसके निर्माण में अनेक विद्वानों ने भाग लिया है—इतने वैज्ञानिक ढङ्ग से आज तक न बनाई गई थी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैज्ञानिक शब्दों के अतिरिक्त प्रशासन संबंधी शब्दों की भी, स्वतन्त्रता के पश्चात्, देश में बहुत आवश्यकता थी। डा० रघुवीर ने इस कोष में प्रायः सभी ऐसे शब्दों का सन्निवेश किया है और यह हर्ष का विषय है कि इनमें से अधिकांश नव-निर्मित शब्द थोड़े ही समय में हमारी भाषा का अविच्छिन्न अङ्ग बन गए हैं। कुछ के उदाहरण ये हैं—संविधान ( कोन्सटी-टयूसन ), विधान ( लेजिस्लेशन ). संसद ( पार्लियामेंट ) अधिनियम ( ऐक्ट ), सचिव ( सैक्रेट्री , सचिवालय ( सैक्रेट्रीयेट ) मंत्रालय ( मिनिस्ट्री ) आयुक्त ( कमिश्नर ), प्रतिरक्षा ( डिफेन्स ), शासन (गवर्नमेंट), प्रशासन (एडमीनिस्ट्रेशन) आदि आदि। ये शब्द समाचार पत्रों, राजकीय सूचना पत्रों तथा प्रशासन सम्बंधी अनेक पुस्तकों में व्यवहृत हो रहे हैं—इनके निर्माण से हमारी भाषा की अभिव्यञ्जना शक्ति में अद्भुत विस्तार हुवा है। अनेक प्रांतों के प्रशासन में भी इन शब्दों के व्यवहार के कारण जनता को बहुत सुविधा हो गई है।

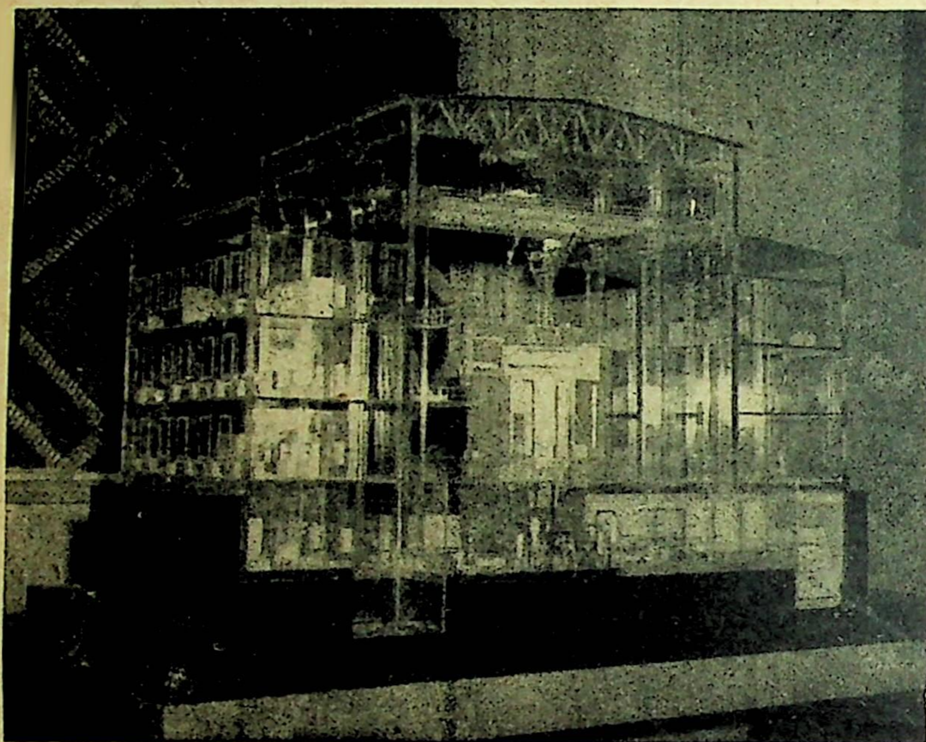
डा० रघुवीर ने इस प्रकार वैज्ञानिक शब्दावली का हिन्दी में ( तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी—क्योंकि शब्दावली संस्कृत में है ) सूत्रपात ही नहीं किया वरन उन्होंने इस कार्य को काफी आगे भी बढ़ाया है। उन्हें अपने महान किन्तु कठिन कार्य में पग-पग पर अनेक विरोधों और रुकावटों का सामना करना पड़ा है किन्तु उन्होंने विषम परिस्थितियों में कभी हार नहीं मानी और जिन आदर्शों को सामने रख कर उन्होंने अपने महान् कार्य का श्री गणेश किया था उनका आज भी वे पूर्ववत् पालन कर रहे हैं।

वास्तव में पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण कार्य पर डा० रघुवीर के जिस अदम्य उत्साह की छाप पड़ी है उसकी मूल प्रेरणा उन्हें अपने भारतीय संस्कृति के प्रति अटूट प्रेम से मिली है। उन्होंने हमारी प्राचीन संस्कृति के उद्धार के लिए भी महान् प्रयत्न किये हैं। इस के लिए वे यूरोप तथा एशिया के अनेक देशों में बार-बार घूमते रहे हैं। अभी हाल ही में वे चीन और रूस गए थे जहाँ इन देशों के शासन ने उन्हें निमंत्रित किया था। चीन से प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों, मूर्तियों, अभिलेखों आदि के रूप में जो सामग्री वे भारत लाए थे वह इतनी विशाल है कि उसके केवल एक अंश की प्रदर्शनी शिक्षा मंत्रालय के तत्त्वावधान में नई दिल्ली में की जा सकी थी। इसी प्रकार रूस, मध्य-एशिया, मंगोलिया, तिब्बत जावा, बाली लंका आदि देशों से भी डा० रघुवीर ने प्राचीन भारतीय संस्कृति सम्बन्धी अनन्त सामग्री लाकर सरस्वती विहार को विभूषित किया है। कहा जाता है कि बृहत्तर भारत के इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं कला के अध्ययन के लिए भारत में अन्यत्र इतनी अधिक मूल्यवान सामग्री नहीं है जितनी सरस्वती बिहार में। यह प्रसन्नता की बात कि इन्टरनेशनल एकेडमी जो वास्तविक रूप में ही अन्तर्राष्ट्रीय है शीघ्र ही दिल्ली में कार्य प्रारम्भ करेगी और भारतीय संस्कृति के अनेक विलुप्त अध्यायों को पुनः लिखने में समर्थ हो सकेगी। आचार्य रघुवीर से देश को बहुत आशाएं हैं भगवान उन्हें चिरायु करे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# परमाणु के शान्तिपूर्ण उपयोग

इस लेख में मास्को की औद्योगिक प्रदर्शनी के एक सर्वाधिक जनप्रिय मण्डप का परिचय दिया जा रहा है।



प्रयोगात्मक 'हैवी वाटर रिएक्टर' का एक माडल

प्रदर्शनी का टिकट खरीदने वाला कोई भी व्यक्ति इस मण्डप में भी आ सकता है; परन्तु उसे यह मण्डप देखने को मिले, इस के लिए उसे पंक्ति में खड़ा होना होगा। क्योंकि इसे देखने वालों की भीड़ लगी रहती है। यह भी समझ लीजिए कि इस मण्डप में जो चीजें दिखलाई गई हैं और जिन्हें हर कोई देख सकता है, वे कुछ काल पहले तक सभी देशों में 'अति गोपनीय' मानी जाती थीं।

परमाणु रिएक्टर? आप इसे देख सकते और इस के जितने चाहें, फोटो उतार सकते हैं। यह परमाणु शक्ति एकत्रित करने वाला कार्यरत यन्त्र अब उतना ही गुप्त है जितना मेट्रो स्टेशन: अगर आप के पास टिकट है, आप सीधे भीतर चले जाइए और देखिए।

फिर भी आगन्तुकों को इस के साज-सामान के इर्द-गिर्द अब भी रहस्य की छाया जान पड़ती है और इस के विपरीत हो भी कैसे सकता है, जब कि एक बड़े तालाब के पास जा कर आप देखते हैं कि धरातल से छः मीटर नीचे पानी के भीतर नीलापन लिए हुए हरा प्रकाश हो रहा है। और जब आप को मालूम होता है कि आप जो चीज़ देख रहे हैं वह परमाणविक 'उद्गार' है, तो आप कांपने लगते हैं और पानी के भीतर की आग आप को आकाश गङ्गा की चमक-दमक की याद दिलाती है और आप इसे रहस्यमय पाते हैं, ऐसी चीज़ जो इस दुनियाँ के बाहर की हो।

कुछ लोगों को जब यह मालूम होता है कि तालाब की जल राशि ही आगन्तुकों को परमाणु के 'सम्पर्क' से बचाती है तो वे बड़ी सावधानी से तालाब के पास से हट जाते हैं। ऐसा करने की जरूरत नहीं, क्योंकि परमाणु को बड़ी सावधानी से बाहर आने से रोक दिया गया है—भूतों को खदेड़ कर बोतल में बन्द कर दिया

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

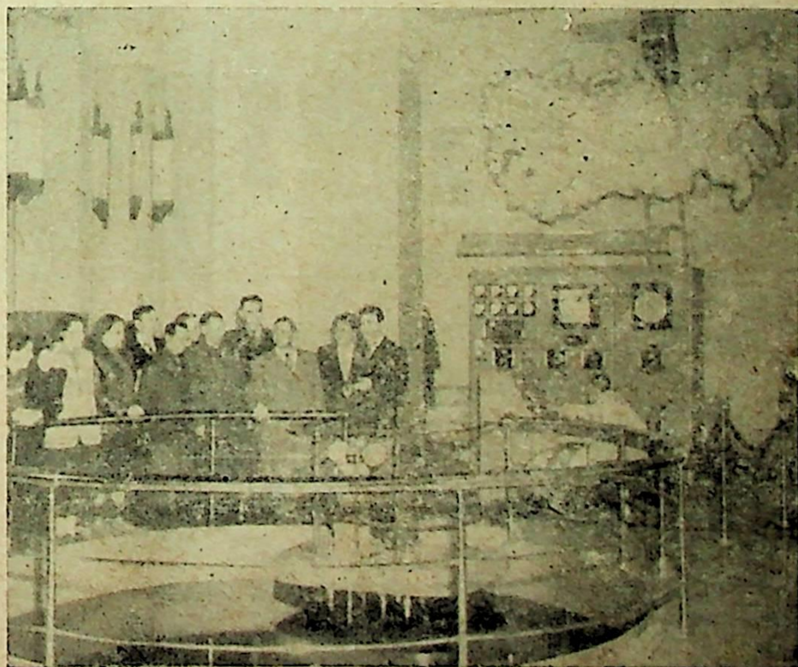
गया है और यह बात सब जानते हैं कि जब तक बोतल की काग बन्द रहती है, तब तक भूत ठीक से व्यवहार करते हैं तथा आदमी की आज्ञा मानते हैं।

यह मण्डप दिखलाता है कि परमाणु किस प्रकार सुचारु रूप से मानव की सेवा करता है, यदि परमाणु की व्यवस्था करने वाले व्यक्ति के इरादे शान्तिपूर्ण और नेक हों, तो परमाणु कैसा 'शान्तिपूर्ण' और 'नेक' रहता है।

एक पारमाणविक उपकरण बियर की बोतलें गिन रहा है तथा एक पारमाणविक विधि के द्वारा इस का पता लगाया जा रहा है कि कारखाने फर्श पर बिछाये जाने वाले टाट की रङ्गाई सब जगह समान हुई है या नहीं—कार्य में लगाया परमाणु इस प्रकार के साधारण काम कर रहा है और अब उस का सारा रहस्य समाप्त हो गया है।

उन का रहस्य तो समाप्त हो गया है, परन्तु शक्ति समाप्त नहीं हुई। यहां कैंसर वाले तन्तुओं को रेडिओ सक्रिय करने के लिए एक शान्तिपूर्ण पारमाणविक 'बन्दूक' है। दर्शक इसे कृतज्ञ भाव से देखते हैं। ऐसी 'बन्दूकों' ने अनेक लोगों को अच्छा किया है और यहां परमाणु चालित बर्फ तोड़क का एक माडल है—थोड़े से पारमाणविक पदार्थ की सहायता से जहाज बर्फ की मोटी-से-मोटी तह को काट डालेगा और उस के परे दो लाख किलोवाट की क्षमता के एक बिजली घर की रूप-रेखा बनी है। यह बिजली घर चालू पंचवर्षीय योजना काल में बनेगा। पंचवर्षीय योजनाकाल की समाप्ति तक देश के पारमाणविक बिजलीघरों की कुछ क्षमता २० से २५ लाख किलोवाट तक हो जायगी। शक्तिशाली परमाणु बड़ी तेजी से सोवियत संघ के राष्ट्रीय अर्थतन्त्र का अङ्ग बन रहा है।

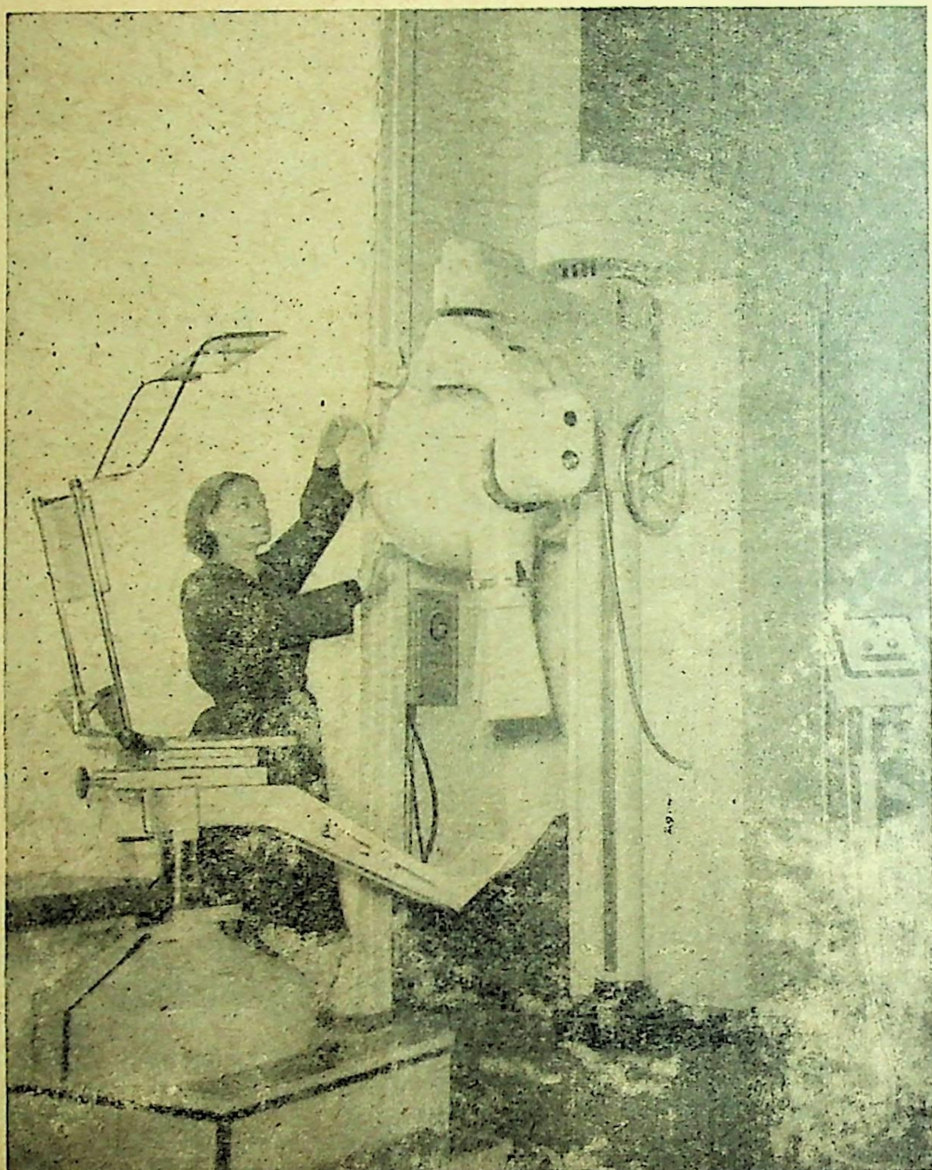
मण्डप में एक-दो घण्टे बिताने से आप अनेक बातें जान सकते हैं। एक हाल में आप एक पोस्टर देखेंगे जिस में लिखा है: 'धरती साढ़े पांच अरब वर्ष की है,' और वहां लोगों को समझाने के लिए लगा तख्ता हमें बतलाता है कि रेडिओ सक्रियता के सहारे धरती की आयु निर्धारित करना कैसे सम्भव हुआ। वह यह भी बतलाता है कि तेल की सम्भावना की खोज में परमाणु कणों का किस प्रकार प्रयोग किया जाता है, भोजन को सुरक्षित रखने में, बीजों को और जल्द उगाने में, फसलों की वृद्धि में, हवा भट्टियों



बीजाणविक-रिएक्टर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का पलस्तर ठीक है या खराब हो गया है, इसे जानने में ा और भी बीसियों ामों में उन का ऽस प्रकार उपयोग होता है।



शरीर के अन्दर गहरे बैठे हुए व्रणों की चिकित्सा का आरोग्यकर गामा यन्त्र।

पारमाणविक साज-समान की शक्ति, 'परमाणु ईंधन' का स्रोत यूरेनियम है। यह एक प्रकार का तत्व है जिस को विघटित करने से उस के परमाणु से बहुत अधिक शक्ति निःसृत होती है धरती में दूसरी चीज़ों के साथ-साथ लाखों-लाख टन यूरेनियम भी है, परन्तु इसे निकालना बहुत आसान नहीं है। दो तख्तों पर सोवियत सङ्घ में पाये जाने वाले खनिज पदार्थों और यूरेनियम के नमूने प्रदर्शित किए गए हैं। प्रदर्शित पदार्थों में कोई ८० चीज़ें हैं। यह दुनियाँ का सब से बड़ा संग्रह है।

मण्डप में परमाणु शक्ति के व्यावहारिक प्रयोग की ही बात नहीं बतलाई जाती; इस के सम्बन्ध में होने वाले सैद्धान्तिक काम की, परमाणु की बनावट के सम्बन्ध में वर्तमान विचारधारा की भी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। ज्योंही आप मण्डप में घुसते हैं, धातु की एक चमकती हुई चीज़ देखते हैं। यह सौर-मण्डल का माडल जैसा जान पड़ता है। यह परमाणु का माडल है : बीच में न्यूक्लियस है और उस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के इर्द-गिर्द इलेक्ट्रोन घूम रहे हैं। गाइड (समझाने के लिए नियुक्त व्यक्ति) से इस की कहानी सुनिए, तब आप को पता चलेगा कि न्यूक्लियस परमाणु का नन्हा सा भाग है—दोनों की तुलना बालू के कण तथा पहाड़ से की जा सकती है। फिर भी, न्यूक्लियस में विद्यमान पदार्थ का घनत्व असाधारण है। यदि अंगुश्ताने में खूब ठूंस-ठूंस कर न्यूक्लियसों को भरना सम्भव हो, तो अंगुश्ताने का वजन २० करोड़ टन से अधिक होगा। दूसरे शब्दों में दुनियाँ के समस्त जहाजों के वज़न से अधिक होगा।

न्यूक्लियस के अति छोटे कण बड़ी तेजी से घूमते हैं तथा उन में अपार शक्ति रहती है। इन कणों की सहायता से परमाणु का विस्फोट करन से परमाणु चूर-चूर हो जाता है। इन कणों की गति में बनावटी ढङ्ग से वृद्धि करने के भी तरीके हैं और इस प्रकार गति-वृद्धि होने से उन की शक्ति बढ़ जाती है। इस उद्देश्य-सिद्धि के लिए शक्तिशाली मशीनें, ऐक्सलेरेटर (गति-वर्द्धक) तैयार किए गए हैं तथा प्रदर्शनी में ऐसी मशीनों के फोटो और माडल दिखलाए गए हैं। सोवियत सङ्घ में वर्षों से संसार का सब से बड़ा गति-वर्द्धक सिंक्रोसीक्लोट्रोन काम में आ रहा है। यह यन्त्र कणों को ६८ करोड़ इलेक्ट्रोन वोल्ट की शक्ति प्रदान करता है। एक और मशीन, प्रोटोन सिंक्रोटोन का निर्माण भी समाप्ति के निकट है। यह १० अरब इलेक्ट्रोन वोल्ट की शक्ति देगा।

हमारे संसार में एक नई शक्ति आ गई है। यह है परमाणु शक्ति। इसे शान्तिपूर्ण कार्यों में लगाने से यह प्रकृति की अन्धी मूलशक्तियों को काबू करने में व शक्ति और भौतिक सुख-समृद्धि के प्रचुर उत्पादन में मानव की सहायता करेगी।

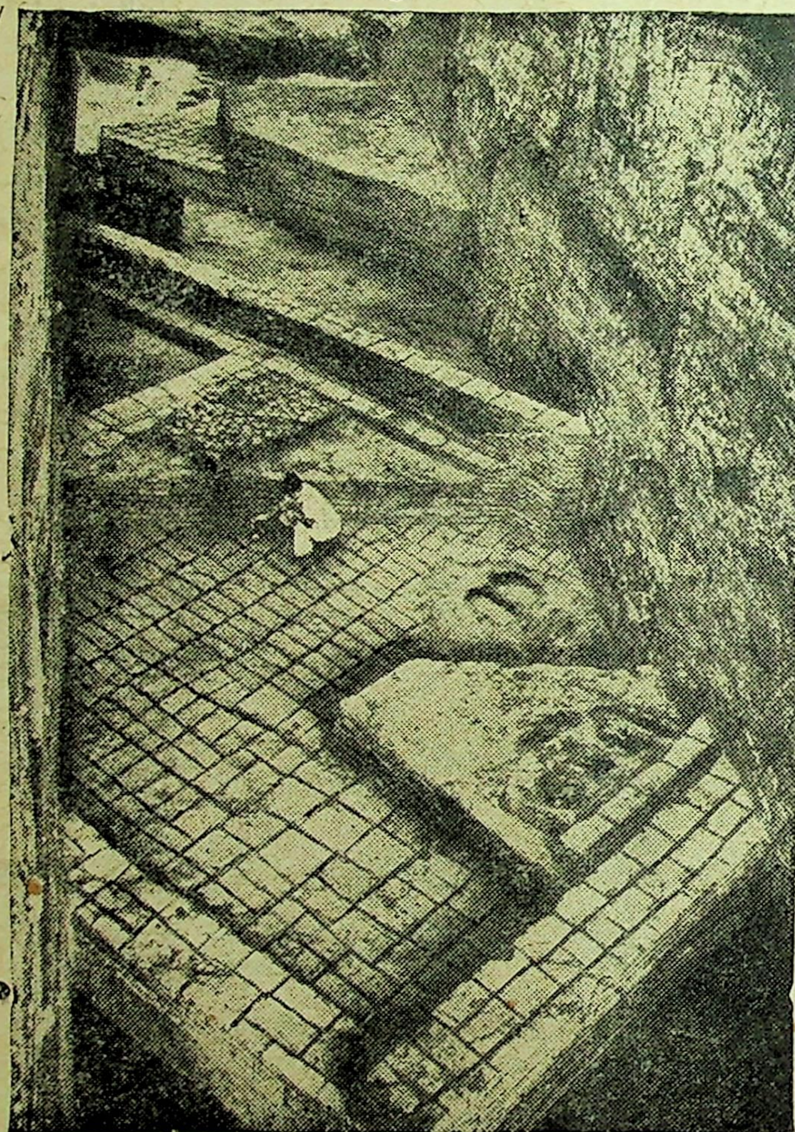


यूरेनियम धातु का-संसार में सब से बड़ा संग्रह।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# चम्बल घाटी में तीन हज़ार वर्ष पुराना नगर

मध्य भारत की चम्बल घाटी में नागदा स्थान पर खुदाई में, इमारतों के अनेक भग्नावशेष तथा विभिन्न प्रकार के चित्रित मिट्टी के बर्तन मिले हैं, जो ईसा पूर्व एक हज़ार वर्ष पुराने हैं। इस के अलावा किलेबन्दी किए हुए नगर के भी चिन्ह मिले हैं. जो काफी समय तक समृद्ध रहा होगा।



नागदा के भूगर्भ से निकले भवनों के अवशेष।

भारत सरकार के पुरातत्व विभाग ने हाल में यह खुदाई कराई थी। विभाग का उद्देश्य मध्य तथा पश्चिम भारत में प्राचीन संस्कृति का पता लगाना था।

नागदा की खुदाई से ऐसा जान पड़ता है कि यहां की संस्कृति गङ्गा घाटी की और सिन्ध घाटी संस्कृतियों के बीच की कड़ी थी।

कुछ समय पूर्व भी इस क्षेत्र में खुदाई हुई थी, जिस से यह प्रकट हुआ कि प्रचानी संस्कृति के रचयिता एक विशेष प्रकार के चित्रित मिट्टी के बर्तन प्रयोग में लाते थे। उस जमाने के औजार भी पत्थर या तांबे के बने हुए थे। सम्भवतः उस समय तक लोगों को लोहे का ज्ञान नहीं था। कांस्य-पाषाण संस्कृति समस्त मालवा और दक्षिण के कुछ भागों में फैली हुई थी। गोदावरी, ताप्ती, नर्मदा और चम्बल नदियों के किनारे बस्तियां बसी हुई थीं।

वर्तमान खुदाई से ऐसा जान पड़ता है कि नागदा काफी समय तक समृद्ध नगर रहा। यह संस्कृति का एक प्रमुख केन्द्र रहा होगा। उस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समय मनुष्य कच्ची इटों के बने मकानों में रहते थे तथा पत्थर के छोटे औज़ारों को काम में लाते थे । जिस तरह के कच्ची ईंटों के बने मकान, इस स्थान पर पाये गए हैं, वैसे कांस्य पाषाण संस्कृति के किसी अन्य स्थान में अब तक नहीं पाये गए हैं । चित्रित मिट्टी के बर्तन और दूर-दूर तक फैली इमारतों के भग्नावशेष, उस समय की जनता की समृद्ध दशा के द्योतक हैं । परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि बाहर से आक्रमण को उस समय बहुत आशङ्का रहती थी । हाल की खुदाई में जो इमारत का ढांचा निकला है, वह नगर की सुरक्षा की दीवाल का किला सा प्रतीत होता है । इस चिह्न से सिन्ध घाटी की संस्कृति के सम्बन्ध का संकेत मिलता है, जहां नगरों में ऐसी ही किलेबन्दी थी ।

नागदा की खुदाई का काम महत्वपूर्ण जान पड़ता है । इस से मध्य तथा पश्चिम भारत की कांस्य-पाषाण संस्कृति का सम्बन्ध गङ्गा घाटी की प्राचीन संस्कृति से जुड़ता है । कहा जाता है कि सिन्ध घाटी की संस्कृति दक्षिण में सौराष्ट्र तक फैली हुई थी ।

इस क्षेत्र में और अधिक खुदाई होने पर, अच्छे परिणाम निकलने की आशा है ।

—

# सूर्य की शक्ति का उपयोग

संसार की शक्ति के हर साधन का स्रोत सूर्य है । लकड़ी, कोयले और पैट्रोल आदि की गरमी सूर्य की शक्ति का ही एक रूप है । बिजली बनाने के लिए पानी की जरूरत होती है और वर्षा का कारण सूर्य ही है ।

अनुमान है कि संसार भर का सब तरह के ईंधन का भण्डार १०० वर्ष से अधिक नहीं चलेगा । पानी से बनने वाली बिजली की मात्रा भी सीमित है । इसलिए कुछ ही दिनों में संसार को अपनी ८० प्रतिशत आवश्यकता, अणुशक्ति से पूरी करनी होगी । बाकी १५ प्रतिशत आवश्यकता सूर्य की शक्ति से और ५ प्रतिशत अन्य साधनों से ।

चीज़ों के गरम करने में जैसे भाप बनाने में सूर्य की शक्ति का सब से अच्छा उपयोग हो सकता है । समुद्री घास, उगाने में, कुछ रासायनिक प्रक्रियाओं में और चीज़ों को ठण्डा या गरम करने में सूर्य की गरमी का इस्तेमाल हो सकता है । अभी इन सब चीज़ों के बारे में परीक्षण चल रहे हैं और बड़े पैमाने पर इन का उपयोग नहीं किया जा सकता ।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# हिमालय की घाटियों में

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

भूमण्डल पर मनुष्य सृष्टि कहां प्रारम्भ हुई, यह प्रश्न अब तक विवादग्रस्त है। कुछ विद्वान् आदि सृष्टि का आरम्भ ध्रुव देश से मानते हैं, तो कुछ उसे मध्य एशिया में तलाश करते हैं। मैं भूमण्डल के प्रश्न को पृथक् रख कर इस लेख का प्रारम्भ उस समय से करना चाहता हूँ, जब भारत में मानव ने सामाजिक जीवन आरम्भ किया। यह सर्व सम्मत सी बात है कि मनुष्य जाति के साहित्य में सब से पुरानी और पहली शब्द रचना वेद हैं। जो पुराने लोग वेद की ऋचाओं को ही अपना मार्ग दर्शक मानते और उन्हीं में प्रभु और प्रकृति का गान करते थे, उन का सामूहिक नाम आर्य था। हमारे पास यह मानने के लिए बहुत पुष्ट और पुष्कल प्रमाण हैं कि उन आर्यों का प्रारम्भिक निवास स्थान हिमालय की ऊंची घाटियों में और हिमाच्छादित चोटियों पर था। भारत के इतिहास का पहला परिच्छेद कश्मीर और तिब्बत के ठण्डे और सुहावने पर्वतों और मैदानों में लिखा गया था। यही वह प्रदेश थे, जिन्हें उत्तरकालीन आर्य 'स्वर्ग' 'नर्क' आदि नामों से पुकारा करते थे।

उस समय आर्यों का जीवन अत्यन्त सरल और अछूता था। अन्य किसी सभ्यता या संस्कृति का प्रभाव उस पर नहीं था। जल की जैसी शुद्ध धारा गंगोत्री में बहती है, उस समय आर्यों की धार्मिक और मानसिक विचारधारा वैसी ही शुद्ध और अछूती बहती थी। उस पर कृत्रिमता का लेप नहीं था।

वे लोग अपने नेता व राजा को इन्द्र नाम से पुकारते थे। शीत स्थान होने के कारण अग्नि और सूर्य से उन्हें अत्यन्त प्रेम था, वे परमात्मा को उन सब नामों से सम्बोधित करते थे, जो आदर सूचक थे। वे उस में मनुष्य और प्रकृति के सब गुणों का मूलस्रोत देखते थे।

उन में जो शासन प्रणाली प्रचलित थी, उसे न राज सत्तात्मक कह सकते हैं और न प्रजा सत्तात्मक। उस का यदि कुछ नाम रखना ही हो तो हम उसे 'गुणतन्त्रात्मक' शासन प्रणाली कह सकते हैं। जो सौ बार निर्विघ्न यज्ञ कर ले और शत्रुओं को परास्त करने की शक्ति रखता हो, वही स्वर्ग का राजा इन्द्र बन सकता था, दूसरा नहीं। कभी-कभी नहुष जैसे अयोग्य व्यक्ति भी राजा बनने का यत्न करते थे। परन्तु वे स्वर्गवासियों के लोकमत द्वारा अधिकार च्युत कर दिये जाते थे। इन्द्र वही बनता, और वहां रह सकता था, जिसमें धर्मबल और क्षात्रबल दोनों में सब से अधिक हो। इस प्रणाली का उपयुक्त नाम गुणतन्त्र प्रणाली ही हो सकता है।

## सप्तसिन्धु में

आर्य लोग हिमालय की घाटियों से उतर कर सप्तसिन्धु के मैदान में कब आये। इसका हिसाब लगाना इस समय असम्भव ही है। पृथिवी के गर्भ से तथा ऊपर के अवशेषों से जितने हिसाब लगाये गये हैं, वे उस काल तक नहीं पहुंचते, जिस में आर्य लोगों के जत्थे स्वर्ग की ऊंचाई को छोड़ कर पृथ्वी के समतल पर आने और फैलने लगे थे। वह समय सदियों पुराना नहीं युगों पुराना हो गया, उस की इयत्ता अभी तक वैज्ञानिक अन्वेषण भी नहीं लगा सकी।

यद्यपि उस समय की इयत्ता नहीं जानी जा सकती, तो भी उस का एक धुंधला सा चित्र हम अपनी आँखों के सामने ला सकते हैं। उस समय सप्तसिन्धु का प्रदेश वह कहलाता था, जो भारत के वर्तमान चित्र में सिन्ध नदी से आरम्भ होकर गंगा पर समाप्त होता है। प्रदेश का 'सप्तसिन्धवः' यह नाम जिन नदियों के नाम पर पड़ा, वे निम्नलिखित थीं, सिन्धु, वितस्ता, असिक्नी, परुष्णी, आर्जिकी या शतद्रु, सरस्वती, दृषद्वती, यमुना और गंगा। उस समय बड़ी नदियाँ नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

थीं। उन का आकार प्रकार छोटा था, जिस का निम्नलिखित कारण था।

उस युग में जहाँ अब राजपूताना है, वहाँ समुद्र था, जो हिमालय के साथ-साथ विन्ध्याचल तक फैला हुआ था। यह प्रदेश 'सप्तसिन्धु' कहलाता था। हिमालय से उतर कर आर्य लोग सप्तसिन्धु के उपजाऊ और सुन्दर मैदान में आये और समयान्तर में सारे प्रदेश पर विजयी होकर बस गये।

सप्तसिन्धु देश में आर्य लोग कितनी शताब्दियों तक रहे, और कब उसके आगे बढ़ने लगे, इस प्रश्न का ठीक-ठीक उत्तर अभी इतिहास नहीं दे सकता। हाँ वह जब सप्तसिन्धु में रहते थे, तब उनकी धार्मिक, सामाजिक, और राजनीतिक दशा क्या थी, और उस में कालान्तर में कैसे-कैसे परिवर्तन होते रहे, ये बातें हम तत्कालीन साहित्य से जान सकते हैं।

हिमालय की घाटियों में रहने के समय आर्यों की जो सभ्यता या संस्कृति थी, उसे हम विशुद्ध वैदिक सभ्यता का नाम दे सकते हैं। उस में मनुष्य मुख्यरूप से दो भागों में बंटे हुए थे। पहले सुर या देव, और जो उन का उल्लंघन करने वाले विद्रोही थे, वे असुर दस्यु या दास कहलाते थे। कालान्तर में राक्षस शब्द भी असुरों के लिये प्रयुक्त होने लगा।

मैदान में आकर आर्यों की राजनीतिक और सामाजिक अवस्था में परिवर्तन होने स्वाभाविक थे। जलवायु के परिवर्तन से उन में शारीरिक परिवर्तन भी होने लगे। हिमाच्छादित पर्वतों पर या ऊंची घाटियों पर रहते हुए उन के रंग श्वेत थे, रूप सुन्दर थे, प्रकृति की गोद में निवास करने के कारण नृत्य, संगीत, कविता आदि में उन की प्रवृत्ति अधिक थी। अपेक्षाकृत गर्म स्थानों में आकर उन के रंगरूप और व्यवहार में स्वभावतः परिवर्तन आने लगे। सामाजिक और राजनीतिक संगठन का विकास होना भी स्वाभाविक था। अब केवल एक इन्द्र राजा नहीं रहा, उस के स्थान पर अनेक राजा, अनेक नगर और अनेक वंश हो गए। वर्णों का भेद भी स्थूल रूप में आ गया। उस की द्रवता नष्ट हो कर घनता आ गई। वह काल उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में चित्रित है। हम उस का बहुत कुछ विशद चित्र ब्राह्मण ग्रन्थों में देख सकते हैं।

सप्तसिन्धु के निवासी आर्य हिमालय के निवासियों को देवता, सुर आदि नामों से पुकारते थे। सुरलोक की सुन्दर स्त्रियां अप्सरा कहलाती थीं। धरा के निवासी अपने उन छोड़े हुए मूल पुरुषों को बड़े आदर और पूज्य भाव से देखते थे। कभी आड़े वक्त पर भूलोक के राजा स्वर्गलोक के निवासियों की सहायता के लिये उस लोक की यात्रा भी किया करते थे, परन्तु सामान्यरूप से नारदमुनि जैसे पर्यटनशील तपस्वियों के अतिरिक्त देवलोक और मृत्युलोक का परस्पर सम्बन्ध धीरे-धीरे शिथिल हो गया था। केवल इतना शेष रह गया था कि आर्य लोक के निवासी देवलोक के महापुरुषों से अपने वंशों का उद्भव बताने में गौरव का अनुभव करते थे। इस प्रकार भौतिक संबन्ध के बहुत कुछ शिथिल होने पर भी, दोनों लोकों की संस्कृति परम्परा बराबर विद्यमान रही। इसमें सन्देह नहीं कि पूर्वकालीन वैदिक संस्कृति की अविच्छिन्न उत्तराधिकारिणी उत्तरकालीन वैदिक संस्कृति ही थी।

## नदी की अनेक धाराएं

प्रारम्भ काल से ही आर्य जाति की अनेक टुकड़ियां भूमि के भिन्न-भिन्न भागों की ओर फैलने लगीं। प्रतीत होता है कि इस के दो कारण थे। प्रथम और मुख्य कारण तो जनसंख्या में था। अटूट प्राकृतिक नियम के अनुसार जनसंख्या निरन्तर बढ़ती गई, यहाँ तक कि पर्वत की गोद उन सब को अपने अन्दर न संभाल सकी। स्थान और वस्तुओं की कमी के कारण आर्यों के जत्थे भूमि पर उतर कर फैलने लगे। कुछ जत्थे सप्तसिन्धु में आये और कुछ जत्थे मध्य एशिया की ओर बढ़े जो फैलते हुए, एक ओर ईरान और दूसरी ओर यूरोप के अनेक प्रदेशों तक पहुंच गए। कुछ इतिहास लेखकों ने यह भी अनुमान लगाया है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि धार्मिक मतभेद के कारण बहुत से आर्य अलग हो कर ईरान आदि की ओर चले गये। उन का कथन है कि भारत के आर्य सुर पक्षपाती थे, और फारिस के आर्य अहुर 'असुर' की पूजा करते थे। इस से प्रतीत होता है आर्य जाति की उन दोनों शाखाओं में धार्मिक मतभेद उत्पन्न हो गये थे। यह बात निश्चित है आर्य जाति का उमड़ता हुआ जल प्रवाह सुरभक्त और असुरभक्त इन दो भागों में उस समय बंट गया था, जब आर्य लोग नाकलोक से उतर कर भूलोक में बसने लगे थे।



# प्रगति के पथ पर

१. दूसरी पंचवर्षीय आयोजना में पिछड़ी जातियों के कल्याण के लिए ६० करोड़ रुपये की व्यवस्था रखी गई है। पहली आयोजना में इस काम के लिए ३९ करोड़ रुपये निर्धारित किये गये थे।

२. कोलम्बो योजना के अन्तर्गत भारत की ८० शिक्षा संस्थाओं में २५३ विदेशी छात्र शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं।

३. कर्मचारी प्राविडेंट फंड योजना इस समय समस्त भारत में २० लाख ५४ हज़ार कर्मचारियों पर लागू है। यह योजना नवम्बर १९५२ में लागू हुई थी।



४. औद्योगिक वित्त निगम ने अप्रैल १९५५ से लेकर अगस्त १९५६ तक लगभग ६ करोड़ ९१ लाख रुपये के ऋण मंजूर किये हैं,

५. १९५५–५६ में भारत से लगभग ५३ लाख ६४ हज़ार रुपये के मूल्य की २७०९ टन शोधित एवं अशोधित ग्लिसरीन का निर्यात किया गया।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# दक्षिण भारत में निंबु घास तेल उद्योग का विकास

श्री वी. गोपालस्वामी

दक्षिण भारत का निंबु घास तेल उद्योग कृषि-कुटीर शैली का डालर कमाने का उद्योग है जो सहस्त्रों आदमियों को काम देता है। संसार की निम्बु घास तेल की कुल उपज का ८० प्रतिशत जिस का मूल्य लगभग १॥ करोड़ रुपये बैठता है, प्रतिवर्ष यहाँ से निर्यात किया जाता है। इस की उत्पत्ति उत्तरी और केन्द्रीय ट्रावनकोर और दक्षिण मलाबार में केन्द्रित है। यहाँ का तैयार किया 'कोचीन तेल' 'पूर्व भारतीय तेल' अपने उच्च निम्बु तत्व के लिए प्रख्यात है।

देशी लोगों द्वारा प्रयुक्त आसोत्र छोटे, बांध लपेट कर बहनीय, अल्प मूल्य वाले और प्रवर्त्तन में सरल होते हैं, और वे पौधे की वस्तु के साथ-साथ रहते हैं। इस क्षेत्रीय आसवन रीति के, जो अब प्रयोग में है, दोष बहुत से हैं।

कृषि-कुटीर उद्योग होने से कृषि और औद्योगिक दोनों अवस्थाओं में विकास होना चाहिए। कच्चा माल अच्छी कोटि का प्राप्त करने को कृषि के आधुनिक वैज्ञानिक रीतियों का सहारा लेना चाहिए।

'आसवन प्रदर्शन केन्द्र' विकसित प्रकार के आसोत्रों द्वारा आसवन, और आधुनिक प्रविधियों को लोक-प्रिय बनाने को स्थापित किए जाने चाहिए।

शुद्ध स्वच्छ तेल के लिए विदेशी मांग को पूरी करने के लिए तेल साफ करने की एकक स्थापित होनी चाहिए।

सहकारी उत्पत्ति और तेल का विपणन ( मार्केटिंग ) उद्योग को स्थिर करने को अवश्य किया जाना चाहिए।

उप-प्रक्रमित ( सब-स्टैन्डर्ड ) गुणों वाले तेल का निर्यात रोकने को सरकार को प्रत्येक पग उठाना चाहिए।

सौरभिक 'उत्पत्ति' को निम्बू घास तेल से विधायन ( प्रौसेसिंग ) करने के लिए और तेल के अन्य उपयोग ढूंढने के लिए सरकार को पग उठाने चाहिए।

अन्य उत्पत तेलों वाले पौधों की जो, जलवायु के अनुकूल हो, खेती के लिए अनुसंधान होने चाहिए।

इस उद्योग में अन्य बड़े उद्योगों के पद तक विकास हो सकने की पर्याप्त क्षमता है।

--

# पामारोशा तेलसे अल्प संभार कशायतेल का पृथक्करण

श्री स्व. डा. खुदादाद खां, पीएच. डी.

पहले हम भाप द्वारा संशोधित और पावन कर के पामारोशा तेल व्यावसायिक बाजार में भेजा करते थे, जहां वह सदा बिना आपत्ति के स्वीकृत हो जाता था।

एक बार हमें यह सूझा कि शायद, नहीं निश्चय ही, तेल को उच्च शून्यन ( हाई वैक्युम ) द्वारा संशोधन करना इसे बाजार में देने के लिए अधिक अच्छा होगा।

जो शून्यक प्रयोग किया गया वह शक्ति-परिचलित, दो अवस्था वाला, शुष्क शून्य उदञ्च था, और असोत्रक--पात्रों जिनमें ४० पौंड तेल भरा था,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के ऊपरी भाग की शीर्षा पर तेल का ताप तेलतापन ( औयल बाथ ) से निरन्तर १० प्रतिशत से १५ प्रतिशत कम रक्खा जिससे उष्णता समान रहे। प्रायः सारा तेल सरलता से आसवित हो गया, और मूर्खता द्वारा बहना या पीछे बह जाना जो १० प्रतिशत रहा अलग एकत्र कर लिया गया। और इस प्रकार पावन कषायमूलैल बन गया जो रासायनिक पावन तेल की सभी आवश्यकता को पूरी करता था, पर गन्धियों की गन्ध सम्बन्धी आवश्यकता को पूरी नहीं करता था।

गन्ध कम होने कारण तथ्य प्रतीत हुआ कि गन्ध सुन्दर हल्की गन्ध के प्रलवणों (इस्टर) के छोटे कणों की उपस्थिति के कारण होती है जो भाप द्वारा संशोधन करने में तेल में मिले रहते हैं, पर शून्यन में उदंच में खिच जाते हैं।

इस प्रकार १२० पौण्ड मोतिया तेल भाप द्वारा ५० गैलन को शून्यक आसोत्र में संशोधित हो गया। ८७ पौंड संशोधित तेल प्राप्त करने में २४ घंटे लगे। शेष तेल में पीत वर्ण बहुत कम आया यद्यपि आसवन धीरे-धीरे हुआ, और आसवन स्तम्भ ऊंचा था, और उस समय भी जब भाप द्वारा शून्यक में संशोधित हो गया पीत था, अर्थात्, जब तेल और जल शून्यक में आसवित हुआ था अब २०½ इन्च स्तम्भी तेलतापनी पर संशोधित हुआ। १४४ डिगरी—१४५ डिगरी सें० पर आसोत्र शीर्ष पर तेलतापनी का तापमान १८८ डिगरी सें० रख और अति उच्च शून्यक रख कर लगभग वर्णहीन तेल भी प्राप्त हो सकता है। जब लगभग ७६ पौण्ड मोतिये का तेल ५० गैलन शून्यक आसोत्र में आसवित किया तो ७ बजे पूर्वाह्न से ५ बजे पराह्न तक १० घंटे में ३० पौण्ड तेल प्राप्त हुआ, और आसोत्र से ५० पौण्ड जल निकला। यह आसोत्र में संघनित जल था। इस प्रकार तेल का शून्यक द्वारा संशोधन हमारे मस्तिष्क का विकार मात्र सिद्ध हुआ। इससे हमने पुरानी रीति से भाप द्वारा ही संशोधन करने से संतोष करना स्वीकार कर लिया।

—

# नींबु घास तेल का प्रमानीकरण

श्री के० एन० रीड

मिलते-जुलते घासों का एक वर्ग है जिन से मधुर गन्ध वाला उड़नशील तेल प्राप्त होता है, और यह बहुत सी घरेलू उपजों में प्रति पूयिक ( ऐंटी-सैप्टिक ) मुख प्रक्षाल दुर्गन्ध हरमृद्य ( लिलीमैंट ) भी है। महत्वपूर्ण संयोमांग ( इन्ग्रेडिएँट ) है।

जैसा पहले कहा इन का मुख्य उपयोग सुगन्धि में है पर इन में रोगाणुमार गुण भी होते हैं। बंगलौर में किए गए अभी के काम से ज्ञात हुआ पर्याप्त उच्च रीडियल वाकर गुणक वाले रोगाणुमारक, निंबुघास को मख्य पदार्थ लेकर, तैयार किए जा सकते हैं।

उद्योग सबंव व्यापारिक प्रभेदों वाले मानों की ओर देखता है, और महत्वपूर्ण मान है वर्ण, स्वच्छता रासायनिक-विश्लेषण, और सर्वोपरि है गंध।

निम्बू घास तेल कुटीर उद्योग के रूप में बनता है और दक्षिण भारत में स्थापित कुटीर उद्योग में ५ न्यादर्श बने हैं। साधारणतया, यह मान लिया गया है कि वर्ण के गुणों में यह है कि उपज का वर्ण पीत से काषाय ( ब्रौनिश रैड ) तक हो। दुर्भाग्य से एक परेषण में ठोल-ठोल का वर्ण अलग होता है। यह स्वीकार किया जायगा कि सुगंधित माल में या रोगाणुमारक में वर्ण बहुत ही मपत्त्वपूर्ण गुणक है। मूल उपज में बहुत रंग होना सुगन्धों का भद्दा या अन्य घरेलु पदार्थों का भद्दा होने का परिचायक होगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

न्यादर्श स्वच्छ और चमकदार वर्ण के होने चाहिए, पर कुटीर उद्योग की उपजों में बहुत अधिक गंदलापन है। यह भी घरेलू उपजों और विशेषतया सुगन्धों को अन्तिम रूप में प्रस्तुत करने में हानिप्रद है।

सभी न्यायदर्शों का विश्लेषण—फल बिना भेद के ब्रिटिश फार्मास्यूटिकल कोड ( संहिता ) से मेल खाता है विशेषतया निंबु तत्त्व में।

कुटीर उद्योग से प्राप्त निंबू घास तेल के प्रक्रमण ( ग्रेडिङ्ग ) करने में विशेष मान स्थिर करने की आवश्यकता है कि तैयार माल पेटी दर पेटी अलग-अलग न हो।

अन्य सुगन्धों वाली रसायनों के साथ गन्ध गुणक का स्थिर करना और इस को पक्का करना उन के लिए बड़े महत्त्व का विषय है। जो वैसे घरेलू पदार्थों को जैसे ऊपर बताए गए हैं, बाजार में लाकर बेचना चाहते हैं। —

# भारतीय मंडारिन तेल

## भौतिको रासायनिक संगठन और भविष्य में विस्तार

श्री गिरधारीलाल तथा पी. एस. प्रभी

निम्बु प्रजातीय तेल के उद्योग का भारत में वर्तमान में बड़ा महत्त्व है, और विषेशतया मंडारिन तेलों के विषय में। भविष्य में भी इन का क्षेत्र विस्तार की बड़ी संभावनाएं हैं।

केन्द्रीय खाद्य प्रोद्योगिकी अनुसंधानशाला में नागपुरी मंडारिन के तेलों के न्यायदर्शों ( सेमपिल्स ) ( ठंड में दबाए हुए ) पर किए गए संपरीक्षणों के फल बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। इन की तुलना विदेशी और अन्य भारतीय मंडारिन तेलों से प्राप्त आंकड़ों से भी की गई है, और फल उत्साह वर्धक है।

इन तेलों के भौतिको-रासायनिक संगठन और उन की विशेषताओं पर कितने ही गुणकों का, जैसे फल के भेद, पक्वता की मर्यादा, निस्सरण से पूर्व फलों का भंडार में रखना, निस्सरण में प्रयुक्त रीति, निस्सरण आदि से प्राप्त तेल की प्राप्ति ( ईल्ड ) प्रभाव पड़ता है। इन तेलों को प्राप्ति पर विधायन की उचित रीति, सवेष्टन, और भण्डार में रखने की उचित व्यवस्था करनी भी आवश्यक है।

नारंगी का तेल, जो फलों के रस तैयार करने की निर्माणी से उपसृष्ट के रूप में प्राप्त होता है या डब्बे के फलों की बची खुची सामग्री, निश्चय ही निम्बु प्रजातीय तेलों में सब से अधिक उपयोगी है। इस का इतना कम मूल्य है कि इस से तेल निकालना आर्थिक दृष्टि से लाभदायी रहेगा। नागपुरी नारंगियों के छिलकों से तेल की प्राप्ति १·८५ प्रतिशत, कुर्ग की नारंगियों के तेल की २–३ प्रतिशत आती है; और नागपुरी नारंगियों के तेल की उत्पत्ति का व्यय ६ रु० ११ प्रति पौंड के लगभग आता है। —

# भारतीय उत्पत तेलों का कृमिहन गुण

## विशेषतया निम्बू घास तेल में

श्री वी० सुब्रह्मण्य तथा एस० एम० बसु

कतिपय भारतीय उत्पत तेलों की विशेषतया निंबु घास तेल को कितने ही जैव तत्व के समक्ष आर. यू.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रीति से और चिकमार्टिन परीक्षण की गरेड द्वारा सुधारी रीति से जांच की गई। जैव तत्त्वों की उपस्थिति में कृमिहन क्रिया में दृष्टव्य कमी दिखाई दी।

विभिन्न जीव शरीरों के समक्ष निंबुघास तेल की कृमिहन क्षमता को नापा गया तो यह सुषव धाव्य (ग्राम नैगेटिव) कृमियों के लिए अति उच्च और सुषवा धाव्य ग्राम (पौजिटिव) जीव शरीरों के प्रति अति निम्न पाई गई; अम्ल—तीव्र जीव शरीरों के प्रति इसकी क्रिया प्रायः नहीं के बराबर थी।

निंबुघास तेल के मिश्रण की कृमिहन क्षमता पर कतिपय गुणकों के प्रभाव का भी अध्ययन किया गया। दिखाया गया कि यदि अन्य सभी गुणक वही हो तो निंबुघास तेल की कृमिहन योग्यता इसके तत्त्व के समानुपात में रहती है।

तेल की मिश्रण बनाने में योग्यता और मिश्रक पदार्थ दो अन्य गुणक थे जो इस की कृमिहन सक्रियता पर प्रभाव डालते हैं। जिन मिश्रकों का परीक्षण किया गया उनमें से त्रि-दक्षलि या दहातु ग्रक्षीम (पोटाशियम ओलिएट) रोज़िन साबुन अन्य मिश्रकों के ससक्ष अधिक क्षम पाए गए।

कणे का आकार और मिश्रणों की कृमिहन शक्ति परस्पर संबंधित है। मिश्रण की गाढ़ापन और कृमिहन क्रिया में कोई सीधा सम्बन्ध नहीं पाया गया। मिश्रण बने कृमिक पदार्थ का समु (पी एच) मिश्रण की स्थिरता के विचार से महत्त्वपूर्ण था।

मिलाए गए पदार्थ में शीर्ष से अधिक मिश्रक को मिलाने से निंबुघास तेल की कृमिहन सक्रियता को कम होता पाया गया। कृमियों को दूर करने वाले तेल के घोल में प्रयुक्त घोलक,जो हल्का करने से मिश्रण बनता है, कृमिहन सक्रियता को और मिश्रण की स्थिरता को कम करता पाया गया।

भारतीय उत्पत तेलों के महत्वपूर्ण संयोगाग अलग-अलग किए गए और आर० डब्लू-गुणक के लिए उनका परीक्षण किया गया। कृमिहन क्रिया और संयोग के रासायनिक संगठन के सम्बन्ध का भी अध्ययन किया गया। सी एच ओ वर्ग, ओ एच वर्ग से अधिक सक्रिय था। सरलेन्य सुन्युद में द्विबंध और सुषव की उपस्थिति सक्रिय वर्ग की क्षमता को बढ़ा रही थी।

निंबुघास तेल स्वयं-जारण और उसके निंबु तत्त्व कृमिहन गुणों की भण्डार-गृह में रखने से कम होने की प्रकृति है। निंबुघास तेल के कृमिहन पदार्थ, रखने पर अपनी कृमिहन क्षमता को खो देते हैं। कुछ जारण विरोधी पदार्थों को शुद्ध तेल में मिलाने से जारण द्वारा नाश होने की क्रिया रुक जाती है परन्तु ये जारण-विरोधी तत्त्व इन कृमिहन पदार्थों की कृमिहन शक्ति को नष्ट होने से बचाने में अक्षम पाए गए।—अनुवादक बाबूराम वर्मा

---

वन अनुसन्धान शाला, देहरादून में आयोजित उत्पत्त तैल संगोष्ठी में पढ़े गए अनुसन्धान-पत्रों के कुछ सारांश हम यहां दे रहे हैं। उत्पत तैल हमारे देश की महत्वपूर्ण उपज है। विज्ञान गोष्ठी में पढ़े गये ये निबन्ध अतिशय उपयोगी हैं। —रामेश बेदी।



- १९५५ में भारत में सम्पदा शुल्क से १,४४,६६,८८४ रु० वसूल हुए।
- १९५५–५६ में भारत में लगभग १,०१,८०० रेडियो सेट बनाए गए।
- बम्बई, हैदराबाद, पटियाव, मणिपुर और त्रिपुरा में सड़क विकास के लिए भारत सरकार ने १५,२४,००० रु० स्वीकार किये हैं।
- १९५५ में भारत में गाड़ियों में बिजली बनाने के जो डायनुमों बनाए गए उनका मू० १५ लाख रु० है।
- दूसरी योजनाओं की अवधि में केंद्रीय सरकार, तपेदिक निरोधक कार्य-क्रम के अन्तर्गत १५ प्रदर्शन और प्रशिक्षण केन्द्र खोलने के लिए सहायता देने का विचार कर रही है।

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# अकूत खज़ानों का देश—साइबेरिया

साइबेरिया सोवियत संघ का सब से बड़ा प्राकृतिक खज़ाना है। जिस के द्वार अभी थोड़ा-सा ही खुले हैं और जिन्हें पूरा खोलना आगे के हमारे कामों में है।

इस खज़ाने में अकूत सम्पत्ति भरी हुई हैं।

पशु वनस्पति और जड़, ये जो प्रकृति के 'तीन जगत्' हैं तीनों ने अपनी दोनों से साइबेरिया का भंडार भर रखा है।

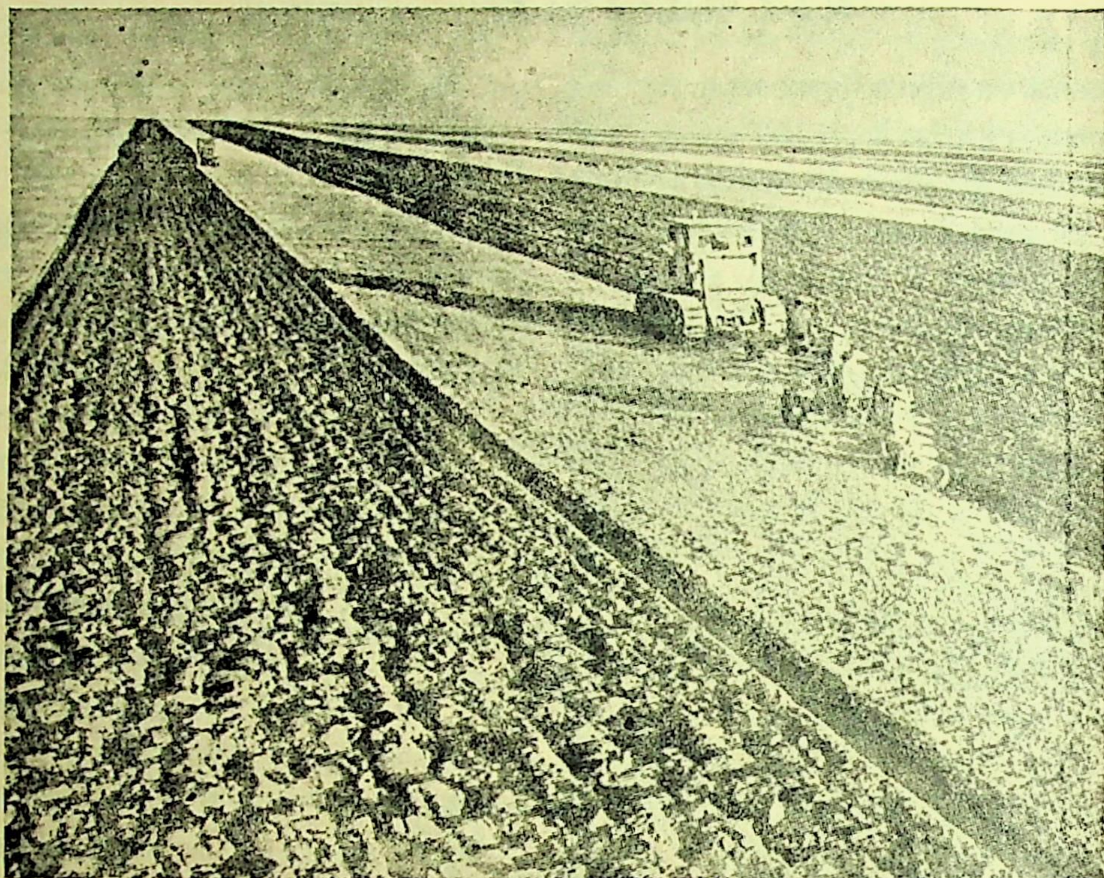
## निराले जङ्गल

वनस्पति-जगत् ने साइबेरिया को पृथ्वी का सब से बड़ा वन्य-प्रदेश प्रधान किया है। यह ७० लाख वर्ग किलोमीटर (१ किलोमीटर=५।८ मील) के क्षेत्र में फैला हुआ है। यह है साइबेरिया का, जहां भीमकाय देवदार, लार्च, चीड़ और फर के वृक्ष मानों अपने भव्य-सौन्दर्य की प्रतियोगिता करते हैं। सदा-हरित शुण्डाकार रूप साइबेरियाई जङ्गल संसार भर में निराले हैं। उन्हें लोग 'तायगा' कहते हैं। तायगा, अर्थात्, यह उत्तरी वन-प्रदेश इतना घना है कि उस में घास के उगने की भी जगह नहीं होती। साइबेरिया में जङ्गल का सालाना विकास सोलह करोड़ अस्सी लाख घनमीटर (१ मीटर=लगभग ४० इन्च) होता है।



निराले जङ्गल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



साइबेरिया में लाखों हेक्टर उर्वर आकृष्ट भूमि जोत में लाई जा रही है।

## खेत

खेती की कुल भूमि का ४।५ वाँ भाग साइबेरिया में ही पड़ता है। साइबेरिया के मध्य और दक्षिणी भाग की विशिष्टता वहाँ की उर्वर, काली मिट्टी है। उस में गेहूं तो फटकर उपजता ही है, अल्पकालीन किन्तु गर्म ग्रीष्मऋतु में अंगूर तक हो जाते हैं। यहाँ लाखों हेक्टर उर्वर आकृष्ट भूमि पड़ी है जिस में कभी हल नहीं चला है।

## मुलायम सोना

साइबेरिया का पशु-जगत् भी उतना ही सम्पन्न है। उस के घने तायगा, विराट्, विस्तृत टुण्ड्रा और स्टेपी-प्रदेश तथा पर्वतीय दर्रे, जहाँ झरने बहते हैं, एक प्रकार के प्राकृतिक रक्षा-स्थल हैं जिन में असंख्य भालू, हिरन, साइबेरियाई बारहसिंघे, एल्क, सैकड़ों प्रकार के पक्षी और रोयेंदार खाल वाले जानवर (इन्हें साइबेरिया का 'मुलायम सोना' कहा जाता है) जैसे सेबुल, इर्माइन और ध्रवीय तथा रूपहली लोमड़ियाँ भरी पड़ी हैं।

अभी हाल तक साइबेरिया ने अपनी प्राकृतिक सम्पत्ति को बड़ी सजगता के साथ किसी की नज़र लगने से छिपा रखा था। हाँ, बीच-बीच में कभी सोने की समृद्ध खानें या ऊपरी सतहों में कोयले अथवा खनिज-लौह के समृद्ध भण्डार साइबेरियाई तायगा में मिल जाते थे किन्तु सोना ही एकमात्र वस्तु था जो क्रांति के पहले लोभी स्वर्ण-अन्वेषकों को आकर्षित किया करता था। अन्य खज़ाने जो उस से किसी भी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तरह कम मूल्यवान् न थे, व्यवहारतः यों ही बिना अन्वेषण के पड़े थे।

## कच्चे माल का समृद्ध भण्डार

प्रथम पंचवर्षीय योजना के काल में जब सोवियत देश ने अपनी औद्योगीकरण-योजना आरम्भ की तब हज़ारों भूगर्भ विज्ञानविद् साइबेरिया में उस की खनिज सम्पत्ति की खोज करने निकल पड़े। यह शोध-कार्य समाप्ति से अभी बहुत दूर है, तो भी यह स्पष्ट पता चल चुका है कि साइबेरिया में कोयले का विशाल भण्डार भरा पड़ा है, ऐसा भण्डार जिस की सारी दुनियाँ में बराबरी नहीं हो सकती। ( वह सोवियत संघ के कुल कोयला-भण्डार का ७५ प्रतिशत है )। इस के अतिरिक्त वहाँ लोहा, अलौह व अलभ्य धातुओं, रासायनिक कच्चे माल और निर्माण-सामग्रियों के समृद्ध भण्डार हैं। सोवियत भूगर्भ विज्ञानविदों द्वारा साइबेरिया में की गई पहली खोजों की खबर सुन कर मैक्सिम गोर्की ने लिखा : खुशी की बात है कि साइबेरिया ने इतनी विश्वस्तता के साथ अपने खज़ानों को लोभी पूंजीपतियों से उस दिन के लिए छिपा रखा था जब उन की खोज समूची जनता को लाभान्वित कर सकेगी।

## अजस्र शक्ति

जैसा विशाल साइबेरिया का फैलाव है वैसी ही दैत्याकार उस की नदियाँ हैं। ओब, येनिस्सेई और लेना एशिया तथा समूची दुनियाँ की सब से बड़ी नदियाँ हैं। साइबेरिया के दक्षिणी भाग की पर्वत-श्रेणियों से निकल कर सीधे उत्तर-मुख बहती और पूरे साइबेरिया को पार करती हुई वे आर्कटिक महासागर में गिरती हैं। उत्तर दिशा में बहते हुए इन में बहुत-सी बड़ी-बड़ी सहायक नदियाँ आ मिलती हैं जिन से इन के अन्दर विशाल जल-समुद्र जमा हो जाता है और वह वर्षा या हिम का रूप धारण कर साइबेरिया के विस्तीर्ण प्रदेश में गिरता है। जल की इन विराट् धाराओं में अजस्र शक्ति भरी पड़ी है। इसे विद्युत् शक्ति में परिवर्तित कर के प्रतिवर्ष तेरह खरब किलोवाट-घंटा बिजली पैदा की जा सकती है। यह अमरीका के सभी बिजली-घरों द्वारा उत्पादित कुल शक्ति की ढ़ाई गुनी अधिक होगी।



फोटो में चट्टान के याकूती हीरा दिखाई दे रहा है, साथ १०.९६ कैरैट का एक हीरा है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# साहित्य-परिचय

[ समालोचना के लिये प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ आनी आवश्यक हैं––सम्पादक ]

## पद्मसिंह शर्मा के पत्र

सम्पादक—श्री बनारसीदास चतुर्वेदी तथा श्री पं० हरिशंकर शर्मा। प्रकाशक—आत्माराम एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली।

साहित्यकारों, विद्वानों, राजनीतिज्ञों, समाजसेवकों और सुधारकों के निजूपत्र बड़े महत्व के होते हैं। व्यक्तिगत पत्रों में पत्रलेखक की अन्तः चेतना अपने सहज स्वरूप में प्रतिफलित होती है। उन के द्वारा लेखक के जीवन के अनेक अज्ञात पहलुओं पर सच्चा प्रकाश पड़ता है। विदेशों में महापुरुषों के पत्र साहित्य को बड़ी अच्छी तरह सुरक्षित किया जाता है। हिन्दी में पत्र साहित्य की सुरक्षा और सम्पादन का काम नहीं के बराबर हुआ है। महर्षि दयानन्द के पत्र इस दिशा में पहला और सराहनीय प्रयत्न है। पं० पद्मसिंह शर्मा के पत्र इस दिशा में दूसरा अभिनन्दनीय प्रयत्न है। पं० पद्मसिंह शर्मा हिन्दी साहित्य के एक अनूठे महारथी थे। हिन्दी में तुलनात्मक आलोचना की पहल करने वाले वे ही थे। उन का समस्त पिण्ड मानो साहित्य का बना था। उठते-बैठते, खाते-पीते, यात्रा करते वे सदा ही रस की चर्चा और सुकृतियों का आस्वादन और गुणगान करते थकते न थे। संस्कृत, हिन्दी, उर्दू, फारसी, व्रज, अरबी आदि की सहस्रों सूक्तियां उन को मुखाग्र थी। अपनी लेखनी पर भी उन को कमाल हासिल था। उन की लेखन शैली का हमारे साहित्य में अनूठा स्थान है। उन का स्वाध्याय भी गजब था। दो चार मिनट भी उन का सत्सङ्ग कीजिए, प्राचीन और नवीन कवियों की सूक्तियाँ, सुभाषित, और साहित्यिक चुटकले आदि सुन कर आप निहाल हो जायेंगे।

ऐसे रसिक और सुविद्य साहित्य महारथी के पत्रों का संग्रह संपादित कर के संपादकद्वय ने बड़ा सुकार्य किया है। श्री चतुर्वेदी की विस्तृत भूमिका ने इस किताब को मानों चार चाँद लगा दिए हैं। विश्व-साहित्य में पत्र साहित्य के महत्व को जिस खूबी और आकर्षक शैली से उन्होंने लिखा है, बस वह पढ़ते ही बनता है। प्रस्तुत पुस्तक में हिन्दी साहित्य के द्विवेदी युग की प्रवृत्तियों की मीठी झाँकियाँ अपने आह्लादक रूप में देखने को मिलती है। स्वर्गीय श्री शर्मा जी की जिन्दादिली, रसप्रियता, साहित्योद्धार की अद्भुत लगन, बुजुर्ग साहित्यकारों और अपने गुरुओं के प्रति अपूर्व आदर भाव, पद-पद पर सत्साहित्य की दाद, और शैली का चुटीलापन इन पत्रों में आप को भली प्रकार मिल सकेगा। इन पत्रों का ऐतिहासिक मूल्य तो है ही, जो सज्जन केवल मनोरंजन की दृष्टि से भी इन पत्रों का पारायण करेंगे, अच्छा खासा लाभ पायेंगे।

साहित्यानुरागी जनों को इन पत्रों का एक बार जरूर परायण करना चाहिए। श्री चतुर्वेदी जी से हमारी प्रार्थना है कि वे आचार्य महावीर प्रसाद जी द्विवेदी तथा स्वर्गीय शहीद गणेशशंकर जी विद्यार्थी के पत्रों का भी इसी प्रकार का समृद्ध संग्रह तैयार करें। इस कार्य के लिए जो भक्ति शक्ति और सुमति होनी चाहिए, वह उन में पर्याप्त मात्रा में है। पुस्तक का रूप विधान आदि भी सुन्दर है। —शंकरदेव

## प्रसारिका ( वर्ष २, अङ्क ४—५ )

प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, दिल्ली––८।

प्रस्तुत अङ्क में भारत के हिन्दी-भाषी विद्वानों की 'आकाशवाणी' पर प्रसारित ४० रचनाओं का संकलन किया गया है। सभी प्रकार के ज्ञानप्रद विषयों पर इस में रचनाएँ संपादित की गई हैं। चुनी हुई कविताएँ भी दी गई हैं। रचनाओं का चयन कविताएँ सम्पादन और मुद्रण बड़ी सुरुचि और सुन्दरता से हुआ है। इस पत्रिका का प्रसार अधिकाधिक होना चाहिए और हमारी सम्मति में इसे शीघ्र ही द्वैमासिक बना देना चाहिए। क्योंकि इस की पाठ्यसामग्री खूब उपादेय और ज्ञानवर्धक होती है। ––शंकरदेव



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल में उप-शिक्षामंत्री डॉ० श्रीमाली

गत २३ सितम्बर को भारत सरकार के उप-शिक्षा मन्त्री डा० श्री माली जी विशेष रूप से गुरुकुल विश्व-विद्यालय की कार्य-पद्धति का अवलोकन करने के लिये कुल भूमि में पधारे। आपने पूरे एक दिन तक गुरुकुल में रह कर वेद महाविद्यालय, आयुर्वेद कालेज, कृषि विद्यालय, माध्यमिक विद्यालय, रसायनशाला, संग्रहा-लय, शब्दकोष विभाग, आयुर्वेद फार्मेसी आदि सभी विभागों के कार्य का अवलोकन किया और प्रसन्नता प्रकट की। कुलपति श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति जी ने गुरुकुल के पुराने इतिहास और कार्य-संचालन प्रसार का आपको परिचय कराया।

साँझ को वेदभवन में आप के सम्मान में समस्त कुलवासियों की एक बड़ी सभा समवेत हुई। कुलपति जी ने विश्वविद्यालय की ओर से आपका स्वागत किया। स्वागत के उत्तर में बोलते हुए श्री माली जी ने कहा—किसी भी राष्ट्र की उन्नति और महिमा उसके सामा-जिक मांगल्य से मापी जा सकती है। हमें देखना होगा कि हमारी शिक्षाविधि और संस्कृति हमारे सामाजिक कल्याण के लिए क्या तैयारी कर रहा है वह हमारे समाज की आवश्यकताओं और आदर्शों को पूर्ण कर रही है या नहीं। इसी पर हमारी शिक्षा-प्रणाली की सफलता निर्भर है। एक युग में हमारे देश में आध्या-त्मिक जीवन का गौरव था अतः उस काल में हमारी शिक्षा का झुकाव विशेषतः आध्यात्मिक मूल्यों के सम्पादन में था। प्राचीन युग के हमारे गुरुकुलों में आध्यात्मिक शिक्षा पर विशेष बल दिया जाता था।

नए युग में विज्ञान का हमारे जीवन में महत्व बढ़ता जा रहा है। समाज की गतिशीलता के साथ-साथ हमारे जीवन की आकांक्षाएं और मूल्य भी परि-वर्तित होते जा रहे हैं। ऐसी अवस्था में हमें अपनी शिक्षाविधि में अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय साधना होगा। अध्यात्म की पृष्ठ-भूमिका पर हमें अपने शिक्षा में विज्ञान को और वैज्ञानिक दृष्टिकोण को महत्व देना होगा। प्रसन्नता की बात है कि गुरुकुल की शिक्षा में दोनों के समन्वय का ध्यान रखा जाता है।

पूर्व और पश्चिम का सम्मिलन नामक पुस्तक के लेखक श्री नार्थ फौक ने एक स्थल में लिखा है कि पश्चिम में विज्ञान पर जोर दिया गया और पूर्व में केवल आन्तरिक जीवन पर बल दिया गया था। अतः दोनों की शिक्षा भी पहिले एकांगी रही। इस लिये हमें अध्यात्म और विज्ञान दोनों में सामंजस्य स्थापित करना होगा। पर हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि हम पश्चिम की नकल न करें। नकल का परिणाम पतन होता है। जापान ने पश्चिम की नकल की और हमने देखा उस का पतन हुआ।

हम भारतीय इस समय नवीन समाज का निर्माण कर रहे हैं। हमें ध्यान रखना होगा कि हम जीवन के पुराने मूल्यों को अपनाते हुए नवीन मूल्यों का स्वागत करें—साथ ही समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये हम वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनावें। विश्वास के स्थान पर प्रयोगों के द्वारा जीवन के मूल्यों को आँकना सीखें। हमारी शिक्षा का ध्येय वैज्ञानिक दृष्टि-कोण बनाना होना चाहिये। हमारी दूसरी आवश्यकता इस समय यह है कि हम प्रजा में सच्ची और स्वस्थ राष्ट्रियता की भावना को जगावें। आये दिन की घट-नाएं बता रही हैं कि हमारी राष्ट्रियता कमजोर है। शिक्षकों का कर्त्तव्य है कि वे प्रजा में सच्ची राष्ट्रिय भावना को उद्बुद्ध करें। हमारा भूगोल एक है, हमारा इतिहास एक है और हमारी परम्पराएँ एक हैं। देश में भाषाओं और धर्मों के नानात्व से हमें घबराना नहीं चाहिये। नानात्व में एकत्व को देखना हमें आना चाहिये। लोकतन्त्र भिन्नता को स्वीकार करता है—उसके लिये उदारता का वातावरण पैदा करना शिक्षणालयों का काम है। हमें अपनी उगती प्रजा को समझाना होगा कि लोकतन्त्र असल में जीवन का एक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तरीका है। लोकतन्त्र केवल एक शासन शैली तक की सीमित नहीं है।

तीसरी बात जिस पर हमें ध्यान देना है वह यह है कि हमारे विश्वासों और कार्यों में एकता स्थापित हो, हम देखते हैं कि हमारा विश्वास कुछ और है हमारा दैनिक जीवन कुछ और प्रकार का है। दैनिक व्यवसायों में हमारे जीवन का जो स्वरूप झलकता है उस के साथ हमारी धार्मिकता मेल नहीं खाती। हमारे विश्वासों और कार्यों में सामंजस्य नहीं है। शिक्षा का यह काम है कि वह विश्वास और कार्य में सामंजस्य लाने की तालीम देवे, जीवन में समग्रता की की स्थापना करे। तभी हमारा समाज आगे बढ़ेगा। तभी हम कल्याणकारी राज्य की रचना कर सकेंगे। इस दृष्टि से शिक्षालय और शिक्षक ही भावी समाज के निर्माता हैं।



# महर्षिस्तवः

श्री धर्मदेवो विद्यामार्तण्डः

[ १ ]

एको ऽपि सन् निर्भयवीरवर्यः
समस्तपाखण्डमखण्डयद्यः ।
सत्यव्रतश्रेष्ठममुं महान्तम्,
ऋषिं दयानन्दमहं नमामि ॥

[ २ ]

न यं कृतान्तो ऽप्यशकद्विजेतुं
यस्याग्रतो बद्धकरः स तस्थौ।
योगाग्निना दग्धसमस्तदोषम्
ऋषिं दयानन्दमहं नमामि ॥

[ ३ ]

विषं प्रदायाप्यपकारकर्त्रे
यो ऽदाद्धनं तस्य हि रक्षणार्थम्।
प्रेम्णा स्वशत्रूनपि मोहयन्तम्
ऋषिं दयानन्दमहं नमामि ॥

] ४ ]

यधङ्गुलीरप्यरयो दहेयु–
स्तथापि यास्यामि न तत्र चिन्ता।
इत्यादिवाक्यं समुदाहरन्तं
तंश्रीदयानन्दमहं नमामि ॥

[ ५ ]

ाया यः सिन्धुर्निगमविहिताचारनिरतो
लप्तं सद्धर्मं, पुनरपि समुद्धर्तुमनिशम्।
दवोरात्रं येते, यतिवरगुणग्रामसहितो
थानन्दो योगी, विमल चरितो ऽसौ विजयते ॥

[ ६ ]

दीयं वैदुष्यं, श्रुतिविषयकं लोकविदितं
दीयं योगित्वं, कलियुगजनेष्वस्त्यनुपमम्।
तार्थं सर्वेषाम्, इह निजसुखं यो ऽपि विजहौ
यानन्दो योगी, निमल चरितो ऽसौ विजयते ॥

[ ७ ]

स्वराज्य सर्वेभ्यः, परमसुखदं शान्तिजनकं
देशीयो धार्यः, सकलमनुजैर्वस्त्रनिवहः।
वराष्ट्रं चाराध्यं, दिशिदिशिदिशन् भीतिरहितो
यानन्दो योगी, विमल चरितो ऽसौ विजयते ॥

[ ८ ]

नाः सर्वे नूनं, भुवनजनितुः पुत्रसदृशाः,
तो ऽन्योन्यं स्नेहः, सकलमनुजानां समुचितः।
को ऽप्यस्पृश्यो ना, इतिविमलभावं प्रचुरयन्
यानन्दो योगी, विमलचरितो ऽसौ विजयते ॥



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल समाचार

## ऋतु-चक्र

आश्विन के प्रथम सप्ताह में मौसम ने अजब पलटा खाया। पांच छः दिन तक लगातार बारिश होती रही। मानों चौमासा पुनः लौट आया हो। नदी नाले एकदम उफ़न उठे और पानी खतरे के बिन्दु से ऊपर आगया। सारे प्राँत से ही अति वर्षा के दुष्परिणामों के समाचार आने लगे। यातायात की व्यवस्थाएँ भी बीच में ठप्प हो गईं। लहलहाती हुई धान की खेतियाँ एकदम धराशायी हो गईं। एकाएक ऋतु परिवर्तन से रोग का वातावरण भी बढ़ गया। विषमज्वर, श्लेष्मज्वर, खाँसी, जुकाम, आदि की वृद्धि हो गई। वर्षा के कारण ही कुलभूमि में विजय-दशमी का रङ्ग भी फीका रहा। दशहरे के बाद से मौसम खुल गया है और गुलाबी जाड़ा पड़ने लगा है।

## विजय-दशमी

मौसम में कुछ विरूपता होने पर भी सदा की भाँति गुरुकुल के छात्रों ने यह पर्व बड़ी उमंग से मनाया। कुल की पुरानी परम्पराओं के अनुसार दशहरे के चारों दिन छात्रों के क्रीड़ा-कौतुकों से बराबर गूँजते रहे। विद्यालय-विभाग के छात्रों ने इस वर्ष विशेष रूप से अपना क्रीड़ा आयोजन किया था। जिस का परिणाम इस प्रकार आया है—

क्रिकेट और हौकी सान्मुख्य में ब्र० प्रियव्रत का दल विजयी हुआ। वालीबाल और फुटबाल में ब्र० सुरेन्द्र भाग पुरी का दल जीता। रस्साकशी (गजग्राह) में ब्र० देवेन्द्र के दल ने विजय पाई। एक मील की दौड़ और एक टाँग की दौड़ में ब्र० वीरेन्द्र बरेली प्रथम रहा। सौ गज की दौड़ में ब्र० धर्मवीर ८ म (भायला वासी) १ म आया। तीन टाँग की दौड़ में ब्र० धर्मवीर और ब्र केशवदेव की जोड़ी प्रथम रही। अन्धयुद्ध में ब्र० सुरेन्द्र कलकत्ता विजयी हुआ। लंका-विजय में ब्र० खेमचन्द्र का दल विजयी हुआ। गोला फेंकने की स्पर्धा में ब्र० प्रियव्रत प्रथम रहा। हेमर थ्रो में ब्र० अवधेश और बाधा दौड़ में ब्र० प्रेमचन्द्र प्रथम रहा। विजयदशमी के उपलक्ष्य में विद्यालय के छात्रों ने 'विजया' नामक एक सुन्दर हस्तलिखित पत्रिका भी प्रकाशित की। इस पत्रिका के प्रकाशन में ब्र० राजकुमार बरेली का कार्य प्रशंसनीय रहा।

## गाँधी जयन्ती

दो अक्टूबर को गाँधी जयन्ती उत्साह से मनाई गई। बड़े सवेरे छात्रों ने प्रभात फेरी का आयोजन किया। अपराह्न में श्री पं० सुखदेव जी दर्शनवाचस्पति के सभापतित्व में महात्मा जी को श्रद्धाँजलियाँ अर्पित करने के लिए कुलसभा समवेत हुई।

रात को महाविद्यालय वाग्-वर्धिनी सभा की ओर से भी एक सभा की गई। इस में महात्मा गाँधी के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, और धार्मिक विचारों और कार्यों पर विस्तार के साथ अनेक छात्रों और गुरुजनों ने तात्विक विचार किया। गुरुजनों में से श्री पं० सुखदेव जी, श्री पं० वागीश्वर जी, श्री पं० धर्मपाल जी तथा श्री वैद्य निरंजनदेव जी आदि के विचारपूर्ण व्याख्यान हुए।

## वाक्-संघर्ष में विजय

देहरादून की वाणी परिषद् द्वारा एक इण्टर कालेज वादविवाद प्रतियोगिता आयोजित की गई थी। इस स्पर्धा में एक दर्जन से ऊपर इण्टर कालेजों ने भाग लिया था। वादविवाद का विषय था——स्वेज नहर का राष्ट्रियकरण उचित है या नहीं ! गुरुकुल के छात्र ब्र० चन्द्रकान्त (१ म वर्ष) और ब्र० सहदेव (कृषि-कालेज) के भाषण वहाँ उत्तम समझे गये और विजयोपहार (चाँदी की ढाल) गुरुकुल संस्था को प्राप्त हुआ। सर्वोत्तम वक्ता का पुरस्कार भी ब्र० चन्द्रकान्त को मिला।

## विदेशी यात्री

गत मास चार विदेशी यात्री गुरुकुल में आकर दो दिन तक रहे। आप लोगों ने गुरुकुल की जीवन-शैली और शिक्षाविधि का विशेष रूप से अवलोकन किया। इन यात्रियों में इङ्गलैण्ड के विदेशी सूचना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विभाग के अधिकारी सर पाल ड्यूक महाशय, ग्रीस देश की भारत प्रेमी कुमारी लीला वाल्चर, कोलम्बिया विश्वविद्यालय की कुमारी सिलविया स्कापा तथा पश्चिमी द्वीपसमूह के अध्यात्म प्रेमी श्री केमरन महोदय सम्मिलित थे। आप लोगों ने वैदिक धर्म की शिक्षाओं तथा आर्यसमाज के धर्मसुधार के दृष्टिकोण की स्थानीय विद्वानों से चर्चाएँ की। आप को आर्य समाज का साहित्य भी भेंट किया गया।

## शारदीय व्याख्यान माला

पुरातत्व-संग्रहालय मथुरा के अध्यक्ष श्री कृष्णदत्त जी वाजपेयी ने गुरुकुल की शरत्कालीन व्याख्यान माला के सिलसिले में तीन व्याख्यान महाभारत काल से लेकर अब तक के उत्तर-प्रदेश के सांस्कृतिक इतिहास पर दिये। तीनों व्याख्यान चित्रदीप ( मेजिक लैम्प ) द्वारा चित्रमय होने से बहुत बोधक और मनोरंजक रहे। प्राचीन काल में उत्तरप्रदेश की भौगोलिक धार्मिक, राजनीतिक तथा कला-विषयक प्रवृत्तियों का आपने बड़ी सुन्दर शैली में इतिहास प्रस्तुत किया। पुरातत्वीय खोज द्वारा प्राप्त प्राचीन मूर्तियों तथा स्थापत्य के चित्रों को प्रस्तुत कर के आपने अपने व्याख्यानों को सर्वगम्य बना दिया था।

## विशेष-भाषण

२४ सितम्बर को कुलपति श्री पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति का भाषण भारत की परराष्ट्र नीति और गृहनीति के विषय में हुआ। आपने इतिहास की पुरानी और समसामयिक घटनाओं का विश्लेषण करते हुए भारत की विदेश नीति की सराहना की। आपने यह भी बताया कि राजनीति में भावावेश के कारण अनेक अनर्थ हो जाते हैं। अतः राजनीति में बौद्धिक सन्तुलन और धीरता की नितान्त आवश्यकता है।

## संग्रहालय सप्ताह

अन्तर्राष्ट्रिय संग्रहालय आंदोलन के सिलसिले में कुलभूमि में भी 'संग्रहालय सप्ताह' उत्साह से मनाया गया। गुरुकुल संग्रहालय की ओर से एक ज्ञानवर्धिनी व्याख्यान चित्रों सहित आयोजित की गई थी। प्रत्येक व्याख्यान में चित्रदीप द्वारा चित्र प्रदर्शित किये जाते रहे। प्रथम व्याख्यान श्री मदनगोपाल जी ने मीठे और खारे पानी के जलचरों पर दिया। दूसरा व्याख्यान श्री रामेश बेदी ने सांपों की जीवन चर्या पर दिया। तीसरे व्याख्यान में गुरुकुल के जीवविज्ञान के उपाध्याय श्री चम्पतस्वरूप जी ने प्रकृतिविज्ञान संग्रहालय के विकास की कहानी बताते हुए जीव सृष्टि की अद्भुत जीवन चर्या पर प्रकाश डाला। चौथा व्याख्यान श्री शंकरदेव विद्यालंकार ने कुलभूमि के चारों ओर रहने वाले सामान्य पक्षियों तथा कवि कालिदास की रचनाओं में वर्णित पक्षियों पर दिया। पाँचवाँ सचित्र व्याख्यान में प्रो० हरिदत्त जी वेदालंकार ने विदेशों में पिछले दो हजार वर्षों में भारतीय संस्कृति के फैलाव की कहानी समझाई। इस प्रकार संग्रहालय सप्ताह का कार्य खूब सफल रहा।

## आवश्यक सूचना

गुरुकुल कांगड़ी के श्रद्धानन्द द्वार से पुरुषार्थनिधि रसीद पुस्तक संख्या ४४६, ४४७, ४४८, ४४९, ४५० चोरी हो गई हैं। गुरुकुल के प्रेमी दानी तथा अन्य महानुभावों से निवेदन है कि यदि कोई इन रसीदों से धन प्राप्त करता हुआ मिले तो उसे तुरन्त पुलिस के सुपुर्द कर दें और गुरुकुल कांगड़ी को सूचित करें।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# स्वाध्याय के लिए चुनी हुई पुस्तकें

## वैदिक साहित्य

ईशोपनिषद्भाष्य श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति २)
वेद का राष्ट्रिय गीत श्री प्रियव्रत ५)
वेदोद्यान के चुने हुए फूल श्री प्रियव्रत ५)
वरुण का नौका, २ भाग श्री प्रियव्रत ६)
वैदिक विनय, ३ भाग श्री अभय २), २), २)
वैदिक वीर-गर्जना श्री रामनाथ ।।।=)
वैदिक-सूक्तियां ,, १।।।)
आत्म-समर्पण श्री भगवद्दत्त १।।)
वैदिक स्वप्न-विज्ञान ,, २)
वैदिक अध्यात्म-विद्या ,, १।)
वैदिक ब्रह्मचर्य गीत श्री अभय २)
ब्राह्मण की गौ श्री अभय ।।।)
वेदगीताञ्जलि ( वैदिक गीतियां ) श्री वेदव्रत २)
सोम-सरोवर, सजिल्द, अजिल्द श्री चमूपति २), १।।)
वैदिक-कर्त्तव्य-शास्त्र श्री धर्मदेव १।।)
अग्निहोत्र श्री देवराज २।)

## संस्कृत ग्रन्थ

संस्कृत-प्रवेशिका, १, २, भाग ।।।), ।।।=)
साहित्य-सुधा-संग्रह, १, २, ३ बिन्दु १।), १।), १।)
पाणिनीयाष्टकम पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध ७), ७)
पञ्चतन्त्र ( सटीक ) पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध २), २।।)
सरल शब्दरूपावली ।।=)

## ऐतिहासिक तथा जीवनी

भारतवर्ष का इतिहास ३ भाग श्री रामदेव ६)
बृहत्तर भारत (सचित्र) सजिल्द, अजिल्द ७), ६)
ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार, २ भाग ।।।)
अपने देश की कथा श्री सत्यकेतु १।=)
हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के अनुभव ।।)
योगेश्वर कृष्ण श्री चमूपति ४)
सम्राट् रघु श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति १।)
जीवन की झांकियां ३ भाग ,, ।।) ।।), १)
जवाहरलाल नेहरू ,, १।)
ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित्र ,, २)
दिल्ली के वे स्मरणीय २० दिन ,, ।।)

## धार्मिक तथा दार्शनिक

सन्ध्या-सुमन श्री नित्यानन्द १।।)
स्वामी श्रद्धानन्द जी के उपदेश, तीन भाग ३।।)
आत्म-मीमांसा श्री नन्दलाल २)
वैदिक पशुयज्ञ-मीमांसा श्री विश्वनाथ १)
अथर्ववेदीय मन्त्र-विद्या श्री प्रियरत्न १।)
सन्ध्या-रहस्य श्री विश्वनाथ २)
जीवन-संग्राम श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति १)

## स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें

आहार (भोजन की जानकारी ) श्री रामरक्ष ५)
आसव-अरिष्ट श्री सत्यदेव २।।)
लहसुन:प्याज श्री रामेश बेदी २।।)
शहद ( शहद की पूर्ण जानकारी ) ,, ३)
तुलसी, दूसरा परिवर्द्धित संस्करण ,, २)
सोंठ, तीसरा ,, ,, १।।)
देहाती इलाज, तीसरा संस्करण ,, १)
मिर्च ( काली, सफेद और लाल ) ,, १)
सांपों की दुनियां, (सचित्र) सजिल्द ,, ५)
त्रिफला, तीसरा संवर्द्धित संस्करण ,, ३।)
नीम:बकायन (अनेक रोगों में उपयोग)., १।)
पेठा : कद्दू (गुण व विस्तृत उपयोग) ,, ।।)
देहात की दवाएं, सचित्र ।।।) बरगद ।।।)
स्तूप निर्माण कला श्री नारायण राव ३)
प्रमेह, श्वास, अर्शरोग २।)
जल चिकित्सा श्री देवराज १।।।)

## विविध पुस्तकें

विज्ञान प्रवेशिका, २ भाग श्री यज्ञदत्त १)
गुणात्मक विश्लेषण ( बी.एस्.सी. के लिए ) १)
भाषा-प्रवेशिका ( वर्धायोजनानुसार ) ।।।)
आर्यभाषा पाठावली श्री भवानी प्रसाद १।।)
आत्म बलिदान श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति २)
स्वतन्त्र भारत की रूप रेखा ,, १।।)
जमींदार ,, २)
सरला की भाभी, १, २ भाग ,, २), ३।।)

प्रकाशन मन्दिर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## शरद् ऋतु में स्वास्थ्य लाभ कीजिये

# हमारी कुछ अनुभूत प्रसिद्ध औषधियां

### च्यवनप्राश

पुष्टि कर रसायन है। दिल, दिमाग व फेफड़ों को शक्ति देकर पुष्ट करता है। मू० २।) पाव

### सिद्ध मकरध्वज

शरीर की प्रत्येक कमज़ोरी को दूर कर के शक्ति व स्फूर्ति पैदा करता है। मूल्य ३॥) माशा

### बादाम पाक

यह स्वादिष्ट बलवर्धक पाक है। इस से मानसिक व शारीरिक शक्ति बढ़ती है तथा दिमाग तेज़ होता है। मूल्य ५) पाव

### चन्द्रप्रभा वटी

नवयुवकों के विशेष रोग तथा बवासीर, पथरी, भगन्दर, खून की कमी में यह गोलियाँ लाभदायक हैं। मूल्य १) तोला

### गुरुकुल चाय

दैनिक प्रयोग के लिये सुन्दर पेय है। खाँसी, नज़ला जुकाम तथा थकावट को दूर कर के स्फूर्ति लाती है। मूल्य ।≈) छटांक

### सुपारी पाक

स्त्री रोगों में लाभदायक है। यह मासिक खराबी को दूर कर के शरीर में चुस्ती लाता है। मूल्य ३) पाव

### बसन्त कुसुमाकर

शरीर की कमज़ोर नसों को बलवान बनाता है और अधिक पेशाब आने को रोकता है। मूल्य ३) माशा

### सत शिलाजीत

कमर दर्द, रीढ़ अथवा जोड़ों के दर्द में शिलाजीत पूर्ण लाभ देती है। बुढ़ापे की कमज़ोरी में विशेष लाभदायक है। मूल्य १) तोला

### बादाम रोगन

पीने और मालिश में प्रयोग होता है। इस से कब्ज, आँतों की खुश्की दूर होती है और दिमागी शक्ति बढ़ती है। मूल्य १।) औंस

## गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार।


मुद्रक : श्री रामेश वेदी, गुरुकुल मुद्रणालय, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।
प्रकाशक : मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल पत्रिका

डॉक्टर सैयदीन नये छात्रावास का शिलान्यास कर रहे हैं ।

DIGITIZED C-DAC
2005-2006

वर्ष ९
अङ्क २



आश्विन
२०१३

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## गुरुकुल-पत्रिका

पूर्णाङ्क ९८
सितम्बर १९५९



★

व्यवस्थापक : श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति
सम्पादक समिति : श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति
श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार
श्री रामेश बेदी ( मन्त्री )

### इस अङ्क में



### अगले अङ्क में

| | |
|---|---|
| हिमालय की घाटियों में भारतीय संस्कृति | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति |
| शिक्षा में व्यवहारवाद | श्री महेशचन्द्र एम. ए. |
| परमाणु के शान्तिपूर्ण उपयोग ( सचित्र ) | |
| चम्बल की घाटी की खुदाई से ( सचित्र ) | |

**अन्य अनेक विश्रुत लेखकों की सांस्कृतिक, साहित्यिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी रचनाएँ।**

**मूल्य देश में ४) वार्षिक** — **एक प्रति**
**विदेश में ६) वार्षिक** — **छः आने**

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ


# गुरुकुल-पत्रिका

[ गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका ]


## दर्शन शास्त्रों और गीता का वेद विषयक विचार

श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, वेदान्त और मीमांसा ये छः दर्शन शास्त्र हैं जिन्हें गौतम, कणाद, कपिल, पतञ्जलि, वेद व्यास और जैमिनि नामक ऋषियों ने बनाया। इन सब दर्शनों में वेदों के महत्व को स्पष्टतया स्वीकार किया गया है। उदाहरणार्थ न्याय दर्शन के २. १. ६७. मन्त्रायुर्वेद प्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात् इत्यादि सूत्रों में परमआप्त परमेश्वर का वचन होने और असत्य, परस्पर विरोध और पुनरुक्ति आदि दोष रहित होने से वेद को परम प्रमाण सिद्ध किया गया है।

वैशेषिक शास्त्रकार कणाद मुनि ने तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम् । १. १. ३. इस सूत्र द्वारा परमेश्वर का वचन होने से आम्नाय अर्थात् वेद की प्रामाणिकता का प्रतिपादन किया है।

सांख्यकार कपिल मुनि को भूल से कई विचारक नास्तिक समझते हैं किन्तु उन्होंने भी 'निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम्' इत्यादि सूत्रों द्वारा वेदों को ईश्वरीय शक्ति से अभिव्यक्त (प्रकट) होने के कारण स्वतः प्रमाण माना है। सांख्य सूत्रों में जगत्कर्ता ईश्वर का 'स हि सर्ववित्, सर्वकर्ता' इत्यादि सूत्रों द्वारा स्पष्ट प्रतिपादन है, अतः कपिल मुनि को नास्तिक समझना बड़ी भूल है।

इस प्रसंग में एक और बात का उल्लेख करना आवश्यक है। वह यह कि कुछ लोग सांख्य दर्शन के 'ईश्वरासिद्धेः'। १. ९२ इस सूत्र के आधार पर यह समझते हैं कि सांख्यकार कपिल मुनि ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करते थे। ऐसी अवस्था में 'निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम्' इस का ईश्वरीय शक्ति से वेदों की अभिव्यक्ति और स्वतः प्रमाणता परक अर्थ कैसे ठीक हो सकता है। इस विषय में हम ने अपनी 'बौद्ध मत और वैदिक धर्म' नामक पुस्तक में (आर्यसमाज दीवान हाल द्वारा प्रकाशित और वहीं प्राप्तव्य) पर्याप्त प्रकाश डाला है। यहां इतना ही लिखना पर्याप्त है कि 'ईश्वरासिद्धेः' यह सूत्र प्रत्यक्ष के प्रकरण में आया है जिस का लक्षण कपिल मुनि ने 'यत् सम्बन्धं सत् तदाकारोल्लेखि विज्ञानं तत् प्रत्यक्षम्। १.८९ इस रूप में किया है। अतः 'ईश्वरासिद्धेः' का इतना ही अभिप्राय है कि प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा ईश्वर की सिद्धि नहीं हो सकती क्योंकि वह सर्व व्यापक निराकार होने से प्रत्यक्ष का विषय नहीं। साथ ही ईश्वर की उपादान कारणता का 'तद्योगेऽपि न नित्यमुक्तः। प्रधानशक्तियोगाच्चेत् सङ्गापत्तिः। सत्तामात्राच्चेत् सर्वैश्वर्यम्। प्रमाणाभावान्न तत्सिद्धिः। संबन्धाभावान्नानुमानम्। श्रुतिरपि प्रधान कार्यत्वस्य ॥' पंचम अध्याय के इन सूत्रों में निषेध किया गया है जिन का तात्पर्य यह है कि ईश्वर को इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सृष्टि का उपादान कारण माना जाएगा तो ईश्वर नित्यमुक्त नहीं रहेगा क्योंकि उपादान कारण मानने से उस में रागादि की प्रवृत्ति माननी पड़ेगी जो नित्यमुक्त में नहीं हो सकती। यदि ईश्वर को जगत् का उपादान कारण माना जाए तो ईश्वर में सर्वज्ञतादि जो गुण हैं वे इस जगत् में भी होने चाहियें क्योंकि उपादान कारण के गुण कार्य में होते हैं किन्तु ऐसा देखने में नहीं आता अतः वह जगत् का उपादान कारण नहीं। प्रत्यक्ष प्रमाण के न होने से भी ईश्वर को जगत् का उपादान कारण नहीं सिद्ध किया जा सकता और न अनुमान प्रमाण द्वारा यह सिद्ध किया जा सकता है कि ईश्वर जगत् का उपादान कारण है। श्रुति भी प्रधान अथवा प्रकृति को ही जगत् का उपादान कारण मानती है।

कहीं इन सूत्रों से यह भ्रम न हो जाए कि सांख्यकार ईश्वर की जगत् के निमित्त कारण के रूप में सत्ता का भी निषेध करते हैं। उन के निम्न सूत्र उल्लेखनीय हैं—

स हि सर्ववित् सर्वकर्ता ।। सांख्य. ३. ५६।

अर्थात् ईश्वर सर्वज्ञ और निमित्त कारण रूप से जगत् का कर्ता है।

ईदृशेश्वरसिद्धिः सिद्धा ।। सांख्य ३. ५७।

ऐसे जगत् के निमित्त कारण रूप सर्वज्ञ ईश्वर की सिद्धि सिद्ध है।

व्यावृत्तोभयरूपः । सांख्य १. १६।

वह ईश्वर प्रकृति और पुरुष ( आत्मा ) दोनों से भिन्न स्वरूप वाला है। इत्यादि।

सांख्य शास्त्र निरीश्वरवाद का प्रतिपादक नहीं किन्तु इस में नित्य ब्रह्म की सत्ता का प्रतिपादन है इस बात का महाभारत शान्ति पर्व मोक्षधर्म पर्व अ. ३०१ में भी स्पष्ट प्रतिपादन है यथा।

अत्र ते संशयोमाभूत्, ज्ञानं सांख्य परं मतम्।
अक्षरं ध्रुवमेवोक्तं, पूर्णं ब्रह्म सनातनम्।।
अनादिमध्यनिधनं, निर्द्वन्द्वं कर्तृशाश्वतम्।
कूटस्थं चैव नित्यं च, यद्वदन्ति मनीषिणः।।
शान्तिपर्व मोक्षधर्म पर्व अ. ३०१. १०१ १०।

महाभारत शान्ति पर्व ( मोक्षधर्म पर्व ) अ. २७ में कपिल के निम्न वचन भी द्रष्टव्य हैं जिन से उन की वेद और ब्रह्म दोनों पर पूर्ण निष्ठा स्पष्टतया ज्ञात होती है।

वेदाः प्रमाणं लोकानां, न वेदाः पृष्ठतः कृताः।
द्वे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परं च यत् ।।१
शब्दब्रह्मणि निष्णातः, परं ब्रह्माधिगच्छति ।।२

अर्थात् वेद समस्त लोगों के लिए प्रमाण हैं। उन्हें पीछे से नहीं बनाया गया। ब्रह्मपद-वाच्य दो का ज्ञान आवश्यक है एक तो वेद और दूसरा परब्रह्म-परमेश्वर। जो शब्दब्रह्म अर्थात् वेद में निपुण है वह परब्रह्म को प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार कपिल मुनि की नास्तिकता का पूर्ण निराकरण होता है।

योगदर्शनकार पतंजलि मुनि ने 'स एष पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।' समाधिपाद सू. २६ इत्यादि में परमेश्वर को नित्य वेद ज्ञान देने के कारण सब पूर्वजों का भी आदि गुरु माना है।

वेदान्त शास्त्र के कर्ता वेदव्यास जी ने शास्त्रयोनित्वात् १. १. ३ तथा अतएव च नित्यत्वम् १ ३. २९. इत्यादि सूत्रों द्वारा परमेश्वर को ऋग्वेदादि रूप सर्वज्ञानभण्डार शास्त्र का कर्ता मानते हुए वेद की नित्यता का प्रतिपादन किया है। 'शास्त्रयोनित्वात्।' इस सूत्र के भाष्य में सुप्रसिद्ध दार्शनिक श्री शङ्कराचार्य जी ने जो लिखा है वह भी इस प्रसंग में महत्त्वपूर्ण होने के कारण उल्लेखनीय है। वे लिखते हैं—

'ऋग्वेदादेः शास्त्रस्यानेकविद्यास्थानोपबृंहि-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तस्य प्रदीपवत् सर्वार्थावद्योतिनः सर्वज्ञकल्पस्य योनिः कारणं ब्रह्म । नहीदृशस्यर्ग्वेदादिलक्षणस्य सर्वज्ञगुणान्वितस्य सर्वज्ञादन्यत. सम्भवोऽस्ति ॥

अर्थात् ऋग्वेदादि जो चार वेद हैं वे अनेक विद्याओं से युक्त हैं, सूर्य के समान सब सत्य अर्थों के प्रकाश करने वाले हैं, उन का बनाने वाला सर्वज्ञत्वादि गुणों से युक्त परब्रह्म है क्योंकि सर्वज्ञ ब्रह्म से भिन्न कोई जीव, सर्वज्ञगुणयुक्त इन वेदों को बना सके ऐसा सम्भव नहीं इत्यादि। मीमांसा शास्त्र के कर्ता जैमिनि मुनि तो धर्म का लक्षण ही यही करते हैं कि—

'चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः ।'

अर्थात् जिस के लिये वेद की आज्ञा हो वह धर्म और जो वेद विरुद्ध हो वह अधर्म कहलाता है ।

इस प्रकार समस्त शास्त्र एक स्वर से वेदों की नित्यता और स्वतः प्रमाणता का प्रतिपादन करते हैं ।

### गीता के कुछ वचन

भगवद्गीता एक जगद्विख्यात महत्वपूर्ण ग्रन्थ है । यद्यपि वह महाभारतान्तर्गत है और महाभारत के वेदों के महत्व विषयक कुछ श्लोकों को हम उद्धृत कर चुके हैं । तथापि गीता के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ होने के कारण उस के वेद विषयक कुछ श्लोकों का उल्लेख करना इस प्रकरण में हमें उचित प्रतीत होता है । गीता के तृतीय अध्याय में श्रीकृष्ण महाराज ने यज्ञ के विषय का निरूपण करते हुए कहा है—

अन्नाद् भवन्ति भूतानि, पर्जन्यादन्नसम्भवः ।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यः, यज्ञः कर्मसमुद्भवः ।
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ॥
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म, नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥
भगवद्गीता ३. १४. १५ ।

अर्थात् प्राणियों का जीवन अन्न पर निर्भर है । मेघों से अन्न की उत्पत्ति होती है । मेघ यज्ञ से बनते हैं । यज्ञ कर्म से सम्पन्न होता है । धर्म-कर्म की उन्नति वा ज्ञान ब्रह्म अर्थात् वेद के द्वारा होता है । वह ब्रह्म अर्थात् वेद अक्षर वा अविनाशी परमेश्वर से आविर्भूत होता है इस लिये सर्वव्यापक परमेश्वर को सदा यज्ञ में प्रतिष्ठित जानो । इस श्लोक में वेदों की उत्पत्ति अविनाशी परमेश्वर से स्पष्टतया बताई गई है ।

इस श्लोक के भाष्य में श्री शङ्कराचार्य जी ने लिखा है –

कर्म ( ब्रह्मोद्भवम् ) ब्रह्म वेदः स उद्भवः कारणं यस्य तत कर्म ब्रह्मोद्भवं ( विद्धि ) जानीहि ब्रह्म पुनर्वेदाख्यम् अक्षर समुद्भवम् ) अक्षरं ब्रह्म परमात्मा समुद्भवो यस्य तदक्षरसमुद्भवं ब्रह्म वेद इत्यर्थः । यस्मात् साक्षात्परमाख्यादक्षरात् पुरुषनिश्वासवत् समुद्भूतं ब्रह्म-तस्मात् सर्वप्रकाशकत्वात् सर्वगतम् । सर्वगतमपि सन्नित्यं सदा यज्ञविधिप्रधानत्वाद् यज्ञे प्रतिष्ठितम् । भगवद्गीता शाङ्कर भाष्ये अ. ३. १५ ।

'श्रीमद्भगवद्गीता शाङ्कर भाष्यादिसप्तटीकोपेता' गुजराती मुद्रणालय, मुम्बई पृ० १८१ तात्पर्य यही है कि कर्म की उत्पत्ति वेद से और वेद की अविनाशी परमात्मा से है । वेद साक्षात् परमात्मा से पुरुषश्वास की तरह निकला है अतः सब विषयों का प्रकाशक होने के कारण उसे ही सर्वगत कहा है । वह सर्वगत ब्रह्म (वेद) यज्ञ विधि प्रधान होने से यज्ञ में प्रतिष्ठित है ।

श्री आनन्दतीर्थ ( मध्वाचार्य ) के भाष्य में यद्यपि इस श्लोक की व्याख्या शङ्कराचार्य जी के भाष्य से भिन्न की गई है तथापि वेदों की नित्यता और ईश्वरीयता को—

तानि चाक्षराणि नित्यानि 'वाचा विरूप नित्यया । वृष्णे चोदस्व सुष्टुतिम् ॥' अनादि-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा । अत एव च नित्यत्वम् । इत्यादि श्रुतिस्मृतिभगवद्वचनेभ्यः ॥ न च सर्वज्ञत्वे यदि वदस्रष्टा किमिति न जगत् स्रष्टासर्वज्ञ. तस्माद् वेदप्रमाणकत्वमेवात्र विवक्षितम् अतो नित्यान्यक्षराणि यतएवं परम्परया यज्ञाभिव्यङ्ग्यं ब्रह्म तस्मान्नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥'

इत्यादि शब्दों द्वारा उस में भी स्पष्ट माना गया है। इस की पुष्टि वेद की अन्तः साक्षि 'वाचाविरूप नित्यया' महाभारत के वचन अनादिनिधना नित्या तथा वेदान्त सूत्र 'अत एव च नित्यत्वम्' इन के उद्धरणों से की गई है। रामानुज भाष्य की अमृत तरङ्गिणी टीका में भी—

वेदात् कर्मोत्पत्तिः स च ब्रह्मनिःश्वासस्तेन तथा। ब्रह्मणः पुरुषोत्तमत्वज्ञापनार्थं विशिनष्टि अक्षरसमुद्भवम् । अक्षरस्य समुद्भवो यस्मात् तादृशम् ।

इत्यादि वचनों द्वारा वेद की नित्यता का प्रतिपादन है। नीलकण्ठी टीका में तो और भी भी स्पष्ट रूप से, इस श्लोक की टीका में लिखा है—

कर्म ( ब्रह्मोद्भवं ) वेदोद्भवं वेद एव धर्मे प्रमाणं न तु पाखण्डादिप्रणीतागमः। ब्रह्म वेदोऽपि अक्षरसमुद्भवम् । अस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः' इत्यादि श्रुतेः । साक्षात्परमेश्वरादेवोत्पन्नोऽतो न तत्र भ्रमविप्रलम्भत्वादिदोषाक्रान्तपाखण्डादिवाक्यवदप्रामाण्यशङ्कास्तीति भावः। यस्मादेवं तस्मात् सर्वस्मिन् देशे कालेच वर्तमानं ब्रह्म-वेदः एतेन वेदस्य नित्यत्वं शब्दस्य विभुत्वं च दर्शितं नित्यं नियमेन यज्ञे प्रतिष्ठितं तात्पर्येण पर्यवसन्नम् नीलकण्ठी टीका पृ० १८३ ।

अर्थात् कर्म के विषय में वेद प्रमाण है और वेद की उत्पत्ति परमात्मा से है अतः उस की प्रामाणिकता में कोई सन्देह नहीं हो सकता। इत्यादि ।

गीता के सप्तदश ( १७ वें ) अध्याय में 'ओं तत्सत्' इस नाम से ब्रह्म का निर्देश करते हुए श्लोक २३ में कहा है कि—

ओं तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ।
ब्राह्मणस्तेन वेदाश्च, यज्ञाश्च विहिताः पुरा॥

अर्थात् ब्रह्म का 'ओं तत् सत्' इन नामों से शास्त्रों में निर्देश किया गया है। उसी से ब्राह्मणों ( ब्रह्मज्ञानी वेद वेत्ताओं ) वेदों और यज्ञों का विधान किया गया है अर्थात् वेद के अध्ययनाध्यापन में दिन-रात तत्पर ज्ञानी परमेश्वर के सच्चे भक्त उस के बड़े पुत्र कहलाते हैं। वेदों का उसी ब्रह्म ने उपदेश दिया है जिन के द्वारा ही यज्ञकर्म चलते हैं अतः इन तीनों की उत्पत्ति विशेष रूप से उस परमेश्वर से मानी गई है। इस श्लोक में भी वेदों को स्पष्टतया ईश्वरीय बताया गया है ।



○ सन् १६५५–५६ में भारत से १३.६३ लाख टन कच्चे लोहे का निर्यात हुआ। इस का मूल्य ६.२७ करोड़ रु० आंका गया था।

○ सन् १६५५ में चाय के निर्यात उप-कर से १,५८,७५,६७६ रु० प्राप्त हुआ। पिछले वर्ष इस मद से १,२८,५२,५८० की आमदनी हुई थी। इन रकमों में कर वसूली का खर्च शामिल नहीं है।

○ दूसरी पंचवर्षीय आयोजना की अवधि में १०० प्रकाश स्तम्भ बनाने का प्रस्ताव है।—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# भारत का महान् लेखक—प्रेमचन्द

श्री वी० बालिन

भारत के विख्यात् लेखक प्रेमचन्द की कृतियां अपनी जनता के प्रति निष्ठापूर्ण सेवा का उज्ज्वल एवं उदात्त दृष्टांत हैं। उन की कृतियां हिन्दी और उर्दू साहित्य की क्लासिक बन गई हैं।

प्रेमचन्द कहते थे कि 'उत्पीड़ित का समर्थन एवं रक्षण करना' लेखक का कर्तव्य है। यावज्जीवन उन्होंने अपने नागरिक कर्तव्य का पालन किया और इस प्रकार जनता के एक सच्चे लेखक के रूप में गौरव प्राप्त किया।

वर्तमान शती के आरम्भ में भारत एक औपनिवेशिक देश था। श्रमिक जनता, विशेषकर कृषकवर्ग की कठिन परिस्थिति विविध सामन्ती अवशेषों के कारण जिन्हें सुरक्षित रखना उपनिवेशवादियों ने लाभदायक समझा था और भी अधिक खराब हो गई थी। भारतवासियों को न्यूनतम राजनीतिक अधिकार भी नहीं प्राप्त थे। जनता को पूर्ण पराधीनावस्था में रखने के प्रयास में विदेशी शासकों ने कठोर सम्वाद-नियन्त्रण और पुलिस आतङ्क का सहारा लिया। भारत में उपनिवेशवादियों की निरंकुशतापूर्ण पद्धतियों के विरुद्ध जनता का क्रोध अबाधगति से बढ़ता गया। राष्ट्रीय चेतना का भाव उत्तरोत्तर ज़ोर पकड़ता गया। १६०५–१६१० के राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन में भारत की जनता ने दासता की बेड़ियों को उतार फेंकने के लिए जोरदार प्रयास किया। इसी काल में प्रेमचन्द का साहित्यिक जीवन शुरू हुआ।

बचपन से ही लेखक ने (इन का असली नाम धनपतराय श्रीवास्तव था) जनता के दुःख क्लेश देखे थे। वे गांव के पटवारी के पुत्र थे। उन्होंने स्वयं कठिन अभाव का अनुभव किया था। वे भूख और बेकारी से परिचित थे। कठिन प्रयास करने के बाद वे किसी तरह शिक्षा प्राप्त करने में सफल हुए थे। वे एक स्कूल में शिक्षक बन गये और इस प्रकार साहित्य के क्षेत्र में उन्होंने अपने प्रथम पग रखे। पत्रकारिता सम्बन्धी कार्य के द्वारा वे राजनीतिक संघर्ष के उद्दीप्त वातावरण में आ गये।

प्रेमचन्द के 'सोज़ेवतन' नामक प्रथम कहानी-संग्रह में भी हम घृणित औपनिवेशिक व्यवस्था के पर्दाफाश के साथ-साथ अपने देशवासियों के नाम प्रेमचन्द की मार्मिक अपील पाते हैं जिस में उन्होंने देश के गौरव के लिए कुछ भी नहीं उठा रखने और अपने प्राणों की बाजी लगा देने के लिए उनका आह्वान किया है। ब्रिटिश सत्ताधारियों के आदेशानुसार यह पुस्तक 'राजद्रोहात्मक' घोषित की गई और जला दी गई। प्रेमचन्द को कठोर दण्ड देने की धमकी दी गयी, लेकिन इस से वे अपने विचार से नहीं डिगे। उन्होंने देखा कि सच्ची बातों से उन की मातृभूमि के उत्पीड़कों के अन्दर हड़कम्प पैदा होता है और जनता की जागरूकता को बढ़ाने में मदद मिलती है। अविचलित भाव से उन्होंने भारत को मुक्त करने के लक्ष्य में अपने को लगा दिया। वे इस लक्ष्य के प्रति अपने जीवन के अन्त तक सच्चे बने रहे।

प्रमचन्द की रचना सर्वाधिक उल्लेखनीय विशिष्टता जो शुरू से ही देखने में आती है वह यह है कि वे अपने विषय-वस्तु एवं पात्रों का चयन सामान्य जनता के जीवन से करते थे।

किसान, शहर के गरीब, तथा बुद्धिजीवी वर्ग के वित्तहीन तबकों के बारे में अपनी जान-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कारी तथा उन के प्रति अपनी गहरी सहानुभूति की बदौलत वे उन समस्याओं को अपने हाथ में ले सके जो हिन्दी और उर्दू रचना के लिए नयी थीं। श्रमशील मानव जो पददलित एवं दुःखी होते हुए भी निष्ठावान और शुद्ध-हृदय है भारत के नूतन साहित्य का मुख्य पात्र बन गया। अपनी समस्त अग्नि-परीक्षाओं के अन्दर प्रेमचन्द की कृतियों के नायक सत्य की विजय में, निरंकुशता के ऊपर न्याय की जीत में अमर विश्वास रखते हैं। यह उज्ज्वल मानवतावाद देश प्रेम के उन भावों से जो उन दिनों में भारत में हिलोरें ले रहे थे पूर्ण मेल खाता था।

प्रेमचन्द की रचनाओं ने उन्हें एक लेखक के रूप में प्रख्यात कर दिया। इस का मुख्य कारण यह है कि राजनीतिक जागरण की दिशा में व्यापकतम जनसमुदाय के अविनाशी प्रयास को पकड़ने और मूर्त्त करने में वे सफल हुए, जब लेनिन के शब्दों में पूर्व के औपनिवेशिक देशों की कोटि-कोटि उत्पीड़ित जनता में जो मध्य युगीन गतिहीनता के कारण नितांत अप्रगतिशील हो गई थी नवजागरण अङ्गड़ाई लेने लगा, और वह प्राथमिक मानव अधिकारों और जनवाद के लिए संघर्ष करने को उद्यत हो गई। व्यापक जनसमुदाय के जीवन का साहित्य में सच्चा चित्रण राष्ट्रीय मुक्ति-आन्दोलन सम्बन्धी कार्यों के अनुकूल था।

प्रेमचन्द की रचनाओं में व्यापक पैमाने पर वैविध्यपूर्ण सामाजिक विषय वस्तु पाई जाती है। उन में परिवार और समाज के अन्दर स्त्रियों के स्थान को प्राधान्य दिया गया है, तथा स्त्रियों को पतित करने वाली सामाजिक रूढ़ियों और और कठोर रीति-रिवाजों की निन्दा की गई है।

अपने व्यङ्गपूर्ण पात्रों के द्वारा उन्होंने बड़े सशक्त ढङ्ग से सरकारी कर्मचारियों और जमींदारों की बखिया उधेड़ी है, जो उन के देशवासियों का निर्मम शोषण और लूटपाट करते थे।

अपनी बहुत सी रचनाओं में प्रेमचन्द ने भारतीय कृषकवर्ग के जीवन का चित्रण किया है। वे भारतीय किसान के आत्मिक गठन तथा उन जटिल सामाजिक प्रक्रियाओं में जो गांवों में हो रही थीं दिलचस्पी रखते थे। उन्होंने भारतीय गांव का अविस्मरणीय चित्र—सच्चा जीवन्त इतिहास प्रस्तुत किया है, जहां भूमिहीन किसान हैं, फसल मरने और अकाल पड़ने की दुर्घटनाएं होती हैं, निरंकुश जमींदारों और अर्थलोलुप सूदखोरों का जोर है, पुलिस आतङ्क पैदा करती है और सरकारी कर्मचारी लूट-खसोट करते हैं।

१९१८–१९२२ में जब जनता का साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष अपने शीर्षबिन्दु पर था प्रेमचन्द ने 'प्रेमाश्रम' नामक उपन्यास और 'संघर्ष' नामक नाटक लिखा। इन कृतियों में उन्होंने एक पिछड़े हुए, कृषि प्रधान एवं औपनिवेशिक देश में तत्कालीन राष्ट्रीय-मुक्ति आंदोलन की मुख्य विशिष्टताओं और अन्तर्विरोधों का स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने दिखलाया है कि किस तरह नौकरशाही प्रशासनिक यन्त्र तथा गावों में सामन्ती पद्धति के संयोजन पर आधारित औपनिवेशिक व्यवस्था अन्दर अन्दर सड़ गई थी और इतिहास द्वारा अभिशप्त घोषित कर दी गई थी। परन्तु औपनिवेशिक उत्पीड़न के विरुद्ध कृषकवर्ग की स्वतःस्फूर्त कार्यवाहियों के साथ-साथ प्राचीन पितृसत्ताक कृषक समाज के सम्बन्धों का एक आदर्श के रूप में गुणगान किया गया है। इन भावों का चिन्तन करते हुए प्रेमचन्द इस विचार की ओर झुक गये थे कि यदि अच्छे दृष्टान्तों द्वारा उन लोगों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को जो स्वार्थ के वशीभूत हो सत्ता हथियाए हैं समझाने-बुझाने और पुनः शिक्षित करने का प्रयास किया जाए तो बहुत सी सामाजिक बुराइयां दूर की जा सकती हैं। सिद्धान्त पक्ष में अन्तर्विरोध के बावजूद इस उपन्यास का भारी महत्व है। यह दिखाता है कि किस तरह अत्यन्य पिछड़े हुए किसानों के मस्तिष्क में यह विचार क्रमशः बद्धमूल होता गया कि ज़मींदारों और सूदखोरों से संघर्ष करना आवश्यक है। भारत में यह प्रथम वृहत साहित्यिक रचना थी जिस में भारतीय जीवन की मुख्य समस्याओं का और सर्वोपरि श्रमिक जनता की स्थिति का इतना गम्भीर एवं यथार्थतापूर्ण चित्रण किया गया है।

प्रेमचन्द के हित स्वतन्त्रता के लिए संघर्षशील उनकी मातृभूमि के हित से सदा अभिन्न रूप में जुड़े थे। उनके सिद्धान्त तथा राजनीतिक विचारों में स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए जनसंघर्ष की उठती हुई लहर प्रतिबिम्बित होती थी। १९२० के सविनय अवज्ञा आंदोलन के समय उन्होंने ब्रिटिश संस्थानों का बायकाट करने के लिए किये गये देशभक्तिपूर्ण आह्वान का पालन किया और उस पद से त्यागपत्र दे दिया जिस की वजह से वे आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त थे। तदनन्तर उन्हें बहुधा अभाव और दुःख-दारिद्य का सामना करना पड़ा लेकिन वे फिर सरकारी नौकरी में नहीं गये।

जब १९२८-१९३३ में भारत के राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन का एक नया दौर शुरू हुआ तो प्रेमचन्द पहले की ही तरह अपने देश की स्वतन्त्रता के लिए जूझने वालों की प्रथम पांति में पाये गये।

उस काल में उन की साहित्यिक रचना का असाधारण विकास हुआ। उन्होंने उपन्यास, लघुकथाएं, और लेख लिखे; उन्होंने फिल्मों में काम किया, प्रगतिशील साहित्यकारों को संघटित करने के प्रयास में उन्होंने अन्य लेखकों के साथ सजीवतापूर्ण पत्राचार किया।

अपने जीवन के सन्ध्याकाल में इस मानववादी एवं जनवादी लेखक की कृति में उस का ऊर्जस्व स्वर और भी सशक्त होता गया और हिन्दी तथा उर्दू साहित्त में समीक्षात्मक यथार्थवादी पद्धति की विजय का प्रतीक बन गया।

उन्होंने बहुत से सामाजिक भ्रमों से अपने को मुक्त किया। 'गोदान ( १९३६ ) के पात्रों के जीवन हमें यह दिखाते हैं कि यदि कोई केवल अपने नैतिक मूल्यों पर अपनी आशाएं केन्द्रित करे और निरंकुशता के विरुद्ध संघर्ष करने के बजाय उस से मेल-समझौते करे तो वह वास्तविक खुशहाली और सुख-समृद्धि नहीं प्राप्त कर सकता। इस उपन्यास का मुख्य पात्र होरी जो एक गरीब किसान है अच्छे दिनों की व्यर्थ में प्रतीक्षा करते-करते इस संसार से कूच कर जाता है। उस की न्यूनतम आशाएं भी पूरी नहीं हुई। वह ईमानदार, दयालु और समझदार व्यक्ति है लेकिन उस समाज के नियम जिस में वह रहता है अत्यन्त निर्मम हैं। वह अपने भाग्य का निर्माण करने के लिए संघर्ष करने की कोशिश नहीं करता और वह कोटि-कोटि श्रमिक जनता के शोषण पर आधारित सामाजिक पद्धति का शिकार हो जाता है।

प्रेमचन्द की रचनाओं के गम्भीर सामाजिक तत्व—देशप्रेम और यथार्थवाद का समस्त भारत के बहुभाषायी साहित्य पर भारी प्रभाव पड़ा है, वह भारत के सब से प्रमुख राष्ट्रीय यथार्थवादी लेखकों में परिगणित हुए, उन की जनवादी परम्परायें आज दिन तक संजोई हैं और उनका विकास हो रहा है

प्रेमचन्द अखिल भारत प्रगतिशील लेखक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संघ के संस्थापक थे। इस संघ का प्रथम अधिवेशन अप्रैल १९३६ में उन्हीं की अध्यक्षता में हुआ था।

प्रेमचन्द ने व्यापक जनसमुदाय के लिए अपने साहित्य को सुबोध एवं सुलभ बनाने के लिए बहुत कुछ किया। इस उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए उन्होंने बोलचाल की एकमात्र हिन्दुस्तानी भाषा के दो साहित्यक रूपों—हिन्दी और उर्दू को सामान्य जनता के धरातल पर एक साथ लाने का प्रयास किया। एक साहित्यकार तथा जनता की भाषा के शिल्पकार के रूप में वे आज दिन तक भारत के लेखकों के गुरू हैं।

प्रेमचन्द की रचनाओं ने उन मुक्तिकामी धाराओं को आगे बढ़ाया जिनका उदय भारतीय साहित्य में १९ वीं शती में हुआ था। प्रेमचन्द ने इस दृष्टि से अपने देश की बहुमूल्य सेवा की कि उन्होंने साहित्य में सामान्य जनता की आशाओं एवं आकांक्षाओं को व्यक्त किया कि उन्होंने अपनी रचनाओं को राष्ट्रीय एवं सामाजिक स्वतन्त्रता के लिए होने वाले जन-संघर्ष से अविच्छिन्न रूप में जोड़ दिया।

वह प्रगाढ़ रूप में एक राष्ट्रीय लेखक थे। अन्य राष्ट्रों की संस्कृति के प्रति उन के हृदय में भारी सम्मान था। उन्होंने बर्नार्ड शा, अनातोल फ्रांस, गाल्सवर्दी और सादी की कृतियों का हिंदी में अनुवाद किया, हिन्दी के पाठकों को लियो टाल्सटाय की रचनाओं से परिचित कराने वाले वे पहले व्यक्ति थे, मैक्सिम गोर्की के लिए उनके दिल में सब से अधिक सम्मान था।

सामाज्यवादी एवं सामन्ती उत्पीड़न की बेड़ियों को काटने में अपने देश की जनता के साथ कन्धे से कन्धा भिड़ाये वे आशापूर्ण दृष्टि से मुक्त श्रम के देश सोवियत संघ की ओर देखते थे। उन्होंने मुक्त जातियों द्वारा सोवियत संघ में निर्मित नूतन समाजवादी समाज तथा नूतन संस्कृति का स्वागत किया।

प्रेमचन्द का देहावसान ८ अक्तूबर १९३६ को हुआ। उनकी साहित्यिक देन विशाल है। वे भारत के ही नहीं वरन् समस्त मानवजाति की विभूति हैं।



# १९५६ में नीबू की किस्म के फलों का उत्पादन

अमेरिकी कृषि-विभाग द्वारा एकत्र किये गये आंकड़ों के अनुसार, नींबू की किस्म के फलों के १९५५–५६ के उत्पादन से प्रकट होता है कि इन के उत्पादन में गत वर्षों की तुलना में काफी वृद्धि हुई है। अनुमान है कि उत्तरी गोलार्द्ध में सन्तरे तथा माल्टा के २९ करोड़ ७० लाख बक्से उतरे, जो गत वर्ष से ६ प्रतिशत अधिक रहे। गत वर्ष सन्तरे तथा माल्टा के २८ करोड़ १० लाख बक्से उतरे थे। चकोतरे के उत्पादन में भी वृद्धि हुई है। १९५४–५५ में ४ करोड़ ७० लाख बक्से उतरे थे और इस ऋतु में ५ करोड़ १० लाख बक्से उतरे हैं। गत वर्ष संसार में नींबू के ४६ लाख बक्स उतरे थे। उत्तरी गोलार्द्ध में गत वर्ष नींबू के २ करोड़ ७० लाख बक्से उतरे थे। इस वर्ष भी लगभग उतना ही उत्पादन रहा है। संसार में नींबू की किस्म के फलों की जितनी पैदावार होती है उस का ७५ प्रतिशत भाग उत्तरी गोलार्द्ध में होता है। दक्षिणी गोलार्द्ध के १९५५–५६ के आंकड़े मौजूदा फसल के तैयार हो जाने तक प्राप्त नहीं हो सकेंगे।

---

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# मस्तिष्क और टेलीविज़र

श्री आर. जेड. अमीरोव, एम. डी., एम. एस सी.

शरीर में जीवन सम्बन्धी कार्य-कलाप की अभिव्यक्ति जैसे हृदय के धड़कने, रग-पुट्ठों के सिकुड़ने, मस्तिष्क के बाहरी भाग के स्फुरण के साथ-साथ सदा एक प्रकार की बिजली निकला करती है जिसे जैव विद्युत-तरंग कहते हैं।

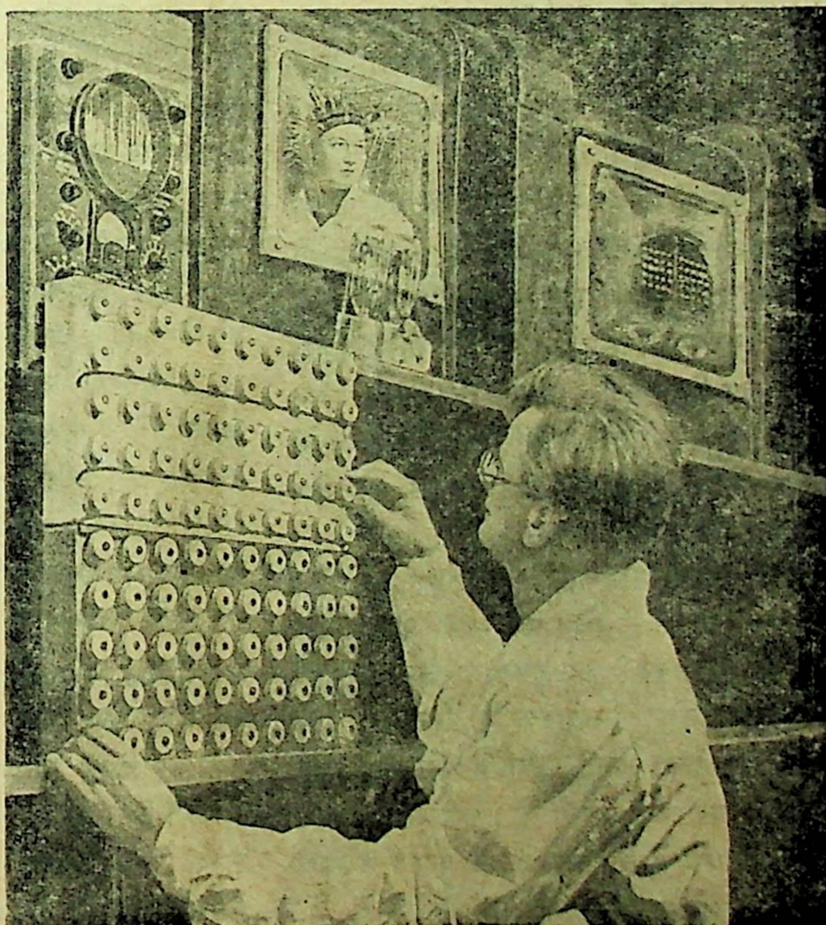
जब अङ्ग आराम करते रहते हैं, तब बहुत ही कमजोर विद्युत-तरंग उठती है। परन्तु जब तन्तुओं और अङ्गों की विश्राम की स्थिति में व्याघात पड़ता है, तब तरङ्ग काफी प्रबल हो जाती है।

मानव-शरीर से उठने वाली विद्युत-तरंग एक वोल्ट के सौवें भाग के बराबर होती है, जब कि कुछ मछलियों में यह कई सौ वोल्ट तक पहुंच जाती है। उदाहरण के लिये, वैद्युतिक ईल मछली अपनी बिजली चालू कर के आदमी को मार सकती है।

हृदय की विद्युत-तरंग की चाप १ से १॥ मिलीवोल्ट (वोल्ट के हजारवें भाग) के बराबर होती है। मस्तिष्क की विद्युत-तरंगों की चाप इस से बीस गुना कमजोर होती है।

मस्तिष्क के इन वैद्युतिक कार्यों का अध्ययन अब से बहुत पहले १८७५ में रूसी वैज्ञानिक वी. जे. दानिलेव्स्की ने किया था और बाद में सेचेनोव, व्वेदेन्स्की, काउफमान, प्रार्वडिचनमिस्की आदि रूसी वैज्ञानिकों ने किया। कुछ काल के उपरांत एन. ई. व्वेदेन्स्की ने सिद्ध किया कि रग-पुट्ठों, स्नायुओं तथा मस्तिष्क जैव तरंगों को टेलीफोन की सहायता से सुना भी जा सकता है।

प्रथम अनुसन्धानकर्ताओं ने जैव तरंगों के अध्ययन के लिए स्पन्दनशील गैलवनोमीटरों का उपयोग किया। इन यन्त्रों के द्वारा केवल कमजोर तरङ्गों की माप सम्भव हुई। ओसिलोग्राफ



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नामक यन्त्र के आविष्कार से मस्तिष्क के वैद्युतिक कार्यों का अध्ययन क्षेत्र काफी विस्तृत हो गया। यह यन्त्र विद्युत तरंग के उतार-चढ़ावों को अङ्कित करता है। इस समय ओसिलोग्राफों का उपयोग बीमारियों के निदान में होता है, जैसे मस्तिष्क की गिल्टी का निदान।

मस्तिष्क की जैव तरंगों के अङ्कन को वैद्युतिक एनसेफालोग्राम कहते हैं। इस में लहर जैसी टेढ़ी-मेढ़ी रेखा बन जाती है। स्वस्थ अर्ध-वयस्क लोगों में ये लहरें आम तौर से एक सेकेंड में १० ओसिलेशन के हिसाब से बनती हैं। यदि मस्तिष्क में कोई बीमारी हुई तो वैद्युतिक एनसेफालोग्राम में परिवर्तन हो जाता है। इसलिए, जहां गिल्टी होती है, वहां जैव तरंगे प्रायः नहीं उठतीं, जब कि इस के इर्दगिर्द उन का जोर औसत से अधिक रहता है तथा उनके ओसिलेशन मन्द होते हैं।

मस्तिष्क की जैव तरंगें व्यक्ति की स्नायविक अवस्था तथा उस की मानसिक चाप व्यक्त करती हैं। ध्वनि तथा प्रकाश के कारण होने वाली उत्तेजना के फलस्वरूप उन में परिवर्तन होता है। इसलिए जिस व्यक्ति की परीक्षा करनी होती है, उसे ऐसे अन्धेरे कमरे में रखते हैं जिस में ध्वनि का प्रभाव न हो तथा बिजली के हस्तक्षेप से भी मुक्त हो।

हाल में वैज्ञानिकों ने मस्तिष्क की जैव तरंगों के अध्ययन के लिए एक साथ २५ विस्तारकों ( ऐम्प्लीफायर ) का उपयोग करना आरंभ किया है। प्रत्येक विस्तारक में नियन ( गैस विशेष ) की बत्ती लगी रहती है जो प्रबल जैव तरंगे उठने पर जल उठती हैं। इस से मस्तिष्क के अनेक भागों के वैद्युतिक कार्यों का एक साथ ठीक-ठीक अध्ययन सम्भव हो गया है।

सोवियत संघ के असाधारण वैद्युतिक शरीर विज्ञानविद् प्रोफेसर एम. एन. लीवानोव तथा इञ्जीनियर वी. एम. अनान्येव ने एक नया यन्त्र तैयार किया है जिस से मस्तिष्क के पचास स्थानों को जैव तरंगों का एक साथ अध्ययन किया जा सकता है।

वैज्ञानिक मस्तिष्क के अनेक स्थानों की जैव तरंगों का अध्ययन करने का प्रयत्न करते हैं, क्योंकि इस से मस्तिष्क के कार्य के बारे में और भी पूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है। परन्तु अनेक विस्तारक लगाने से बहुत ही जटिल ढङ्ग के यन्त्र बनाने पड़ते हैं। लीवानोव और अनान्येव ने जैव तरंगों के अध्ययन का जो उपाय बतलाया है, उस में यन्त्र का ढांचा बहुत सरल हो जाता है। यह टेलीविजन के सिद्धान्त पर आधारित है और इसे किसी हद तक मस्तिष्क टेलीविज़र' माना जा सकता है। मस्तिष्क की जैव तरंगों को टेलीविज़र ग्रहण करता है और वे ५० प्रकाशमान बिन्दुओं के रूप में उस के पर्दे पर प्रतिफलित होती हैं। बिन्दु एक के बाद एक जल उठते हैं। यह कार्य बड़ी तेजी से होता है और दो बिन्दुओं के जलने के बीच का समय आखों से देखा नहीं जा सकता। पर्दे पर निरन्तर जलते बिन्दु दिखायी देते हैं। जिस व्यक्ति की परीक्षा की जाती है, उस के सिर इलेक्ट्रोड (विद्युत द्वार) लगाने से वैज्ञानिकों को यह ज्ञात हो जाता है कि मस्तिष्क के बाहरी भाग में जैव तरंगों के वितरण की क्या स्थिति है।

पर्दे के बिन्दुओं की चमक बराबर बदलती रहती है। यह चित्र मस्तिष्क के बाहरी भाग के उत्तेजित और अवरुद्ध स्थानों को ठीक-ठीक दिखला देता है, यह चित्र आई. पी. पावलोव के शब्दों में पच्चीकारी जैसा होता है। इस यन्त्र की सहायता से इसे ठीक-ठीक देखा जा सकता है। यन्त्र प्रकाशमान बिन्दुओं की चित्रकारी के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

द्वारा जिस में बिन्दु जलते और बुझ जाते हैं, स्पष्ट दिखला देता है।

जब एक बिन्दु अधिक चमकदार हो जाता है. तब इस के इर्दगिर्द के बिन्दु अधिक धुन्धले हो जाते हैं। यह पावलोव का व्याप्ति-मूलक नियम व्यक्त करता है, मस्तिष्क के एक भाग में उत्तेजना दूसरे स्थलों में अवरोध उत्पन्न करती है। बाहरी या भीतरी वातावरण से मस्तिष्क में आने वाले संकेतों से उत्तेजना होती है। स्नायविक उत्तेजना के साथ-साथ जैव तरंगें दिखलाई पड़ती हैं, अर्थात् मस्तिष्क के उत्तेजित भाग में ऋणात्मक बिजली चालू हो जाती है। इसी कारण से पर्दे पर बिन्दु तेज़ी से चमकने लगते हैं।

आदमी कक्ष में घुसता है और एक सुखद आराम कुर्सी पर बैठ जाता है। पचास बत्तियों वाले इलेक्ट्रोड उस के सिर से लगा दिए जाते हैं। कुछ समय उसे विश्राम करने दिया जाता है। तब अनुसन्धान करने वाला कर्मी उस से मन ही मन गणित का कोई प्रश्न हल करने को कहता है, जैसे दो अङ्कों का गुणा करिये। पर्दे पर एक के बाद एक बिन्दु चमक उठते हैं तथा दूसरे बिन्दु और भी धुन्धले रूप में चमकने लगते हैं। ज्यों ही सवाल हल हो जाता है, पर्दे पर बिन्दुओं का चमकना बन्द हो जाता है। पावलोव ने जब यह कहा था : 'अगर हम खोपड़ी के अन्दर देख सकें, और अगर मस्तिष्क मण्डल का वह स्थान जहां दृष्टि स्नायु की उत्तेजना होती है, चमक सके, तो हम विचार करते हुए सचेत मानव में यह देखेंगे कि उस के मस्तिष्क मण्डल में किस प्रकार एक अद्भुत ढंग से अनियमित प्रकाशमान वस्तु घूम रही है और वह निरन्तर अपना रूप बदल रही है, बाकी मस्तिष्क मण्डल में उस के चारों ओर कमोबेश काफी अन्धेरा है।' तो उस की प्रतिभा ने इस बात को पहले ही भांप लिया था।

'मस्तिष्क टेलीविज़र' की सहायता से अनु-



सन्धान कर्ता ऐसी महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं जैसे मस्तिष्क के बाहरी भाग में नियन्त्रित प्रतिफलनों के विकास को देख सकते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परीक्षक खरगोश के मस्तिष्क के ढांचे में पांच पंक्तियां देखते हैं जिन में हर एक में दस-दस चमत्कार बिन्दु हैं। परीक्षक खरगोश की आंखों के सामने बिजली की बत्ती जलाता है और तब बिजली की तरंग से उस के पंजे में उत्तेजना पैदा करता है। यह क्रिया बीसों बार दुहराई जाती है। अन्त में प्रकाश से खरगोश की पेशियों में उसी प्रकार सिकुड़न होती है जैसी बिजली से उस के पंजे में उत्तेजना पैदा करने से होती थी। इस प्रकार नियन्त्रित प्रतिफलन उत्पन्न किया जाता है। चमकते हुए बिन्दु बतलाते हैं कि खरगोश के दिमाग में यह प्रक्रिया कैसे होती है। प्रयोग के लिए पैदा की हुई गिल्टियों पर जैव तरङ्गों के साथ किए व्यावहारिक प्रयोग व्यावहारिक औषध के लिए महत्वपूर्ण हैं। खरगोश के मस्तिष्क में पैराफिन का एक टुकड़ा रखा गया। टेलीविज़र के पर्दे पर हम देखते हैं कि मस्तिष्क के अन्य भागों की अपेक्षा बनावटी गिल्टी के ठीक आसपास बिन्दु अधिक तेजी से चमक उठते हैं। इस प्रकार 'मस्तिष्क टेलीविज़र' रोग-क्षेत्र या निर्द्धारण सम्भव कर देता है और वह निदान का उपयोगी ढङ्ग हो सकता है।

इस यन्त्र की सहायता से लीवानोव और अनान्येव ने पशुओं के शरीर पर रेडियो सक्रिय पदार्थों के प्रभाव के सम्बन्ध में अनेक अनुसंधान किए हैं। इन प्रयोगों के परिश्रमों का फिल्म बनाया गया है। परमाणु शक्ति के शान्तिकालीन उपयोगों के सम्बन्ध में जेनेवा में हुए अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में यह फिल्म दिखायी गयी थी और इस ने विदेशों के वैज्ञानिकों में गहरी उत्सुकता उत्पन्न की। मस्तिष्क में उत्तेजना और अवरोध की प्रक्रियाएँ इतनी तेजी से होती हैं कि आदमी की आंख पर्दे पर बिन्दुओं के दमकने का साथ नहीं दे सकतीं। तब सिनेमा यन्त्र की आंख अनुसन्धानकर्ता की सहायता करने आती है। वे इन प्रक्रियाओं की फिल्म बनाने के बाद मस्तिष्क की जैव तरङ्गों का अध्ययन करते हैं। वैज्ञानिक धीमी गति से एक के बाद अन्य रील का परीक्षण करते हैं और बारी-बारी से दमकते हुए बिन्दुओं को देखते जाते हैं। टेलीविजन प्रविधि की उपलब्धियों को काम में लाकर ऐसा यन्त्र तैयार करना बिलकुल सम्भव है जो मस्तिष्क के हजारों स्थानों की जैव तरङ्गों को ग्रहण कर सके। इस समय जैव तरङ्गों का अध्ययन इलेक्ट्रोड्स को सीधे मस्तिष्क में लगा कर या परीक्षा किए जाने वाले व्यक्ति के मस्तक पर लगा कर ही किया जा सकता है। भविष्य में विशेष प्रकार के रादर सेटों के द्वारा जैव तरङ्गों को ग्रहण करना सम्भव हो जायगा। उन जैव तरङ्गों का अध्ययन असाधारण दिलचस्पी की चीज है जो मस्तिष्क के केवल बाहरी भाग से नहीं आतीं, बल्कि भीतरी परतों से आती हैं। मानव भावावेगों, अनियंत्रित प्रतिफलनों तथा भीतरी अङ्गों के कार्य के विधिवत् अध्ययन के लिए यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

'मस्तिष्क टेलीविजर' की सहायता से होने वाले अनुसन्धान, औषधि विज्ञान, मनोविज्ञान, अध्यापन विज्ञान तथा ज्ञान की दूसरी शाखाओं की अनेक समस्याओं के समाधान में सहायक होते हैं। उदाहरण के लिए, मस्तिष्क की विभिन्न बीमारियों का निदान करना तथा उन बीमारियों में औषधियों के प्रभाव और उपचार के ढङ्गों का अध्ययन करना सम्भव हो जायगा।

अच्छी कल्पना शक्ति वाला व्यक्ति आसानी से समझ सकता है कि भावी 'मस्तिष्क टेलीविज़र' में कैसी व्यापक सम्भावनाएँ निहित हैं। उन की रूप रेखा हम आज भी देख रहे हैं।

[ —सोवियत भूमि। ]

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# शान्तवर्ग के कुछ प्रसिद्ध शब्दों का सूक्ष्म भेद

श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

इस लेख में मैं शान्तवर्ग के निम्नलिखित प्रसिद्ध अंग्रेज़ी शब्दों के सूक्ष्म भेदों का विवेचन करते हुए उनके लिये उपयुक्त समानार्थक संस्कृत और हिन्दी के शब्दों को निश्चित करना चाहता हूँ।

Calm, tranquil, serene, placid, still, quiet, silent, noiseless, composed, collected.

ये शब्द शान्तवर्ग के हैं और प्रायः पर्याय-वाची ही समझे और इसी रूप में प्रयुक्त किये जाते हैं किन्तु वस्तुतः इन के अर्थों में अनेक सूक्ष्म भेद विद्यमान हैं, जिन का मैं संक्षेप से निर्देश पूर्ववत् Webster's Dictionary of Discriminated Synonyms तथा Standard Hand book of Synonyms, antonyms and Prepositions by James C. Fernald आदि प्रामाणिक अङ्गरेज़ी कोषों के आधार पर करूंगा और उन को दृष्टि में रखते हुए उचित समानार्थक संस्कृत और हिन्दी शब्दों को दिखाने का प्रयत्न करूंगा। सब से पहले मैं Calm शब्द को लेता हूँ।

Calm=शान्तः; शान्त

अङ्गरेज़ी के 'काम' शब्द के लिये संस्कृत और हिन्दी में शान्त शब्द का प्रयोग होता है जो सर्वथा उचित है। बङ्गला, आसामी, मराठी, गुजराती, कन्नड़, तेलुगु, मलयालम, तामिल आदि प्रादेशिक भाषाओं में भी शान्त शब्द का प्रयोग होता है इसलिये निर्विवाद होने के कारण इस विषय में अधिक विवेचन की आवश्यकता नहीं।

Tranquil=प्रशान्तः, प्रशान्त

अङ्गरेज़ी के 'ट्रैंङ्क्विल' शब्द का भी अर्थ प्रायः शान्त ही कर दिया जाता है और अनेक कोषों में उसे 'काम' का ही पर्यायवाची बतलाया गया है किन्तु उस का Calm (काम) से सूक्ष्म भेद वैब्स्टर् के उपर्युक्त पर्यायकोष में इन शब्दों में बताया गया है—

'Tranquil implies a more settled composure, a more inherent quiet than calm, with less suggestion of previous agitation overcome.'

(Webster's Dictionary of Discriminated Synonyms P. 139)

अर्थात् ट्रैंन्क्विल् शब्द में 'काम' शब्द की अपेक्षा अधिक स्थिर आन्तरिक शान्ति का भाव आता है और उस में पूर्व के किसी संघर्ष वा चञ्चलता पर विजय का निर्देश कम पाया जाता है। इस के लिये भी प्रायः प्रादेशिक भाषा कोषों में शान्त शब्द का प्रयोग पाया जाता है जिस के साथ निम्नलिखित अन्य शब्दों का भी उल्लेख है।

बंगला—शान्त, सुस्थिर, प्रशान्त।

आसामी शान्त, स्थिर, शान्तिपूर्ण।

कन्नड़—शान्त, अक्षुब्ध, निराकुल, एकरीतिय।

मराठी—स्वस्थ, स्थिर, अक्षुब्ध।

गुजराती शान्त, स्थिर, स्वस्थ।

तेलुगु—शान्तमैन (ऐन प्रत्यय है) चलन्त-लेनि, क्षोभमुलेनि (लेनि–निषेधात्मक)

मलयालम - प्रशान्तमाय (आय प्रत्यय है निश्चल-माय, स्तिमितमाय स्वस्थमाय, अक्षुब्ध-माय, शान्तात्मावाय।

हम ने उपर्युक्त सूक्ष्म भेद को दृष्टि में रखते हुए Tranquil के लिये 'प्रशान्त' शब्द को संस्कृत और हिन्दी में चुना है जिस का प्रयोग बंगला और मलयालम कोषों में भी पाया जाता है जैसे कि उपरिनिर्दिष्ट तालिका से स्पष्ट है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अब मैं अंग्रेज़ी के 'Serene' ( सीरीन् ) शब्द को लेता हूँ।

Serene=सौम्यः, स्तिमितः, सात्विकः

सीरीन् शब्द के विषय में वैब्स्टर् ने अपने कोष में लिखा है कि –

Serene suggests a lofty and Unclouded tranquillity'(P.139)

अर्थात् सीरीन शब्द एक उच्च और निरभ्र, स्वच्छ वा विशद शान्ति का निर्देश करता है। फ़ैर्नाल्ड ने अपने कोष में इस विषय में लिखा है कि—

'The Serene spirit dwells as if in the clear upper air, above all storm and shadow.'

(Standard Hand book Of Synonyms by Fernald P. 106 )

अर्थात् जब अङ्ग्रेजी में 'सीरीन् स्पिरिट्' शब्द का प्रयोग किया जाता है तो उस में यह भाव आता है कि जो मानो ऊपर की स्वच्छ वायु में आंधी और छाया से बिल्कुल ऊपर उठ कर निवास करती हो।

इन भावों को ध्यान में रखते हुए हम ने 'Serene' (सीरीन्) के लिये सौम्यः, सात्विकः, स्तिमितः इन शब्दों का संस्कृत और हिन्दी में प्रयोग उचित समझा है यद्यपि आकाश के साथ इस शब्द के प्रयोग के समय Serene sky के लिये निरभ्र या मेघमुक्त स्वच्छ आकाश शब्द का प्रयोग ही ठीक होगा। प्रादेशिक भाषा कोषों में से तेलुगु कोष में स्तिमित शब्द का प्रयोग सीरीन के समानार्थक के रूप में दिया है। उस को हिन्दी में कुछ कठिन समझा जाय तो सौम्य और सात्विक शब्दों का प्रयोग तो सुगमता से किया जा सकता है।

Placid=अक्षुब्धः, प्रसन्नचित्त, अनुद्विग्नः

अंग्रेज़ी के प्लैसिड् शब्द के विषय में वैब्स्टर् के कोष में लिखा है कि—

Placid connotes lack of excitement and suggests an unruffled and equable aspect or temper. (P,136)

अर्थात् प्लैसिड् शब्द उत्तेजना के अभाव को और अक्षुब्ध सम स्वभाव वा मनोवृत्ति को सूचित करता है। इस के लिये प्रादेशिक भाषा कोषों में निम्न प्रकार के शब्द पाये जाते हैं—

बं०—शान्त, धीर, प्रशान्त, अक्षुब्ध।
आ०—शान्त, धीर।
म०—शान्त, सौम्य।
गु०—सन्तोषी, शान्त, सौम्य।
क०—सौम्य, शान्त, प्रसन्न।
ते०—शान्तमैन, नेम्मदिगल।
मल०—शान्तमाय, प्रसन्नमाय, निराकुलमाय, प्रसन्नचित्तमाय,समाधानमुल्ल्, प्रसन्नशीलमुल्ल्।

प्लैसिड् के ऊपर निर्दिष्ट विशेष भावों को दृष्टि में रखते हुए हम ने उस के लिये प्रसन्नचित्त और अक्षुब्ध इन दो शब्दों का प्रयोग उचित समझा है। इन में से 'अक्षुब्ध' का बंगला के कोषों में और 'प्रसन्नचित्त' और प्रसन्नशील का मलयालम के कोषों में विशेष निर्देश है।

Peaceful=शान्तिपूर्ण, पूर्णशान्तिमय।

अंग्रेज़ी का 'पीसफ़ुल' शब्द सुप्रसिद्ध है जिस के विषय में वैब्स्टर् के कोष में लिखा है कि—

Peaceful implies repose or the attainment of undisturbed tranquillity.' (P. 136)

अर्थात् 'पीसफ़ुल' इस शब्द में विश्रान्ति अथवा विक्षोभ-रहित शान्ति की प्राप्ति का भाव

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आता है। अतः इस के लिए शान्तिपूर्ण अथवा पूर्ण शान्तिमय शब्दों का संस्कृत और हिन्दी में प्रयोग सर्वथा उचित है। प्रादेशिक भाषाओं के कोषों में भी प्रायः इन्हीं दो अथवा इन से मिलते जुलते शब्दों का ही प्रयोग पाया जाता है। बंगला में शान्तिमय, आसामी में शान्तिपूर्ण, कन्नड़ में शान्तस्थितिय, तेलुगु में शान्तमैन, मलयालम में शान्तमाय, तामिल में शान्तमान ये शब्द एक ही प्रकार के हैं, प्रत्ययादि का स्वल्प भेद है। तेलुगु में एक सुन्दर शब्द 'कलहविमुख' इसी अर्थ में दिया गया है जिसे ग्रहण किया जा सकता है।

Still=निश्चल नीरव

'स्टिल्' के विषय में वैब्स्टर् के कोष में लिखा है कि—

'Still applies to that which is motionless or at rest, often with the further implication of hush or absence of sound. ( P. 788)

अर्थात् स्टिल् में निश्चलता और प्रायः निश्शब्दता का भाव आता है। इस के लिये निश्चल नीरव शब्द का प्रयोग करना उचित है।

Quiet=अचञ्चलः, निरुपद्रवः, विश्रान्तिपूर्णः

अङ्गरेज़ी के कायट् शब्द में जो भाव आता है उस का निर्देश वैब्स्टर् के विवेकपूर्ण पर्यायकोष में इन शब्दों में किया गया है।

'Quiet like still may imply absence of perceptible motion or sound, or of both, but it carries stronger suggestions of lack of excitement, agitation or turbulence, and of deep tranquillity, serenity restfulness or repose.' ( P. 788 )

अर्थात् कायट् शब्द में 'स्टिल्' की तरह स्पष्टगति, शब्द या दोनों की रहितता का भाव आ सकता है किन्तु इस में उत्तेजना चञ्चलता और उपद्रव के अभाव तथा गम्भीर प्रशान्तता, सौम्यता और विश्रान्ति का प्रबलतर निर्देश है।

इन भावों को ध्यान में रखते हुए हम ने अपने सर्वोपयोगी कोष में उस के लिये संस्कृत और हिन्दी में अचञ्चल, निरुपद्रव और विश्रांतिपूर्ण शब्दों का प्रयोग उचित समझा है। प्रादेशिक भाषाओं के कोषों में शांतवर्ग के इन शब्दों का सूक्ष्म भेद विवेचन न करते हुए प्रायः सब शब्दों को पर्यायवाची माना गया है तथापि बंगला में कायट् के लिये प्रशांत, उपद्रवशून्य, निस्तब्ध, आसामी में शांतनीरव, निस्तब्ध, कन्नड़ में संज्ञावाची कायट् के लिये विश्रांति, निश्चिन्तते मनःशांति, मलयालम में अव्याकुलमाय, मृदुवाय, अचण्डमाय, अनुपमसाय इत्यादि शब्दों का प्रयोग पाया जाता है जो उपर्युक्त भावों को ही अधिकतर प्रकट करते हैं।

Silent=नीरवः, मौनपूर्णः, Noiseless=कोलाहल रहितः, निश्शब्दः।

साइलेन्ट् और नौयज़लैस् ( Noiseless ) इन शब्दों के विषय में वैब्स्टर् ने अपने कोष में बताया है कि—

'Silent and noiseless differ from the other words of this group frequently applied to motion, movement, stir or the like, that is unaccompanied by sound. Silent usually carries more positive suggestions of stillness or quietness whereas noiseless usually connotes absence of commotion or of sounds of acti-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

vity or movement.' ( Webster's Dictionary of Synonyms P. 788 )

अर्थात् साइलेन्ट् और नौयज़लेस इन का इस वर्ग के अन्य शब्दों से भेद इस बात में है कि इन में प्रायः ऐसी गति वा चेष्टा का भाव आता है जिस के साथ शब्द न मिला हुआ हो। 'साइलेन्ट' में प्रशांतता और अचञ्चलता वा विश्रांति का प्रबलतर निर्देश होता है जब कि Noiseless में क्षोभ तथा क्रियाशीलता वा गति के अभाव की प्रधानता होती है। इस भेद को दृष्टि में रखते हुए हम ने Silent के लिये नीरव तथा मौनपूर्ण इन शब्दों को और Noiseless के लिये कोलाहलरहित और निश्शब्द इन शब्दों को संस्कृत और हिन्दी में चुना है।

Composed=शांतचित्तः

अङ्गरेज़ी के कम्पोज़्ड शब्द के विषय में जेम्स फ़र्नाल्ड ने अपने सुप्रसिद्ध कोष में लिखा है कि--

'One is composed who has subdued excited feeling'(Standard Hand book of Synonyms by James fernald P. 106 )

अर्थात् कम्पोज़्ड शब्द का प्रयोग उस मनुष्य के लिये होता है जिस ने अपने आवेश वा उत्तेजनापूर्ण भाव को जीत लिया और इस प्रकार जो शांतचित्त हो गया हो। अतः इस के लिये हम ने 'शांतचित्त' शब्द के प्रयोग को संस्कृत और हिन्दी में उपयुक्त समझा है। बंगला, आसामी, गुजराती, मराठी, कन्नड़ तेलुगु, मलयालम इन प्रादेशिक भाषाओं में Composed के लिये शांत शब्द का उल्लेख किया गया है।

Collected=समाहितचित्तः, स्थिरचित्तः

अङ्गरेज़ी के Collected (कौलेक्टेड् ) शब्द के विषय में जेम्स फ़र्नाल्ड ने अपने उपरिनिर्दिष्ट कोष में लिखा है--

'He is collected when he has every thought, feeling or perception awake and at command.' ( Standard Handbook of Synonyms by James fernald P. 107 )

अर्थात् उस व्यक्ति के लिये Collected ( कौलेक्टेड ) शब्द का प्रयोग होता है जो प्रत्येक विचार, अनुभूति और वेदना को अपने निरीक्षण और अधीनता में रखता हो। इस के लिये प्रादेशिक भाषा कोशों में निम्न शब्दों का प्रयोग पाया जाता है—

बं०--स्थिर, स्थिरचित्त, शान्त
म०--स्थिरचित्त, स्वस्थचित्त
क०--स्थिरचित्तावुल्ल, मनःक्षोभेयिल्लद, समाहित, शान्त।
ते०--collectedness=मनः स्थैर्यमु।

Collected के अन्य शब्दों से सूक्ष्मभेद और उस की प्रधान भावना को ध्यान में रखते हुए हम ने उस के लिये संस्कृत और हिन्दी में 'समाहितचित्त और स्थिरचित्त' इन शब्दों को चुना है जिन का बंगला, मराठी, कन्नड़ आदि प्रादेशिक भाषाओं में भी प्रयोग होता है।

इस शान्तवर्ग के प्रसिद्ध अङ्गरेज़ी शब्दों के इस सूक्ष्म भेद विवेचन को मैं यहां समाप्त करता हूँ। आशा है विद्वान् इससे लाभ उठायेंगे।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# भारत की मौलिक एकता का आधार

## श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

अंग्रेजों ने गत २०० वर्षों में भारतवर्ष के सम्बन्ध में जो वर्णनात्मक और विवेचनात्मक लेख लिखे, उनकी तान प्रायः इस बात पर टूटती थी कि वस्तुतः भारत कोई एक देश नहीं है। इस देश को देख कर वे इस परिणाम पर पहुँचते थे कि न यहां एक धर्म है और न एक भाषा। न एक वेश है और न एक से रीति रिवाज। इस आधार पर उनकी सम्मति बन गई थी कि भारतीय एकता एक वहम मात्र है। वे लिखते थे कि न भारत कभी एक रहा और न कभी रहेगा, वह केवल दासता की जंजीरों से बंधा रह कर ही एक बना रह सकता है। जिस दिन उस पर से दासता की जंजीरें खुल जायेंगी, एकता का ढोंग समाप्त हो जायगा और देश टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।

अनेक अंग्रेज इतिहास-लेखकों ने भारत की मौलिक अनेकता पर पुस्तकें लिखी थीं। जिन्हें भारत से कुछ हमदर्दी थी. ऐसे अंग्रेज़ लेखक भी यह लिख कर सन्तोष कर लेते थे कि भारत का भला ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा बन कर रहने में ही है। अंग्रेजों के इस प्रकार के प्रचार से बहुत से अंग्रेजी शिक्षा में निष्णात भारतवासी भी यही मानते और लिखते थे कि भारत का और इङ्गलैंड का संयोग विधाता की कृपा से हुआ है। वे भी मानने लगे थे कि भारत न कभी एक हुआ और न होगा, क्योंकि उसे एकता में पिरोने वाला कोई सूत्र नहीं है।

अंग्रेजों का वैसा सोचना उचित भी था। उन्हें स्वयं अपनी सफलता पर आश्चर्य हो रहा था। वे भारत में व्यापार करने के लिये प्रार्थी बन कर आये और मालिक बन गये। भारत पर विजय प्राप्त करने में उन्हें अधिक कष्ट नहीं हुआ, क्योंकि वे भारतवासियों को आपस में ही लड़ा कर विजयी होने में सफल हो गये। यह कहना गलत है कि अंग्रेजों ने हिन्दुस्तानियों को जीता। इतिहास बतलाता है कि हिन्दुस्तानियों ने ही हिन्दुस्तान को जीत कर अंग्रेजों के अर्पण किया। ऐसी दशा में अंग्रेजों का यह सोचना स्वाभाविक ही था कि हिन्दुस्तान कोई एक देश नहीं है। वह जातियों का, धर्मों का, भाषाओं का और रीति रिवाजों का एक जमघट है, जिसे भौगोलिक परिस्थितियों ने एक कोठरी में बन्द कर दिया है। अपनी अद्भुत सफलता का कारण तलाश करने पर वे इसी परिणाम पर पहुँच सकते थे कि भारतवासी दासता के लिये ही पैदा हुए हैं। क्योंकि वह एक राष्ट्र नहीं, अतएव वे स्वतन्त्र भी नहीं हो सकते।

अंग्रेज तो अपनी आसान सफलता पर आश्चर्यित हो कर उपर्युक्त परिणाम पर पहुंचे और अंग्रेजी पढ़े लिखे हिन्दुस्तानी मानसिक दासता के कारण उन के अनुगामी हो गये। मैसमिरेजम इसी को कहते हैं। लगभग डेढ़सौ साल तक भारतवासियों के मस्तिष्क पर अंग्रेजों के मैसमिरेजम का असर रहा। वे अंग्रेजों के मन से ही सोचते थे और अंग्रेजों की जुबान से ही बोलते थे।

भारतवर्ष की मौलिक अनेकता की कल्पना छिन्न-भिन्न हो गई, जब २० वीं शताब्दी के आरम्भ में राष्ट्रीयता की लहर देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फैल गई, अङ्गरेजों को और उनके शिष्यों को यह देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि पेशावर से लेकर रामेश्वरम् तक और पश्चिमी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

घाट से लेकर पूर्वी घाट तक एक ही ज्वाला जल उठी। जो लोग यह समझे बैठे थे कि भारत में एकता कभी हो ही नहीं सकती, वह देश के सब प्रान्तों के निवासियों को भिन्न भाषाओं में, परन्तु एक ही स्वर में देश की स्वाधीनता का नारा लगाते हुए सुन कर अचम्भे में आ गये। अंग्रेज सरकार यह देख कर घबरा उठी कि जिन कल्पनाओं के आधार पर वह भारत की गद्दी पर आराम से बैठी हुई थी, वे टूटती जा रही हैं। अंग्रेज सरकार ने और अंग्रेज जाति ने अपनी प्रभुता को स्थिर रखने का भरसक प्रयत्न किया। साम दाम दण्ड भेद सभी उपायों से काम लिया; परन्तु वह राष्ट्रीय एकता की ज्वाला न बुझी, जिस से अन्त में अंग्रेजी साम्राज्य को भारत की सीमाओं से निकल जाना पड़ा।

इस ऐतिहासिक परम्परा पर गम्भीरता से विचार करें, तो एक प्रश्न उत्पन्न होता है। यदि भारत एक था तो वह पराधीन क्यों हुआ? और यदि वह एक नहीं था तो एक ही भावना से प्रेरित होकर स्वाधीन कैसे हो गया? इसे हम इतिहास के तत्वज्ञान का एक महत्वपूर्ण प्रश्न कह सकते हैं।

इस प्रश्न का उत्तर ढूंढने के लिये हमें भारत के पूरे इतिहास पर एक सरसरी दृष्टि डालनी पड़ेगी। भारत सदा से एक रहा है। आज से ५००० वर्ष पहले महाभारत में व्यास मुनि ने भारत का वर्णन निम्नलिखित श्लोक से आरम्भ किया था—

अत्र ते कीर्तयिष्यामि वर्षं भारत भारतम्,
प्रियमिन्द्रस्य देवस्य मनोर्वैवस्वतस्य च।

अब यहां मैं स्वर्ग के राजा इन्द्र और पृथ्वी के राजा वैवस्वत मनु के प्यारे भारतवर्ष का वर्णन करता हूँ। इसके आगे व्यास मुनि ने अपने समय से पूर्व भारतवर्ष में हुए अनेक चक्रवर्ती राजाओं के नामों का उल्लेख किया है, जिसका अभिप्राय यह है कि उस समय छोटे छोटे अनेक राजाओं के होते हुये भी भारतवर्ष एक ही देश था।

विष्णुपुराण का निम्नलिखित श्लोक भी उसी परम्परा का द्योतक है।

गायन्ति देवाः किल गीतकानि
धन्यास्तु ते भारतभूमि भागे।
स्वर्गापवर्गास्पदहेतुभूते,
भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्।

विष्णु पुराण।

'देवता भी स्वर्ग में यह गीत गाते हैं, धन्य हैं वे लोग जो भारत भूमि में उत्पन्न हुए हैं। वह भूमि स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है, क्योंकि वहां स्वर्ग और अपवर्ग दोनों की साधना हो सकती है। देवता लोग भी भारत भूमि में उत्पन्न होने की कामना रखते हैं, जिससे वे अपवर्ग प्राप्त करने का उपाय कर सकें।'

उस समय की परम्परा का अधिक स्पष्टीकरण वायु पुराण में किया गया है। उसमें भारत की सीमाओं का निम्नलिखित वर्णन है—

उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमवद्दक्षिणं च यत्,
वर्षं यद् भारतं नाम यत्रेयं भारती प्रजा।

वायु पुराण।

जो हिमालय के दक्षिण और समुद्र के उत्तर में है उस वर्ष 'देश' का नाम भारत है। उसकी प्रजा भारतीय प्रजा कहलाती है। वायु पुराण में 'भारत' शब्द की जो व्याख्या की है, वह भी अङ्कित करने योग्य है। वायु पुराण का श्लोक है—

भरणाच्च प्रजानां वै मनुर्भरत उच्यते,
निरुक्त वचनाच्चैव वर्षं तद् भारतं स्मृतम्।

प्रजा का भरण करने के कारण मनु की एक संज्ञा भरत भी है। इसी निर्वचन के कारण मनु का देश भारत कहा जाता है। 'भारतवर्ष' शब्द

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की यह व्युत्पत्ति भी सम्भव है।

ऊपर दिये सब उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता कि प्राचीन समय में भारत की मौलिक एकता स्वतः सिद्ध मानी जाती थी। उसे सिद्ध करने के लिये किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं थी। अनेक छोटे-छोटे राज्य अथवा गणतंत्रों के रहते भी यह देश एक था और इस लिये भारतीय राष्ट्र भी एक था। उसी का नाम 'भारती प्रजा' था।

महाराज युधिष्ठिर ने दिग्विजय करने के पश्चात् जो राजसूय यज्ञ किया, उस में युधिष्ठिर का अभिनन्दन करते हुए भीष्म पितामह ने कहा था—

एतदृढ गुरुभार भारतं,
वर्षमद्य तव वर्तते वशे।

यद्यपि यह पद माघ काव्य में आया है, तो भी इसे हम इस देश की परम्परा का सूचक मान सकते हैं। भीष्म पितामह कहते हैं, 'हे साम्राज्य का बोझ उठाने वाले राजन आज यह सारा भारत तुम्हारे वश में है।'

समय बदल गया और परिस्थितियां भी बदल गई। राज्यों के और उन पर राज्य करने वाले वंशों के नामों में भी परिवर्तन आ गया। परन्तु इस देश की मौलिक एकता में परिवर्तन नहीं आया, जब पारसी लोगों का इस देश से सम्पर्क हुआ तो उन्होंने सिन्धु नदी के नाम पर इस देश को हिन्तुस्तान कहना आरम्भ किया। वह नया नामकरण भी सारे देश का ही हुआ। यूनानियों ने सिकन्दर के समय भारत में आकर उसे इन्डोस नाम से पुकारा। वह भी सारे देश का ही नाम रक्खा गया। मुसलमानों ने भी पारसियों के रक्खे हुए नाम को अपनी भाषा में प्रयुक्त किया। मुसलमान काल में भी 'हिन्दुस्तान' शब्द से सारे देश की ही सूचना मिलती थी। मुगल बादशाह अपने काल में इसी प्रयत्न में लगे रहे कि किसी तरह सारे हिन्दुस्तान के हाकिम बनें और अन्त में भारत की अनेकताका राग अलापने वाले अंग्रेजों ने भी सारे देश पर प्रभुत्व कायम करके ही दम लिया। इङ्गलैंड का बादशाह इण्डिया का सम्राट कहलाता था। जिस का अभिप्राय यह था कि भारत की मौलिक एकता को अंग्रेज भी स्वीकार करते थे।

इस देश की मौलिक एकता का सब से पुष्ट प्रमाण यही है कि चक्रवर्ती राजा आये और चले गये, युगों पर युग बीत गये, नये-नये विजेताओं ने इस एकता को कई बार तोड़ने-फोड़ने का यत्न किया, परन्तु भारत की एकता नष्ट न हुई। नाम भी बदल गये, परन्तु नामी एक ही रहा। अनेक खंडों से बना होने पर भी भारत अखंड रहा। अब भी अँग्रेजों ने भारत छोड़ते हुये भारतवासियों को जो सब से अन्तिम उपहार दिया है, वह देश के विभाजन का है। हमें राजनीति के धुरन्धर पंडित यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि यह विभाजन अमिट है, भारत और पाकिस्तान कभी एक न होंगे, भारत का शरीर हमेशा के लिये दो भागों में बंट गया है, उसके एक होने का स्वप्न लेना व्यर्थ है। ऐसे अदूरदर्शी लोगों का उत्तर इतिहास के पृष्ठों में पड़ा हुआ है। भारतवर्ष एक था, एक है और एक रहेगा। उस की मौलिक एकता में बाधायें डाली जा सकती हैं, परन्तु वह न कभी नष्ट हुई और न भविष्य में नष्ट होगी।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# मधु द्वारा चिकित्सा

डा० एदवार्द कान्देल एम. एस-सी.

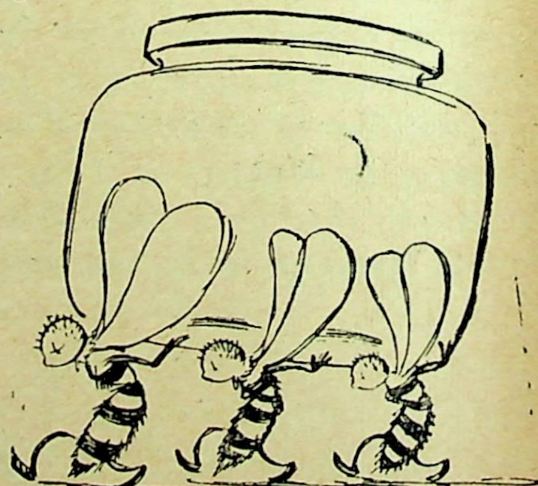
हाल ही में मैं मास्को के एक चिकित्सालय में गया हुआ था और वहां रोगियों को एक प्रकार की दवा देते देखा। प्रायः दवाओं का स्वाद कड़ूवा होता है, पर इस गाढ़े, सुगन्धित, फीके अम्बर रंग के द्रव पदार्थ को रोगीगण बड़ी प्रसन्नता से गटक जाते थे। यह दवा थी मधु



जिसे साधारण-जन बहुत दिनों से बीमारियों में प्रयोग करते आ रहे हैं। इस के उत्कृष्ट निरामयकारी गुणों के बारे में मानवजाति को शताब्दियों से पता है। चिरकाल से ही तथा प्राचीन मिस्र की चित्रलिपियों में शहद के गुणकारी प्रभावों का वर्णन किया गया है। प्राचीन यूनान की दंत-कथाओं में देवताओं के भोजन एम्ब्रोसिया की, जो मधु से ही बनता था, भूरी-भूरी प्रशंसा की गयी है। प्राचीन काल के महान् हकीम तथा 'चिकित्साशास्त्र के पिता' हिप्पोक्रेटीस १०७ वर्ष की अवस्था तक जिये। वे सदा मधु का सेवन करते थे और उसी से अनेक बीमारियों का भी इलाज करते थे।

सारे इतिहास में रूस अपने शहद के लिए जो दुनिया में सर्वश्रेष्ठ है, प्रसिद्ध रहा है। प्राचीन वीर-गाथाओं में जन-कथाओं के युद्ध में आहत होने वाले नायकों को 'सौ वर्ष पुराने' मधु से चंगा किये जाने के चमत्कारों का प्रसंग है। इतिहासकार नेस्टर के जो ११ वीं शताब्दी में हुआ था, ऐतिहासिक विवरणों में हम रूस में मधुमक्खीपालन में प्राप्त उच्चस्तरीय प्रवीणता का वर्णन पाते हैं। उस प्राचीन काल में ही रूसी मधु का भिन्न-भिन्न देशों को विस्तृत रूप से निर्यात होता था।

मधु एक असाधारण रूप से संश्लिष्ट सत है जिसे हजारों मधुमक्खियाँ लाखों फूलों और पौधों से--इन में अनेक बूटियाँ भी होती हैं--तैयार करती हैं। यह सत ऐसे ढंग से तैयार होता है कि मानवनिर्मित कोई प्रयोगशाला उस की नकल नहीं कर सकती। मधु तैयार करने में मधुमक्खियों के अध्यवसाय पर वास्तव में दाँतों-तले अंगुली दबानी पड़ती है। मधुमक्खियों का एक परिवार एक ग्रीष्म ऋतु के अन्दर १५० किलोग्राम (१ किलोग्राम — लगभग १ सेर) तक मधु एकत्र कर लेता है। तो भी एक ग्राम मधु

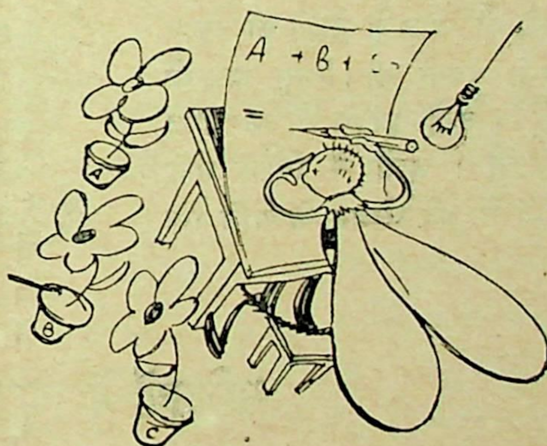


CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तैयार करने के लिए एक मधुमक्खी को कई हजार फूलों का अमृत रस संचय करना पड़ता है। यद्यपि जनसाधारण की चिकित्साविधि में प्राचीन काल से ही मधु का उपयोग होता रहा है, आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान अपेक्षाकृत हाल में आकर इस के निरामयकारी गुणों में दिलचस्पी लेने लगा है। सोवियत शासनकाल में वैज्ञानिकों ने मानव-शरीर पर मधु के प्रभाव का सर्वाङ्गीण अध्ययन किया और उस से विभिन्न रोगों की चिकित्सा कर आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त किये। सभी जानते हैं कि खाने के सामान अधिक दिन रखने से खराब हो जाते हैं। पर क्या कोई ऐसा भी खाद्य पदार्थ है जो मान लीजिए हजार वर्ष तक बिना सड़े रह सकता है? हाँ, एक ऐसा भी खाद्य-पदार्थ है। अधिक दिन नहीं, यही सन् १९२३ की बात है कि वैज्ञानिकगण मिस्र के फराओ तूतेन-खामेन के पिरामिड में घुसे। वहाँ उन्हें एक पात्र मधु मिला जो ३३०० वर्षों में भी नहीं बिगड़ा था। इस का कारण यह है कि मधु में मूल्यवान कीटाणुनाशक गुण हैं। उस में अनेक रोगजनक कीटाणुओं (हीमोलिथिक स्ट्रेप्टोकोकी, धनुष-टंकार के कीटाणु तथा अन्य) और विभिन्न प्रकार के शरीर-छत्रकों को मार डालने की सक्रिय क्षमता है। उपर्युक्त तथ्य को साधारण इलाज न सुनने वाले क्लेदरसयुक्त ज़ख्मों और जलने के घावों की मधु-चिकित्सा का आधार बनाया गया। मधु की पट्टी लगा देने से घाव और व्रण शीघ्रता से साफ हो गए और भरने लगे।

उस चिकित्सालय में, जिस के प्रधान प्रोफेसर उदिन्त्सेव हैं, फुस्फुसीय क्षय के रोगियों के एक दल की मधु-द्वारा चिकित्सा की गयी। महीने भर के दौरान प्रत्येक रोगी को दिन भर में १००-१५० किलोग्राम मधु दिया जाता था। रोगियों का वज़न बढ़ गया, खाँसी घट गयी, तबियत पहले से कहीं अच्छी लगने लगी और रक्तरचना में सुधार आया। प्रसंगवश कह दें कि मधु का रक्त रचना पर बड़ा गुणकारी प्रभाव पड़ता है। उस से रक्त के हेमोग्लोबिन तत्व में प्रचुर वृद्धि हो जाती है।

पेट के अन्दर के व्रणों का मधु से इलाज करने पर आशाप्रद फल प्राप्त हुए हैं। मधु से फालतू अम्ल-पित्त में, जो पेट के व्रण की विशेषता है, कमी आ जाती है और वह एक मूल्यवान पथ्य-सम्बन्धी पदार्थ है। मास्को-पोषक-आहार-संस्था द्वारा प्रस्तुत पथ्य की एक विशेष नियमावलि के अनुसार पेट के व्रण के रोगियों को प्रतिदिन ६०० ग्राम मधु दिया गया। इस से दर्द, मिचली और अम्ल-पित्त बहुत जल्दी दूर हो गए।



सभी जानते हैं कि मधु कई प्रकार का होता है। बाह्य रूप में ही नहीं, स्वाद में भी इन में भिन्नता होती है। जिन पौधों से मधुमक्खी मधु-संचय करती है उन्हीं के नामों के अनुसार उसके विविध प्रकारों के भी नाम होते हैं। हम नींबू, बबूल, मेथी, अखरोट तथा अन्य प्रकार के शहदों के नामों से परिचित हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सोवियत वैज्ञानिक डा० इओइरिश एम० एस-सी० ने यह गवेषणा आरम्भ की कि क्या मनुष्य के आदेश पर मधुमक्खियों से विभिन्न प्रकार के मधु तैयार कराये जा सकते हैं ? क्या मधु की तैयारी में विशिष्ट औषधीय पदार्थों और विटामिनों का समावेश कराया जा सकता है ?

अनेक प्रयोगों के बाद इस वैज्ञानिक ने औषधीय बहु विटामिनयुक्त मधु प्राप्त करने की एक नवीन द्रुत प्रणाली का पता लगाया। कई वर्षों के कार्य के फलस्वरूप ८३ नए प्रकार के मधु प्राप्त किये गए। इन विभिन्न प्रकारों में भिन्न-भिन्न औषधियां रहती हैं, विटामिन ए, बी और सी तथा एटोफेन, थाइरोइडिन, आदि।

नयी प्रणाली का सार क्या है ? पहले मधुमक्खियों को फूले पौधों की खोज में मीलों की उड़ान करनी पड़ती थी। किन्तु अब यों कहें कि उन्हें 'कृत्रिम भोजन' प्राप्त होता है। छत्तों में विशेष मीठे घोलों से भरे भोजन के आले रखे रहते हैं। घोलों में विभिन्न पदार्थ—अण्डा, दूध, फल और सब्ज़ी के रस तथा विभिन्न औषधीय द्रव्य मिला दिये जाते हैं। नवीन द्रुत प्रणाली द्वारा उपलब्ध बहु विटामिनीय अथवा एक विटामिन वाले मधु के नमूने उच्चस्तरीय विटामिन सक्रियता प्रदर्शित करते हैं।

नवीन प्रणाली के फलस्वरूप जो हमारे देश में अधिकाधिक व्यापक होती जा रही है—हम वर्ष में कभी भी, यहां तक कि जाड़े में भी, वांछित रचना वाला मधु प्राप्त कर सकते हैं। इस से मधु के औषधीय उपयोग की नयी सम्भावनाएं उपस्थित हो गयी हैं।





# सब्ज़ियों में विटामिन युक्त पदार्थ

देसी सब्ज़ियों और फलों में विटामिन युक्त पदार्थों की खोज करते हुए नयी दिल्ली के लेडी इरविन कालिज की प्राध्यापिका डा० कुमारी पुरी ने पता लगाया है कि पोइ, मेथी, पोदीने, बथुए, चौलाई, सरसों, सोये और पालक के सागों में दो महत्वपूर्ण विटामिन 'पी' और 'के' तथा लोहा, चूना और फास्फोरस होता है। चुकन्दर, बैंगन, धनिये, प्याज, शकरकन्दी, गोभी, आंवले, मटर, बन्दगोभी और कश्मीर तथा कुल्लु के सेब में भी विटामिन युक्त पदार्थ होते हैं। यह खोज इस कारण और भी महत्व रखती है कि विटामिन 'पी' हृदय रोगों और रक्तचाप में गुणकारी रहता है।

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# कन्नौज और उज्जैन में ३००० वर्ष पुरानी बस्तियां

भारत सरकार के पुरातत्व विभाग ने हाल में भारत के दो प्राचीन नगरों कन्नौज (उत्तर-प्रदेश) और उज्जैन (मध्यभारत) की खुदाई करायी। उस से पता चलता है कि पिछले ३००० वर्षों से आज तक इन दोनों स्थानों में बराबर मनुष्यों की बस्ती रही है।

महाभारत और अन्य संस्कृत ग्रंथों में कन्नौज का कौशस्थली, कान्यकुब्ज गाधिपुर और कुसुमपुरा आदि नामों से उल्लेख आता है। चीनी यात्रियों ने भी अपने यात्रा वृत्तान्तों में कन्नौज का वर्णन किया है। सम्भवतः हर्षवर्धन के समय कन्नौज उत्तर भारत में भारतीय संस्कृति का सब से बड़ा केन्द्र था।

काफी गहरी खुदाई करने पर जो मिट्टी के बर्तन मिले हैं, वे सम्भवतः प्रारम्भिक आर्य काल के हैं। इसी प्रकार के बर्तन उत्तर भारत के अन्य स्थानों में, जैसे अहिच्छत्र, हस्तिनापुर, कुरुक्षेत्र, इन्दरपत (दिल्ली), मथुरा आदि में भी पाये गये हैं। इस खुदाई में जो सामग्री मिली है, वह सम्भवतः १००० ई० पू० से ७०० ई० पू० की है।

यहां पर काले पालिश वाले बर्तन भी मिले हैं जो उत्तर भारत के अन्य सभी स्थानों में भी पाये जा चुके हैं। ये बर्तन छठी शती ई० पू० से दूसरी शती ई० पू० के हैं। इन से पता चलता है कि उस समय से आज तक यहां बराबर मनुष्य रहते आये हैं।

उसी टीले पर, थोड़ा और ऊपर, कुशन काल की भी वस्तुएं मिली हैं। कुशन काल और ईसवी सम्वत् समकालीन हैं। यहां जो वस्तुएं मिली हैं, उन में मिट्टी की मूर्तियां भी हैं। ऐसी ही मूर्तियां अहिच्छत्र, कौशाम्बी आदि में भी मिली हैं। यहां मकानों के जो अवशेष मिले हैं उन से पता चलता है कि उस समय के लोग पक्की ईटों के सुन्दर मकानों में रहते थे। यद्यपि यहां प्रारम्भिक मध्य युग के मनुष्यों की बस्ती के कोई निश्चित चिह्न नहीं मिले तो भी ब्राह्मण देवताओं की पत्थर पर खुदी हुई सुन्दर मूर्तियों से अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय भी यहां की जनता बहुत समृद्ध रही होगी।

उस काल में कन्नौज पहले गुर्जर-प्रतिहार वंश की और बाद में गहड़वाल वंश की राजधानी रहा। उत्तर-पश्चिम की ओर से भारत पर जितने आक्रमण हुए हैं, उनका कन्नौज हमेशा लक्ष्य रहा।

खुदाई की ऊपरी सतह में मिले लखौरी ईटों के बने हुए मकानों के अवशेषों और मध्यकालीन पालिश किये हुए मिट्टी के बर्तनों से पता चलता है कि मुस्लिम काल में भी यहां बस्ती थी।

## उज्जैन के दुर्ग

उज्जैन की खुदाई में दूर-दूर तक फैले हुए दुर्ग मिले हैं जिन्हें वहां के निवासियों ने ६०० ई० पू० या उस से कुछ पहले बनवाया होगा।

उज्जैन का, जिस का पहला नाम उज्जयनी था, पुराणों से लेकर कालीदास के ग्रन्थों तक में विस्तृत वर्णन मिलता है। कालिदास के मेघदूत में उज्जैन के ऊंचे-ऊंचे भवनों का जिक्र आता है। कहा जाता है कि यहीं पर भगवान शिव ने एक शक्तिशाली दैत्य का वध किया था। उज्जैन अशोक के अवन्ती प्रान्त की राजधानी थी। यहां की दीवार सम्भवतः नगरवासियों ने नगर को सिपरा या क्षिप्रा नदी की बाढ़ से बचाने के लिए बनायी होगी। ऐसा लगता है कि उस समय इस नदी में अक्सर बाढ़ आती रहती थी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यहां सब से पुरानी बस्ती ६०० ई० पू० या उस से कुछ पहले की मिली है। ऐसा प्रतीत होता है कि बाद की बस्तियों को सिपरा नदी की बाढ़ से बराबर हानि पहुँचती रही।

यद्यपि उज्जैन में मालवा की कांस्य पाषाण संस्कृति के पालिश किये हुए बर्तन नहीं मिले, पर पत्थर की कुछ ऐसी छोटी-मोटी चीजें मिली हैं, जिन से उज्जैन और मालवा की कांस्य पाषाण संस्कृति में समानता प्रकट होती है। यहां पर अभी और खुदाई की आवश्यकता है और केन्द्रीय पुरातत्व विभाग की खुदाई शाखा यहां अपना काम शुरु करने वाली है।




कन्नौज और उज्जैन की खुदाई से प्राप्त

---

- १९५५-५६ में जूट के माल के निर्यात से भारत ने १ अरब १८ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित की।
- भारत में प्रतिवर्ष लगभग ४,३६,५६,००० मन आलू पैदा होता है।
- जिला अस्पतालों में दन्त चिकित्सा के लिए दूसरी आयोजना में १ करोड़ ५१ लाख रुपये की व्यवस्था की गयी है। यह रकम राज्य सरकारों को सहायतार्थ दी जायगी।
- १९५५ में भारत में १,२०,००० रुपये की कागज बनाने की मशीनें तैयार की गयीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# वर्षस्य सर्गा महयन्तु भूमिम्

श्री रामनाथ वेदालङ्कार

ग्रीष्म प्रचण्ड हो रहा था। भूमि तवा सी तप रही थी। ताल-सरोवर सूख गये थे। वृक्ष-वनस्पति कुम्हला रहे थे। किसान भूमि को खाली छोड़े हाथ पर हाथ धरे बैठे थे। तापतप्त देश-वासियों के मुखों से पुकार उठ रही थी--

समुत्पतन्तु प्रदिशो नभस्वतीः
समभ्राणि वातजूतानि यन्तु।
महऋषभस्य नदतो नभस्वतो
वाश्रा आपः पृथिवीं तर्पयन्तु॥

'दिशाएं उमड़ पड़ें, मानसून से लाई हुई मेघ-घटायें आकाश में छा जायें। गड़गड़ाते बादलों की रिम-झिम करती हुई वर्षाएं पृथिवी को तृप्त करें।'

समीक्षयन्तु तविषाः सुदानवो
अपां रसा ओषधीभिः सचन्ताम्।
वर्षस्य सर्गा महयन्तु भूमिं
पृथग् जायन्तामोषधयो विश्व-
रूपाः॥

'दानी बादल अपनी बहार दिखायें। ओषधियाँ रसों से भर जायें। वर्षा की धाराओं से भूमि लहलहा उठे। चारों ओर रंगबिरंगी ओषधियाँ दृष्टिगोचर होने लगें।'

आशामाशां विद्योततां,
वाता वान्तु दिशो दिशः।
मरुद्भिः प्रच्युता मेघाः,
सं यन्तु पृथिवीमनु॥

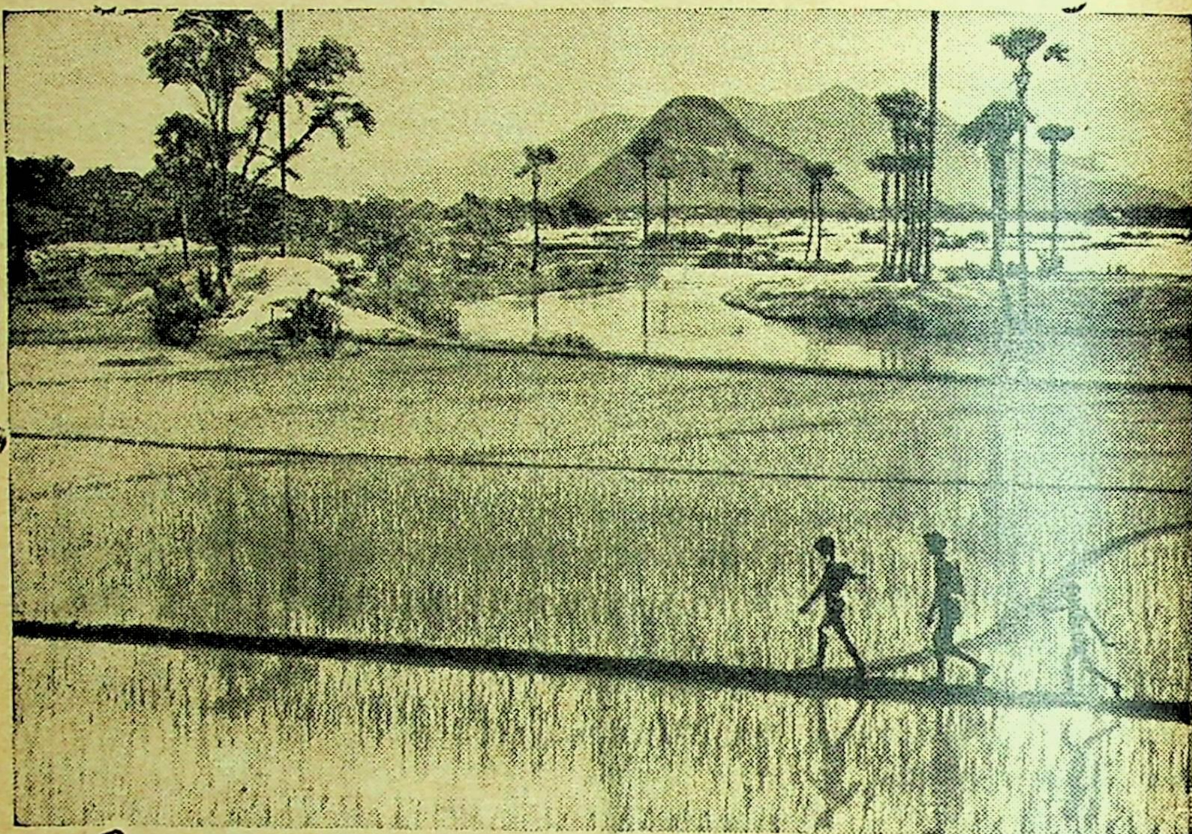
दिशा-दिशा में बिजलियाँ चमकें, दिशा-दिशा में शीतल हवाएँ चलें। वायुओं से प्रचालित मेघ आ-आ कर भूमि पर बरसें।'

कोटि-कोटि कण्ठों से निकली हुई पुकारें सफल हुईं। जलभरी मानसून पवनें प्रवाहित हो पड़ीं। गगन में घटाएं उमड़ने लगीं। मानवों की आशाभरी दृष्टि ऊपर उठी। प्रथम वर्षा की



गगन में घटाएँ उमड़ने लगीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



खेत पानी से भर गये । कृषक-बाल आनन्द मनाने लगे

फुहार ने भूमि का आलिंगन किया । किसानों ने हल उठाये । बैलों के कन्धों पर जुए सज गये । ट्रैक्टर भूमि से खिलवाड़ करने लगे । खेतों में जुताई आरम्भ हो गई । मकई, ज्वार, बाजरा आदि के बीजों ने भूमि की शरण ली । शनैः-शनैः फसलें अंकुरित हो कर बढ़ चलीं । एक बार फिर मानवकण्ठ की पुकार सुनाई दी—

महान्तं कोषमुदचा निषिञ्च
स्यन्दन्तां कुल्या विषिताः पुरस्तात् ।
घृतेन द्यावापृथिवी व्युन्धि
सुप्रपाणं भवत्वघ्न्याभ्यः ॥

'हे पर्जन्य ! अपने विशाल कोश को उठाये-उठाये फिर । उससे भूमि को सिंचित कर दे। चारों ओर नहरें निर्बन्ध हो कर प्रवाहित होने लगें। जल से द्यावापृथिवी को आर्द्र कर दे । गौ आदि पशुओं के पीने के लिए चारों ओर पानी ही पानी हो जाये ।'

देखते ही देखते वर्षा की झड़ी लग गई । प्यासी धरती की तृषा शान्त हुई । खेत पानी से भर गये । वन-उपवन, तरु-गुल्म, गिरि-पर्वत सब वर्षा से स्नात हो गये । भूमि पर घास का मखमली गलीचा बिछ गया । सब ओर हरियाली ही हरियाली दिखाई देने लगी । पत्ती-पत्ती प्राण से पुलकित हो उठी । पुष्पित वनस्पतियों से भीनी-भीनी गन्ध उठने लगी । वृष्टि से स्नात हुई ओषधियाँ प्राण से संवाद करने लगीं—हे वृष्टि-जन्य प्राण ! तूने हमारी आयु को बढ़ा दिया है, तूने हम सब को सुरभित कर दिया है;

अभिवृष्टा ओषधयः प्राणेन समवादिरन् ।
आयुर्वै नः प्रातीतरः सर्वा नः सुरभीरकः ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जब वर्षा की एक एक धार के साथ भूमि पर प्राण की वृष्टि होने लगी तब पशुजगत् भी प्रमुदित हो उठा—अहा, अब तो हमारी मौज हो जायेगी, अब तो हम उत्सव मनायेंगे;

यदा प्राणो अभ्यवर्षीद् वर्षेण पृथिवीं महीम्।
पशवस्तत् प्रमोदन्ते महो वै नो भविष्यति॥

मेंडक भी प्रसन्नता को अपने अन्दर सीमित न रख सके। मौनव्रतधारी ब्राह्मणों के समान जो अब तक चुपचाप भूमि के अन्दर सोये पड़े थे वे अपने आनन्द को टर्र-टर्र ध्वनि द्वारा व्यक्त करने लगे,

संवत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः।
वाचं पर्जन्यजिन्वितां प्र मण्डूका अवादिषुः॥

अब तो किसानों की भी प्रसन्नता का पार नहीं। उन के खेत लहलहाने लगे हैं। वे खेतों में पहुँच उन का निरीक्षण कर रहे हैं, और फसल से होने वाली उत्पत्ति का अनुमान कर मन ही मन आनन्दमग्न हो रहे हैं। उन के बालक नग्नवदन हो वर्षास्नान का आनन्द लेते हुए उत्सव मना रहे हैं।

हे प्राणदायिनी वर्षा! हम भी तेरा अभिनन्दन करते हैं।

लहलहाते नारिकेल तरुओं से शोभित मलाबार तट



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# योगिराजश्रीकृष्णस्मरणम्

**पं० धर्मदेवो विद्यामार्तण्डः**

यो योगिराजः किल कर्मयोग-
मार्गस्य नेतृत्वमलंचकार ।
सद्धर्मसंरक्षणदत्तचित्तः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥१॥

ज्ञानी सुवीरः शुभगायको यो
गुणाकरः शाश्वतधर्मगोप्ता ।
तथाप्यहङ्कारलवेन हीनः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥२॥

परोपकारार्पितजीवितो यः
कंसादिदुष्टारिगणस्य हन्ता ।
गीतामृतं पाययिता प्रशस्तं
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥३॥

सन्ध्याग्निहोत्रादिककृत्यजातं
सन्निष्ठया यो विदधे ऽप्रमत्तः ।
देवेशभक्त्याधिगतप्रसादः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥४॥

आत्मा ऽविनाशी ह्यजरोऽमरो ऽयं
मृत्युस्तु वासःपरिवर्त एव ।
इत्यादितत्त्वं प्रदिशन् यथार्थं
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्य ? ॥५॥

भूत्वेह लोके गुणसागरो ऽपि
यः पादपूजां विदधे द्विजानाम् ।
आसीत् सुहृद् यो धनवर्जितानां
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥६॥

विप्रे सुशीले विनयोपपन्ने
तथा श्वपाके शुनि गोगजेषु ।
समानदृष्टिं य इहादिदेश
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥७॥

आसीत् क्षमावान्धृतिमान् नयज्ञो
यो राजनीतौ कुशलोऽद्वितीयः ।
त्राता सतां पापिदलस्य नेता
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥८॥

क्लैब्यं प्रपन्नं युधि पार्थ शूरं
विसृज्य चापं विकलं स्थितं तम् ।
विबोध्य धर्मं विदधे सुवीरं
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥९॥

योगस्य यज्ञस्य सुखस्य शान्ते-
स्त्यागस्य तत्त्वं सुरसम्पदश्च ।
ज्ञानस्य भक्तेस्तपसो दिशन् नः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥१०॥

जातो ऽमरो दिव्यगुणैः स्वकीयै-
र्मतो जनैर्यो भगवानिवेह ।
यज्ञान्वितं जीवितमादधानः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः? ॥११॥

यदीयशिक्षा प्रददाति मोदं
स्फूर्तिं नवोत्साहबलं सुधैर्यम् ।
श्रद्धान्वितानां मनसां स सम्राट्
कृष्णो महात्मा न हि केन वन्द्यः ?॥१२॥

यो घातकायाशिष एव दत्वा
चकार शान्त्या परलोकयात्राम् ।
बभूव मुक्तः प्रभुतत्त्ववेत्ता
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः?॥१३॥

संस्थाप्य साम्राज्यमधर्मनाशं
कर्तुं तथा धर्मविवर्धनाय ।
येन प्रयत्नो विहितो ऽभिवन्द्यः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः?॥१३॥

यो मोहनः स्वीयगुणैः प्रशस्तैः
स्थितो जनानां हृदयेषु नित्यम् ।
निष्कामकर्माण्यकरोत्सदा यः
कृष्णो महात्मा स न केन वन्द्यः ?॥१५॥

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# साहित्य-परिचय

[ समालोचना के लिये प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियाँ आनी आवश्यक हैं—सम्पादक ]

### 'धर्मचक्र' बुद्ध-जयन्ती विशेषाङ्क

सम्पादक—प्रो० नारायण केशव भागवत सुगत—निधान १५ वां रास्ता प्लॉट नं० ४६३, खार, बम्बई २१. मूल्य १), पृष्ठ संख्या ४० + ४० = ८०, पत्र का वार्षिक मूल्य ५)।

श्री प्रो० नारायण केशव भागवत एम० ए० गत ३७ वर्षों से सेन्ट ज़ेवियर कालेज बम्बई में पाली-विभाग अध्यक्ष हैं। वे पाली तथा बौद्धमत विषयक अपनी विद्वत्ता के लिये सम्पूर्ण भारत तथा विदेशों में ख्याति प्राप्त हैं। उनके सम्पादकत्व में धर्मचक्र नामक अंग्रेज़ी, मराठी, हिन्दी मासिक पत्र बम्बई से प्रकाशित होता है जिसका बुद्ध जयन्ती विशेषाङ्क हमारे सन्मुख है। इसमें अंग्रेज़ी, मराठी और हिन्दी में प्रधानतया महात्मा गौतम बुद्ध और उन की शिक्षाओं के विषय में प्रो० मेन्डौन्का, पूना के प्रो० जोशी, हौलेण्ड के कैप्टैन मुल्डर, श्री कारखनीस, श्री भोरटके, कुमारी मीनाक्षी एम० ए०, श्री धर्मानन्द कौसंबी, प्रो० शिवसहाय पाठक, श्री सुमेरुचन्द दिवाकर शास्त्री, राष्ट्रसंत तुकडोजी महाराज, प्रो० जयदेव बन्धु विद्यावाचस्पति तथा श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड के विद्वत्ता और भावपूर्ण लेख तथा कुछ संस्कृत और हिन्दी की अच्छी कविताएं प्रकाशित हुई हैं। बौद्ध ग्रन्थों से स्वाध्यायार्थ मङ्गलसुत्त, मेत्तसुत्त, भारद्वाजसुत्त आदि भी उधृत किये गये हैं, जिनसे महात्मा बुद्ध की सदाचारादि विषयक शिक्षाओं पर प्रकाश पड़ता है। श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड के 'क्या महात्मा बुद्ध नास्तिक थे?' इस मौलिक लेख में बौद्ध ग्रन्थों से अनेक स्पष्ट प्रमाण दे कर यह सिद्ध किया गया है कि महात्मा बुद्ध नास्तिक न थे प्रत्युत ब्रह्म, वेद, आत्मा पुनर्जन्मादि में विश्वास रखने वाले आर्य सुधारक थे जिन्होंने जन्मानुसार जातिभेद यज्ञों में पशुहिंसादि अवैदिक और दुष्ट प्रथाओं का खंडन किया है। इस लेख को पढ़ कर प्रसिद्ध आर्यधर्म प्रेमी दानवीर सेठ जुगल किशोर बिरला ने, श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति को लिखा कि "क्या महात्मा बुद्ध नास्तिक थे? शीर्षक पं० धर्मदेव जी का लेख श्रेष्ठ और प्रमाण तथा तथ्यपूर्ण है। यथार्थ में बुद्ध बड़े से बड़े आर्य ( हिन्दू ) महात्मा थे।" इत्यादि।

प्रो० भागवत महात्मा बुद्ध विषयक इस वास्तविक दृष्टिकोण का 'धर्मचक्र' द्वारा प्रचार करना चाहते हैं अतः हम इसका विशेष रूप से अभिनन्दन करते हैं।

### कहत शिवानन्द

लेखक श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती। प्रकाशक—योग वेदान्त आरण्य विश्वविद्यालय, शिवानन्द नगर, ऋषिकेश। आकार २० × ३० = १६, पृष्ठ संख्या ७२, प्रथम संस्करण १९५६, मूल्य १)।

### शिवानन्दोपनिषद् दशकम्

लेखक तथा प्रकाशक वही। पृष्ठ संख्या २५१। मूल्य २॥)।

श्री स्वामी की एक अंग्रेज़ी पुस्तक का यह हिन्दी रूपान्तर है। १९३७ से अब तक इस के सात संस्करण हो चुके हैं। यही तथ्य इस पुस्तक की लोकप्रियता को बताता है।

प्रथम पुस्तक भी एक अंग्रेज़ी पुस्तक का हिन्दी अनुवाद है। स्वामी जी ने इस में सत्य, सेवा, श्रद्धा ध्यान, चरित्र आदि पर अपने विचार प्रगट किये हैं। सद्गुणों को विकसित करने के मार्ग बताये हैं। —रामेश बेदी।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल में केन्द्र के शिक्षा-सचिव

१३ अगस्त को भारत सरकार के शिक्षा-मंत्रालय के प्रधान सचिव श्रीयुत सैयदेन महोदय गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय में पधारे। श्रद्धानन्द अतिथि-मन्दिर पर कुलपति श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति तथा अन्य गुरुजनों ने आप का पुष्पावलियों से स्वागत किया। कुलपति जी तथा अधिकारियों के साथ आप ने गुरुकुल के समस्त विभागों का कोई तीन घण्टे तक परिभ्रमण कर के बारीकी से अवलोकन किया।

आप के सम्मान में वेद-भवन में कुलवासियों की एक सभा समवेत हुई। कुलपति जी ने मान्य अतिथि का स्वागत करते हुए गुरुकुल की भावना, स्थापना तथा उस के कार्य का संक्षिप्त इतिहास बताया।

श्रीयुत सैयदेन साहब ने अपने भाषण में बताया कि इस शताब्दी के प्रारम्भ में भारत म शिक्षा विषयक प्रयत्नों के लिए अनेक संस्थायें प्रारम्भ हुई जिन में शान्ति-निकेतन, गुरुकुल काँगड़ी, काशी विद्यापीठ और जामिया मिल्लिया की सेवाएं अपना विशेष स्थान रखती है। इन संस्थाओं ने शिक्षा के भारतीय आदर्शों की ओर सर्वसामान्य जनता का व शिक्षा-विज्ञों का ध्यान आकृष्ट किया। समय की गति को पहिचानते हुए इन संस्थाओं ने उदारतापूर्वक नवीन विज्ञानों और विद्याओं को भी अपने पाठ्यक्रम में समावेश करते हुए नवीन और प्राचीन शिक्षा-विधि के समन्वय का सुन्दर नमूना पेश किया।

आगे आप ने कहा कि गुरु को केन्द्र में रख कर शिष्य की अन्तरात्मा में चरित्र और ज्ञान की ज्योति प्रबुद्ध करने की प्रक्रिया ही गुरुकुल शिक्षा का रहस्य है। इस मौलिक भावना को अभी हमें अपनी शिक्षा विधि में ठीक प्रकार से लागू करना होगा। गुरुकुलीय शिक्षा-विधि में विद्यमान व्यक्तित्व का विकास, हृदय की उदारता और चरित्र का निर्माण, ऐसे शुभ तत्व हैं जिन का हमें अपनी समस्त शिक्षा संस्थाओं में समावेश करना होगा। साथ ही हमें अपनी तालीम में रूहानी (आत्मिक) उन्नति का भी ख्याल रखना होगा। अंग्रेज दार्शनिक बर्ट्रान्ड रसल ने जीवन में दो प्रकार के आनन्द बताये हैं। एक है निर्माण-मूलक आनन्द और दूसरा भौतिक वस्तुओं के अधिकार से प्राप्त होने वाला आनन्द। बच्चों के चरित्र-निर्माण द्वारा तथा ललित कलाओं द्वारा हमें निर्माण-प्रधान आनन्द प्राप्त होता है। हमने अपने जीवन में इस प्रकार के निर्माण-मूलक आनन्द को ही महत्व देना चाहिए। भौतिक वैभव के विलास तथा जमीन जायदाद के अधिकार से प्राप्त होने वाला आनन्द नगण्य है। कल्याणकारी राज्य के निर्माण के लिए हमें सेवाव्रत को तथा रचना-मूलक आनन्द को स्वीकार करना होगा। कविवर इक्बाल की प्रसिद्ध कविता नया शिवालय का अवतरण प्रस्तुत करते हुए मान्य मेहमान ने प्रेम और उदारता की भावना को समृद्ध करने की प्रेरणा की।

इस के पश्चात् सायंकाल चार बजे मान्य अतिथि महोदय ने गुरुकुल विश्वविद्यालय में नवीन छात्रावास का शिलान्यास करते हुए आधुनिक भारत के शिक्षा के इतिहास में गुरुकुल काँगड़ी की देन के विषय में अपने निम्नलिखित उद्गार सम्मति पुस्तक में अङ्कित किए।

'इस ऐतिहासिक शिक्षा प्रतिष्ठान को देखने की मेरी चिर प्रतिज्ञात आकांक्षा आज पूर्ण हुई है। शिक्षाविज्ञों की कई पीढ़ियों के निष्काम पुरुषार्थ और प्रेम का यह एक स्मारक है। उन शिक्षाविज्ञों ने इस शिक्षणालय पर अपना विशिष्ट

( शेष ६४वें पृष्ठ पर )

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल समाचार

## ऋतु-रंग

सारा अगस्त मास बारिशों से आक्रांत रहा। अत्यधिक वर्षा से जनता ऊब गई थी। अंशतः खेतों पर भी उस का कुप्रभाव पड़ने लगा था। परन्तु सितम्बर के प्रारम्भ होते-होते वर्षाएँ सर्वथा बन्द हैं। धूप-छाँह का खेल तो होता ही रहता है, पर जब आकाश निर्मेघ हो जाता है तब तीव्र ताप पड़ता है। उस पर भी यदि पवन का प्रवाह रुक जाय, तो वातावरण असह्य मालूम पड़ने लगता है। भाद्र के बेचैनी उपजाने वाले सायंकाल अपना पूरा प्रभाव दिखाते रहे हैं। रात के पिछले प्रहर शनैः २ शीतल होते जा रहे हैं। जिन्हें देख कर मालूम होता है कि शरत् काल अति समीप आ पहुँचा है। ऋतु बदलते ही कुछ प्रवासी पखेरू उड़ चले हैं और शरत् कालीन पंखी आने लगे हैं। कोयल और पपीहे की पुकारें समाप्त हो रही हैं और शरद् दूत खंजनों की चहल-पहल प्रारम्भ हो रही है। पोखरों में कुँई और उद्यान कुञ्जों में चमेली महक उठी है। प्रभात में परिजात प्रसूनों की बहार प्रारम्भ हो चुकी है। ऋतु वैषम्य प्रारम्भ हो चुका है तथापि साधारण तथा कुलवासियों का स्वास्थ्य अच्छा है।

## थाईलैण्ड के मान्य यात्री

थाईलैण्ड के नेवल अटैची श्री यू. सुन्दर-सीमा ट्रैडकमिश्नर श्री नोवा और थाई दूतावास के अधिकारी पी फांको आदि मान्य अधिकारियों ने गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय का अवलोकन किया। आप की मण्डली में वहाँ के भिक्षु सोम-यशोधर तथा भिक्षुणी नंदमाला भी थी। गुरुकुल की अतिथि पुस्तक में आपने अङ्कित किया है कि गुरुकुल भारतवर्ष का एक बढ़िया विद्याकेन्द्र है। स्मरण रहे कि थाईदेश के भिक्षु श्रीयुत् थतधम्म (स्थितधर्म) पिछले दो मास से गुरुकुल में रह कर संस्कृत और हिन्दी भाषा का अध्ययन कर रहे हैं—गुरुकुल के छात्र आप से पाली भाषा पढ़ते हैं।

इन के सिवाय पिछले दिनों मुम्बई की महापौरसभा (कार्पोरेशन) की अध्यक्षा (मेयर) श्रीमती सुलोचना मोदी जे. पी. और डाक्टर मोदी महाशय गुरुकुल में पधारे।

## अभिनन्दन

माने हुए इतिहासज्ञ और कुल के प्रतिभा-वान स्नातक श्री जयचन्द्र विद्यालङ्कार को उन की 'भारतीय कृष्टि (संस्कृति) का खाका' नामक मौलिक और खोजपूर्ण पुस्तक पर ८००) रुपये का पुरस्कार पञ्जाब सरकार ने प्रदान किया है। समस्त कुलवासी इस उपलब्धि पर अपने विद्वान् कुलबन्धु का सप्रेम अभिनन्दन करते हैं।

## गोरक्षा पर १२००) रुपये का पुरस्कार

ठाकुरदत्त शर्मा धर्मार्थ ट्रस्ट देहरादून ने निश्चय किया है कि हमारी विषय सूची के अनुसार गोरक्षा पर हिन्दी या अंग्रेजी में पुस्तक छपा कर जो विद्वान सम्वत् २०१४ की वैशाखी तक हमारे पास भेजेंगे उन सभी विद्वानों की वे पुस्तकें हम अपनी पुरस्कार समिति के पास भेज देंगे। उन में से समिति जिस एक पुस्तक को पुरस्कार योग्य निर्धारित करेगी उस के मान्य लेखक को एक प्रमाण-पत्र के साथ ठाकुरदत्त शर्मा धर्मार्थ ट्रस्ट १२००) रुपये पुरस्कार देगा। विषय सूची पत्र लिख कर मंगवाई जा सकती है।

—शङ्करदेव विद्यालङ्कार।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

### बेंत के नमूने

वन-अनुसन्धान-शाला, देहरादून की माइनर फौरेस्ट प्रोडक्ट्स शाखा में बेंत पर हाल ही में अन्वेषण कार्य आरम्भ हुआ है इसी शाखा में वर्षों तक अनुभव प्राप्त किए हुए एक विद्वान् अधिकारी श्री अनूकूल चन्द्र दे ने इस विषय का विशेष रूप से अध्ययन तथा अन्वेषण आरम्भ किया है। गुरुकुल संग्रहालय को इन्होंने अभी बेंत के कुछ नमूने भेंट किए हैं। देहरादून, मद्रास, त्रावणकोर, बम्बई आदि स्थानों में पैदा होने वाली बेंतों के नमूनें से ज्ञात होता है कि भारत में सर्वोत्तम प्रकार का बेंत पैदा हो सकता है। परन्तु हम हरसाल लगभग १० लाख का बेंत मलाया, इन्डोनेशिया, सिंगापुर आदि से आयात कर रहे हैं। विदेशों से आने वाला सब बेंत सिंगापुरी बेंत के नाम से आयात होता है। भारत में बेंत की पचास जातियाँ व उपजातियाँ उपलब्ध होती हैं। हमारे देश में बेंत की अधिकतम लम्बाई ३०० फीट होती है। अन्वेषकों के रिकॉर्ड में अधिकतम लम्बाई ६००० फीट बताई गई है। यह रिकॉर्ड बोर्नियो का है। हमें आशा करनी चाहिए कि हमारा देश भी शीघ्र ही लाखों ही नहीं करोड़ों रुपयों की बेंत पैदा करने में समर्थ हो सकेगा। फर्नीचर, छड़ी, खेल का सामान, हत्थे, टोकरियाँ आदि सैकड़ों प्रकार की चीज़ों में बेंत का प्रयोग संसार में सर्वत्र किया जा रहा है। हमारे देश में इस की पैदावार बढ़ने के साथ-साथ कुटीर उद्योगों में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जावेगा। हमारे आर्थिक ढांचे को एक नया रूप देने में बेंत अवश्य ही महत्वपूर्ण उपज सिद्ध होगी।

—रामेश बेदी।

---

## गुरुकुल में केन्द्र के शिक्षा-सचिव

( ६२ वें पृष्ठ का शेष )

प्रभाव डालते हुए, इस की एक निजी परम्परा स्थापित की है। इस शिक्षापीठ के अपने ही अभीप्सित आदर्श हैं। उन आदर्शों में संस्था ने कभी जड़ता नहीं आने दी है। प्रत्युत यह नवीन विचारों और प्रवृत्तियों को ग्रहण करने के लिए उद्यत रही है। संस्था की यह भावना स्पृहणीय है। मैं आशा करता हूँ, यह संस्था नवीन एवं अधिक उन्नत पद्धतियों के लिए स्फूर्ति देती रहेगी। मैं संस्था की सर्वप्रकार की सफलता चाहता हूँ।'



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# स्वाध्याय के लिए चुनी हुई पुस्तकें

## वैदिक साहित्य

ईशोपनिषद्भाष्य — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति २)
वेद का राष्ट्रिय गीत — श्री प्रियव्रत ५)
वेदोद्यान के चुने हुए फूल — श्री प्रियव्रत ५)
वरुण का नौका, २ भाग — श्री प्रियव्रत ६)
वैदिक विनय, ३ भाग — श्री अभय २), २), २)
वैदिक वीर-गर्जना — श्री रामनाथ ॥|=)
वैदिक-सूक्तियां — ,, १॥)
आत्म-समर्पण — श्री भगवद्दत्त १॥)
वैदिक स्वप्न-विज्ञान — ,, २)
वैदिक अध्यात्म-विद्या — ,, १।)
वैदिक ब्रह्मचर्य गीत — श्री अभय २)
ब्राह्मण की गौ — श्री अभय ॥|)
वेदगीताञ्जलि ( वैदिक गीतियां ) — श्री वेदव्रत २)
सोम-सरोवर, सजिल्द, अजिल्द — श्री चमूपति २), १॥)
वैदिक-कर्त्तव्य-शास्त्र — श्री धर्मदेव १॥)
अग्निहोत्र — श्री देवराज २।)

## संस्कृत ग्रन्थ

संस्कृत-प्रवेशिका, १, २. भाग — ॥|), ॥|=)
साहित्य-सुधा-संग्रह, १, २, ३ बिन्दु — १।), १।), १।)
पाणिनीयाष्टकम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध — ७). ७)
पञ्चतन्त्र ( सटीक ) पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध — २). २॥)
सरल शब्दरूपावली — ।|=)

## ऐतिहासिक तथा जीवनी

भारतवर्ष का इतिहास ३ भाग — श्री रामदेव ६)
बृहत्तर भारत (सचित्र) सज़िल्द, अजिल्द — ७), ६)
ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार, २ भाग — ॥|)
अपने देश की कथा — श्री सत्यकेतु १|=)
हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के अनुभव — ॥)
योगेश्वर कृष्ण — श्री चमूपति ४)
सम्राट् रघु — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति १।)
जीवन की झांकियां ३ भाग — ,, ॥) ॥). १)
जवाहरलाल नेहरू — ,, १।)
ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित्र — ,, २)
दिल्ली के वे स्मरणीय २० दिन — ,, ॥)

## धार्मिक तथा दार्शनिक

सन्ध्या-सुमन — श्री नित्यानन्द १॥)
स्वामी श्रद्धानन्द जी के उपदेश, तीन भाग — ३॥)
आत्म-मीमांसा — श्री नन्दलाल २)
वैदिक पशुयज्ञ-मीमांसा — श्री विश्वनाथ १)
अथर्ववेदीय मन्त्र-विद्या — श्री प्रियरत्न १।)
सन्ध्या-रहस्य — श्री विश्वनाथ २)
जीवन-संग्राम — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति १)

## स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें

आहार (भोजन की जानकारी ) — श्री रामरच्च ५)
आसव-अरिष्ट — श्री सत्यदेव २॥)
लहसुन:प्याज — श्री रामेश वेदी २॥)
शहद ( शहद की पूर्ण जानकारी ) — ,, ३)
तुलसी, दूसरा परिवर्द्धित संस्करण — ,, २)
सोंठ, तीसरा ,, — ,, १॥)
देहाती इलाज, तीसरा संस्करण — ,, १)
मिर्च ( काली, सफेद और लाल ) — ,, १)
सांपों की दुनियां, (सचित्र) सजिल्द — ,, ५)
त्रिफला, तीसरा संवर्द्धित संस्करण — ,, ३।)
नीम:बकायन (अनेक रोगों में उपयोग) — ,, १।)
पेठा : कद्दू (गुण व विस्तृत उपयोग) — ,, ॥)
देहात की दवाएं, सचित्र ॥|) — बरगद ॥|)
स्तूप निर्माण कला — श्री नारायण राव ३)
प्रमेह, श्वास, अर्शरोग — १।)
जल चिकित्सा — श्री देवराज १॥|)

## विविध पुस्तकें

विज्ञान प्रवेशिका, २ भाग — श्री यज्ञदत्त १)
गुणात्मक विश्लेषण ( बी. एस्. सी. के लिए ) — १)
भाषा-प्रवेशिका ( वर्धायोजनानुसार ) — ॥|)
आर्यभाषा पाठावली — श्री भवानी प्रसाद १॥)
आत्म बलिदान — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति २)
स्वतन्त्र भारत की रूप रेखा — ,, १॥)
जमींदार — ,, २)
सरला की भाभी, १, २ भाग — ,, २), ३॥)

प्रकाशन मन्दिर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार ।


CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# वर्षा ऋतु के रोगों के लिए उपयोगी औषधें

## अमृतारिष्ट

वर्षा ऋतु में होने वाले ज्वर की उत्तम औषध है। इस से पुराना ज्वर और बढ़ी हुई तिल्ली भी दूर होती है। मूल्य १) पात्र।

## पायोकिल

दांतों का हिलना, चीसना व मसूढ़ों से खून व पीप आने को रोकने की एकमात्र औषध है। इस के प्रयोग से मुख की दुर्गन्ध दूर होती है और दांत स्वच्छ व उज्ज्वल हो जाते हैं।

मूल्य १।।) छोटी शीशी।

## सुखसार

अचानक होने वाले रोग उल्टी, दस्त, सिचली, पेट दर्द व अन्य उदर विकारों में शीघ्र ही लाभ देने वाली औषध है। इस की एक शीशी घर में अवश्य रखिए। मूल्य ।।=) शीशी।

## रक्त शोधक

खून की शुद्धि के लिए उत्तम है। इस से त्वचा सम्बन्धी रोग फोड़े, फुन्सी, दाद, खाज आदि रोग ठीक हो जाते हैं। शरीर को निरोग बनाता है। मूल्य ३) शीशी।

## सर्पगन्धा वटी

उन्माद, अपस्मार, अनिन्द्रा तथा ब्लडप्रैशर आदि रोगों में इस का प्रयोग लाभदायक सिद्ध हुआ है।

मूल्य २।।) शीशी।

## स्वादिष्ट चूर्ण

यह अत्यन्त रोचक और पाचक, दीपक चूर्ण है। भोजन के बाद सेवन करने से मुख का का स्वाद ठीक रहता है और भोजन जल्द पचता है।

मूल्य ।।।) छटांक।

## कर्पूरासव

वमन, अतिसार, पेचिश, दांत दर्द तथा हैज़े की तुरन्त ही लाभ देने वाली औषध है।

मूल्य १।=) औंस।

## दाद का मरहम

मच्छरों के काटने व रक्त की अशुद्धि के कारण वर्षा ऋतु में दाद, खाज आदि की शिकायतें होती हैं। इन रोगों में दाद का मरहम शीघ्र ही लाभ पहुंचाता है।

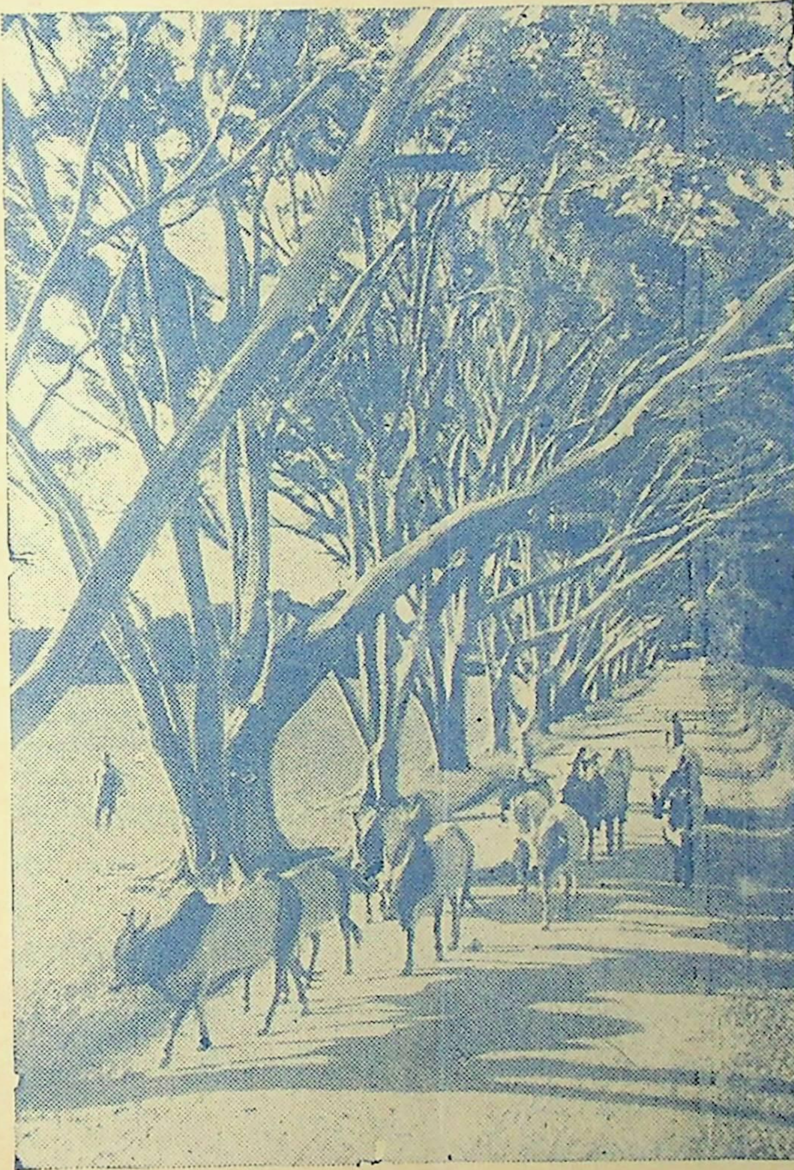
मूल्य ।।=) शीशी।

**गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार।**

मुद्रक : श्री रामेश वेदी, गुरुकुल मुद्रणालय, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।
प्रकाशक : मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल पत्रिका



उज्वल वृक्षावली


वर्ष ९
अङ्क १



भाद्रपद
२०१३


गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

DIGITIZED C-DAC 2005-2006

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## गुरुकुल-पत्रिका

पूर्णाङ्क ९७

अगस्त १९५६



व्यवस्थापक : श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादक समिति : श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति
श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार
श्री रामेश बेदी ( मन्त्री )

### इस अङ्क में



### अगले अङ्क में

| विषय | लेखक |
|---|---|
| भारत की मौलिक एकता का आधार | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति |
| वर्षस्य सर्गा महयन्तु भूमिम् | श्री रामनाथ वेदालङ्कार |
| मस्तिष्क और टेलीविज़र ( सचित्र ) | श्री आर. जेड. अमीरोव, एम. डी., एम. एस सी. |
| चम्बल की घाटी की खुदाई से ( सचित्र ) | |
| मधु द्वारा चिकित्सा ( सचित्र ) | डा० एदवार्द कान्देल एम एस-सी. |

अन्य अनेक विश्रुत लेखकों की सांस्कृतिक, साहित्यिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी रचनाएं।

मूल्य देश में ४) वार्षिक
विदेश में ६) वार्षिक

एक प्रति
छः आने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

श्री दिलीप कुमार

ॐ

# गुरुकुल-पत्रिका

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका ]

## वेद विषयक प्राचीन मत

श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

वेदों के विषय में आर्यों का यह परम्परागत विश्वास चला आ रहा है कि वे ईश्वरीय ज्ञान हैं। परम कारुणिक सर्वज्ञ भगवान् ने मनुष्य-मात्र के कल्याणार्थ सृष्टि के प्रारम्भ में यह पवित्र ज्ञान अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा नामक चार ऋषियों के पवित्रान्तःकरण में प्रकाशित किया जिस से सब मनुष्यों को वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रिय यथा विश्वविषयक सब कर्तव्यों का यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो सके और उस के द्वारा वे सुख, शान्ति तथा आनन्द को प्राप्त कर सकें। प्राचीन समस्त साहित्य में इस विश्वास का समर्थन स्पष्ट शब्दों में पाया जाता है। समस्त स्मृतिकार, दर्शनशास्त्रकार, उपनिषत्कार तथा रामायण महाभारत श्रौत सूत्र गृह्यसूत्रादि के लेखक यहां तक कि पुराणकार स्पष्टतया वेदों को ईश्वरीय तथा स्वतः प्रमाण और अन्य सब ग्रन्थों को परतः प्रमाण मानते हैं। उदाहरणार्थ मनु महाराज ने जो सर्व प्रथम धर्मशास्त्रकार हैं अपनी स्मृति में कहा है कि—

वेदोऽखिलोधर्ममूलम्। मनु. २. ६।

अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद; अथर्ववेद नामक सम्पूर्ण वेद धर्म का मूल है। वही धर्म के विषय में स्वतः प्रमाण है। मनुस्मृति २. १३ में लिखा है—

धर्म जिज्ञासमानानां, प्रमाणं परमं श्रुतिः।

अर्थात् जो धर्म का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं उन के लिए परम प्रमाण वेद ही है। इस श्लोक की कुल्लूक भट्टकृत टीका में जाबाल स्मृति, भविष्यपुराण तथा जैमिनि मुनि कृत मीमांसा शास्त्र आदि के अन्य भी कई स्पष्ट प्रमाण मनु महाराज की इस उक्ति के समर्थन में उद्धृत किए गए हैं अतः प्रसंगवश उन्हें उद्धृत करना अनुचित न होगा।

धर्मं च ज्ञानुमिच्छतां प्रकृष्टं प्रमाणं श्रुतिः। प्रकर्षबोधनेन च श्रुतिस्मृतिविरोधे स्मृत्यर्थो नादरणीय इति भाव।

अतएव जाबालः—

श्रुतिस्मृतिविरोधे तु श्रुतिरेवगरीयसी।

भविष्यपुराणेऽप्युक्तम्—

श्रुत्या सह विरोधेतु, बाध्यते विषयं विना।

जैमिनिरप्याह—

विरोधे त्वनपेक्षं स्यादसतिह्यनुमानम्।

मीमांसा शास्त्रे १. ३. ३।

श्रुतिविरोधे स्मृतिवाक्यमनपेक्ष्यम् अप्रमाणम् अनादरणीयम्। असति विरोधे मूल-वेदानुमानम् इत्यर्थः।।'

( मनुस्मृति कुल्लूक टीका सहित निर्णय सागर बम्बई में मुद्रित, पृष्ठ ३२ )।

मनुस्मृति के ऊपर उद्धृत श्लोक में जो यह कहा है कि धर्म जानने की इच्छा रखने वालों के लिए सब से बड़ा प्रमाण वेद है उस का स्पष्ट अर्थ यह है कि यदि कहीं श्रुति ( वेद ) और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्मृति का विरोध हो तो श्रुति को ही प्रामाणिक मानना चाहिए स्मृति को नहीं।

मनु महाराज ने वेदों का महत्व बताते हुए यहां तक कह दिया कि—

पितृदेवमनुष्याणां, वेदश्चक्षुः सनातनम्।
अशक्यं चाप्रमेयं च, वेदशास्त्रमितिस्थितिः ॥
—६४।

चातुर्वर्ण्यं त्रयो लोकाः, चत्वारश्चाश्रमाः पृथक्।
भूतं भव्यं भविष्यच्च, सर्वं वेदात्प्रसिद्धयति॥
—६७।

बिभर्ति सर्वभूतानि, वेदशास्त्रं सनातनम्।
तस्मादेतत्परं मन्ये, यज्जन्तोरस्य साधनम् ॥
—६६। मनु. अ. १२।

सारांश यह है कि वेद, पितर देव मनुष्य के लिए सनातन मार्ग दर्शक नेत्र के समान है उस की महिमा का पूर्णतया प्रतिपादन करना अथवा उस को सम्पूर्णया समझ लेना बड़ा कठिन है। चारों वर्ण, तीन लोक, चार आश्रम, भूत भविष्य और वर्तमान विषयक ज्ञान वेद से ही प्रसिद्ध होता है। सनातन (नित्य) वेद शास्त्र सब प्राणियों को धारण करता है यही सब मनुष्यों के लिए भवसागर से पार होने का साधन है, इत्यादि।

## याज्ञवल्क्य स्मृति का वचन

न वेद शास्त्रादन्यत्तु, किंचिच्छास्त्रं विद्यते।
निस्सृतं सर्वशास्त्रं तु, वेदशास्त्रात्सनातनात्॥

अर्थात् वेद शास्त्र से बढ़ कर कोई शास्त्र नहीं। सब अन्य शास्त्र सनातन वा नित्य वेद शास्त्र से ही निकले हैं।

## अत्रि स्मृति का वचन

नास्ति वेदात्परं शास्त्रं, नास्ति मातु समो गुरुः।

अर्थात् वेद से बड़ा कोई शास्त्र नहीं। माता के समान कोई गुरु नहीं।

## ब्राह्मणों और उपनिषदों के वेद विषयक कुछ वचन

ब्राह्मणों और उपनिषदों में भी वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानने का स्पष्ट प्रतिपादन है। यथा—

## मुण्डकोपनिषत् का वचन

अग्निर्मूर्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्यौ,
दिशः श्रोत्रे वाग्विवृताश्च वेदाः।
मु. २, १, ४।

तस्मादृचः साम यजूंषि दीक्षाः। मु. २. १. ७।

अर्थात् उस भगवान् का मस्तक मानो अग्नि है। सूर्य और चन्द्र उस के नेत्रों के समान हैं, दिशाएं उस के कानों के तुल्य हैं। वेद मानो उस की वाणी से निकले अर्थात् ईश्वरीय ज्ञान हैं।

शतपथ ब्राह्मणान्तर्गत बृहदारण्यकोपनिषत् में स्पष्ट कहा है कि –

एतस्य वा महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद्
यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः।
४. ५. ११।

अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद उस महान परमेश्वर के मानो श्वास से निकले हैं।

## शतपथ ब्राह्मण का अन्य वचन

शतपथ ब्राह्मण में एक अन्य स्थान पर वेदों को छन्द के नाम से पुकारते हुए उस शब्द की जो व्युत्पत्ति दी है उस से भी ब्राह्मणकार के मन में वेदों के प्रति अत्यन्त आदर का भाव सूचित होता है। जो निम्न शब्दों में है—

यदेभिरात्मानमाच्छादयन् देवा मृत्यो-
र्बिभ्यतः तच्छन्दसां छन्दस्त्वम्।

अर्थात् देवों (सत्यनिष्ठ विद्वानों-सत्य-संहिता वै देवाः, सत्यमया उ देवाः, विद्वांसो वै देवाः इत्यादि प्रामाण्यात्) ने मृत्यु से भयभीत होकर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इन वेदों से क्योंकि अपने को आच्छादित कर लिया इस लिए वेदों को छन्द कहते हैं। तात्पर्य यह है कि वेद ज्ञान ही मृत्यु भय से सर्वथा मुक्त करने वाला है।

सर्वथा इस के समान ही छन्द की व्युत्पत्ति ताण्ड्यमहाब्राह्मणान्तर्गत छान्दोग्योपनिनिषत् में इन शब्दों में की गई है—

देवा वै मृत्योर्बिभ्यतस्त्रयीं विद्यां प्राविशन्ते छन्दोभिरच्छादयन् यदेभिरच्छादयनतच्छन्दसां छन्दस्त्वम्। छा. १. ४. २।

अर्थात् देवों (सत्यनिष्ठ विद्वानों) ने मृत्यु से भयभीत होकर त्रयी विद्या (ज्ञान कर्म उपासना विद्या का प्रतिपादन करने वाले वेद) का आश्रय लिया। उन्होंने अपने को वेद मन्त्रों से आच्छादित कर दिया (ढक लिया) क्योंकि इन वेदमन्त्रों से उन्होंने अपने को आच्छादित कर लिया इस लिये इन्हें छन्द के नाम से कहा जाता है। इस से भी ब्राह्मणों और उपनिषदों के लेखकों की वेदों के विषय हैं अत्यधिक श्रद्धा सूचित होती है इस में कोई संदेह नहीं। ऐतरेय ब्राह्मण में भी वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानते हुए स्पष्ट कहा है कि—

'प्रजापतिर्वा इमान् वेदानसृजत।'

अर्थात् समस्त प्रजा के स्वामी परमेश्वर ने प्रजा के कल्याणार्थ वेदो का निर्माण किया ये वचन स्पष्ट हैं कि इन पर किसी प्रकार की टीका टिप्पणी की आवश्यकता नहीं। इसी प्रसङ्ग में में तैत्तिरीय ब्राह्मण की निम्न आख्यायिका भी उल्लेखनीय है जिस में वेदों को समस्त ज्ञान का भण्डार और विद्या दृष्टि से अनन्त कहा गया है। वह आख्यायिका निम्न है—

भरद्वाजो ह त्रिभिरायुर्भिर्ब्रह्मचर्यमुवास। तं ह जीर्णं स्थविरं शयानम् इन्द्र उपव्रज्योवाच भरद्वाज! यत्ते चतुर्थमायुर्दद्यायां किमनेन कुर्या इति। ब्रह्मचर्यमेवैतेन चरेयमिति होवाच। तं त्रीन गिरिरूपानविज्ञातनीव दर्शयांचकार तेषां हैकैकस्मान्मुष्टिमादहे। सहो वाच भरद्वाजेत्यामन्त्र्य वेदावा एते, अनन्ता वै वेदाः, एतैस्त्रिभिरायुर्भिरन्ववोचथाः अथ त इतरवनूक्तमेव॥
तै. ब्रा. ३. १०. ११. ३।

अर्थात् भरद्वाज ने ३०० वर्ष पर्यन्त (मनुष्य की ३ आयु--शतायुर्वैपुरुषः के अनुसार (१००×३ =३००) ब्रह्मचर्य अर्थात् वेदों का अध्ययन किया। इस प्रकार अध्ययन करते-करते वह जब अत्यन्त वृद्धावस्था को प्राप्त हो गया तो इन्द्र ने उसके समीप आकर कहा यदि तुझे और भी आयु मिले तो तू उस से क्या करेगा? भरद्वाज ने उत्तर दिया कि उस से भी मैं वेदों का अध्ययनादि रूप ब्रह्मचर्य ही करूंगा। इन्द्र ने पर्वत के समान तीन ज्ञान राशिरूप वेदों को दिखाया और उन में से प्रत्येक राशि से मुट्ठी सी भर ली और भरद्वाज को कहा कि ये वेद इस प्रकार ज्ञान की राशि वा पर्वत के समान है जिनके ज्ञान का कहीं अन्त नहीं। यद्यपि तूने ३ आयु पर्यन्त (३०० वर्ष तक) वेदों का अध्ययन किया है तथापि तुझे उनके सम्पूर्ण ज्ञान का अन्त नहीं प्राप्त हुआ।

इस आख्यायिका से भी वेदों का महत्व ब्राह्मणकार को दृष्टि में स्पष्टतया सूचित होता है। वर्तमान युग के महान् वैदिक धर्मोद्धारक शिरोमणि आचार्यप्रवर महर्षि दयानन्द ने इसी आख्यायिका के ही भाव को अपने शब्दों में नियम के रूप में प्रकट कर दिया है कि वेद सब सत्य विद्याओं के पुस्तक हैं। वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## महाभारत के वेद गौरव विषयक वचन

महाभारत में महर्षि वेदव्यास जी ने वेद को नित्य और ईश्वरकृत अनेक स्थानों पर बताया है और उनके अर्थ सहित अध्ययन पर बड़ा बल दिया है। उन्होंने यह भी कहा कि ऋषियों तथा पदार्थों के नाम वेदों से ही लेकर रखे गये। महाभारत के निम्न श्लोक इस विषय उल्लेखनीय है—

अनादि निधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुवा ।
आदौ वेदमयी दिव्यायतः सर्वाः प्रवृत्तयः ॥
म. भा. शान्ति पर्व अ. २३२. २४ ।

अर्थात् सृष्टि के प्रारम्भ में स्वयम्भू परमेश्वर वेदरूप नित्य दिव्य वाणी का प्रकाश किया जिस से मनुष्यों की सारी प्रवृत्तियां होती हैं। यह ऋग्वेद के सुप्रसिद्ध मन्त्र ८. ७. ६. का मानो अनुवाद है—

'तस्मै नूनमभिद्यवे वाचा निरूपनित्या ।
वृष्णे चौदस्वसुष्टुतिम् ॥'

जिस में वेदवाणी को नित्य और विविध विषयों का निरूपण कर प्रतिपादन करने वाली होने के कारण निरूपा कहा गया है। इसी अध्याय में आगे कहा है—

नानारूपं च भूतानां कर्मणां च प्रवर्तनम् ।
वेदशब्देभ्य एवादौ, निर्मिमीते स ईश्वरः ॥
नामधेयानिचर्षीणां, याश्चवेदेषु दृष्टयः ।
शर्वयन्ते सुजातानां, तान्येवैभ्यो यदात्यजः ॥
—म. भा. शांतिपर्व मोक्षधर्मपर्व
अ. २३२. २५. २६. २७ ।

अर्थात ईश्वर ने वस्तुओं के नाम और कर्म वेद के शब्दों से निर्माण किये। ऋषियों के नाम और ज्ञान भी प्रलय के अन्त अर्थात् सृष्टि के प्रारम्भ में वेदों के द्वारा दिये गये।

वेदों के अर्थ सहित अध्ययन पर बल देते हुए महर्षि व्यास ने कहा है कि—

यो वेदे च शास्त्रे च, ग्रन्थधारणतत्परः ।
न च ग्रन्थार्थतत्वज्ञः, तस्य तद्धारणंवृथा ॥
भारं स वहते यस्य, ग्रन्थस्यार्थं न वेत्ति यः ।
यस्तु ग्रन्थार्थतत्वज्ञो नास्य ग्रन्थागमोवृथा ॥
म. भा. शान्तिपर्व मोक्ष. अ. ३०५. १३. १४ ।

अर्थात् जो वेद शास्त्रों को केवल पढ़ लेता है किन्तु उनके अर्थ और तत्व को नहीं जानता उसका इस प्रकार उस-उस ग्रन्थ को धारण कर लेना वा केवल पढ़ लेना भार रूप और निष्फल सा हो जाता है। अतः वेदादि शास्त्रों को अर्थ और तत्व सहित समझने का ही सबको प्रयत्न करना चाहिये।

## निरुक्त का वचन

यही बात निरुक्त में श्री यास्काचार्य ने निम्न लिखित श्लोक द्वारा कही है।

स्थाणुरयं भारहारः किलाभूदधीत्य
वेदं न विजानाति योऽर्थम् ।
योऽर्थज्ञइत्सकलं भद्रमश्नेते नाक-
मेति ज्ञानविधूतपाप्मा ॥
नैगम काण्ड १. १८ ।

इस का यही तात्पर्य है कि जो वेद को पढ़ कर उस के अर्थ को नहीं समझता वह भारवाही पशु के समान है किन्तु जो वेदों के अर्थ को समझने वाला है वही समस्त सुख और कल्याण को प्राप्त करता है। वह उस पवित्र ज्ञान के द्वारा पाप को नष्ट कर के परमानन्द रूप मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# मेरा विद्यार्थी जीवन

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

बच्चों, मैं अपने विद्यार्थी जीवन की बातें आप लोगों को सुनाऊंगा, वह अद्भुत तो लगेंगी ही, मनोरञ्जक भी बहुत होंगी। आप लोगों ने हरिद्वार तो देखा ही होगा। वह हमारे देश का प्रसिद्ध तीर्थ और दर्शनीय स्थान है। गंगाजल में स्नान भी किया होगा। हरिद्वार के सामने, गंगा के दूसरे पार, शिवालक पहाड़ की तराई में जो लम्बा चौड़ा जंगल है, उसी में वह विद्यालय बना हुआ था, जिस में मैंने अपना बचपन बिताया, उस विद्यालय का नाम गुरुकुल कांगड़ी था।

गुरुकुल के पूर्व में वह पर्वतमाला थी, जो हिमालय की जटाओं की तरह भारत के पूर्व में सैकड़ों मील तक फैली हुई है। पश्चिम में गंगा की नीली धारा बहती थी। बरसात में जब गंगा में बाढ़ आती थी, तब हमारा विद्यालय एक द्वीप बन जाता था। कभी-कभी तो पानी इतना बढ़ता था कि बाहर के संसार से सम्बन्ध बिल्कुल टूट जाता था। आश्रम के चारों ओर जंगल था, जो पहाड़ तक फैल कर मशहूर जंगल कज़ली बन से मिल जाता था। कज़ली वन अपने शेरों और हाथियों के कारण शिकारियों को बहुत पसन्द है।

इस तरह गंगा की धारा, जंगल और पहाड़ से घिरी हुई जगह में हमारा विद्यालय बना हुआ था। हमारी दिनचर्या प्रातःकाल ५ बजे शुरू हो जाती थी। ५ बजे उठ कर, पानी के लोटे हाथों में ले कर जंगल की ओर चल देते थे। उस जंगल में खैर के पेड़ बहुत थे। खैर का कांटा तीखा और कठोर होता है। रास्ते भर में वे कांटे बिखरे रहते थे। अंधेरे में, नंगे पांव जंगल में जाना तलवार की धार पर चलने से कम नहीं था। पहले पहल तो पांव छलनी हो जाते थे। परन्तु धीरे-धीरे ऐसी आदत पड़ गयी थी, और पांव के तले का चमड़ा इतना कठोर हो गया था कि रास्ते के कांटे या तो दब जाते थे, या टूट जाते थे।

सुबह बाहर जाते हुए एक लम्बा, सिर तक ऊंचाई का दंड हाथ में रखना जरूरी था। जंगल में बड़ा शेर तो कभी-कभी आता था, परन्तु छोटा शेर, या शेर का छोटा संस्करण, जिसे गांव के लोग बघेला कहते थे, रात के समय गुरुकुल के चारों ओर नित्य ही मंडराया करता था। एक रात बांसों के घेरे में घुस कर गाय के बछड़े को ले भागता था तो दूसरी रात किसी कुत्ते पर हाथ साफ करता था। पूरे आदमी से घबराता था, परन्तु बच्चा मिल जाय तो हथियाने का यत्न करता था। उस से बचने के लिये हाथ में डंडा रखना आवश्यक था। वही डंडा खैर के पेड़ से दातून तोड़ने के काम भी आता था।

जंगल से लौट कर गंगा तट पर पहुँचते थे, जहां व्यायाम होता था। हमारा व्यायाम कोई छोटा मोटा प्रदर्शन नहीं था। दो सौ दंड और दो सौ बैठक करना तो आवश्यक था, उस पर भी यदि सर्दियों में पसीना न निकले तो कुछ अधिक व्यायाम करना पड़ता था, हमारे गुरूजी व्यायाम के बहुत बड़े समर्थक थे, बरसात के दिनों में दोनों समय नही, तो एक समय अखाड़े में कुश्ती की व्यवस्था रहती थी, मेरा शरीर कुछ हल्का और फुर्तीला था, इससे मैं कुश्ती में अच्छा था, एक बार बड़ी मजेदार घटना हुई, हमारे विद्यालय में एक व्यायाम शिक्षक आये, बहुत लम्बे चौड़े और मजबूत पट्ठों वाले फौजी सज्जन थे, कुश्ती की बात चल गई, कहने लगे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि ताकत के सामने कुश्ती के दाव पेंच नहीं चल सकते। मैंने कहा कि आपका ख्याल गलत है, कुश्ती भी एक कला है। इस पर वह बोले कि मेरे अन्दर ताकत है, मैं चैलेंज देता हूँ कि कोई पहलवान मेरे सामने आ जाय, मैं उसे उठाकर पटक दूंगा। मेरे मुंह से निकल गया कि ऐसे अभिमान की बात न कहिये, कभी नीचा देखना पड़ जायगा। इस पर तनातनी हो गई, और मेरी और उनकी कुश्ती बद गई। इस पर गुरुकुल भर में सनसनी फैल गई। कहां मैं हल्का फुल्का सा लड़का, और कहां वह गडाडील जवान। लड़कों ने कनस्तर बजाकर कुश्ती की घोषणा कर दी। शाम के समय अखाड़े के चारों ओर गुरुकुल के ऊंचे से ऊंचे अधिकारियों, छात्रों और गांवों के लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई। पहले हमारे व्यायाम शिक्षक अखाड़े में उतरे। उन्होंने खम ठोक कर दो चार दंड किये तो उन के शरीर के मसल फूल उठे। मैं अखाड़े के किनारे खड़ा था। जांघिया कस कर कुश्ती के लिये तैयार था। उनके खम की आवाज सुनकर अखाड़े में उतर आया। वह अपनी ताकत के भरोसे निःशंक होकर आगे बढ़े, और मेरे पास आकर मुझे कमर से पकड़ कर पटकने की योजना बनाने लगे। मुझे खुला अवसर मिल गया, और मैंने उनकी कमर में हाथ देकर टांग का अडंगा लगाकर चीत्त कर दिया। उस पर चारों ओर कनस्तर बजने लगे, और हमारे व्यायाम शिक्षक यह कहते हुए खड़े हो गये कि यह भी कोई कुश्ती है, यह तो चालबाजी है।

व्यायाम के बाद कुछ आराम कर के गंगा में स्नान करते थे। वह दिन भर में हमारी सब से अधिक प्रसन्नता का अवसर होता था। ठंडे पानी में खुल कर तैरने से न कोई अच्छा व्यायाम है और न मनोरंजन। दस पन्द्रह मिनट तक गंगा के जल में स्नान करके घण्टों की थकान दूर हो जाती थी, और शरीर हल्का हो जाता था। प्रति दिन तो इतना ही गंगा स्नान होता था, अनध्याय के दिन कभी-कभी चार चार, पांच पांच, घन्टों तक तैरा करते थे। गुरुकुल से कोई दो मील चन्डीदेवी का मन्दिर था। उसके नीचे से गंगा में पड़ते थे, और तैरते बातें करते और खेलते हुए गुरुकुल भूमि में आ लगते थे। गंगा का तट होने के कारण गुरुकुल के लगभग सभी अध्यापक और छात्र तैरना जानते थे। यह मशहूर है कि तैरना उसी को आता है। जो कम से कम एक बार डुबकी खा कर पानी पीले। मैंने तैरना सीखते हुए दो तीन डुबकियाँ खाई, और पानी पीया था, सो मैं अच्छा तैराक बन गया था।

स्नान के पीछे सन्ध्योपासन और फिर प्रातःराश अर्थात सुबह का नाश्ता लेकर पढ़ने में लग जाते थे। उन दिनों हमारी पढ़ाई घड़ी से होती थी, घण्टों से नहीं। अर्थात् हर आधे घन्टे के बाद घन्टा नहीं बजता था, घड़ी में देख कर छात्र एक गुरू के पास से उठ कर दूसरे के पास चले जाते थे। पढ़ने के समय बैठते थे आसनों पर, तब हमारे विद्यालय में अभी बैंचों का चलन नहीं हुआ था। उस अवस्था में हमें एक आराम अवश्य था। पूरा व्यायाम और भर पेट नाश्ता करने के पश्चात नवान्हिक या सांख्यदर्शन पढ़ते-पढ़ते कभी ऊंघ आ जाती थी, तो ऊंघने का अवसर मिल जाता था। एक वार तो ऐसा हुआ कि ठण्डा दिन होने के कारण कुछ समय के लिये गुरु और शिष्य सभी निद्रा देवी की गोद में चले गये, और जब उठे तो कौन किसे टोके, सभी की आंखों में नींद की लाली थी।

दोपहर के भोजन के पश्चात् फिर पढ़ाई,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और पढ़ाई के पीछे फिर व्यायाम, स्नान और सन्ध्या हवन। रात को सोने से पहले कड़ुए तेल के दिये की रोशनी में या तो दिन का पाठ याद करते थे, अथवा सूत्रों या श्लोकों की अन्त्याक्षरी करते थे। रात को भूमि पर या लकड़ी के तख्त पर दरी बिछा कर गहरी नींद में सो जाते थे।

यह थी हमारी रोज की दिनचर्या, परन्तु यह न समझना चाहिये कि हमारे जीवन की नदी सदा समतल हो कर ही बहती थी, उस में ऊंच नीच भी होते रहते थे। छुट्टी के दिन हम लोग पहाड़ पर प्याल खाने जाते थे, अथवा बरसात के दिनों में तैरने का उत्सव हो जाता था। प्याल एक पहाड़ी फल होता है, जो फालसे से मिलता जुलता है। वह भगवान् की खेती थी, पेड़ पर चढ़ कर उस के तोड़ने की सजा नहीं थी। हां, जब कभी हम लोग गंगा के किनारे या मनुष्यों के खेतों में लगे हुए आम, जामुन आदि के पेड़ों की सफाई कर देते थे, तब दण्ड मिलता था। ऐसे अपराधों का दण्ड प्रायः यह होता था कि दो सौ बार गायत्री का मन्त्र शुद्ध रूप से लिखा जाय। साधारण अपराधों की यह सजा थी, परन्तु जिसे गुरु जी आचरण सम्बन्धी अपराध समझते थे, उसके लिये अपनी लकड़ी की खड़ाऊं से बेंत का काम लेते थे।

एक बार गंगा में बहुत भारी बाढ़ आगई। ठीक किनारे पर दो मकान बने हुए थे। एक मुख्याधिष्ठाता जी का बंगला था, और दूसरा आनन्दाश्रम था, जिसमें अध्यापक लोग रहते थे। बढ़ता बढ़ता पानी उन की दीवारों से टकराने लगा, और किनारों को काटने लगा। बहुत संकट का समय आ गया। गुरुकुल की बस्ती के चारों ओर अथाह पानी और किनारे की मिट्टी धड़ाधड़ गिरने लगी। मुख्याधिष्ठाता ने सब छात्रों को बुला कर समझाया कि अब रक्षा का एक ही उपाय है कि जंगल से पेड़ काट कर और रस्सों में बांध कर किनारों पर डाले जायें, ताके पानी की चोट को रोक सकें। सब छात्र तैरना तो जानते ही थे, कमर कस कर तैयार हो गये। कुछ पेड़ काटने में लगे, बाकी नदी में कूद गये, और कटे हुए पेड़ों को मोटे रस्सों से बांधकर किनारों पर छोड़ने लगे। लगभग दो घन्टो की मेहनत से किनारों का कटना बन्द हो गया। तब हमें मालूम हुआ कि तैरना भी शिक्षा का एक आवश्यक अङ्ग है।

एक बार दिन के समय गुरुकुल की बागीची में शेर घुस आया। शाम का समय था। लोग खेल के मैदान में हाकी खेल रहे थे। इतने में शोर मच गया कि शेर आ गया। सब खिलाड़ी हाकियें घुमाते हुए बागीची की ओर भागे। वहां एक छोटे से टुकड़े में बहुत ऊंची और घनी ईख खड़ी थी। शेर शोर सुन कर ईख में घुस गया। खेल की भावना जोर पर थी, विद्यार्थी चारों ओर से खेत में घुस गये। जंगल में यहां रहने के कारण हम लोगों के मन में सिंह नाम का भय नहीं रहा था। सिंह खेत की गहराई में दुबका बैठा था। लम्बा चौड़ा ब्रह्मचारी ठीक उसके सामने आ गया। शेर ने झपट कर उसकी टांग अपने मुंह में ले ली। ब्रह्मचारी चिल्लाया तो दसों ब्रह्मचारी वहां पहुंच कर शेर पर चारों ओर से हाकियां बरसाने लगे। तब शेर टांग छोड़ कर बाहर की ओर भागा, और खेत से निकल कर एक नाटे से परन्तु मजबूत विद्यार्थी पर झपट पड़ा। विद्यार्थी ने अपना दिमाग नहीं खोया, और अपने सिर पर धोती लपेट कर बैठ गया। शेर के पंजे कपड़े पर पड़कर उलझ गये। इस से पहले कि वह अपने पंजों को उलझन से निकालता, दसों हाकियों के भरपूर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वार उसकी पीठ पर बरस गये, और वह ठन्डा हो गया।

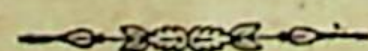
एक अन्तिम घटना सुना कर इस वार्ता को समाप्त करता हूँ। एक बार गुरुकुल की हॉकी टीम को दिल्ली के सेन्ट स्टीफन्स कालेज की ओर से मैच खेलने का निमन्त्रण मिला। उन दिनों सेन्ट स्टीफन्स कालिज के प्रिंसिपल रुद्रा साहब थे, और श्रीयुत एन्ड्रूज अंग्रेजी के प्रोफेसर थे। उनका गुरुकुल से बहुत प्रेम था। हम लोग खेल से पहले रुद्रा साहब की कोठी पर पहुंचे, और वहां से दिल्ली की टीम और कालिज के बहुत अध्यापकों और छात्रों के साथ कुदसिया बाग की ओर चले। हमारे खिलाड़ियों के पांव नंगे थे, धोती ऐसे ढङ्ग से पहनी हुई थी कि एक छोर कमर में लपेटा हुआ था और दूसरा छोर गले में डाला हुआ था। गले में पूरी बाहों के कुरते पहने हुए थे। इस वेष को देख कर सेन्ट स्टीफंस के मजे हुए खिलाड़ी मुस्कराहट को न रोक सके, और आपस में कहने लगे "भाई आज तो मुसम्मात से मैच खेलना पड़ेगा"। खैर, हम लोग सब कुछ देखते और सुनते हुए खेल के मैदान की ओर चलते गये। वहां पहुँच कर जब दोनों दल मैदान में आये, तो गुरुकुल की टीम के खिलाड़ियों ने धोतियां उतार दी थीं, कुर्ता और निकर पहिन कर नंगे पांव फुर्ती से मैदान में आ गये। तब तो दर्शकों की हंसी बन्द हो गयी, और जब खेल शुरू हुई और नंगे पांव के खिलाड़ी हिरनों की तरह दौड़ते तब धीरे-धीरे दिल्ली के खिलाड़ी भी जूते उतार-उतार कर फेंकने लगे। आधी खेल होने तक दिल्ली के आधे खिलाड़ी जूते उतार कर फेंक चुके थे। जूते तो उतार दिये, परन्तु नंगे पैरों चलने का अभ्यास न होने से घास चुभने लगा, जिस ने दिल्ली की टीम का खेल बिगाड़ दिया। अन्त में नतीजा यह निकला कि नंगे पांव खेलने का अभ्यास होने के कारण गुरुकुल की टीम दो गोलों से जीत गई।

[आल इण्डिया रेडियो के सौजन्य से प्राप्त]।



## ज्ञातव्य बातें

- सन् १९५४ में, भारत में १०२ करोड़ रुपये की लागत से खनिज पदार्थ निकाले गये।
- सन् १९५५—५६ में, नये उद्योग शुरू करने के लिए १६४ लाइसेन्स दिये गये। पिछले वर्ष केवल ११० लाइसेन्स दिये गये थे।
- सन् १९५५ में, भारत में चीनी बनाने की जितनी मशीनें तैयार हुई उनका मूल्य लगभग १९ लाख ३ हजार ५०० रुपये है।
- सन् १९५५ में भारत का निर्यात व्यापार ५६३ करोड़ रुपये से बढ़ कर ६०४ करोड़ रुपये हो गया।
- भारत सरकार ने, आंध्र, बम्बई, त्रिपुरा तथा उत्तरपूर्व सीमान्त अभिकरण की सड़क बनाने की योजनाओं के लिए ४२ लाख ६३ हजार रुपये स्वीकृत किये हैं।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# महायान बौद्ध ग्रन्थ

पाली के अतिरिक्त अन्य कई भाषाओं में भी बहुत से बौद्ध ग्रन्थ मिलते हैं। लेकिन अलग-अलग भाषाओं में इन ग्रन्थों का रूप एकसा नहीं है।

पाली ग्रन्थ समिति ने जो धर्म ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं वे विभज्जवादिन नामक प्राचीन सम्प्रदाय के ग्रन्थ तथा उस के उस संशोधित संस्करण के अनुसार हैं, जिस का उपयोग अनुराधापुर ( श्रीलंका ) के महाविहार मठ में किया जाता है। बर्मा, थाइदेश और कम्बोदिया भी इसी संस्करण को उन धर्मग्रन्थों का असली रूप मानते हैं।

बुद्ध धर्म के दो सम्प्रदायों—महायान और हिनयान—के अधिकांश अनुयायियों ने त्रिपिटकों के अपने-अपने रूप बनाए हैं। किन्तु, महायान के बहुत से उप-सम्प्रदायों में उन का स्थान ईसा युग के प्रारम्भिक काल में बनाए गये ग्रन्थों ने ले लिया। ये ग्रन्थ संस्कृत में हैं, जो महायान शाखा की धर्म भाषा बन गयी थी। फिर भी, एशिया के दूसरे भागों में स्थानीय बोलियों को ही अच्छा समझा गया। इन में से बहुत से ग्रन्थों में भगवान बुद्ध के उपदेश हैं। लेकिन वे उपदेश त्रिपिटक में संग्रहीत उपदेशों से कहीं अधिक विस्तृत हैं। इसलिए उन्हें वैपुल्य सूत्र कहा जाता है।

महायान धर्म ग्रन्थ इतने विशाल हैं कि भिक्षुओं से भी यह आशा नहीं की जाती थी कि उन्हें उन का काफी ज्ञान हो। ईलियट के अनुसार वे दुनिया के सब से विशाल पवित्र ग्रन्थ हैं। उन में से बहुत कम ग्रन्थों का यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद हुआ है और कुछ तो सिर्फ चीनी भाषाओं में अनुवादों के रूप में मिलते हैं। कुछ खास-खास महायान ग्रन्थों का विवरण नीचे दिया गया है :

१ प्रज्ञापरिमिता—शून्यता के सिद्धांत पर रचित ग्रन्थों का नाम है। वे सूत्र कहे जाते हैं और छोटे-बड़े होते हैं। चीनी भाषा में अनुवादित महान संकलन में २,००,००० पद हैं। इन में अलग-अलग सोलह सूत्र हैं।

वज्रछेदिका ( हीरा काटने वाली ) ग्रन्थ इन में सब से प्रख्यात ग्रन्थ हैं।

२ सद्धर्मपुण्डरीक—बहुत प्रसिद्ध महायान सूत्र है तथा चीन और जापान में इसे बहुत श्रद्धा से देखा जाता है। शाक्य मुनि द्वारा बोधिसत्वों की सभा में दिये गये प्रवचन का इस में सार है।

३ ललितविस्तार—भगवान बुद्ध के जीवन का बड़ा आकर्षक वर्णन है। पाली भाषा के वर्णन की अपेक्षा इस में भगवान बुद्ध की अलौकिकता पर कहीं अधिक जोर दिया गया है।

४ लंकावतार सूत्र—सूक्ष्म तत्वों का विवेचन करने वाला विशाल ग्रन्थ है। लंका में शाक्य मुनि ने धम्म का जो ज्ञान दिया, उस का इस में विवरण है।

५ सुवर्णप्रभास—एक वैपुल्य सूत्र है, जिस में इस बात पर जोर दिया गया है कि बुद्ध पारलौकिक थे।

६ गंडव्यूह—में शून्यवाद, धर्मकाय, बुद्ध की सर्वव्यापकता और बोधिसत्वों के प्रयास से संसार से मुक्ति के सिद्धांतों का उपदेश दिया गया है।

७ समाधिराज—में विभिन्न प्रकारों की तपस्याओं का वर्णन है, जिन में समाधिराज सब से उत्तम और महान है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

८ दशभूमीश्वर—बुद्धावस्था प्राप्त करने से पहले एक बोधिसत्व को जिन १० अवस्थाओं से गुजरना होता है, उस का विवरण इस में दिया गया है।

तथागतगुह्यक तथा उपर्युक्त आठ ग्रंथ संस्कृत में हैं और इन्हें नेपाल में नौ धर्म कहा जाता जाता है। इन नौ ग्रंथों के अतिरिक्त संस्कृत, चीनी, तिब्बती तथा मध्य एशियाई भाषाओं में अन्य बहुत से सूत्र हैं। अवदानों या पवित्र गाथाओं के रूप में और भी बहुत सी रचनाएं हैं। कई बातों में ये पाली के विनय पिटक से मिलती-जुलती हैं। अवदानों के एक दर्जन या उस से भी अधिक संग्रह हैं। महावस्तु और दिव्यावदान इन में सब से महत्वपूर्ण हैं।

बुद्ध भगवान अनावश्यक बखान के विरुद्ध थे, अतः संभवतः इसी कारण स्थविरवादिन दर्शन सम्बन्धी अधिक रचनाएं नहीं कर सके। दूसरी तरफ महायान में बहुत रचनाएं हुईं। नागार्जुन का मध्यमकारिका ग्रंथ माध्यमिका शैली का आधारभूत ग्रंथ है। दूसरी शैली का सब से पहला ग्रंथ असंग कृत सूत्रालंकार था।



# ऑपरेशन के समय कृतिम हृदय का सफल प्रयोग

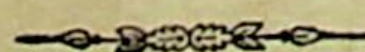
रोचेस्टर (मिनेसोटा) के मेयो-क्लिनिक और मिनेसोटा विश्वविद्यालय में शल्य-चिकित्सा (ऑपरेशन) के समय हृदय-फेफड़े की मशीन (कृत्रिम हृदय) को अब अधिकाधिक संख्या में प्रयुक्त किया जाने लगा है। जिस समय इन उपकरणों को प्रयोग किया जाता है उस समय मनुष्य का हृदय आराम करता है और उसे कोई काम नहीं करना पड़ता। इस बीच सर्जन लोग हृदय को खोल कर उसे ठीक ठाक कर देते हैं।

इन मशीनों को हृदय की निकटवर्ती रक्त-नाड़ी के साथ जोड़ दिया जाता है। यान्त्रिक फेफड़े द्वारा रक्त को धक्का दे कर उस में ताजी ओषजन (ऑक्सीजन) भर दी जाती है और फिर इस ताजे रक्त को रोगी के शरीर में भेज दिया जाता है।

अब से लगभग तीन वर्ष पहले डिट्राइट के डा. एफ. डी. डोडरिल ने पहले पहल एक रोगी के शरीर में यान्त्रिक हृदय का सफलतापूर्वक प्रयोग किया था और उस में आधे मानव-हृदय का काम बन्द रखा था। बाद में फिलाडेल्फिया के डा. जौन गिब्बन ने (जो यान्त्रिक हृदय के बारे में अनुसन्धान करने वालों में अग्रणी समझे जाते हैं) एक युवती के हृदय को पूरी तरह अलग कर के यान्त्रिक हृदय का प्रयोग किया था और उतने समय में उस के हृदय की भीतरी दीवार में हुए छेद को सी दिया था।

रोचेस्टर के शल्य-चिकित्सक आज कल लोगों की जानें बचाने के लिए कृत्रिम हृदय का अधिकाधिक इस्तेमाल करने लगे हैं। अन्यत्र कहीं कृत्रिम हृदय का प्रयोग इतनी अधिकता से नहीं किया जाता।

"कृत्रिम हृदय' की सहायता से मेयो-क्लिनिक में अब तक ७८ रोगियों के हृदयों को ठीक किया जा चुका है। इसी तरह मिनेसोटा विश्वविद्यालय के मैडिकल स्कूल में १२० रोगियों को इस मशीन की सहायता से आराम पहुँचाया गया है।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# विषैले संक्रामक कीटाणु और उनके विरुद्ध संघर्ष

श्री वीं० चेर्वोन्स्की और जी० स्मोल्यान

१२ मई, १६३५ की बात है कि भूतत्वेताओं की एक छोटी सी टुकड़ी पशु-पक्षी पकड़ने वालों की एक वीरान झोंपड़ी में रात काटने के लिए रुकी। रात को उनमें से एक व्यक्ति की तबियत खराब हो गयी, उसके सिर में पीड़ा होने लगी, बुखार चढ़ आया और मतली सी होने लगी। सुबह उसकी चेतना लुप्त हो गई और संध्या होते ही उसका देहान्त हो गया। भूतत्ववेत्ताओं की वह टोली हतबुद्धि सी रह गयी। यह एक विचित्र बीमारी थी जिसने बिजली गति से उन के साथी को मृत्यु का ग्रास बना कर छोड़ दिया था। यह टोली सुदूर-पूर्व अलंघनीय वन-प्रान्त तैगा पर विजय पाने निकली थी—किन्तु उनके साथी की मृत्यु की भांति पहले भी अनेक स्वस्थ नवयुवक इस घातक बीमारी के शिकार बन चुके थे।

एक युवक डाक्टर ए० जी० पानोव पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सुदूरपूर्व प्रदेश में इस अज्ञात प्राणघातक शत्रु के विरुद्ध संघर्ष करने का प्रयत्न किया। उसकी आकुल अपील के उत्तर में वैज्ञानिकों की एक टोली ने इस अज्ञात शत्रु पर विजय प्राप्त करने का उदात्त उद्देश्य लेकर तैगा की ओर अभियान किया।

१६३७-३८ में तैगा की इस भयानक बीमारी के वाहक का अता-पता मालूम हुआ।

टिक-एनसिफ़ालिटिस—वह बीमारी जो केन्द्रीय नाड़ी प्रणाली पर आक्रमण करके शरीर को पंगु बना देती है और प्रायः मृत्यु का कारण बन जाती है—पर विजय प्राप्त की गई। सोवियत चिकित्सकों ने एक महत्वपूर्ण खोज की, उन्होंने प्रमाणित किया कि इस रोग की उत्पत्ति विषैले-तत्त्वों से होती है, जिनके रोग-वाहक कीटाणुओं का नाम उन्होंने तैगा कीटाणु रखा।

सुदूर पूर्व की इस बीमारी एनसिफालिटिस पर विजय प्राप्त करना सोवियत कीटाणुशास्त्र की एक महान् सफलता थी।

कीटाणु-शास्त्र क्या है? इस विज्ञान का विजय क्षेत्र क्या है? पिछली शताब्दी के अन्त होने तक अनेक संक्रामक रोगों—तपेदिक, कोढ़ आप्रेक्स, प्लेग, खसरा, चेचक, पागलपन, और इनफ़्लुएञ्जा जैसी बीमारियों के कारणों का दुनियां भर के वैज्ञानिकों की चेष्टाओं के बावजूद पता न चल सका।

किन्तु १८६२ में, रूसी वैज्ञानिक डी० आई० ईवानोवस्की ने जो तम्बाकू के पत्तों पर आक्रमण करने वाली एक विचित्र बीमारी का अध्ययन कर रहे थे, पता लगाया कि यदि रोगग्रस्त तम्बाकू के पत्तो का रस विशेष छलनी से छाना जाये, तो भी वह संक्रामक तत्वों से मुक्त नहीं होता, यद्यपि अन्य परिचित जीवाणु छलनी के ऊपर रुक जाते हैं। इस तरह प्राणवान जीवनों के अदृश्य शत्रु—छने हुए कीटाणुओं 'वीरस' का पता चला।

लेटिन भाषा में 'वीरस' (कीटाणु) का अर्थ विष है। पहले तमाम संक्रामक तत्त्वों के वाहकों को इसी नाम से पुकारा जाता था। आज के समय में इस शब्द को अधिक संकुचित अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है, केवल विषैले कीटाणुओं के उस निश्चित वाहक दल को इस नाम से पुकारा जाता है जो संक्रामक बीमारियां उपजाते हैं।

कीटाणु अत्यन्त छोटे होते हैं। सबसे बड़ा कीटाणु आकार में एक मिलीमीटर का तीस करोड़वां भाग होता है। विद्युत् कामों का परी-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्षण करने के दूरबीन का आविष्कार होने से ही यह सम्भव हो सका है कि छने हुए इन कीटाणुओं को देखा जा सके और इनका फोटो खींचा जा सके।

आधुनिक विज्ञान ने डेढ़ हजार से अधिक कीटाणुओं के सम्बन्ध से ज्ञान प्राप्त कर लिया है जो विभिन्न बीमारियां फैलाते हैं। उनमें ऐसे कीटाणु भी शामिल हैं, जो आदमी और पशु दोनों पर आक्रमण करते हैं चेचक, कुत्ते का पागलपन, पोलियोमेलिटिस (बच्चों को लकवे की बीमारी), माता निकल आना, मोतीझारा, सूजन, पीला बुखार, एनसिफालिटिस इत्यादि रोग इन कीटाणुओं की उपज हैं। पशुओं, पक्षियों, मछलियों और कीड़े-पतंगों में भी फालतू कीटाणु विद्यमान रहते हैं।

कीटाणुओं का स्वभाव वैविध्यपूर्ण हैं। प्रत्येक कीटाणु शरीर की विभिन्न ग्रन्थियों को नष्ट करने के उद्देश्य से अपने लिए चुन लेता है। उदाहरणतः चेचक का कीटाणु शरीर की त्वचा पर आक्रमण करता है, एवं पागलपन, एकसिफ़ालिटिस, और मोलियोमेलिटिस के कीटाणु शरीर की विभिन्न नाड़ी-ग्रन्थियों पर आक्रमण करते हैं। उदाहरण के लिये एनसिफ़ालिटिस के कीटाणु झिल्ली और मेजे में सूजन उत्पन्न करते हैं। मोतीझारा के कीटाणु श्वासेन्द्रियां और फेफड़ों के तरल पदार्थों में फैलते हैं। इन अदृश्य घातक शत्रुओं की संख्या बड़ी तीव्र गति से बढ़ती है।

यदि हम एक सफेद चूहे का मेजा लें जो एनसिफलिटिस रोग से पीड़ित है, और उसे पीस कर नमकीन पानी में १: १०० के अनुपात में घोल दें, तो इस हल्के सम्मिश्रण की एक बून्द लाखों चूहों को इस घातक रोग का शिकार बना सकती है। दूसरा उल्लेखनीय उदाहरण लीजिए। मुर्गी के गर्भ में चौबिस घंटों में मोतीझारा के संक्रामक कीटाणु इतनी अधिक संख्या में बढ़ जाते हैं, कि लाखों सेक लेने वाले अन्डों के भीतर गर्भ नष्ट हो जाते हैं।

कीटाणु विभिन्न उपायों से गर्भ धारण करते हैं, और तीव्र गति से संख्या में वृद्धि करके संक्रामक तत्वों को बड़ी तेजी से उत्पन्न करते हैं। वे जीवित प्राणियों के सबसे घातक शत्रु हैं।

स्पष्ट रूप से कीटाणुओं की उत्पत्ति प्राणों के सृजन के साथ आरम्भ हुई है, और मानव जाति से उनका युग-युगान्तर से सम्बन्ध चलता आ रहा है। आज हम जानते हैं कि चेचक और पोलियोमिलिटिस बीमारियों के चिह्न उन मृतक शरीरों में भी मिलते हैं, जो विगत ४००० वर्षों से सुरक्षित रखे हुए हैं। किन्तु केवल ६० वर्ष पूर्व ही हमें छने हुए कीटाणुओं के सम्बन्ध में वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त हुआ है। इस अवधि के दौरान में विभिन्न देशों के हजारों वैज्ञानिकों ने बड़ा महत्पूर्ण काम किया है। कीटाणु शास्त्र में अनेक आश्चर्यजनक खोजें की गई हैं।

चेचक और कुत्ते के पागलपन के संक्रामक रोगों से बचने के लिये टीका लगाने की पद्धति के इतिहास से कौन अपरिचित है। आज हज़ारों लोग एडवर्ड जेनर और लुई पास्चर के नाम कितने प्रेम से लेते हैं। आज अनेक कीटाणु जन्य घतक बीमारियों पर विजय प्राप्त करली गई है और उन से बचने के अनेक सफल उपाय खोज निकाले गये हैं। सावियत वैज्ञानिकों ने वसन्त-ग्रीष्म टिक एनसिफालिटिस के विरुद्ध अनेक नई ईजादें की हैं। बड़े जबर्दस्त परिश्रम के बाद ये सफलताएं मिली हैं। कीटाणुओं से मुक्ति पाने के लिए कोई नई ईजाद करना बड़ा कठिन और परिश्रम का कार्य है।

सबसे पहले ऐसी जीवित ग्रन्थि प्राप्त करनी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पड़ती है, जिसमें कीटाणु तीव्र गति से बढ़ सकें। एनसिफालिटिस के कीटाणुओं के लिये सफेद चूहे का भेजा सबसे उपयुक्त सिद्ध हुआ। एनसिफालिटिस की बीमारी से मरे हुए चूहों के भेजों की ग्रन्थियों पर दीर्घकाल तक शरीरशास्त्रीय और रासायनिक प्रक्रिया की जाती है। इस के परिणाम स्वरूप मरा हुआ कीटाणु अपनी ध्वंसात्मक विशेषताओं को छोड़ने के बावजूद मनुष्य के शरीर में ऐसी शक्तियों का सृजन करने के लिए अपने में अद्भुत सामर्थ्य रखता है, जो उसे जीवित कीटाणु के संक्रामक रोग से हमेशा सुरक्षित रखती हैं। किन्तु इस समस्या का यह अन्तिम समाधान नहीं है एक लम्बे अर्से तक परीक्षण करने की आवश्यकता है। विशेष संस्थाओं द्वारा टीके की प्रत्येक क्रमगत श्रेणी का परीक्षण, प्रयोग में लाने से पूर्व, बड़े परिश्रम से किया जाता है। इस की कल्पना करना कठिन नहीं कि टीके में एक भी जीवित कीटाणु रहने से क्या परिणाम निकलेगा। बहुत अर्सा नहीं गुज़रा, अमरीका के कारखाने में पोलियो के विरुद्ध डा० साल्क की अद्भुत टीका तैयार करते हुए ज़रा सी भूल हो गयी जिस के परिणामस्वरूप बीसों अमरीकी बच्चों को मृत्यु का ग्रास बनना पड़ा और उनमें अनेक बच्चे जीवन पर्यन्त के लिए पंगु हो गये।

पोलियोमेलिटिस के विरुद्ध टीके की रचना करना आधुनिक कीटाणु-शास्त्र का एक रोचक पृष्ठ है। अन्य टीकों की रचना करने के लिए अपेक्षाकृत यह सुगम था कि एक जीवित ग्रंथि का पता चलाया जाये, जो कीटाणुओं के जीवन्त कार्यों के लिए उपयुक्त हो, किन्तु पोलियोमेलिटिस के कीटाणु के लिए सैकड़ों किस्म की जीवित ग्रन्थियों का परीक्षण करना पड़ा। अन्त में बन्दर का गुर्दा ही एक ऐसा सन्तोषप्रद साधन मिला जहां कीटाणु इकट्ठा हो सकते थे। इस खोज से बच्चों को लकवा मार जाने की घातक बीमारी का इलाज करने का सफल उपाय निकाल सकना सम्भव हो सका।

निकट भविष्य में मानव जाति, खसरा, मोती झारा एवं घरेलू जानवरों और पौधों की कीटाणुजन्य बीमारियों से छुटकारा पा लेगी।

जो वैज्ञानिक कीटाणुओं की उत्पत्ति और प्रकृति का अध्ययन करते हैं, उन्हें अनेक दिलचस्प समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अभी तक इस प्रश्न पर गम्भीर वैज्ञानिक बहस चल रही है कि कीटाणुओं की प्रकृति सजीव पदार्थों से बनी है या जड़ पदार्थों से। क्या प्रकृति में कीटाणु-तत्व विद्यमान हैं ? कीटाणुओं में सजीव प्राणियों के अनेक तत्व मौजूद हैं, किन्तु कुछ कीटाणुओं का स्वभाव रासायनिक पदार्थों से मिलता जुलता है। क्या कीटाणुओं की प्रकृति में जीवन्त प्राणियों की आधारभूत विशेषता विद्यमान है, जिस से शरीर में भोजन-पदार्थ जीवाणुओं में परिवर्तित हो जाता है ? अथवा फालतू कीटाणु उस शरीर की जीवन्त प्रक्रियाओं पर निर्भर रहता है, जो उस के आक्रमण का शिकार होता है। अभी तक ये प्रश्न रहस्यमयी पहेली के रूप में ही हमारे सामने आते हैं। इस में कोई सन्देह नहीं कि इन समस्याओं के सुलझने से प्राणों की उत्पत्ति की समस्या पर भी प्रकाश पड़ेगा।

विगत अनेक वर्षों से लोगों का यह मत रहा है, कि कैंसर की उत्पत्ति विषैले कीटाणुओं से होती है। वास्तव में यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि कीटाणुओं के कारण ही जानवरों को प्रचण्ड ढंग के फोड़े हो जाते हैं।

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# आज के युग में बुद्ध के विचारों का महत्व

डा० रामस्वामी अय्यर

आज के युग की समस्याओं का हल ढूंढने के लिए भगवान बुद्ध के जीवन और उपदेशों का विशेष महत्व है। आधुनिक युग में मनुष्य के ज्ञान का जो विकास हुआ है उस से बड़ी वैज्ञानिक उन्नति और बहुत भौतिक प्रगति हुई है पर इन से भविष्य के बारे में हमारा विश्वास तनिक भी नहीं बढ़ा है।

हैरोल्ड लास्की ने, जो एक स्वतन्त्र विचारक थे ठीक की कहा है 'मेरे विचार में यदि कोई भी हमारी आज की स्थिति पर गहराई से सोचेगा तो उसे यही बात बार-बार खटकेगी कि हमें आज दृढ़ विश्वास की आवश्यकता है, इसी से मनुष्य के मन की दुर्बलता दूर होगी।' उन के विचार में हम लोग सब मान्यताओं को भूल गये हैं और एक तरह के निराशावादी युग में रह रहे हैं। हम में भांति-भांति के अन्ध विश्वास घर कर गये हैं। हम अपने हाथ की बनायी मूर्तियों की पूजा करते हैं। आज के युग में जादू का स्थान मनोवैज्ञानिक विश्लेषण या मनोवैज्ञानिक चिकित्सा ने ले लिया है। साथ ही कम्युनिस्टों के वर्ग संघर्ष की अवश्यम्भाव्यता का सिद्धांत इत्यादि सब बातें उसी निराशा के विविध रूप हैं।

## शांति की चाह

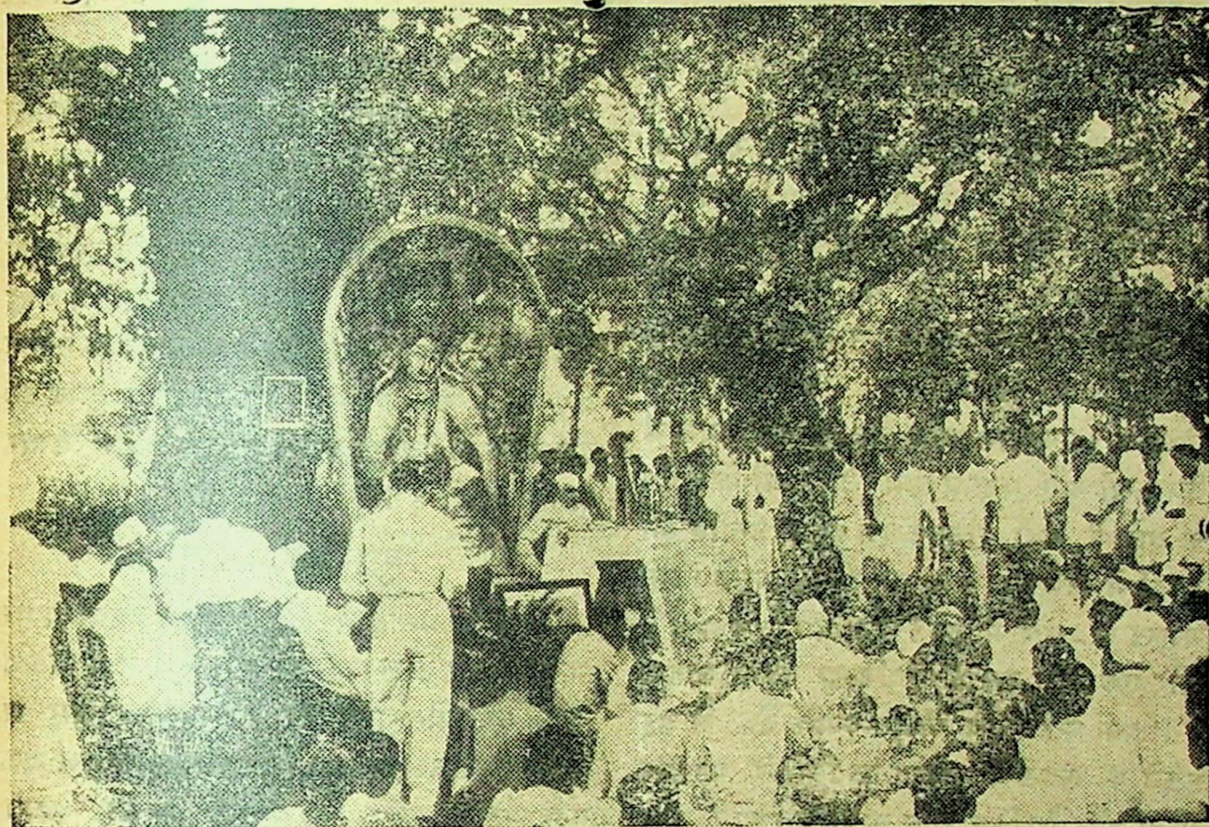
इन सब उद्यमों के बावजूद हमारे चारों ओर शीत युद्धों और अणु विस्फोटों का दृश्य उपस्थित है और पृथ्वी को स्वर्ग बनाने का हमारा स्वप्न बड़ा धुंधला हो जाता है। आज सब लोग किंकर्तव्य विमूढ़ से हो गये हैं और शांति तथा विश्वास के इच्छुक हैं। इस अवस्था में भगवान बुद्ध के विचार और उपदेश हमें जितनी मानसिक शांति प्रदान कर सकते हैं, उतनी कोई अन्य विचार-धारा शायद ही कर सके।

बुद्ध ने हमेशा मध्य मार्ग को ही चुना। उन्हीं की भाषा में उन्होंने सांसारिक भोगविलास और केवल मोक्ष कामना के दो विषम मार्गों के बीच का मार्ग अपनाया। उनकी सारी शिक्षाओं का मूल सहिष्णुता और निष्पक्षता है। अम्बवेश्या का आतिथ्य स्वीकार करते हुए उन्होंने कहा था कि मेरे पास सामान्य और विशेष जैसे



तिब्बत के बौद्ध भिक्षु बोध गया मन्दिर में जा रहे हैं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



हैदराबाद में २५०० वां बुद्ध परिनिर्वाण उत्सव

अलग-अलग विचार नहीं। तथागत मुट्ठी बन्द कर के ज्ञान नहीं देते थे कि कोई रहस्य उन के पास अवश्य रह जाय। उनकी किसी बात में कोई दुराव छिपाव नहीं था। उनके निर्वाण के समय जब उन के शिष्यों ने उन से कुछ सन्देश देने को कहा तो उन्होंने यही उत्तर दिया कि मैंने तो केवल एक मार्ग की खोज की और सघ को उन की लकीर पर चलने की आवश्यकता नहीं। सब लोग अपनी अन्तरात्मा और आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपने लिए मार्ग निकालें। उन्होंने स्पष्ट रूप से अपनी पूजा कराने का निरोध किया। यह उन के चरित्र की सब से बड़ी बात है। अपने परम प्रिय शिष्य आनन्द को उन्होंने उपदेश किया 'तुम स्वयं सारे उद्योग करो। तथागत तो उपदेशकमात्र हैं।'

### आध्यात्मिक उथल-पुथल का युग

वह जिस युग में उत्पन्न हुए उसमें भी आज की जैसी आध्यात्मिक उथल-पुथल मची हुई थी। उन्होंने धर्म, कर्म और संसार सम्बन्धी प्राचीन हिन्दू सिद्धांतों के बारे में कोई शंका नहीं उठाई। वास्तव में उन्होंने मध्य मार्ग, सब के प्रति उदारता दिखाने और पवित्र जीवन व्यतीत करने पर ही विशेष बल दिया। उन्होंने शास्त्रार्थी, जीव और ब्रह्म के विवाद तथा लोक परलोक के झगड़ों से दूर रहने का ही प्रयत्न किया और अपने अनुयायियों को भी इन से बचने का उपदेश दिया। उन का मत था कि अलौकिक सत्ता में विश्वास करने से मानयोचित आचरण करने में बाधा पड़ती है। वैसे उन्होंने माना है कि धर्म का मार्ग ही ब्रह्म प्राप्ति है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## व्यक्तिगत प्रयास

उन्होंने व्यक्ति को सदा प्रयत्नशील रहने की शिक्षा दी। वे ऐसे भगवान को नहीं मानते थे जो प्राकृतिक नियमों से पृथक् कुछ कर सकता हो। बुद्ध कोरे उपदेशक या तत्वज्ञ नहीं थे उन्होंने सदा अपने अनुभूत सत्य को दूसरों को बताया और आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग दिखाया। एक बार उनके एक शिष्य के मन में देवताओं और मनुष्यों तथा देवताओं के संबंध के बारे में बड़ी शंका उत्पन्न हुई। उन्होंने इन शब्दों में उस का समाधान किया, मानो किसी मनुष्य के शरीर में एक विषैला तीर घुस गया है और एक वैद्य उस की चिकित्सा करना चाहता है। क्या ऐसे समय पीड़ित व्यक्ति वैद्य से यह पूछने के झंझट में पड़ेगा कि किस ने यह तीर छोड़ा और वैद्य किस जाति या परिवार का है और वह लम्बा है या नाटा ? इसी प्रकार तुम्हें यही जान लेना पर्याप्त है कि संसार दुःखमय है, दुःख का क्या कारण है और दुःख का निवारण कैसे हो।

भगवान बुद्ध ने नैतिक व्यवस्था में कभी अविश्वास नहीं किया, लेकिन वे इस बात पर जोर देते थे कि प्रत्येक बात को तर्क की कसौटी पर कसना चाहिये और भिन्नता पैदा करने वाली बाधाओं को दूर करना चाहिये। बुद्ध द्वारा प्रतिपादित निर्वाण का अर्थ जीवन समाप्ति नहीं, बल्कि आत्मा का स्वच्छन्द अस्तित्व है। उन्होंने बार-बार इस बात को दुहराया कि सब के प्रति प्रेम और दया रख कर तथा बुरी बातों को छोड़ कर और बुरी भावनाओं को दबा कर ही पूर्णता प्राप्त की जा सकती है। तथापि बुद्ध के पहले हिन्दू साधुओं ने भी सार्वभौमिक सद्भाव के महत्व को जाना था. लेकिन प्राचीन योग का मार्ग व्यक्ति को निजी साधना और चित्तवृत्तियों की एकाग्रता पर निर्भर करता था। लेकिन बौद्ध दर्शन में बोधिसत्व प्राप्त करने वाले व्यक्ति पूर्णता प्राप्त करने के बाद, संसार के जीवों के दुःख दर्द दूर करने के लिए अपना उदाहरण और विचार सामने रखते हैं।

## बुद्ध का प्रभाव

बुद्ध का प्रभाव बढ़ती हुई जाति व्यवस्था पर काफी पड़ा। वास्तव में भगवान बुद्ध ने मानवता की प्रतिष्ठा और गुणों पर बल दिया। जैसा कि धम्मपद में कहा गया है कि जाति से कोई ब्राह्मण नहीं होता, बल्कि जो व्यक्ति मनसा, वाचा, कर्मणा किसी को दुःख नहीं पहुँचाता और जो सत्यवादी तथा सदाचारी है, वही ब्राह्मण है। बुद्ध का यह सौभाग्य था कि उनके एक महान शिष्य, सम्राट अशोक ने भगवान बुद्ध की मूल शिक्षाओं को शिलालेखों द्वारा सुरक्षित रखा। अशोक महान का उदाहरण—बुद्ध की शिक्षाओं के प्रमाण और उन की व्यावहारिकता को सिद्ध करता है।

वैशाख पूर्णिमा के दि . हमें भगवान बुद्ध के जीवन और उपदेशों का स्मरण करना चाहिये। उनका व्यावहारिक उपदेश या सार्वभौमिक दया और संसार के हित के लिए अपना सर्वस्व त्यागा।



○ सन् १९५५-५६ में देश में वर्तमान उद्योगों के विस्तार के लिए ३१६ लाइसेंस दिये गये। १९५४-५५ में यह संख्या २२६ थी।

○ १९५६-५७ में ७५ हजार अम्बर चरखे कताई करने वालों को दिये जायेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# उद्योग-व्यापार में कैमरे के चमत्कार

श्री फ्लौयड ए० ल्यूइस

फोटोग्राफी की उन्नत विधियां निकल आने के कारण मनुष्य का दृष्टिक्षेत्र बहुत बढ़ गया है; फलस्वरूप निर्माता और उद्योग-संचालक जिस प्रकार कच्चे माल, उत्पादन की मशीनों और तैयार माल की जांच-पड़ताल सूक्ष्मता से और शीघ्रतापूर्वक अब कर पाते हैं वैसी अन्य उपायों द्वारा इस से पहले सम्भव नहीं थी। इस प्रकार नई जानकारी प्राप्त होने से निर्माताओं को कम लागत पर बढ़िया माल तैयार करने में सहायता मिलती है।

इन में से एक विधि तीव्रगति वाले चल-चित्र लेने की है, जिस के द्वारा ऐसी क्रियाओं की रफ्तार धीमी कर के दिखाया जा सकता है जिन्हें हमारी आंखें पकड़ नहीं सकतीं। इसी प्रकार अधिक समय में होने वाले कार्यों के चित्रों को कम समय में दिखाया जा सकता है। प्रारम्भ में पेड़-पौधों के बढ़ने की क्रिया का अध्ययन करने के लिए इस विधि का विकास किया गया था, किन्तु अब इस का प्रयोग औद्योगिक कारखानों में अनेक प्रकार से किया जाने लगा है।

अणुवीक्षण यन्त्र लगा कर कैमरे से चित्र लेने की प्रक्रिया को 'फोटोमाइक्रोग्राफी' कहते हैं। इस विधि द्वारा लिये गए चित्र में हम किसी वस्तु के सम्बन्ध में सूक्ष्म से सूक्ष्म बातें देख सकते हैं। अब दोनों आंखों से देखे जाने वाला अणुवीक्षण यन्त्र लगा कर स्टेरियास्कोपिक कैमरे की मदद से ऐसे चित्र भी लिये जा सकते हैं जिन की लम्बाई, चौड़ाई तथा मोटाई दिखाई पड़ती है। इस प्रयोग के कारण यह विधि और अधिक उपयोगी बन गई है। थोड़े से उदाहरणों से ऐसे कुछेक दिलचस्प तरीके पता चल जायेंगे जिन्हें फोटोग्राफी की उन्नत विधियों के साथ उद्योगों द्वारा प्रयोग में लाया जा रहा है।

## मजदूरी में बचत

एक वायुयान-निर्माता ने तेज गति वाले चल-चित्र लेने की विधि की सहायता से डिजाइनों से सम्बन्धित अनेक समस्याओं को हल कर लिया है। इस प्रकार इस विधि को अपनाने से उस के कारखाने में कारीगरों की सैकड़ों घण्टे की मजदूरी बचने लगी है। इन चल-चित्रों से तेज क्रिया की गति किस सीमा तक धीमी कर के दिखाई जा सकती है, इस का कुछ अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि वे चित्र एक सैकिण्ड में सैकड़ों अथवा हजारों की संख्या में लिये जा सकते हैं, जब कि इन की तुलना में सामान्य चलचित्र प्रति सैकिण्ड के हिसाब से लिये जाते हैं। जब द्रुतगति से लिये गये चल-चित्र प्रति सैकिण्ड के हिसाब से दिखलाये जाएं तब उसी हिसाब से उनकी अपनी गति भी धीमी हो जाती है और उन के सम्बन्ध में सभी बातों का विस्तृत रूप में अध्ययन किया जा सकता है।

इस कम्पनी द्वारा जिन समस्याओं को हल किया गया है उन में से एक समस्या वायुयानों की अलुमोनियम की चद्दरों में कीलें लगाने के लिए छेद करने की आवश्यकता थी। छेद करते समय अक्सर बरमे टूट जाते थे और इस के कारण उत्पादन धीमा पड़ जाता था। छेद करने की क्रिया के समय लिये गये तीव्र गति वाले चल-चित्रों से बरमों के टूटने के कारण का पता चल गया। इस के बाद कम्पनी इञ्जीनियरों ने ऐसे बरमे बना लिए जिन से वह कठिनाई दूर हो गई और तेजी से उत्पादन होने लगा।

वही कम्पनी अलुमोनियम की तार से पेंच या कीले बनाने के लिये कई मशीनें चलाती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उन में से एक मशीन में अचानक कुछ खराबी आ गई। जांच-पड़ताल के सामान्य तरीकों से उस खराबी का पता नहीं चला। चलती हुई मशीन के लिये गये चल-चित्रों से पता लग गया कि मशीन में एक छोटा सा स्प्रिंग ठीक काम नहीं कर रहा है। उस के स्थान पर मजबूत स्प्रिंग लगाने से वह दोष दूर हो गया।

## इस्पात-उद्योग में उपयोग

लोहे के कारखानों में ज्वाला, टांका लगाने के कार्यों और पिघली हुई धातु की देखभाल करने आदि के लिए तीव्र गति वाले चल-चित्रों का अनेक प्रकार से उपयोग किया जाता है। अब लौह-उद्योग इस विधि को यह जानने के लिए प्रयुक्त करता है कि भट्टी के भीतर क्या हो रहा है।

लोहा गलाने की भट्ठियों के भीतर देखने के लिए एक चौथाई इञ्च का केवल एक सुराख होता है, जो नीले शीशे से ढका रहता है। यह छोटा सा छेद भट्ठी-चालकों के लिए बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ है। चूंकि इस छिद्र के भीतर से तीव्रगति वाले दहकते हुए कोयले के कणों को आंखों से पकड़ना कठिन है, इसलिए यह विचारा गया कि उस क्रिया के तीव्र गति वाले चल-चित्र बहुत उपयोगी सिद्ध होंगे। फलतः एक-चौथाई इञ्च के छिद्र के स्थान पर २ इञ्च का छिद्र बनाया गया और उस पर पारदर्शक कठोर आवरण की खिड़की लगा कर उस छिद्र में से तीव्र गति वाले रंगीन चित्र लिये गये। इन चित्रों से प्रथम वार यह पता चला कि भट्ठी के भीतर किस प्रकार की क्रिया होती है। इस के परिणामस्वरूप अनु-सन्धान का एक विस्तृत कार्यक्रम चालू किया गया है और आशा है कि इस के फलस्वरूप नये ढंग की बढ़िया भट्ठियां बनाई जा सकेंगी और आगे चल कर अच्छा और सस्ता लोहा मिलने लगेगा।

## वस्त्र-उद्योग में

फोटोग्राफी का उपयोग सम्भवतः कपड़ा-उद्योग में सब से अधिक प्रसार से किया जा रहा है। इस के परिणामस्वरूप केवल अच्छे एवं सस्ते कपड़े का उत्पादन ही नहीं होने लगा है, बल्कि कपड़े के ऐसे नये नये नमूने भी तैयार होने लगे हैं जो पहले सुलभ नहीं थे। उदाहरण के तौर पर अब सीधे ही कपड़े पर चित्र छापना सम्भव हो गया है।

फोटोमाइक्रोग्राफी द्वारा कई वर्षों से तन्तुओं तथा धागों की बनावट का अध्ययन करना संभव हो गया है। इस प्रकार की फोटोग्राफी से ऐसे कपड़े तैयार करने में सहायता मिली है जिन की तह के निशान काफी देर तक नहीं बिगड़ते हैं और उन पर नमी का जल्दी प्रभाव भी नहीं पड़ता। धागे को अनेक द्रव्यों से मिला कर ये गुण पैदा किये जाते हैं। विभिन्न द्रव्यों के मिश्रण से मजबूत बनाये हुए धागों के चित्र ले कर यह पता चल जाता है कि वे द्रव्य तन्तुओं में कहां तक प्रविष्ट हुए हैं और इस प्रकार उन द्रव्यों की उपयोगिता प्रकट की जाती है।

तीव्रगति वाले चल-चित्रों की प्रक्रिया से भी भी कपड़ा-उद्योग को सहायता मिल रही है। यह उद्योग तीव्र गति वाली मशीनों को बहुत बड़ी मात्रा में प्रयोग करता है। यह स्पष्ट है कि जितनी अधिक गति से मशीनें चलती हैं उतनी ही अधिक गति से उत्पादन बढ़ता है और कम खर्च पर कपड़े तैयार किये जा सकते हैं। तीव्र गति वाले चित्रों से केवल अधिक तेज चलने वाली मशीनें तैयार करने में डिजाइनरों को ही सहायता नहीं मिली है, बल्कि ऐसी मशीनें तैयार करने में भी मदद मिली है जो बहुत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अच्छी तरह से चलती हैं और जिन से पहले से अच्छा कपड़ा तैयार होता है।

इसी प्रकार वस्त्र-उद्योग में धीमी गति वाले चल-चित्रों से बड़ा उपयोग लिया गया है और उस के कारण आदमियों द्वारा आंकड़े तैयार करने में होने वाले भारी खर्चे में बहुत कमी हो गई है।निर्माता फोटोग्राफी की उन्नत विधियों के जो विविध उपयोग करते हैं उन में से यहां कुछ थोड़े से ही गिनाये गये हैं। इस प्रकार के उपयोगों की संख्या अनगिनत है। रसोई के बर्तनों से लेकर टैलिविजन और घास काटने के यन्त्रों तक प्रतिदिन के कार्यों में कैमरे की उन्नत विधियों का उपयोग किया जाने लगा है

अब यह निर्विवाद रूप से प्रकट हो गया है कि कैमरे से उद्योगों की सूचना-पुस्तकों, रिपोर्टों और विज्ञापनों को चित्रमय बनाने के अलावा और भी बहुत से उपयोगी काम लिये जा सकते हैं।

## समुद्र-गर्भ के चित्र उतारने वाला कैमरा

अमेरिका की राष्ट्रिय भौगोलिक समिति ने संसार के गहरे से गहरे समुद्र का चित्र उतार सकने में समर्थ कैमरा बनाया है यह कैमरा प्रति वर्ग इञ्च पड़ने वाले १७,००० पौंड के दबाव को सहन करने में समर्थ है। समुद्र की अधिकतम गहराई प्रशांत सागर में गुआम के निकट पाई गई है। यह गहराई लगभग ३५,६४० फुट है। यह कैमरा इस गहराई में पानी का जितना दबाव पड़ सकता है उस से भी कहीं अधिक दबाव सहन कर सकता है।

इस कैमरे की भूमध्यसागर, लाल सागर और भारतीय समुद्र में परीक्षा की गई है। इस से समुद्र-गर्भ के चित्र उतारने में क्रांति हो गई है। कैमरे की सहायता से प्राचीन जहाजों का पता लगा कर उन को निकाला गया है तथा उन के रहस्यों की जानकारी प्राप्त कर ली गई है। भूमध्यसागर में ३ मील की गहराई तक मछलियों के चित्र लिए गए हैं। कम गहरे समुद्र में टैलिविजन का भी सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है। —

# नये तत्वों की खोज

संसार के प्रमुख तत्व-अन्वेषक डा० ग्लैन टी० सीबौर्ग ने यह भविष्यवाणी की है कि आगामी ५ से १५ वर्षों तक सात नये तत्वों के निकल जाने की सम्भावना है। कैलिफार्निया विश्वविद्यालय के इस वैज्ञानिक ने प्लूटोनियम तत्व की खोज में हाथ बटाया था। आपने कहा कि मेरा अभिप्राय यह है कि नव तत्वों को संख्या १०२ से १०८ तक पहुंच जायेगी।

डा० सीबौर्ग ने कहा कि कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय में आजकल जो नई किस्म का अणु-विखण्डन यन्त्र तैयार हो रहा है सम्भवतः उसी की सहायता से इन तत्वों को तैयार किया जायेगा। इस मशीन को 'हिलेक' या ( हैवी आयन लाइनीलर एक्सेलरेटर ) कहा जाता है। यह मशीन 'नीओन' ( बिना रंग का, गैस वाला तत्व ) की तरह के हैवी न्यूकिलयाई अणु केन्द्र में—जिस का आणविक वजन २० होता है—तेजी पैदा कर देती है।

इन बड़े अणु-केन्द्रों को यूरेनियम की तरह के जब भारी अणुओं के केन्द्रों पर फेंका जाता है तब नये और भारी तत्वों का निर्माण सम्भव हो सकता है। हल्के वजन की आणविक गोली की सहायता से वैज्ञानिकों ने १९५५ में तत्वों की संख्या १०१ तक पहुँचा दी है। नये तत्व अणु की बनावट के बारे में हमारी जानकारी में वृद्धि करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। ★

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# अति प्रश्न

श्री मनसुखा

महात्मा बुद्ध ने तात्विक समस्याओं को अति प्रश्न बतलाया और यद्यपि साफ-साफ शायद कभी नहीं कहा; परन्तु आभास (रुख) यही दिखलाया कि तात्विक प्रश्न यदि बिलकुल एक दम बेकार नहीं तो लगभग फजूल से ही हैं : बहर-हाल, इतने आवश्यक तो कदापि नहीं जितनी कि कुछ दूसरी बातें और कुछ दूसरे काम।

वे दूसरी बातें क्या और वे दूसरे काम कौन से ? उन्हीं से तो बुद्ध की शिक्षा या सदुपदेश का आरम्भ होता है। संसार में दुःख है; उस का कोई न कोई कारण अवश्य है। तत्काल निदान कर यथोचित्त उपाय द्वारा दुःख का निवारण न केवल अति आवश्यक बल्कि मनुष्य जीवन का मुख्य लक्ष्य अति महत्वपूर्ण कार्य बन जाता है। इस के मुकाबिल दुनिया कब बनी; क्यों बनी; किस ने बनाई—ऐसे सब प्रश्नों में उलझना क्या? आग लगने पर बजाय पहले हर तरीके से आग बुझाने के, इस जानकारी में लग जाने के समान न होगा ? किसने आग लगाई, क्यों लगाई कैसे लगाई ? यदि कोई ऐसा करे और अपने आप को जरूरी और मुख्य छोड़ गैर जरूरी या गौण काम में लगावे तो यह अच्छा भी न होगा और न ही उस के हित में। इस का यह मतलब नहीं कि तत्व मिमांसा कोई दिलचस्प विषय नहीं या मनुष्य का ऐसे--शायद कभी न हल होने वाले प्रश्नों पर विचार करना ही गलत है। भले ही हम इस विश्व और मूल सत्ता का राज़ साफ-साफ और पूरा-पूरा कभी न समझ पायें : हो सकता है कि जैसे हम बने हैं, हमारी बुद्धि ही इस मुश्किल काम के लिए पर्याप्त या योग्य न हो। परन्तु फिर भी जीवन मरण के मूल प्रश्न (इस ज़िन्दगी से पहले क्या था और मरने के बाद क्या होगा) दुनिया के बनाने वाला कौन है और उस ने यह दुनिया क्यों बनाई, यही दुनिया क्यों बनाई और जो कुछ भी है वही कुछ क्यों है उस से भिन्न और कुछ क्यों नहीं या बिल-कुल शून्य ही 'सत्यं' क्यों नहीं है ?--ऐसे विप-मयोत्पादक प्रश्न मनुष्य बुद्धि को आदि काल से आन्दोलित करते रहे और जहां तक लगता है आगे भी हमेशा करते रहेंगे। समय पर प्रत्येक दिन सूरज का निकल आना, इतने छोटे से बीच में इतने बडे पेड़ की 'सम्भावना' और शुरूआत; कीचड़ में कमल, कांटों में फूल; लाखों प्रकार के जीव जन्तु और इन सब से भी बढ़ कर मनुष्य-मनुष्य का मषतिष्क, उस की बुद्धि और उस का मन जो पल भर में कहीं से कहीं पहुंच जाने की योग्यता रखता है—क्या यह सब कुछ, यदि हम सोचें तो 'अपूर्ण चमत्कार' नहीं ? हमें विस्मय से नहीं भर देते और आनन्द उल्लास से भी, कि सौभाग्यवश हम इतने बड़े और बढ़िया 'तमाशे' में शरीक हुये और हकदार बने। पर-वरदीगार के इस 'अजीबोगरीब शौक' 'आनन्द-मय क्रीड़ा' : 'कौतुकी लीला' के।

यह तो ठीक है जिन्दगी की इस दावत में शरीक होना—जिन्दगी के इस बुलावे को स्वीकार करना और जिन्दगी का राज़ समझने की कोशिश—परन्तु क्या सब कुछ समझ लेने से पहले जो कुछ मिल सकता है पा लेना अधिक जरूरी नहीं ? मान लो हम जिन्दगी को पूरी-पूरी तरह समझ तो न पाये परन्तु जी ठीक तरह गये 'वह कुछ' प्राप्त या सिद्ध भी कर लिया जो मनुष्य जीवन में सर्वश्रेष्ठ हैं, तब हमारा तात्विक अज्ञान या क्षुद्र ज्ञान इतना अधिक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हानिकारक नहीं रहा और हम इतनी अधिक हानि में भी नहीं रहे जितनी कि रह सकते थे। यदि जिन्दगी में जी तो ठीक तरह नहीं पाते; भले ही कुछ तात्विक या मूल प्रश्नों के उल्टे सीधे कुछ सही–कुछ गलत उत्तर खोज लिए होते। क्योंकि जिन्दगी में मुख्य काम जीना है, ज्ञान नहीं और ज्ञान भी यदि मुख्य है, तो सब से महत्वपूर्ण सिर्फ जीवन का : अर्थात् हम कैसे जियें और क्या करें कि मनुष्य जीवन सर्वश्रेष्ठ—पूर्णतया चरितार्थ—बन सके। यही तो हुआ जीवन-यापन का शुद्ध विज्ञान 'शास्त्र' और सब से मुश्किल कला भी—( क्योंकि यहां जानने से भी अधिक महत्व और जरूरी करना है ) नीति धर्म या अध्यात्म शास्त्र सब विद्याओं में सर्वश्रेष्ठ विद्या अति गुह्य और राज्य विद्या ब्रह्म विद्या। सब से पहले इस का जानना जरूरी : सब से पहले इस को समझना जरूरी और सब से पहले इस का करना जरूरी तथा लाभदायक। कनफ्यूशियस ने जब कहा कि जब तक जिन्दा हैं हम पहले जिन्दगी का राज समझ लें—जिन्दगी की ही बात सोचें, मरने के बाद समझ लेंगे कि मौत क्या है—मरने के बाद क्या होता है—उस की भी यही इच्छा थी जो सुकरात की तात्विक समस्याओं के प्रति अरुचि से प्रकट होती है। बाबा ने अपने समय के या अपने से पहले के दूसरे दार्शनिकों की तरह अपने आपको तर्क-शास्त्र या तत्व मिमांसा की बहुत सी बेईमानी और न सुलझने वाली गुत्थियों में न ही उलझाया और न ही फजूल शास्त्रार्थ या वाद-विवाद कर उन से परेशान हुआ या दूसरों को परेशान किया। इस बात में तो सुकरात पूरा-पूरा सोफिस्ट के साथ था कि मनुष्य के लिए प्रथम और मुख्य बात मनुष्य को ही जानना : अपने आप को ही समझना है न कि प्रकृति या देवी देवताओं को। परन्तु बाबा और सोफिस्ट में दूसरी ओर अन्तर भी तो महान था। यह अन्तर इतना ही उन की गवेषणा या विचार-विमर्ष के क्षेत्र या विषय में नहीं; जितना कि दृष्टिकोण और उद्देश्य में था। सोफिस्ट चाहते थे मुख्य तौर पर व्यक्तिगत लाभ और बाबा शुद्ध ज्ञान—यद्यपि दोनों ही इस सत्य से सहमत थे कि अत्यधिक महत्व का मनुष्य के लिए मनुष्य का ही ज्ञान है।

फिर तत्वमिमांसा की समस्याएं कब आसानी से सुलझने में आती हैं। उन में से कुछ तो निस्सन्देह झूठी या केवल सच्ची आभाषित होने वाली ही हैं—या पूर्णतया सत्य प्रश्न नहीं। तत्व मिमांसकों की ओर आक्षेप कि—फिलौसफर एक काली बिल्ली को अन्धेरी रात में ढूंढता रहता है और एक ऐसी बिल्ली जो न कभी थी, न होगी। यदि पूर्णतया उचित नहीं तो बहुत अधिक अनुचित भी नहीं। कारण बहुत सी समस्याएं तो मनुष्य फजूल ही बना लेता है जैसे कि बहुत से दुःख उस के अपने ही दुष्कर्मों के दुष्परिणाम होते हैं। जैनों ने इस पर वादविवाद किया कि तीर कमान से छोड़े जाने पर भी एक जगह से दूसरी जगह नहीं जा सकता। हमारे यहां साक्षात परमेश्वर के अवतार लेने या न लेने की सम्भावना पर बहुत बहस हुई। लोगों ने सिर्फ बहस मुबाईसा पर ही हमेशा बात न छोड़ी। कई जगह और यह लगभग सभी धर्मों में हुआ है, एक तात्विक मत वालों ने दूसरे तात्विक मत वालों के सिर फोड़े : उन्हें बुरा भला कहा, नागरिक अधिकार छीन लिए। यद्यपि कह सकते हैं कि इस में न तो धर्म का कसूर था न तत्व मिमांसा का। अवश्य, कसूर था तो मनुष्य का और उस के भीतर छुपे मुमकिन शैतान का जो जरा सा भी मौका पा मनमानी करने लगता है—यहां तक कि धर्म के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नाम पर भी अधर्म : और धर्म की आड़ में भी अधर्म।

परन्तु जहां तक ईमानदार तात्विक समस्याओं का भी प्रश्न है उनके भी उत्तर भिन्न-भिन्न हो सकते हैं : कितने ही समाधान भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से। इनमें से कुछ सही, कुछ गलत अवश्य होंगे; परन्तु जो सही लगते हैं उनको पूर्णतया सही होने की सम्भावना बहुत कम ही है। मनुष्य का ज्ञान इतना सीमित संकुचित और त्रुटिपूर्ण है उसकी बुद्धि इतनी अधिक अल्पः अपर्याप्त, अविकसित तथा अपरिमार्जित कि सत्य को सोलह आने पकड़ पाना तो दूर रहा वह उसका 'काम चलाऊ सही रूप भी शायद ही कभी कभी समझ पाती है। विशेष कर तत्वमिमांसा में तो जैनियों का स्याद्वाद वाला रुख और सिद्धान्त ही श्रेयकर तथा उचित जान पड़ता है : 'हो सकता है यह हो—हो सकता है वह हो : हो सकता है यह वह दोनों ही हों या यह भी हो सकता है कि यह वह इनमें से एक भी सत्य न हो'।

यदि वास्तव में हमारा तात्विक ज्ञान चन्द अन्धों के हाथी के भिन्न-भिन्न अङ्गों के अनुभव के समान है, तब तो प्रत्येक उत्तर के साथ यही लगा देना वेहतर होगा मुझे लगता है शायद ऐसा हो। निश्चित पर यह कहना कि सचमुच ऐसा ही है न कोरा दम्भ है, बल्कि अवैज्ञानिक भी। लिहाजा तत्वमिमांसा में अनुसन्धान के लिए क्षेत्र हमेशा खुला रहा, प्रेमपूर्वक विचार विमर्ष के लिए भी और दार्शनिक हठ या धार्मिक अहिष्णुता के लिए ज़रा भी नहीं।

यदि हम तत्व मिमांसा की समस्याओं के प्रति 'अति प्रश्न' वाला रुख पूर्णतया उचित या समाधान कारक न भी मानें; तब भी अनेकान्त वाद और स्याद्वाद वाला रुख हमें बहुत से तात्विक झगड़े झमेलों से बचा देगा।

यूं तो हमारे धर्म में तात्विक और नैतिक-आध्यात्मिक ज्ञान में मूलतः कोई भेद नहीं किया है। बल्कि सच्चा तात्विक ज्ञान तो मुमकिन ही नैतिक उत्थान या आध्यात्मिक विकास की पहचान है। क्या पातंजलि ने नहीं कहा 'मुक्तावस्था' में ऐसा अनुभूत होगा कि जो कुछ जानना था जान लिया है और जो कुछ पाना था पा भी। लिहाजा यदि शुद्ध तात्विक ज्ञान भी निरन्तर चित्त शुद्धि के अपेक्षा रखता है, तब हमारे दृष्टिकोण से भी मूलतः अति प्रश्न सिर्फ बाद के प्रश्न हो गये : आरम्भ के नहीं। आरम्भ में तो बुद्ध के कथनानुसार हम आवश्यक काम में लगें। चित्त शुद्धि करें और मोक्ष सिद्ध। फिर जिन प्रश्नों ने हल होना है अपने आप हो जावेंगे और जिन्होंने नहीं—वे अपने आप अनावश्यक अतिप्रश्न रह जावेंगे। जो तत्व मिमांसा के विद्यार्थी और अध्यापक भी हैं उनके लिए भी फिलसफा की गुत्थियों में सार या करने योग्य को न भुलावें और नाही तर्कजाल में अपने आप को 'गुमराह' हो जाने दें या दूसरों को करें—बहकावें। विशेषकर तो 'अति प्रश्न' का 'अहम मसला' दार्शनिकों की ही ऐतहात के लिए है और उन सामान्य आदमियों को बचाने के लिए भी जो इतने दार्शनिक तो नहीं परन्तु दार्शनिकों की बातों में जरूर आ जाते हैं। वैसे तो हमारे सब के लिए ही यह जान लेना आवश्यक है और फायदेमन्द भी कि, बहुत सी बातें बेकार सी ही होती हैं और बहुत से प्रश्न 'अति प्रश्न'।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# राजस्थान की चित्र-शैलियां

श्री रामगोपाल विजयवर्गीय

संसार की रूपमयीं सत्ता में जितनी विविधता और विचित्रता है उसका ज्ञान यद्यपि हम अपने दोनों चक्षुओं द्वारा ग्रहण कर सकते हैं किन्तु उसके अन्तर में छिपे सत्य को हम तभी पा सकते हैं जब उसका पूर्ण रूप से अध्ययन करें। प्रत्येक इन्द्रिय जन्य सुख इसी प्रकार उसको साधना के बिना सिद्ध नहीं होता। उसका एक व्याकरण होता है, साहित्य होता है और अनुभव की पृथक्-पृथक् विधियां होती हैं उदाहरण स्वरूप वाणी की मधुरता श्रवण द्वारा समान रूप से ग्रहण की जाती है किन्तु बिना स्वर ज्ञान के उसका आनन्द प्राप्त कर लेना कदापि सम्भव नहीं है। यही दशा चित्र अथवा अन्य कलाओं की है, यद्यपि चित्र की भाषा सार्वभौम क्षमता प्राप्त नहीं कर सकती।

रूप जितना विविध होगा, जितना विचित्र होगा, उतना ही अधिक रस दायक सिद्ध होगा। इसीलिये ईश्वरीय सृष्टि की विविधता हमारे आकर्षण का केन्द्र है। कैसा है, कैसा होगा, यही जिज्ञासा प्रतिक्षण हमारी रस वृत्ति को जागृत करती रहती है। इस दृष्टि से चित्र भी जितने विविध होंगे उतने ही हमारी रसरुचि को तृप्त करने में समर्थ होंगे। रूप में सौंदर्य की सम्यक अभिव्यक्ति ही चित्र का चरम लक्ष्य है। चित्रकार रूप का वैचित्र्य सौंदर्य के अनन्त सागर में डुबो कर रस की धारा बहाता है, तथ्य से सत्य की ओर अग्रसर होता है।

## कल्पना की चरम अभिव्यक्ति

भारतीय चित्र विद्या में प्रकृति तद्वत् अनुवृत्ति नहीं है प्रत्युत प्रकृति में बिखरे हुए सौंदर्य को मधुमक्खी की भांति संचित करके प्रकाश में लाना है। कल्पना की चरम अभिव्यक्ति ही यहां के चित्रकार का कौशल है। इस दृष्टि से राजस्थानी शैली एक अध्ययन का विषय है। इसमें मौलिक अभिव्यक्ति के साथ रूप की उदात्त छटा विचित्र के सूत्र में पिराई गई है। दर्शक को, जो कुछ वह देख रहा है, उसके आगे भी इतना कुछ दिखाने का प्रयत्न किया जाता है कि उसका ज्ञान लौकिक सौंदर्य से अलौकिक सौंदर्य की ओर अग्रसर होकर सौंदर्य के प्रति इतना गम्भीर हो जाता है कि जो कुछ प्रत्यक्ष है और जो कुछ नहीं है उसकी दृष्टि में समान रूप ले लेता है। वह सौंदर्य के स्थूल दान से सूक्ष्म ज्ञान की ओर बढ़ने लगता है। सौंदर्य का सूक्ष्म ज्ञान तो सूर्य के ज्ञान के समान है, वह वाणी का विषय नहीं है।

राजस्थानी चित्र सर्व प्रथम अपनी जाति का परिचय देता है पश्चात् अपना, किन्तु वह सरलता से स्पष्ट भी नहीं होना चाहता। दृश्य के ज्ञान की परीक्षा करता है। यदि उसकी दृष्टि परिमार्जित है, रस की मधुरता से परिचित है तो चित्र कुछ कहता है अन्यथा मूक के समान एक तमाशा बनकर रह जाता है। यदि आपका ज्ञान परिपक्व है तो आपको अपने प्रश्नों का उत्तर मिलेगा, यदि आप खाली दृष्टि से देखना चाहते हैं तो खाली ही लौट चले जाइये। कुछ पल्ले न पड़ सकेगा। तात्पर्य यह कि राजस्थानी चित्रों को समझने के लिए अपने ज्ञान को उस धरातल पर लाइये, जहाँ चित्र अपनी ज्ञान गरिमा लिये स्वयं बैठा है। भारतीय चित्र शास्त्रोक्त विधियों से युक्त मर्यादा के बन्धनों में बंधे आध्यात्मिक सिद्धान्तों के नियमों से गम्भीर होते हैं। वे केवल उसी से बात करते हैं जो उन से बात करने का पात्र हो। राजस्थानी चित्र

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारतीय शास्त्रोक्त परम्परा के दास हैं। एक पग भी मर्यादा छोड़ कर चलने वाले नहीं ?

## आलोचकों का मत

राजस्थानी चित्रों को आलोचना करते समय चित्र पारखियों ने यह मत व्यक्त किया है कि राजस्थानी चित्र मुग़ल शैली से प्रभावित हैं। यह कथन असत्य नहीं, किन्तु राजस्थानी चित्रों ने मुग़ल शैली का बाह्य रूप ही किंचित मात्रा में ग्रहण किया है, चित्र की आत्मा सर्वथा भारतीय और अपनी मर्यादा में सीमित है। किसी ने वेश भूषा देखकर मुग़ल प्रभाव बताया तो किसी ने वृक्ष, लता और भवनों की परम्परा से उपरोक्त अनुमान लगाया। परन्तु उन्होंने चित्रों की उन विधियों को और उन नियमों का नहीं देखा, जो किसी भी प्रभाव के कारण एक तिल नहीं हिले यद्यपि राजस्थानी चित्रों में मुग़ल चित्रों की अनेक कुशल प्रतिलिपियां हुई हैं।

## राजस्थानी चित्र-कला का सम्बल

मुग़ल सरदारों में रहकर जिन चित्रकारों ने चित्र विद्या की शिक्षा ली। वे उसके प्रभाव से छूट नहीं सकते थे, तब भी एक नियम, एक परम्परा थी जो राजस्थानी चित्रों को अपनी सीमा से बाहर नहीं होने देती थी। वह थी— शास्त्रों की आज्ञाएं। विष्णु धर्मोत्तर के आदेश जैसे उन्हें पथभ्रष्ट होने से रोक रहे थे। मुग़ल कला के आगे इस प्रकार की कोई पथनिर्देशक शक्ति नहीं थी। यही कारण था कि मुग़ल कला थोड़े ही काल में छिन्न-भिन्न हो गई। अंग्रेजी, भारतीय ईरानी अनेक प्रभावों ने उसे खिचड़ी बनाकर रख दिया। यद्यपि दूसरों से प्रभावित होना गुण है किन्तु अपनी मर्यादा छोड़ देना विनाश है। राजपूत चित्र शैली ने इसी गुण आधार पर अपना व्यक्तित्व समाप्त नहीं होने दिया।

जिस समय मुग़ल कला का ह्रास होने लगा, उस स्थिति में भी राजपूत चित्र मौन दबे पड़े रहे, किन्तु उन्होंने अपने को जीवित रखा। इसका परिणाम यह हुआ कि आज के प्रगतिशील युग में राजस्थानी चित्रों की परम्परा पुनः जीवित हो उठी है। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि पाश्चात्य चित्रकारों ने प्रगतिशील प्रयोगों की प्रेरणा राजस्थानी चित्रों से ग्रहण की है। फ्रांस के चित्रकार और उनके अनुयायी भारत के प्रगतिशील चित्रकार क्या वही चित्रित नहीं कर रहे हैं जो राजस्थानी चित्रकार आज से चार सौ वर्ष पहले चित्रित कर चुके थे ? राजस्थानी चित्रशैली छोटे से राजस्थान प्रान्त में विकसित हुई, किन्तु उसमें कितनी विवधता, कितना प्रचुर वैचित्र्य और कितनी सशक्त अभिव्यक्ति है इसका ज्ञान हमें उसकी विभिन्न शैलियों पर एक दृष्टिपात करने से होगा।

## बारह शैलियां

राजस्थानी शैली में सब मिला कर बारह शैलियां हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं : जयपुर शैली, जोधपुर शैली, बीकानेर शैली, जैसलमेर शैली, कोटा शैली, बून्दी शैली, किशनगढ़ शैली, नाथद्वारा शैली, करोली और भरतपुर शैली। इनमें भी पांच प्रमुख शैलियां हैं और अन्य सात इन्हीं पांचों के अन्तर्गत थोड़े भेदों के साथ चलती हैं। इन पांचों शैलियों में पुरुष और नारी के भिन्न-भिन्न नख शिख चित्रित किये जाते हैं वृक्ष लता, पशु, पक्षी, भवन, आसन, रंग और रेखायें सब अपनी-अपनी सीमाओं में मर्यादित हैं, जिनका ज्ञान थोड़े विवेचन से ही प्राप्त किया जा सकता है। हाशिये, फूल, पत्ते, आभूषण, वस्त्रों के प्रकार, वेश-भूषा आदि को देखने पर हम निश्चित कर सकते हैं कि ये अमुक शैली के हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## राजसी कला और लोक कथा

इन शैलियों के रूप और इनके प्रकार विशद हैं। इन शैलियों को भी दो मार्गों में विभक्त किया जा सकता है--एक राज्याश्रम में पली राजसी कला और दूसरी जनता के सम्पर्क में पली लोक कला। राजसी कला का रूप वैभव अत्यन्त आलंकारिक तथा परिश्रम युक्त था। इस प्रकार के चित्र राजाओं के विलासपूर्ण जीवन, धार्मिक जीवन युद्ध, आखेट और मनोरंजन की विविध लीलाओं के प्रतीक हैं। ये चित्र राजाओं को प्रसन्न करने के लिए अथवा उनकी आज्ञाओं से बने। इन राज्याश्रित चित्रकारों को बड़ी-बड़ी जागीरें, सम्मान और पुरस्कार मिलता रहता था। उनकी साधना के लिए उत्तम उपकरण प्राप्त थे। उत्तम से उत्तम प्रेरणा-मूलक सामग्रियां उपस्थित रहती थीं। सुविधाओं के कारण राजस्थानी कला ने उत्थान की चोटी पर पांव रक्खा। धार्मिक प्रवृत्ति ने भी इस क्षेत्र को उर्वर बनाया।

## भगवान के दर्शन की एक विधि

भक्ति कला का वह युग चित्रकला के लिए अत्यन्त लाभप्रद प्रमाणित हुआ, जब वल्लभ सम्प्रदाय के आचार्यों ने 'सर्व खल्विदम् ब्रह्म' कह कर समस्त रूपों में भगवान की सत्ता का आरोप मानकर चित्रकला को भगवान के दर्शन की एक विधि प्रमाणित किया। चित्र और काव्य एक दूसरे प्रतियोगिता में आये। चित्र काव्य से और काव्य चित्र से आगे बढ़ने के लिये मार्ग ढूंढने लगे। कवि सूरदास ने भगवान की बाल-लीला का ऐसा अद्भुत चित्रण किया कि चित्रकारों की तूलिका उन भावनाओं को चित्रित करने के लिये विवश हो गई। राधा माधव का लीलाविलास सागरको तरने का अवलम्ब बन गया। चित्रों की उपयोगिता उतनी ही समझी जाती थी जितनी काव्यों की।

अनेकों चित्र, काव्य का आनन्द सरलता से लेने के लिये चित्रित किये गये। प्रातःकाल चित्र दर्शन उपासना का अङ्ग बन गया तथा चित्रों की चर्चा घर-घर में चल पड़ी। जनता ने भी चित्रों का स्वागत किया। चित्र राज दरबारों के साथ-साथ बाजार में उतर आये। लोक कला का निर्माण इसी जनता के चित्र-प्रेम ने किया। राग रागिनियों के सम्पूर्ण भेद, नायिका भेद के विविध अङ्ग और रामायण के कथा प्रसंग चित्रों के रूप में घर-घर पहुंचने लगे। जनता की रस रुचि परिपक्व होकर सौंदर्यतत्व के सम्यक् विवेचन पर उतर आई। यही रीतिकालीन युग था, जब केशव ने 'रसिक प्रिया' और घनानन्द ने 'सुजान' का गुण गान किया, जब कवि देवकी तन्वी नायिकायें चित्रों के क्षेत्र में उतर आई, मतिराम की नायिकाओं के कटाक्ष, चकोर, खंजन, कमल और मीन के रूप में चित्रों का विषय बने किशनगढ़ के कवि नागरीदास ने नागरी राधा को उपास्य मानकर उनके खंजन नेत्रों में अपने आपको समर्पित कर दिया। राधा की वह छवि किशनगढ़ के चित्रों में छा गई राधा को नवीनतम रूप में चित्रकारों की तूलिका ने निर्मित किया। उस रूप पर जनता मुग्ध हो गयी। नागरीदास के भजन इक-तारों की ध्वनियों में गूञ्ज उठे और राधा की रूप माधुरी जन-जन की आंखों में समा गयी। कोटि कोटि हृदय उस रूप माधुरी पर निछावर हो गये—प्रिया चरण पद परस हित, लियों रूप घनश्याम। कवि नागरीदास जी का मत था कि श्री कृष्ण ने राधारानी के चरणों को स्पर्श करने ही के लिए अवतार लिया था। तब उस रूप पर क्यों न कुरबान हो जाते?

## रूप की आराधना में डूबा राजस्थान

उस काल में सारा राजस्थान रूप की आरा-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धना में डूबा हुआ था। जोधपुर के पट दर्शक सचित्र कहानियों को गीत और वाद्य के साथ घर-घर में दिखलाते फिरते थे। बीकानेर के मथेरे, जो ब्राह्मणों की एक जाति विशेष है, सचित्र पुस्तकें लिखने लगे थे। जयपुर के कुम्हारा भित्तियों पर चित्र अङ्कित कर रहे थे। जैसलमेर के भाटी राजपूत तलवार छोड़ कर तूलिका से खेल रहे थे। किशनगढ़ के दायमा ब्राह्मण और बूंदी के जोशी राधा मुकुन्द की केलि कलाओं का चित्रण कर रहे थे। स्त्रियों ने भी इस प्रगति में हाथ बंटाया। वे घरों की दीवारों पर, आंगन में, बरतनों पर, मेंहदी के बहाने अपनी हथेलियों पर प्रतीकात्मक चित्र बनाने लगीं।

राजस्थान का चित्र-शिल्प लकड़ी, लोहा, पत्थर और मिट्टी तक के ऊपर उतर आया था। आमोद-प्रमोद में चित्रों का व्यवहार होने लगा। आश्विन मास में प्रत्येक रात्रि को नये-नये चित्र बनाये जाते थे और जनता के देख लेने के पश्चात प्रति दिन मिटा दिये जाते थे। इस प्रतियोगिता में जनता भाग लेती थी और यहां के राजा पुरस्कार के रूप में अपनी रुचि का प्रमाण देते थे। मन्दिरों के उत्सव, विवाह, मेले तथा नित्यकर्मों में भी चित्र-दर्शन की परिपाटी थी। इस रस रुचि ने राजस्थानी संस्कृति को इतना कुछ दिया कि आज सारा राजस्थान एक अद्भुतालय दिखलाई पड़ता है। रंग-बिरंगा राजस्थान आज भी भारतीय संस्कृति का प्रमुख अङ्ग है और यहां की चित्र शैली विदेशों में भी अध्ययन का विषय बन गयी है।



## ज्ञातव्य बातें

- अगले पांच साल में भारत में संग्रहालयों के विकास और पुनर्गठन के लिए लगभग ढाई करोड़ रुपये दिये गये हैं।
- भारत में १६५५ में ४०,६०,००० रुपये की लागत के शीत ताप नियन्त्रक यन्त्र बनाये गये।
- १६५४–५५ में भारत में १ करोड़ ८३ लाख एकड़ भूमि में कपास बोयी गयी। पिछले वर्ष १ करोड़ ७२ लाख एकड़ भूमि में कपास बोयी गयी थी।
- भारत सरकार अब तक विभिन्न राज्यों में १३ औद्योगिक बस्तियां बनाने की अनुमति दे चुकी है, ताकि सारे देश में उद्योग फैल जाएं।
- दूसरी आयोजना की अवधि में लगभग २३०० परिवार आयोजन केन्द्र खोले जायेंगे।
- दूसरी पंच वर्षीय आयोजना में अनुसूचित जातियों के कल्याण के लिए २० करोड़ २८ लाख रु० रखा गया है।
- भारत और तिब्बत को मिलाने वाली सड़क के निर्माण पर अब तक ७१ लाख २६ हजार रुपया खर्च किया जा चुका है।
- सन् १६५५ में देश में ८२६००० रुपये के कीमत की तोलने की मशीनें तैयार की गयीं।
- १६५२–५३ में देश में चाय की खपत १७ करोड़ ५० लाख पौंड थी, जो १६५४–५५ में १८ करोड़ ३० लाख पौंड हो गयी।
- १६५५–५६ में भारत सरकार ने राष्ट्रीय अनुशासन योजना पर ४३२००० रु० खर्च किया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# राष्ट्रिय-शिक्षा

श्री रामपालसिंह

हम सभी जो शिक्षा से सम्बन्धित हैं हृदय से चाहते हैं कि शिक्षा के क्षेत्र में देश की वास्तविक आवश्यकताओं का मनन करें और प्रयास करके पूर्ण कर सकें। गुरुकुल विशेषकर उन संस्थाओं में से रहा है जिसने शिक्षा के वास्तविक क्षेत्र को ही अपना प्रथम उद्देश्य रखा है। उस काल में जब कि देश की सरकार को गुरुकुल फूटी आंख नहीं भाता था देश के नैतिक तथा सांस्कृतिक उत्थान में एवं परतन्त्रता की श्रृंखलाओं को तोड़ने में जी तोड़ प्रयत्न किया है। जो इस से सम्बन्धित रहे हैं उन्हें इसका पूरा गौरव होना चाहिये।

आज थोड़ा परिस्थितियों में परिवर्तन है और वह यह कि हम अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये विदेशी सरकार से मुक्त हैं, किन्तु क्या इस स्वतन्त्रता का हम पूरा लाभ उठा सके हैं? यह बात विचारणीय है।

स्वतन्त्रता प्राप्त होने के पश्चात् जो बड़ी-बड़ी समस्यायें अपने विराट रूप में हमें अङ्गरेजों द्वारा सौंपी गई वे थीं हर ओर 'अभाव' खाने के अन्न की कमी, पहनने के कपड़े की कमी, इलाज के लिये दवा तथा डाक्टरों की कमी, पढ़ाने के लिये विद्यालयों की कमी और उद्योग के लिये चतुर श्रम की कमी। पंचवर्षीय योजना बनी जो इन कमियों को दूर करने के लिये राष्ट्र का बहुत बड़ा प्रयत्न है अभी दूसरी पंचवर्षीय योजना में यह विश्वास किया जाता है कि अब तक ४२ प्रतिशत बच्चों को शिक्षा प्राप्त हो सकती थी उसे चढ़ा कर ६० प्रतिशत किया जा सकेगा। इसके लिये १५८ करोड़ रुपया नियत किया गया है, सन् १९५५ तक १०६ करोड़ रुपया ४ वर्ष में शिक्षा पर व्यय किया गया है किन्तु इतने बड़े देश के लिये यह राशि बहुत ही न्यून है। इस राशि का बढ़ाना भी देश के लिये सरल कार्य नहीं, राष्ट्र को सभी क्षेत्रों में प्रगति करनी है। इस कारण जो राष्ट्रिय आय है उसका एक निश्चित भाग ही हमें प्राप्त हो सकता है, फिर भी शिक्षा की ओर पूरा ध्यान अभी नहीं हुआ है।

आज की शिक्षा की बहुत कटु आलोचना हो रही है, उसका मुख्य कारण उसका केवल बौद्धिक और सैद्धान्तिक होना ही है। इस लिये हमारे योजना आयोग ने यह सिफारिश की है कि सब प्रारम्भिक पाठशालायें, बेसिक स्कूल में बदल दी जायें। जहां मस्तिष्क हृदय और हाथ तीनों विकास पा सकें। और माध्यमिक शिक्षा भी सही सिद्धान्तों पर निर्धारित की जाए, कमीशन ने ग्रामीण विश्वविद्यालयों के स्थापना की सिफारिश की है। ये भी सिफारिश की गई है कि हाथ के कार्य को शिक्षा क्रम में उचित स्थान दिया जावे।

जहां तक शिक्षक वर्ग का सम्बन्ध है उस पर भी आयोग का ध्यान गया है बड़े दुःख का विषय है कि कुछ संस्थाओं को छोड़कर देश की सामान्य संस्थाओं में केवल वही शिक्षक आकर्षित होते हैं जिन्हें देश की बेकारी की समस्या ने यह उद्यम अपनाने पर विवश कर दिया है। आयोग ने सिफारिश की है कि इस शिक्षक वर्ग को जिनका कार्य देश के आगे आने वाली पीढ़ी को बनाना है कुछ अधिक सुविधायें दी जायें। जैसे—वेतन का बढ़ाना, निवास स्थान का निःशुल्क होना, तथा उनके बच्चों की शिक्षा में सहायता, यह प्रत्येक प्रादेशिक सरकार से सिफारिश की गई है कि वह यथा सम्भव उपरोक्त सुविधायें देने का प्रयत्न करे।

इसके अतिरिक्त प्रौढ़ शिक्षा पर भी हमारा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उचित ध्यान होना अनिवार्य है जहां अशिक्षित होना पाप है वहीं समाज को भी यह प्रयत्न करना उचित है कि वह इस कोढ़ को दूर करे।

जब हम राष्ट्रिय शिक्षा कहते हैं तो हमें पहले राष्ट्र शब्द प्राप्त होता है। राष्ट्रियता की परिभाषा कई प्रकार से की गई है। जहां तक एक प्रचलित सी बात है राष्ट्र उस मनुष्यों के समूह को कहते हैं, जिस की एक संस्कृति, एक भाषा, एक धर्म तथा एक इतिहास हो यह कोई पुरानी चीज नहीं है। यह तो केवल एक ही सदी पुराना विचार है। राष्ट्रियता एक भावना का नाम है और ऐसे मनुष्यों का समूह है जो एक साथ रहने की इच्छा रखते हों या रहते हों इस से ज्ञात होता है कि यह इच्छा जब क्षीण हो जाती है राष्ट्रियता छिन्न-भिन्न हो जाती है। इस से हम तात्पर्य निकालते हैं कि शिक्षा का उद्देश्य केवल अच्छे माता पिता या उद्योग पति ही नहीं बनाना है अथवा अपना जीवन निर्वाह करने के योग्य ही नहीं बनाना है अपितु उन्हें एक योग्य नागरिक जो देश के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझ सकें और उसे निभा सकें ऐसा बनाना है।

इस की आवश्यकता आज हमें इस लिए अधिक है कि देश के सामने एक परीक्षा का समय है। आज अङ्गरेजों के पढ़ाये हुये तथा राष्ट्र के कुछ तत्वों के द्वारा ऐसे बीज बो दिये गये हैं जिन के परिणाम देश के विभाजन, प्रांतीयता, जातीयता, धर्म विरोधी भावनायें और वर्गवाद के रूप में हमारे राष्ट्र को अन्दर ही अन्दर खोखला किये जा रहे हैं. कोई भी ऐसा नागरिक जिस में देश प्रेम होगा, जिस में थोड़ी समझ होगी, क्या वह अपनी आंखों के सामने अपने राष्ट्र को निर्बल होता हुआ देख कर अपने हृदय को शान्त रख सकेगा। यह सब परिणाम उस गलत शिक्षा का ही है। जो मुस्लिम यूनिवर्सिटी, मुस्लिम लीग, राष्ट्रिय स्वयं सेवक संघ, हिन्दू महासभा आदि अहितकर तत्वों ने देश में अपने बहुत ही गौण लाभ के लिए उत्पन्न किए हैं या कर रहे हैं। मनुष्य की कुभावनाओं को उभारना इतना मुश्किल नहीं होता जितना कि उसे सहनशील बनाना, विभिन्न धर्मों में एकरूपता देखना और उस की अच्छी भावनाओं को जागृत करना होता है। हम शिक्षकों का यही कार्य है। आज हमारा उत्तरदायित्व ऐसे समय में और बढ़ गया है, गुरुकुल ने सदैव राष्ट्रवादी झंडा लहराया है, आहुति दी है, सामाजिक बुराई दूर करने के लिए बलिदान दिया है। यह उस समय किया है जब देश की अधिकतर पार्टी इस आन्दोलन को सफल बनाने में लगी हुई थीं, किन्तु आज परिस्थिति मेरे विचार से विस्फोटक है। महाराष्ट्र, पंजाब, बंगाल, बिहार आदि के दृश्य चिंतित करते हैं। आज देश की एकता को खतरा हो गया है, यह सब क्यों है? मैं तो केवल इस का एक ही कारण समझता हूँ वह है सहनशीलता की कमी, एक प्रदेश दूसरे के प्रति असहनशील, एक धर्म दूसरे के प्रति कटु आलोचक. एक जाति दूसरी जाति को हीन समझना इत्यादि।

आज गुरुकुल के सामने देश के लिए रचनात्मक कार्य करने का एक बहुत बड़ा क्षेत्र खुला है। यहां विभिन्न प्रान्तों से बच्चे शिक्षा पाते हैं और एक दूसरे के प्रति प्रेम, आदर और सम्मान की भावना लेकर जाते हैं। जिस प्रकार यहां आचरण सुधरता है, मस्तिष्क का विकास होता है। उसी प्रकार हमारे यह बच्चे देश के आर्थिक निर्माण में भी उपयोगी सिद्ध हों। यह विदित ही है कि कई संस्थायें इसी प्रकार की चल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रही हैं, और ईश्वर करे ये देश की श्रेष्ठ संस्थाओं में गिनी जाने लगें। मुझे तो यहां तक प्रार्थना करनी है कि अतीत की तरह से हम देश की वास्तविक आवश्यकताओं को समझें और प्रत्येक विद्यार्थी को यहां से ऐसा निपुण बना कर भेजें कि वे अपनी पत्र उपाधियों को ले कर एक कार्यालय सेदूसरे कार्यालय में किसी तुच्छ सेवा के लिए न फिरते रहें, अपितु वे किसी न किसी उद्योग में इतने स्वावलम्बी हों कि बेकारी की समस्या ही न उपजे। बेकारों की समस्या ने प्रतिक्रियावादियों की संख्या में वृद्धि की है। दूसरी ओर हमें प्रविधिज्ञों की कमी है। हमारा उद्योग ऊंचे स्तर पर नहीं पहुँच रहा है जिस पर देश की आय निर्भर है। क्या हम अब भी यह सोच सकते हैं कि वह कार्य किसी और के करने का है? क्या देश की आवश्यकतायें हमें अब भी चेतना नहीं दिला सकतीं? सदैव की तरह हमें अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक ही रहना है। क्या ही अच्छा हो कि अपनी चादर को देखते हुए हम कुछ अपना लक्ष्य बना लें और एक-एक करके उपयोगी संस्थाओं की नींव रखते रहें।

नई शिक्षा संस्थाओं को खोलने में आर्थिक समस्याओं को दृष्टि में रखते हुए भारत की शिक्षा योजना तब सफल हो सकती है जब कि हम आगे से ऐसी संस्थायें खोलें जो शिक्षण एवं उत्पादन केन्द्र हों। अब तक शिक्षण और उत्पादन केन्द्र अलग-अलग रहे हैं, इनको यदि एक जगह कर दिया जावे तो इस समस्या का बहुत कुछ समाधान हो जाता है जैसे—टैक्सटाइल मिलों से सम्बन्धित शिक्षा चल रही है, वह इन मिलों में ही सिशिक्षुओं को कुछ अवैतनिक या मान वेतन देते हुये होनी चाहिये। इससे उस संस्था के स्थापन व्यय में बचत हो जाती है जिसका निर्माण केवल शिक्षा के हेतु ही किया जाता है।

इस समय ऐसी अवस्था है कि जनता तथा सरकार दोनों ही हृदय से देश के निर्माण में सहयोग दे रहे हैं, और जितना सम्भव था जनता ने भी स्वतन्त्र शिक्षा संस्थाएं खोल कर इस समस्या को सुलझाने का प्रयास किया है। अब इससे अधिक अभिजन शिक्षा संस्थाओं का खुलना बहुत बड़ी संख्या में सम्भव नहीं रहा और न ही शिक्षा का पूरा उत्तरदायित्व सरकार सम्भाल सकती है। ऐसी अवस्था में केवल एक ही रास्ता है और वह है—

## शिक्षा एवं उत्पादन केन्द्रों का खोलना

अब यह प्रश्न रहता है कि ये केन्द्र किस प्रकार के खोले जायें, यहां दो-एक उदाहरण देना अप्रसांगिक न होगा, लखनऊ में एक (इन्स्ट्रूमेंट फैक्ट्री) जिसमें छोटे महत्वपूर्ण शल्योपकरण तैयार किये जाते हैं और शिक्षा की पत्रोपाधि भी दी जाती है। मेरठ में एक प्राइवेट रेडियो इन्स्टीच्यूट जिसमें रेडियो बनते हैं, मरम्मत होती है और प्रशिक्षण भी होता है। इसी प्रकार की अन्य कई प्रशिक्षण संस्थाएं देश में सरकार तथा जनता के द्वारा खोली जा सकती हैं, दौराले में भी श्री मुख्तयार सिंह टैक्नीकल इन्स्टीच्यूट खुला था जिसे अब सरकार चला रही है। इसी प्रकार की संस्थाएं दूसरे अन्य उत्पादन केन्द्रों से आसनजन हो जावें तो एक वास्तविक प्रशिक्षण भी होगा तथा उत्पादन में वृद्धि भी होगी और इसके साथ-साथ संस्थाओं का स्थापना व्यय बचेगा। ये उत्पादन एवं प्रशिक्षण केन्द्र रेडियो, घड़ी, माचिस, कागज, प्लाष्टिक साबुन, फर्नीचर, साईकल तथा (डाइज़) रङ्गों इत्यादि उत्पादन केन्द्रों में जोड़े जा सकते हैं या नए खोले जा सकते हैं। ये संस्थाएं आत्म निर्भर हो सकेंगी और देश पर एक शिक्षा का अतिरिक्त भार बन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर उपस्थित नहीं होंगी। ये सम्भव है कि इनके निकले हुए विद्यार्थियों को मास्टर या बैचुलर जैसे देखने में सुहावने शब्द उपाधि रूप में न मिलें किन्तु उन्हें एक ऐसी शिक्षा अवश्य मिलेगी जो देश के लिए अत्यन्त उपयोगी होगी। देश में रहने वाले प्रत्येक प्राणी का कुछ न कुछ उत्पादन करना परम कर्तव्य है, जो उत्पादन नहीं करता वह देश पर बोझ है। यह अनर्थ है कि उत्पादक और उपभोक्ता के बीच में मुनाफाखोर इतनी अधिक मात्रा में हों कि उपभोक्ता को उनका यथोचित न मिल कर मुनाफाखोर एक बहुत बड़ा भाग खा जायें जो अपने आप कुछ उत्पादन नहीं करते।

इस प्रकार शिक्षा का कार्यक्रम बदल जाने से आज की अनुशासनहीनता की समस्या भी सुलझ जाती है, इस समस्या को सुलझाने में एक-दो बातें और हितकर हैं और वो ये कि प्रत्येक संस्था अपने शिक्षार्थियों की कुछ न कुछ ऐसे कार्यों की ओर अभिरुचि, उत्पन्न करे जो वें अपने अतिरिक्त समय में कर सकें। यह कार्य दिल बहलाव के साथ-साथ ऐसे भी हों कि जो कुछ उन्हें आर्थिक सहायता भी प्रदान कर सकें जैसे—उनकी अभिरुचि मधु-मक्खी पालन, हाथ की कताई व बुनाई फल परीक्षण, फोटोग्राफी, प्लास्टिक के खिलौने आदि बनाना इसी प्रकार के व्यासंग (हौबी) अपनाना हितकारी रहेगा, जिनमें व्यय न होकर कुछ प्राप्ति की आशा की जा सके, इन्हें अपनाने में किसी भी विद्यार्थी को कम सँकोच होने की सम्भावना है।

शिक्षा के अन्तर्गत एक विस्तृत कार्यक्रम आता है, विभिन्न अध्ययन तथा निर्माण की शाखाएं जाती हैं जिनके द्वारा हम देश के नागरिकों को मस्तिष्क हृदय, शरीर से बलवान बना सकें, श्रम का आदर करना सिखा सकें। सब धर्मों की एक रूपता जो राष्ट्र के संगठन में नींव का पत्थर है बता सकें। औद्योगिक शिक्षा व्यापार, रीति, चित्रकला, नृत्य, आदि मनुष्य को ऊंचे उठाने वाली मानसिक तथा शारीरिक सब प्रकार की शक्तियों को बलवान बनाने वाली शिक्षा ही राष्ट्रिय शिक्षा कहलाने योग्य है. वह शिक्षा जो हमारी राष्ट्रियता को छिन्न-भिन्न करती हो आचरण रहित समाज का निर्माण करती हो और शिक्षा पाने के पश्चात जो शिक्षित युवक देश के लिए एक भार बन कर रह जाते हों उस शिक्षा को तिलाञ्जली दे देना यह एक प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है।

---

[ पृष्ठ ३१ का शेष ]

आश्चर्य हुआ कि 'उन का आत्मा इतना समुन्नत था कि बैठे हुए, खड़े हुए अपने चर्म चक्षुओं से भी अवतारों, सिद्धों, महात्मा सन्तों के स्वरूप देखा करती थी। ऐसी सिद्धि हजारों साधकों में से कदाचित् ही किसी साधक को प्राप्त हुआ करती है।' यहां 'अवतारों' तथा चर्म चक्षुओं से भी उनके स्वरूप देखने का उनका तात्पर्य न केवल अस्पष्ट किन्तु भ्रमजनक भी प्रतीत होता है जिस का इस पुस्तक में उल्लेख न होता तो हमारे विचार में अधिक अच्छा होता।

सम्पूर्णतया यह माता पूर्ण देवीस्मारक ग्रंथ भाव, तथा आकार प्रकार की दृष्टि से अत्यन्त उत्तम तथा उपादेय है जिसके लिये लेखक तथा प्रकाशक महोदय अभिनन्दन के पात्र हैं। आशा है कि धर्म प्रेमी श्री पं० ठाकुरदत्त जी के इस प्रेमोपहार से लाभ उठायेंगे।

—धर्मदेव विद्यामार्तण्ड।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# साहित्य-परिचय

[ समालोचना के लिये प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियां आनी आवश्यक हैं--सम्पादक ]

### ईशावास्योपनिषत्

महर्षि श्रीमद्दयानन्दकृत भाषाभाष्य तथा विविध मत भाव संग्रह सहित। संग्रहीता श्री रघुनाथदत्त बन्धु। पं० ठाकुरदत्त जी वैद्य, अमृतधारा, देहरादून द्वारा प्रकाशित मूल्य–प्रेमोपहार। पृष्ठ १३०।

श्री पं० ठाकुरदत्त जी वैद्य अमृतधारा आर्य-जगत् में सुप्रसिद्ध दानवीर धर्मप्रेमी सज्जन हैं। उन्होंने अपने ट्रस्ट के द्वारा अनेक लोकोपकारक कार्य किये हैं जिनसे जनता सुपरिचित है। अपनी स्वर्गीय धर्मपत्नी श्रीमती पूर्णदेवी जी के स्मारक के रूप में उन्होंने ईशोपनिषत् व्याख्या विषयक इस उत्तम पुस्तक का श्री पं० रघुनाथ दत्त जी बन्धु से लिखवा कर धर्मप्रेमी सज्जनों में वितरण के लिये प्रकाशित कराया है। इस के प्रथम भाग में ईशोपनिषत् के आधारभूत यजुर्वेद के ४० वें अध्याय की महर्षि दयानन्द कृत व्याख्या का भाषानुवाद आवश्यक टीका टिप्पणियों सहित दिया गया है। द्वितीय भाग में (पृष्ठ ३२ से ६६ तक) ईशोपनिषत् पर अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैत, शुद्धाद्वैतवाद तथा द्वैतवाद की दृष्टि से जो भाष्य किये गये हैं उन के मुख्य-मुख्य अंशों को संगृहीत कर दिया गया है।

श्री पं० ठाकुरदत्त जी ने 'प्रारम्भिक निवेदन' में अपनी स्थिति को इन शब्दों में स्पष्ट कर दिया है जिस से सर्व साधारण पाठकों को किसी प्रकार का भ्रम न रहे--

'आप को मेरा अगला लेख पढ़ने से यह तो स्पष्ट हो ही जाएगा कि मैं आर्यसमाज का एक तुच्छ कार्यकर्त्ता हूँ। इसी लिये श्री १०८ स्वामी दयानन्द के भाष्य को प्रथम स्थान दिया है। और द्वितीय भाग जिज्ञासुओं को सब आचार्यों के विचार जानने की सुविधा के लिये हैं। उनमें भी जो वैदिक सिद्धान्तों के अनुकूल हैं वे सब मुझे मान्य हैं। हर विचार के विद्वानों को इस से बड़ा लाभ होगा ऐसी मुझे पूर्ण आशा है।'

तुलनात्मक दृष्टि से अनुशीलन करने वाले विद्वानों को इस प्रकार के संग्रह से विशेष लाभ होगा और महर्षि दयानन्द कृत प्रमाण और युक्ति संगत व्याख्या में उनकी श्रद्धा बढ़ेगी ऐसा मेरा विश्वास है। इस अत्यन्त परिश्रम सूचक संग्रह के लिए श्री रघुनाथ दत्त जो तथा इसे प्रकाशित कर के धर्मप्रेमी सज्जनों में वितरण कराने के अभिनन्दनीय कार्य के लिये श्री पं० ठाकुरदत्त जी वैद्य धन्यवाद के पात्र हैं। पं० ठाकुरदत्त जी ने (१) ईशावास्यमिदं सर्वम्, (२) कुर्वन्नेह कर्माणि, (३) हिरण्मयेन पात्रेण इन तीन मन्त्रों की जो व्याख्या पुस्तक के भूमिका भाग की वह भी सरल, स्पष्ट और उत्तम भाव-पूर्ण है।

यह पुस्तक माता पूर्णदेवी जी के (जो श्री पं० ठाकुरदत्त जी की अनुव्रता धर्मपत्नी थीं और जिन का खेद है कि सम्वत् २०११ वैशाख कृष्ण षष्ठी को देहावसान हुआ) स्मारक के रूप में प्रकाशित की गई है अतः प्रारम्भ में उन का संक्षिप्त जीवन चरित्र दिया गया है जिस से स्पष्ट ज्ञात होता है कि वे अत्यन्त धार्मिकी ईश्वरभक्ता आदर्श-पतिव्रता देवी थीं। आध्यात्मिक दृष्टि से उन की उच्च स्थिति के विषय में श्री स्वामी सत्यानन्द जी, श्री आनन्द स्वामी जी और ब्रह्मचारी व्यासदेव जी के पत्र उद्धृत किये गये हैं जिन में से श्री स्वामी सत्यानन्द जी के ३०–३–५५ के पत्र के इन अंशों को पढ़ कर हमें

[ शेष पृ० ३० पर ]

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल समाचार

### ऋतु रंग

वर्षा ऋतु अपने पूरे यौवन पर है। समस्त प्रकृति आप्यायित हो रही है। वन-उपवन एकदम शोभित हो उठे हैं। ताल और तलैयायें किनारों तक छलछला उठी हैं। गुरुकुल की ईख और धान की खेतियाँ खूब लहलहा रही हैं। अभी तक मच्छरों का उपद्रव प्रारम्भ नहीं हुआ है। कुलवासियों का स्वास्थ्य अच्छा है।

### स्वाधीनता दिवस

१५ अगस्त को वेद मन्दिर में समवेत हो कर समस्त कुलवासियों ने प्रेमपूर्वक स्वाधीनता दिवस मनाया। गुरुकुलाचार्य श्री पं० प्रियव्रत जी ने राष्ट्र पताका फहराते हुए इस दिन के गौरव पर एक छोटा सा प्रवचन किया। रात को महाविद्यालय आश्रम में श्री पं० निरञ्जनदेव जी के सभापतित्व में साहित्य-गोष्ठी सम्पन्न हुई। जिस में छात्रों ने कवितापाठ और कहानीपाठ द्वारा श्रोताओं को आनन्दित किया।

### अभिनन्दन

हर्ष का विषय है कि गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक श्री डॉक्टर धर्मानन्द जी केसरबानी आयुर्वेदालंकार, एम. डी. लखनऊ के राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय के आचार्य बनाए गए हैं। सब कुलवासी इस यशःपूर्ण उपलब्धि पर डाक्टर जी का सप्रेम अभिनन्दन करते हैं।

### चिकित्सक संघ

अखिल भारतीय चिकित्सा संघ की देहरादून शाखा का वार्षिक सम्मेलन पिछले दिनों देहरादून में सम्पन्न हुआ। सभापति के आसन पर केन्द्रिय सरकार के रक्षामन्त्री श्री महावीर जी त्यागी थे। सम्मेलन में गुरुकुल के आयुर्वेदालङ्कार स्नातकों ने भी भाग लिया। सम्मेलन में कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत हुए। आयुर्वेद और एलोपैथी—दोनों के समन्वयात्मक अध्ययन द्वारा जिन्होंने तालीम पाई है, उन चिकित्सकों को कठिनाइयों पर सम्मेलन ने विशेष रूप से विचार किया और अधिकारियों के समक्ष निम्नलिखित माँगे प्रस्तुत की—

१ जीवन बीमा, रेलवे, सेना तथा अन्य स्वास्थ्य विभागों में केन्द्रीय सरकार इन को सेवा का अवसर प्रदान करे।

२ उक्त प्रकार के स्नातकों की एक पृथक् परिषद् ( कौन्सिल ) बनाई जाय जो पंजीकरण ( रजिस्ट्रेशन ) आदि का कार्य करे।

३ समस्त देश में शिक्षा का स्तर तथा उपाधि की समानता रहे।

### गुरुकुल कुरुक्षेत्र

ग्रीष्मकालीन दीर्घावकाश के बाद ११ जुलाई से नये सत्र की पढ़ाई नियमित रूप से प्रारम्भ हो चुकी है। छात्रगण अध्ययन में दत्तचित्त हैं। गत वर्ष स्नानागार अधिक वर्षा के कारण गिर गया था। इस वर्ष नवीन स्नानागार, जलागार और नलकूप ( ट्यूबवैल ) बन कर तैयार हो गए हैं। नलकूप के लिए श्रीमती रुक्मिणी बहन (मुम्बई) ने पाँच हजार रुपये का दान दिया है। इसी प्रकार स्नानागार के लिए श्रीमती लीला बहन ( मुम्बई ) ने तीन हज़ार रुपये प्रदान किए हैं। एक दूसरे नलकूप के लिए कृष्णा टैक्सटाईल मिल अमृतसर के सञ्चालक श्रीयुत विश्वनाथ जी ने २०००) रुपये के दान का वचन दिया है। एक हजार का शुभदान श्री रामगोपाल गोरांमल अमृतसर वालों ने दिया है। ५००) का दान श्री रामनारायण राजकुमार अमृतसर वालों ने गुरुकुल को भेंट किया है। इन सब सात्विक दानदाताओं का गुरुकुल प्रेमपूर्वक धन्यवाद करता है। नलकूप और स्नानागार आदि की नवीन व्यवस्था से गुरुकुल के कृषि आदि के कार्यों में बड़ी सुविधा हो गई है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# स्वाध्याय के लिए चुनी हुई पुस्तकें

## वैदिक साहित्य

ईशोपनिषद्भाष्य — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति — २)
वेद का राष्ट्रिय गीत — श्री प्रियव्रत — ५)
वेदोद्यान के चुने हुए फूल — श्री प्रियव्रत — ५)
वरुण की नौका, २ भाग — श्री प्रियव्रत — ६)
वैदिक विनय, ३ भाग — श्री अभय — २), २), २)
वैदिक वीर-गर्जना — श्री रामनाथ — ।।।=)
वैदिक-सूक्तियां — ,, — १।।।)
आत्म-समर्पण — श्री भगवद्दत्त — १।।)
वैदिक स्वप्न-विज्ञान — ,, — २)
वैदिक अध्यात्म-विद्या — ,, — १।)
वैदिक ब्रह्मचर्य गीत — श्री अभय — २)
ब्राह्मण की गौ — श्री अभय — ।।।)
वेदगीताञ्जलि ( वैदिक गीतियां ) — श्री वेदव्रत — २)
सोम-सरोवर, सजिल्द, अजिल्द — श्री चमूपति — २), १।।)
वैदिक-कर्त्तव्य-शास्त्र — श्री धर्मदेव — १।।)
अग्निहोत्र — श्री देवराज — २।)

## संस्कृत ग्रन्थ

संस्कृत-प्रवेशिका, १, २, भाग — ।।।), ।।।=)
साहित्य-सुधा-संग्रह, १, २, ३ बिन्दु — १।), १।), १।)
पाणिनीयाष्टकम पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध — ७), ७)
पञ्चतन्त्र ( सटीक ) पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध — २), २।।)
सरल शब्दरूपावली — ।।=)

## ऐतिहासिक तथा जीवनी

भारतवर्ष का इतिहास ३ भाग — श्री रामदेव — ६)
बृहत्तर भारत (सचित्र) सजिल्द, अजिल्द — ७), ६)
ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार, २ भाग — ।।।)
अपने देश की कथा — श्री सत्यकेतु — १।=)
हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के अनुभव — ।।)
योगेश्वर कृष्ण — श्री चमूपति — ४)
सम्राट् रघु — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति — १।)
जीवन की झांकियां ३ भाग — ,, — ।।) ।।). १)
जवाहरलाल नेहरू — ,, — १।)
ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित्र — ,, — २)
दिल्ली के वे स्मरणीय २० दिन — ,, — ।।)

## धार्मिक तथा दार्शनिक

सन्ध्या-सुमन — श्री नित्यानन्द — १।।)
स्वामी श्रद्धानन्द जी के उपदेश, तीन भाग — ३।।)
आत्म-मीमांसा — श्री नन्दलाल — २)
वैदिक पशुयज्ञ-मीमांसा — श्री विश्वनाथ — १)
अथर्ववेदीय मन्त्र-विद्या — श्री प्रियरत्न — १।)
सन्ध्या-रहस्य — श्री विश्वनाथ — २)
जीवन-संग्राम — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति — १)

## स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें

आहार (भोजन की जानकारी) — श्री रामरत्न — ५)
आसव-अरिष्ट — श्री सत्यदेव — २।।)
लहसुन:प्याज़ — श्री रामेश बेदी — २।।)
शहद ( शहद की पूर्ण जानकारी ) — ,, — ३)
तुलसी, दूसरा परिवर्द्धित संस्करण — ,, — २)
सोंठ, तीसरा ,, — ,, — १।।)
देहाती इलाज, तीसरा संस्करण — ,, — १)
मिर्च ( काली, सफेद और लाल ) — ,, — १)
सांपों की दुनियां, (सचित्र) सजिल्द — ,, — ५)
त्रिफला, तीसरा संवर्द्धित संस्करण — ,, — ३।)
नीम:बकायन (अनेक रोगों में उपयोग)., — १।)
पेठा : कद्दू (गुण व विस्तृत उपयोग) ,. — ।।)
देहात की दवाएं, सचित्र ।।।) — बरगद — ।।।)
स्तूप निर्माण कला — श्री नारायण राव — ३)
प्रमेह, श्वास, अर्शरोग — १।)
जल चिकित्सा — श्री देवराज — १।।।)

## विविध पुस्तकें

विज्ञान प्रवेशिका, २ भाग — श्री यज्ञदत्त — १)
गुणात्मक विश्लेषण ( बी. एस्. सी. के लिए ) — १)
भाषा-प्रवेशिका ( वर्धायोजनानुसार ) — ।।।)
आर्यभाषा पाठावली — श्री भवानी प्रसाद — १।।)
आत्म बलिदान — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति — २)
स्वतन्त्र भारत की रूप रेखा — ,, — १।।)
जमींदार — ,, — २)
सरला की भाभी, १, २ भाग — ,, — २), ३।।)

प्रकाशन मन्दिर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# वर्षा ऋतु के रोगों के लिए उपयोगी औषधें

## अमृतारिष्ट

वर्षा ऋतु में होने वाले ज्वर की उत्तम औषध है । इस से पुराना ज्वर और बढ़ी हुई तिल्ली भी दूर होती है । मूल्य १) पाव ।

## पायोकिल

दांतों का हिलना, चीसना व मसूढ़ों से खून व पीप आने को रोकने की एकमात्र औषध है । इस के प्रयोग से मुख की दुर्गन्ध दूर होती है और दांत स्वच्छ व उज्ज्वल हो जाते हैं ।

मूल्य १॥) छोटी शीशी ।

## सुखसार

अचानक होने वाले रोग उल्टी, दस्त, मिचली, पेट दर्द व अन्य उदर विकारों में शीघ्र ही लाभ देने वाली औषध है । इस की एक शीशी घर में अवश्य रखिए । मूल्य ।।=) शीशी ।

## रक्त शोधक

खून की शुद्धि के लिए उत्तम है । इस से त्वचा सम्बन्धी रोग फोड़े, फुन्सी, दाद, खाज आदि रोग ठीक हो जाते हैं । शरीर को निरोग बनाता है । मूल्य ३) शीशी ।

## सर्पगन्धा वटी

उन्माद, अपस्मार, अनिन्द्रा तथा ब्लडप्रैशर आदि रोगों में इस का प्रयोग लाभदायक सिद्ध हुआ है ।

मूल्य २॥) शीशी ।

## स्वादिष्ट चूर्ण

यह अत्यन्त रोचक और पाचक, दीपक चूर्ण है । भोजन के बाद सेवन करने से मुख का का स्वाद ठीक रहता है और भोजन जल्द पचता है ।

मूल्य ।॥) छटांक ।

## कर्पूरासव

वमन, अतिसार, पेचिश, दांत दर्द तथा हैज़े की तुरन्त ही लाभ देने वाली औषध है ।

मूल्य १।=) औंस ।

## दाद का मरहम

मच्छरों के काटने व रक्त की अशुद्धि के कारण वर्षा ऋतु में दाद, खाज आदि की शिकायतें होती हैं । इन रोगों में दाद का मरहम शीघ्र ही लाभ पहुंचाता है ।

मूल्य ।।=) शीशी ।

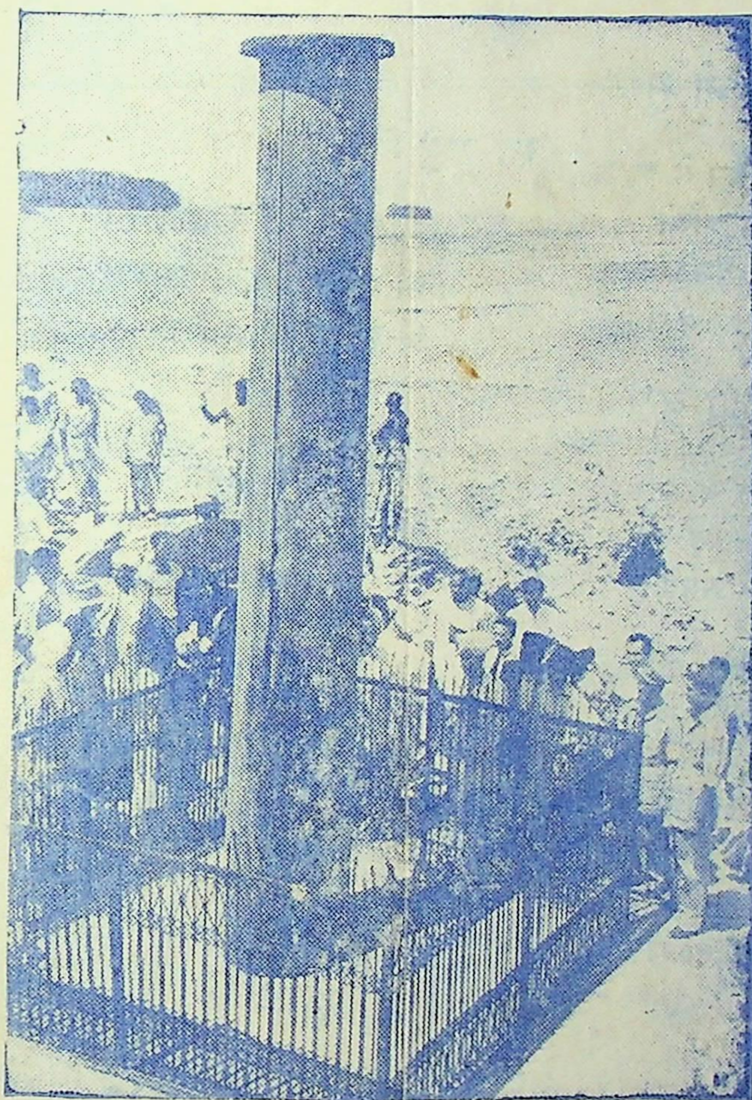
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार ।


मुद्रक : श्री रामेश वेदी, गुरुकुल मुद्रणालय, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार ।

प्रकाशक : मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल पत्रिका



लुम्बिनी का अशोक स्तम्भ

DIGITIZED C-DAC
2005-2006

वर्ष ८
अङ्क १२



श्रावण
२०१३

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

व्यवस्थापक : श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

# गुरुकुल-पत्रिका

सम्पादक समिति : श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति
श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार
श्री रामेश बेदी ( मन्त्री )

पूर्णाङ्क ६६
जुलाई १९५६



## इस अङ्क में



## अगले अङ्क में

| | |
|---|---|
| वेद विषयक प्राचीन मत | श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड |
| मेरा विद्यार्थी जीवन | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति |
| आज के युग में बुद्ध के विचारों का महत्व | डा० रामस्वामी अय्यर |

**अन्य अनेक विश्रुत लेखकों की सांस्कृतिक, साहित्यिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी रचनाएं ।**

**मूल्य देश में ४) वार्षिक** **एक प्रति**
**विदेश में ६) वार्षिक** **छः आने**

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ


# गुरुकुल-पत्रिका

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका ]


## विदेशों में बौद्ध धर्म का विस्तार

श्री भदन्त आनन्द कोसल्यायन

जिस समय अशोक-पुत्र महेन्द्र धर्म प्रचारार्थ लंका पहुँचे, उस समय सिंहल में राजा देवानांप्रियतिस्स का शासन था। राजा ने महेन्द्र स्थविर तथा उन के साथियों की ओर संकेत करते हुए महामति महेन्द्र से पूछा—

क्या भारत में इस प्रकार और भी भिक्षु हैं?

उत्तर मिला—जम्बुद्वीप काषाय वस्त्र से प्रज्जवलित है।

आज से बाईस सौ वर्ष के बाद जम्बुद्वीप में तो उस काषाय वस्त्र का एक प्रकार से पता ही नहीं, किन्तु भारत से बाहर भारत के दक्षिण, पूर्व, उत्तर और कुछ मात्रा में पश्चिम में भी बौद्ध धर्म का वह प्रतीक भिक्षु वेष लहलहा रहा है।

विदेशों में भारत से बौद्ध धर्म कैसे प्रचारित और प्रसारित हुआ इस का मूल तो हमें भगवान् बुद्ध की उस अनुशासना में ही मिलता है, जिस की घोषणा उन्होंने अपने धर्म प्रचार कार्य के आरम्भ में ही की। उन्होंने कहा था—

चरथ भिक्खवे चारिकं बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय अत्थाय हिताय देव मनुस्सानं, देसेथ भिक्खवे धम्मं आदिकल्याणं, मज्झकल्याणं, परियोसाण कल्याणं।

भिक्षुओं, बहुत जनों के हित के लिए, बहुत जनों के सुख के लिए घूमो। भिक्षुओं, देवताओं और मनुष्यों के हित के लिए विचरो। भिक्षुओं, आदि, मध्य और अन्त में कल्याणकारक धर्म का उपदेश करो।

### भिक्षु पूर्ण का उदाहरण

भगवान बुद्ध के शिष्यों ने अपने शास्ता के इस अनुशासन को किस प्रकार ग्रहण किया, उस का एक उदाहरण सूनापरान्त का भिक्षु पूर्ण है। उस से तथागत ने पूछा—

पूर्ण! तू कौन से प्रान्त में विचरण करेगा?

भन्ते! सूनापरान्त नामक जनपद है, मैं वहां विचरण करूंगा।

पूर्ण! सूनापरान्त के मनुष्य चण्ड और कठोर होते हैं। यदि वे चण्ड कठोर वचनों का प्रयोग करेंगे तो तेरे मन में क्या होगा?

मैं समझूंगा कि सूनापरान्त के मनुष्य भले हैं, बहुत भले हैं, क्योंकि वे मुझ पर हाथ नहीं छोड़ते...

पूर्ण! यदि सूनापरान्त के लोग तुझ पर हाथ छोड़ बैठें तो तेरे मन में क्या होगा?

मैं समझूंगा कि सूनापरान्त के मनुष्य भले हैं, बहुत भले हैं, क्योंकि वे मुझे डंडे से नहीं मारते।

यदि डंडे से मारें तो तेरे मन में क्या होगा?

मैं समझूंगा कि सूनापरान्त के मनुष्य भले

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं, बहुत भले हैं, क्योंकि वे मुझे शस्त्र से नहीं मारते।

यदि शस्त्र से मारें तो···

तो भी समझूंगा कि सूनापरान्त के लोग भले हैं, बहुत भले हैं, क्योंकि वे शस्त्र चला कर मेरा प्राण नहीं लेते।

यदि सूनापरान्त के लोग तुझे शस्त्र से मार डालें···

तो भी भन्ते, मैं समझूंगा कि सूनापरान्त के लोग भले हैं, बहुत भले हैं, क्योंकि भगवान् के कोई-कोई शिष्य जीवन से तंग आ कर, ऊब कर, घृणा कर, आत्म हत्या के लिये शस्त्र खोजा करते हैं वह शस्त्र मुझे अनायास ही मिल गया।

साधु, साधु, पूर्ण, तू इस प्रकार के शम दम से युक्त हो कर सूनापरान्त जनपद में वारा कर सकता है।

## महास्थविर मोग्गलिपुत्त की प्रेरणा

विदेशों में संगठित धर्म प्रचार आरम्भ करने का श्रेय यदि किसी एक व्यक्ति को दिया जा सकता है तो वह है अशोक गुरु मोगलिपुत्ततिस्स जिन की पवित्र अस्थियां अभी-अभी लन्दन से भारत लाई गई थीं। अशोक गुरु मोगलिपुत-तिस्स की ही प्रेरणा से पटना में तीसरी संगीती हुई थी। उसी के प्रकरण के विवरण में लिखा है—

मोग्गलिपुत स्थविर ने तृतीय संगीति करते हुए सोचा कि बाहर के देशों में धर्म को कैसे स्थापित किया जाय? तब उन्होंने इस का भार अनेक भिक्षुओं के कंधों पर डाला। उन्होंने मध्यांति ( मंझन्तिक ) स्थविर को कश्मीर और गन्धार भेजा। महादेव स्थविर को महिंसक अर्थात् वर्तमान मैसूर के उत्तरीय भाग में भेजा। यवन धम्मरक्षित को उपरांत देश अर्थात् समुद्र तट पर बम्बई से सूरत तक के प्रदेश में भेजा। महाधर्म रक्षित स्थविर को महाराष्ट्र में (और) महारक्षित स्थविर को यवन लोगों में भेजा। हिमवन्त ( हिमालय ) प्रदेश में मंझिम स्थविर को भेजा ( और ) स्वर्णभूमि दक्षिण बर्मा में सोग और उत्तर दो स्थविर भेजे। अपने शिष्य महा महेन्द्र स्थविर तथा इट्टीय, उत्तीय, संबल और भद्रशाल इन पांच स्थविरों को यह कह कर लंका भेजा कि तुम मनोज्ञ लंकाद्वीप में मनोज्ञ बुद्ध धर्म की स्थापना करो।

## बर्मा और लंका में

निस्सन्देह न केवल लंका के ही बल्कि बर्मा के भी लोगों का धार्मिक विश्वास है कि भगवान बुद्ध के धर्म का प्रवेश उन के देश में बुद्ध के जीवन काल में ही हो गया था। किन्तु यह बात एतिहासिक प्रतीत नहीं होती। यह पक्ष प्रबल मालूम देता है कि अशोक के समय में ही सर्व-प्रथम अशोक गुरु मोग्गलिपुत्त तिस्स के साधु प्रयत्न के फलस्वरूप बौद्ध धर्म ने सिंहल और बर्मा में प्रवेश पाया।

अशोक के समय में ही अशोक पुत्री भिक्षुणी संघमित्रा, बुद्ध गया स्थित बोधिवृक्ष की एक शाखा लेकर लंका पहुँची जो वहां की तत्कालीन राजधानी अनुरोधपुर में रोप दी गई। पिछले २२०० वर्ष में बोधिवृक्ष की यह शाखा बढ़ कर लंका की जयश्री महाबोधि हो गई है। कदाचित अनुरोधपुर की यह जयश्री महाबोधि ही संसार का सब से पुराना ऐतिहासिक वृक्ष है।

बुद्ध धर्म की चिरस्थिति की दृष्टि से लंका के बौद्ध इतिहास में जो सब से महत्वपूर्ण घटना घटी जिस का प्रभाव सारे भावी इतिहास पर पड़ा, वह थी पालि त्रिपिटक और उस की अट्ठ-कथाओं अर्थात् अर्थ कथाओं का लिपिबद्ध

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किया जाना ।

बर्मा और सिंहल दोनों ही प्रधान रूप से स्थविरवादी देश रहे हैं। किन्तु दोनों देशों को ही ऐसे समय देखने पड़े हैं जब धर्म प्रदीप आज बुझा कि कल बुझा हो गया है। जब-जब ऐसा समय आया तो कभी बर्मा ने सिंहल की सहायता से और कभी सिंहल ने बर्मा की सहायता से अपने-अपने यहां धर्म प्रदीप को अधिक प्रज्वलित कर लिया है।

## त्रिपिटक का बर्मा में प्रथम संस्करण

पिछली शताब्दी में बर्मा में मिन्-दोन्-मिन नाम का एक राजा हुआ है। जिस प्रकार लंका के वहगामणी ने अपने शासन काल में सारे त्रिपिटक को लिपि-बद्ध करवाया, उसी प्रकार राजा मिन् दोन् मिन ने तीन वर्षों तक विद्वान भिक्षुओं के संघ को एकत्रित कर अपने सभापतित्व में त्रिपिटक के एक-एक ग्रन्थ को पढ़ते हुए उस के शुद्धाचरण का निश्चय कराया। सारे त्रिपिटक के इस संस्करण को उस ने संगमरमर की ७२९ पट्टियों पर लिखवाया, जो आज भी मांडले के पास कुथो-दाच् विहार के हाते में स्थापित हैं।

ठीक उसी प्रकार का कार्य अब सौ वर्ष बाद बर्मा में फिर यू नू की सरकार की संरक्षता में हो रहा है। उस की विशेषता है कि इस में सिंहल, स्याम, बर्मा, हिन्दचीन, आदि सभी स्थविरवादी देशों का सहयोग प्राप्त है।

बर्मा के और पूर्व जो आजकल का थाइलैंड है उस का नाम स्याम है। क्योंकि देश का यह नाम परिवर्तन अभी हुआ है, इसलिए अभी भी कुछ लोग उसे स्याम भी कहते ही हैं। स्याम या श्याम शान शब्द का रूपान्तर है। शान जाति के लोग अब भी बर्मा के पूर्वोत्तरी भाग में रहते हैं। इस शान शब्द से ही हमाहाम, अहोम, असाम बनते-बनते हमारे देश का एक राज्य बना है।

स्याम राज्य वा थाई राज्य का प्राचीन इतिहास बहुत कुछ अज्ञात है। तेरहवीं शताब्दी में ही हम सुखोडिया में सर्वप्रथम एक थाई राजवंश को स्थापित होते देखते हैं।

बर्मा की तरह ही स्याम का बौद्ध धर्म का इतिहास भी सिहल से धर्म परम्परा के लेन देन का इतिहास रहा है। सिंहल के तीन निकायों में जो सर्वाधिक प्रभावशाली स्यामी निकाय है, उस का मूल श्रोत स्याम में ही है।

## स्याम के विहार और भिक्षु

इस समय स्याम के बीस हज़ार विहारों में कोई एक लाख पैंसठ हज़ार भिक्षु रहते होंगे। इन भिक्षुओं के अतिरिक्त लगभग अड़सठ हज़ार श्रमण होंगे जिन्हें आप अपने यहां के गुरुकुलों के ब्रह्मचारी मान सकते हैं।

सभी स्थविर-वादी देशों में स्याम के ये विहार और भिक्षु अद्भुत रूप से संगठित हैं। ठीक-ठीक कहना हो तो ऐसा लगता है कि जैसे उन की अपनी एक समानान्तर सरकार ही चलती है।

स्याम का राजा अनिवार्यतः बौद्ध होता है और वहां की सरकार बौद्ध ही है। इसलिए स्याम देश के बौद्ध भिक्षुओं को जितना राज्याश्रय प्राप्त है, इतना शायद किसी भी अन्य देश के भिक्षुओं को नहीं।

स्याम से और अधिक पूर्व की ओर बढ़ने से पहले हम अपने पड़ौसी देश तिब्बत की चर्चा कर लें। यह सचमुच आश्चर्य की बात है कि ईसा की प्रथम शताब्दि में ही बौद्ध धर्म हिन्द-चीन और जावा तक जा पहुंचा था, जबकि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

५६ ई० में ही खोतन के काश्यप मातंग ने चीन जाकर बौद्ध ग्रन्थों का अनुवाद किया, जबकि ३७२ ई० में बौद्ध धर्म कोरिया और ५३८ ई० में जापान तक जा पहुंचा, तब भी अपने पड़ौसी तिब्बत में बौद्ध धर्म का प्रवेश सातवीं शताब्दी तक नहीं हुआ। इस देरी के दो ही कारण हो सकते हैं। एक तो हिमालय की दुर्लंघ्य दीवार का व्यवधान, दूसरे लोगों का सामाजिक तौर पर बहुत पिछड़ा हुआ होना।

लेकिन इसी का शायद यह परिणाम है कि एक बार जब भोट में बौद्ध धर्म का प्रवेश हो गया, और वहां उस का प्रचार और प्रसार होने लगा और तो तिब्बत एक प्रकार से बौद्ध धर्म का गढ़ बन गया। आप को यदि नालन्दा, विक्रमशिला तथा ओदन्तपुरी जैसे प्राचीन विश्व-विद्यालयों के नमूने देखने हों तो आज भी आप तिब्बत के समये आदि विहारों को देख सकते हैं।

न जाने हमारा कितना वाङ्मय अपने अनुवादों के रूप में ही सुरक्षित है। इतना ही नहीं तिब्बत के शीत जलवायु ने दीपकर श्रीज्ञान जैसे महान् भारतीय पण्डितों के साथ गये हुए अनेक ग्रन्थों को भी ज्यों का त्यों सुरक्षित रखा है।

तिब्बती लामाओं को हम कभी-कभी एक चर्खी सी घुमाते देखते हैं। उन चर्खियों में कागज पर अनेकों बार लिखा हुआ ॐ मणि पद्मे हुँ जाप रहता है, जिस के एक बार घूमने से ही न जाने कितना जाप हो जाता है।

तिब्बत आज दिन चीन का एक अङ्ग है। चीन में भी बौद्ध धर्म ने अपनी जड़ें कम नहीं जमाई। लेकिन चीन देश का बौद्ध जीवन, विशेष रूप से भिक्षु जीवन, अपनी विशेषता रखता है।

## चीनी भिक्षुओं की विशेषता

जिस प्रकार चीनी विहार प्रायः नगर से बाहर बने रहते हैं, उसी प्रकार चीनी भिक्षुओं का जीवन भी जनता के जीवन से कुछ अलग सा रहता है। वे ध्यानमार्ग के विशेष अभ्यासी कहे जा सकते हैं।

चीनी त्रिपिटक संस्कृत त्रिपिटक का ही अनुवाद है। अपने भाष्यों तथा भिन्न-भिन्न आचार्यों द्वारा रचित स्वतन्त्र ग्रन्थों को लेकर वह एक विशाल वाङ्मय बन गया है। कोरिया में बौद्ध धर्म चीन से गया और उस का सब कुछ एक प्रकार से चीनी ही है। वहां किसी भी बौद्ध विहार में जाओ, सब कुछ चीनी में ही लिखा मिलेगा।

जापान न चीन की तरह बड़ा देश है और न कोरिया की तरह छोटा। यहाँ भी न बौद्ध विहारों की कमी है और न सम्प्रदायों की। इधर जापान में बौद्ध धर्म नयी परिस्थितियों का नये ढंग से मुकाबला करने का प्रयास कर रहा है।

पूर्वी देशों की ही तरह एशिया के बाहर के कुछ पाश्चात्य देशों में भी बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ है। लिटवानिया सदृश कुछ छोटे छोटे राज्यों में आज भी पुरानी बौद्ध परम्परा सुरक्षित है।

वह न भी हो तो भी नये संसार में नये सिरे से बौद्ध धर्म जो अपना स्थान बनाता जा रहा, वह भी बहुत महत्वपूर्ण है।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# बलिदान

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

पुलिस के अफसरों ने कमरे में पहुंच कर काफी चुस्ती से काम किया। पिता जी की मृत्यु का प्रामाणिक समाचार तो उन्हें वहां पहुंचते ही डा० अन्सारी से मिल गया था. एक सब इन्सपैक्टर धर्मसिंह की ओर झुका और दूसरा धर्मपाल जी की ओर. उस ने क्षणेक ध्यान से देख कर स्थिति को समझ लिया और धर्मपाल जी से कहा कि जब तक मैं न कहूँ, तब तक शिकंजे को ढीला न कीजियेगा। तब उसने अपना रिवाल्वर हत्यारे के माथे पर रख कर कहा— 'खबरदार, अगर हिला तो गोली छोड़ दूंगा' फिर फुलबूट वाला अपना दायां पांव उस की कलाई पर बड़े जोर से मार कर दबा दिया, जब देख लिया कि कलाई बिलकुल ढीली हो गई, तो बायें हाथ से उस का पिस्तौल पकड़ कर धर्मपाल जी से हाथ छोड़ देने को कहा, हाथ छोड़ देने पर हत्यारे का पिस्तौल सब इन्सपैक्टर के हाथ में आ गया। तब सब इन्सपैक्टर ने धर्मपाल जी को हत्यारे को छोड़ कर उठ जाने के लिये कहा।

वहां जितने व्यक्ति थे, सब उस दिन-दहाड़े हत्या करने वाले व्यक्ति को देखने के लिये अत्यन्त उत्सुक थे, दर्शकों ने अपनी भावना के अनुसार उस का कल्पनाचित्र मन में बना रखा था। पीछे से इस विषय में प्रायः सर्व सम्मति पाई गई कि जब हत्यारा उठ कर खड़ा हुआ, तब उस की सूरत शक्ल ने दर्शक लोगों के काल्पनिक चित्रों को सर्वथा झूठा सिद्ध कर दिया। वह किसी हट्टे-कट्टे भयानक रूप वाले खूनी को देखने की आशा रखते थे, परन्तु जब देखा तो एक ऐसा अधेड़ सामने खड़ा पाया, जिस का शरीर मध्यम था, दाढ़ी-मूछ के बाल पक रहे थे, देखने में अदालत का मुहरर मालूम पड़ता था। पीछे से मालूम हुआ कि उस का नाम अब्दुलरशीद था और वह कितावत का काम करता था।

अब्दुल रशीद ने उठकर चारों ओर देखा तो उस की नजर डा० अन्सारी पर पड़ी, कह नहीं सकते कि उस की वह अदा स्वाभाविक थी या कृत्रिम। वह डाक्टर जी को देख कर मुस्कराया और काफी ऊंचे स्वर से कहा, डाक्टर साहिब, आदाबअर्ज, उस आदाबअर्ज में किसी पहली मुलाकात की झलक आती थी। बाद में तहकीकात करने पर मालूम हुआ कि अब्दुल रशीद ने अपने खूनी संकल्प की सूचना बहुत से प्रतिष्ठित मुसलमानों को दे रखी थी। उन में से कुछ ने उन्हें रोका, और कुछ ने प्रोत्साहित किया। डाक्टर साहब उन में से थे, जिन्होंने उसे रोका था। वह कई महीनों से विधि-पूर्वक नृशंसता की तैयारी कर रहा था। इस कार्य के समर्थन में उसने उल्माओं का फतवा तक ले लिया था।

इतनी हल्की सी मुस्कराहट के पश्चात् अब्दुल रशीद के चेहरे पर एक गम्भीर मुर्दनी छा गई। वह उस के चेहरे का स्थायी भाव था, जो तब तक कायम रहा, जब तक वह जेल में फांसी की रस्सी से झूल कर कर्मफल पाने के लिये बड़े दरबार में नहीं चला गया।

उस दिन बलिदान भवन में जो अमर कहानी रुधिराक्षरों से लिखी गई, उसे यहां दुहराने की आवश्यकता नहीं है। वह बलिदान के विस्तृत इतिहास का एक परिच्छेद है। और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह मेरी निजू स्मृतियों का संकलन है। गोली-काण्ड के पश्चात् बलिदान भवन में मैंने जो कुछ देखा मैं वह सुना रहा हूँ।

डा० अन्सारी अपने लिये अन्य कोई कार्य न देख कर और उस स्थान के वातावरण को अत्यधिक गर्म होता अनुभव कर के चले गये। पुलिस की एक टुकड़ी अब्दुल रशीद को हथकड़ी बेड़ी डाल, और लारी में बिठा कर कोतवाली ले गई, और दूसरी टुकड़ी बलिदान भवन के पहरे पर तैनात कर दी गई। इस समय वहां पुलिस के कई ऊंचे अफसर पहुंच चुके थे, और बयान लिये जाने लगे थे।

यह स्वाभाविक ही था कि ऐसी भयंकर साम्प्रदायिक दुर्घटना से उस स्थान पर और धीरे-धीरे सारे शहर में साम्प्रदायिक विद्वेष की अग्नि प्रचण्ड हो उठती। वह घटना साधारण नहीं थी। ३० करोड़ व्यक्तियों के एक सर्व-सम्मानित धर्माचार्य की, दूसरे मत के अनुयायी द्वारा केवल धार्मिक मतभेद के कारण हत्या इतिहास में प्रतिदिन नहीं होती वह कभी-कभी होती है, और जब कभी होती है, तब इतिहास में नये युग का आरम्भ हो जाता है। इस दुर्घटना ने भी भारत के इतिहास में एक नया युग आरम्भ कर दिया था। हत्या के पश्चात् थोड़े ही क्षणों में बलिदान भवन से फैल कर एक आधे घन्टे के अन्दर-अन्दर दिल्ली शहर में, और शायद दो या तीन घन्टों में सारे देश में उस आये हुए युग की सरसराहट सुनाई देने लगी थी। संसार में कभी कोई वस्तु सर्वथा निर्गुण या निर्दोष नहीं होती। जो नया युग एक मज़हबी पागल की घिनौनी चेष्टा के कारण पैदा हो वह निर्दोष होता भी कैसे ? उस नये युग के भी दो पहलू थे—एक बुरा और एक अच्छा। बुरा पहलू यह था कि हिन्दू जाति के एक बड़े भाग में एक अद्भुत जागृति ने जन्म लिया। पहला फल अब्दुल रशीद की दुष्टता का था अच्छी क्रिया की अच्छी, और बुरी क्रिया की बुरी प्रतिक्रिया स्वाभाविक थी। इस लिये केवल विवेचनात्मक दृष्टि से देखें तो उस सन्ध्या समय की दुर्घटना से हिन्दू जाति पर जो अच्छे और बुरे प्रभाव पड़े, वह सर्वथा स्वाभाविक थे। उन पर प्रसन्न होना, या दुखी होना अपनी तबियत का परिणाम हो सकता है, परन्तु उन की स्वाभाविकता में शायद ही कोई मत-भेद हो।

संस्मरण के इस अध्याय को समाप्त करने से पूर्व मैं दो तीन आपबीती चीजें पाठकों को और सुना देना चाहता हूँ। जिस समय इधर अब्दुल रशीद अपनी मूर्खता भरी चेष्टा से इस्लाम के माथे पर कलंक का टीका लगा रहा था, उधर गोहाटी में अखिल भारतीय राष्ट्रिय महासभा के अधिवेशन की तैयारियां हो रही थीं। स्वागताध्यक्ष महोदय ने पिता जी को एक निजू पत्र लिख कर विशेष आग्रह से महासभा के अधिवेशन में निमन्त्रित किया था। उस पत्र का उत्तर पिता जी की आज्ञा से मैंने ही दिया था। उस में अवस्था के कारण न जा सकने पर दुख प्रगट करते हुए अधिवेशन की सफलता के लिये ईश्वर से प्रार्थना की गई थी। पत्र पहुंचने पर स्वागताध्यक्ष ने एक तार द्वारा सन्देश की प्रार्थना की। वह सन्देश का तार भी पिता जी के आदेश के अनुसार मैंने ही लिखा था। मैं केवल स्मृति से उस तार को उद्धृत कर रहा हूँ, इसमें किसी शब्द का भेद हो सकता है, अभिप्राय का नहीं, तार यह था—

On Hindu Muslim unity depends future wellbeing of India.

भारत का भावी सुख हिन्दूमुस्लिम एकता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आश्रित है।

यह सन्देश निमोनिया की उग्र दशा में प्रभात की शान्त वेला में, बीमार की चारपाई पर से लिखवाया गया था। इस कारण मान लेना चाहिये कि यह सन्देश देने वाले की अन्तरात्मा का सन्देश था। स्नातक होने के पश्चात् लगभग १६ वर्ष तक पिताजी के निरन्तर समीप रहने पर मुझे जो अनुभव हुआ उसके आधार पर मैं कह सकता हूँ कि उपर्युक्त सन्देश पिताजी की अन्तरात्मा का संदेश था। वे हिन्दू-मुस्लिम एकता के कट्टर पक्षपाती थे, परन्तु साथ ही उन का यह भी विश्वास था कि वहां एकता तब तक जन्म नहीं ले सकती, जब तक हिन्दू जाति के निर्बल हिन्दू सबल मुसलमानों के मित्र नहीं बन सकेंगे। इस कारण वह हिन्दुओं को मुसलमानों के समान मित्र बनाने के पक्षपाती थे। उनके हिन्दू संगठन का अभिप्राय मुस्लिम विरोधी नहीं था—अपितु जाति के आंतरिक दोषों को दूर करना था।

मनुष्य के लिये सबसे कठिन काम अपनी भावनाओं का ठीक विश्लेषण करना है। एक प्रसिद्ध लेखक ने लिखा है कि प्रत्येक व्यक्ति के लिये दूसरे व्यक्ति का मन एक बन्द कमरा है जिस के अन्दर की असली दशा का वह केवल अनुमान लगा सकता है। अनुभव बतलाता है कि मनुष्य कभी-कभी अपने अन्दर की असली दशा का अनुमान भी नहीं लगा सकता, वह उसके लिये केवल बन्द कमरा ही नहीं, अभेद्य दुर्ग बन जाता है, जिसके अन्दर का अनुमान लगाना भी उसके लिये असम्भव हो जाता है। आत्म विश्लेषण अन्य रासायनिक तथा मनोवैज्ञानिक विश्लेषणों की अपेक्षा कठिन कार्य है।

यही कारण है कि मुझ से जब एक मित्र ने पूछा, जब स्वामी जी का बलिदान हुआ तब आप को कैसा अनुभव हुआ? मैं बहुत देर तक चुप रह कर सोचता रहा कि क्या उत्तर दूं, पाठक मेरा यह इकबाली बयान पढ़ कर आश्चर्यित होंगे, वह सोचेंगे कि इस प्रश्न का उत्तर तो निश्चित ही है, और वह यह कि 'मुझे अपार दुःख हुआ'। यह तो मैं कैसे कहूं कि मुझे अपार दुःख नहीं हुआ, परन्तु जब आत्मविश्लेषण करके देखा तो केवल इतना उत्तर देने की हिम्मत नहीं पड़ी—क्योंकि उत्तर अधूरा होता, अपने अन्दर आंखें डाल कर भी ठीक-ठीक नहीं देख सका, कि उस असाधारण घटना ने मेरे हृदय और मस्तिष्क पर क्या-क्या और किस क्रम से प्रतिक्रियायें पैदा कीं।

समाचार सुनने का पहला असर मुझ पर यह हुआ कि ठीक परिस्थिति जानने की इच्छा पैदा हुई। यों दुर्घटना का समाचार मुझे बिल्कुल आकस्मिक या अनहोना प्रतीत नहीं हुआ। मानों किसी इस प्रकार के समाचार की तो प्रतीक्षा ही थी। इसके दो कारण थे, पहला कारण यह था कि लगभग दो वर्ष से पिताजी को मुसलमान समाचार पत्रों में छपी हुई, और डाक द्वारा बगैर नाम के खुली हुई धमकियां दी जा रही थीं। शुद्धिसभा का प्रधान पद स्वीकार कर लेने के कारण धर्मान्ध मुसलमानों में पिताजी के प्रति क्रोध की भावना उत्पन्न की जा रही थी, जिसका प्रकाशन धमकियों के रूप में होता रहता था। इस असन्तोषाग्नि पर उन दिनों चलाये गये प्रसिद्ध शान्ति देवी केस ने घी का काम दिया। केस चोटी से एड़ी तक बनावटी था। असगरी बेगम (शान्ति देवी) को दिल्ली लाने, वनिता आश्रम में प्रविष्ट कराने या धर्म परिवर्तन कराने में पिताजी या अन्य किसी हिन्दू या आर्य कार्यकर्ता का हाथ नहीं था, परन्तु दिल्ली के कुछ मुसलमानों ने शान्ति देवी के पिता और मुसलमान पति को प्रेरणा देकर बिल्कुल झूठा मुकदमा दायर करवा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दिया, जिस की दो-तीन पेशियों में ही असलियत प्रकट हो गई, और हम लोगों की निर्दोषता का अदालत ने फैसला कर दिया, परन्तु अदूरदर्शी मदान्ध लोगों ने जो विष बखेरा था, वह अपना काम कर गया। नासमझ मुसलमानों का पिता जी के प्रति विद्वेषभाव चरम सीमा तक पहुंच गया।

परिणाम यह हुआ कि वायुमण्डल सन्देह और आशंका से भर गया। पिता जी के मन में खतरे या खतरे की धमकी से सदा उल्टी ही प्रतिक्रिया उत्पन्न होती थी। वह खतरे से डरने की जगह, खतरे का सामना करने और उस पर हावी होने के लिये तत्पर हो जाते थे। हम लोगों की चिन्ता या सावधानता उन पर कोई प्रभाव नहीं डालती थी। कभी-कभी तो जब कभी उन्हें यह सन्देह हो जाता था कि लोगों ने उन की संरक्षा के लिये पहरा लगाया है, तो रात के समय चुपचाप अकेले बाजार में घूमने के लिये निकल जाते थे, और लालकुआं, सदर-बाज़ार आदि प्रमुख मुसलमान हिस्सों का चक्कर काट जाते थे। इन सब कारणों से हम लोग सदा शंकित रहते थे। कब क्या अनहोनी हो जाय, इस की मासों प्रतीक्षा करते रहते थे।

सो जब दुर्घटना का पहला समाचार मिला तो ऐसा अनुभव हुआ जैसे जो होनी थी, वह हो कर रही।

एक और भी बात थी, जिसने हमारे हृदयों को इस दुर्घटना के लिये तैयार सा कर दिया था। अपने सदा के स्वभाव के सर्वथा विपरीत, लगभग एक मास से पिता जी शरीरत्याग की चर्चा किया करते थे। यों स्वभाव से वह घोर आशावादी थे—जैसा कि एक कट्टर आस्तिक होना चाहिये। परन्तु बलिदान से लगभग एक घन्टा पूर्व ही उनकी बातचीत का रुख बदल गया था। मैंने उनकी कई बड़ी-बड़ी बीमारियां देखी थीं। वह कभी हारी हुई बात नहीं करते थे. हारी हुई बात करने वाले को ढाढस दे कर कहा करते थे, तुम चिन्ता क्यों करते हो? अभी धर्म की सेवा के लिये मेरे शरीर की आवश्यकता है, उस की रक्षा परमात्मा करेगा। १९२६ के अन्त में जब उन पर निमोनिया का आक्रमण हुआ, उस से पूर्व ही उन की भाषा में परिवर्तन आ गया था। नवम्बर के अन्त में वह लाहौर गये और गुरुदत्त भवन में व्याख्यान दिया। सुनने वाले बतलाते हैं कि उस व्याख्यान में उन्होंने यह भाव स्पष्ट रूप से व्यक्त किया था कि सम्भवतः लाहौर में उन का यह व्याख्यान अन्तिम है, ऐसा ही भाव उन्होंने दो-तीन अन्य व्याख्यानों में भी प्रकट किया था।

रोगी होने पर तो वह प्रायः नित्य ही ऐसी बात करते थे, यों भाषा में कुछ भेद आ गया था।

बलिदान से दो दिन पूर्व व्याख्यान वाचस्पति पं० दीनदयालु जी शास्त्री आपका स्वास्थ्य समाचार पूछने आये। कुशल समाचार पर आपने कहा डाक्टर कहते हैं अच्छा है, शास्त्री जी ने मुस्करा कर पूछा कि आपकी क्या सम्मति है? पिता जी ने उत्तर दिया— मेरी तो अब जीने की इच्छा नहीं है'। इस पर शास्त्री जी ने कहा—

'स्वामी जी, मुझ से मालवीय जी एक वर्ष बड़े हैं, और आप उन से एक वर्ष बड़े हैं। अभी हम लोगों को बहुत सा काम करना है। आप क्यों इतनी जल्दी मोक्ष की तैयारी करने लगे। अब तो आप राजी हो जाओगे।' पिता जी ने उत्तर दिया—

पण्डित जी, इस समय मुझे मोक्ष की इच्छा नहीं, मैं तो चोला बदल कर दूसरा शरीर धारण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करना चाहता हूं। अब यह शरीर सेवा के योग्य नहीं रहा, अच्छा है कि फिर भारतवर्ष में ही पैदा हो कर फिर इस की सेवा करूं।

२२ दिसम्बर के प्रातःकाल ५ बजे के लगभग पिता जी का सेवक धर्मसिंह मुझे घर से बुलाने आया। उसी समय डा सुखदेव जी को और लाला देशबन्धु जी को भी बुलाया गया था। हम सब के एकत्र हो जाने पर पिता जी ने कहा—'भाई, मेरी वसीयत लिखा लो। इस शरीर का कुछ भरोसा नहीं। कब क्या हो जाय, यह भगवान के सिवाय किसी को पता नहीं।'

उस दिन पिता जी की तबियत काफी अच्छी समझी जा रही थी। डा० अन्सारी ने पहले दिन कहा था कि अब कोई खतरा नहीं रहा। डा० सुखदेव जी ने निवेदन किया कि अब चिन्ता या घबराहट की कोई बात नहीं। आप शीघ्र ही बिल्कुल ठीक हो जायेंगे हम लोग भी इस निवेदन में शामिल हो गये, और यह समझ कर कि वसीयत लिखने का पिता जी के दिल पर बुरा असर न हो, लिखने में आनाकानी करने लगे। पिता जी इस बात से कुछ खिन्न से हो गए, और कहा—'अच्छा भाई, तुम्हारी मर्जी, पर मैं जो कुछ चाहता हूँ वह सुन तो लो'। जब चाहो तब लिखा लेना, हम लोग सुनने लगे। उस समय हम लोग चर्म के चक्षुओं से देखते थे। और पिता जी ज्ञान के चक्षुओं से। अन्यथा हमसे ऐसी हिमाकत भरी भूल न होती कि हम उन के शब्दों को लेखबद्ध न करते। हम से इतनी बड़ी भूल हुई कि उसका मार्जन नहीं हो सकता। यह समझ कर कि रोगी को यह अनुभव न होने देना चाहिये कि उसकी दशा चिन्ताजनक है हम ने उस समय की बातों को पूरी तरह हृदयंगम नहीं किया। पीछे से स्मृति को ताजा करने पर निम्नलिखित बातें ध्यान में आईं—

आपने अपनी निम्नलिखित इच्छायें प्रकट की थीं—

१ मैं आर्यसमाज का इतिहास लिखना चाहता था। लिख नहीं सका, इन्द्र उसे लिखकर पूरा कर दे।

२ तेज और अर्जुन पत्र मेरी भावना के अनुसार चलते रहें।

३ गुरुकुल की रक्षा की जाय।

२३ दिसम्बर को, बलिदान से कुछ ही समय पहले शुद्धिसभा के प्रधान सर राजा रामपालसिंह के स्वास्थ्य सम्बन्धी तार के उत्तर में पिता जी ने जो तार दिलवाया था, उस में लिखा था कि अब तो यही इच्छा है कि दूसरा शरीर धारण कर इस जीवन के अधूरे काम को पूरा करूं।

यही कारण थे कि जब मुझे जीवनलाल जी ने स्वामी जी पर गोली चलने का समाचार दिया तब वह आकस्मिक नहीं प्रतीत हुआ। सुन कर ऐसा अनुभव हुआ कि यह तो होने वाला ही था—पर हुआ कैसे? अभी तो हम लोग उठ कर आये हैं, इतने में क्या हो गया।

जा कर देखा तो किंकर्तव्यता सामने आ गई। ध्यान उस ओर चला गया। शहर में बलिदान का समाचार हवा की तरह फैल गया, और श्रद्धानन्द बाजार में भीड़ इकट्ठी होने लगी। हरेक के दिल में दुःख था, और आंखों में जोश। जिसे देखता, वह इतना प्रभावित दिखाई देता कि जितना कोई सम्बन्धी भी नहीं हो सकता। मैं उस समय अपने को विशेष रूप से दुःखी कैसे समझ लेता। मैं उन का पुत्र था, पर अन्य लोग उन की स्मृति पर मुझ से बढ़ कर दावा कर रहे थे। अनुभव होता था कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सारी दुनिया मेरे साथ समवेदना प्रकट करना चाह रही है—औरमेरी अपेक्षा भी मुझ से अधिक वेदना प्रकट करना चाहती है। इस कारण मैं संवेदना का पूरा अनुभव नहीं कर सका, और न उसे प्रकट ही कर सका।

इस सहानुभूति की भावना के साथ एक और चीज़ भी मिल गई। स्वभावतः मुझे अनुभव हुआ कि यह बड़ा भारी बलिदान था। जैसी कहानियां और घटनायें इतिहास में पढ़ते आये थे, यह तो वैसी हो गई। मेरे पिताजी शहीद हो गये, वे अमर पदवी को प्राप्त हो गये, इस विचार ने मेरे दिल को भर दिया। इसे मनोविज्ञान के पण्डित किस दृष्टि से देखेंगे, शायद वे मेरी भावना को क्षुद्र ही समझेंगे, यह सम्भावना होते हुए भी यह स्वीकार कर लेने में मुझे संकोच नहीं कि इस विचार ने मेरे हृदय में अभिमान मिश्रित सन्तोष की बाढ़ सी ला दी। परिणाम यह हुआ कि जब तक वह दिल्ली के इतिहास में स्मरणीय अर्थी का जलूस निगमबोध घाट पर पहुंच कर, दाहक्रिया कर के, वापिस नहीं आ गया, तब तक मैं बिल्कुल स्थिर रहा। शायद मुझ से मिलने वाले मेरी उस स्थिरता से आश्चर्यित होते होंगे। या तो उसे वे मेरी दृढ़ता का प्रमाण मानते होंगे अथवा हृदयहीनता का। वस्तुतः दोनों ही बातें नहीं थीं। वह स्थिरता उन परिस्थितियों का परिणाम थी, जिन का मैंने ऊपर वर्णन किया है।

मैंने स्वयं इस बात को तब अनुभव किया, जब यमुना के तट से लौट कर, और सहानुभूति प्रकट करने वाले मित्रों से अवकाश पा कर मैं अकेला अपने लिखने के कमरे में पहुंचा। कमरे में मेरी बैठने की कुर्सी के ऊपर पिताजी का बड़ा चित्र था ( अब वह मेरी कुर्सी के सामने रखा हुआ है ) और मैं था। उस समय एकदम मैंने अनुभव किया कि मैं अकेला रह गया। मेरे बड़े भाई पहले ही विलायत जा कर लापता हो चुके थे, पिताजी चले गये—और अब इस तूफानी दुनिया में—आकाश और पृथ्वी के बीच में—मैं अकेला लटकता रह गया. मन में यह भाव आते ही मेरा वह कृत्रिम धर्म और स्थिर भाव जाता रहा और आंसू मानों बांध को तोड़ कर बह निकले। मैं बहुत देर तक, और आवाज के साथ रोया—यह मुझे भली प्रकार याद है।

—

# मैत्री की महत्ता

जो व्यक्ति मित्रों के साथ बिगाड़ नहीं करता वह अपने घर से बाहर जाने पर बहुत खाने-पीने को पाता है, बहुत से लोग उस के सहारे जीते हैं। जिन-जिन जनपद, निगम या राजधानियों में जाता है, सर्वत्र सम्मानित होता है। उसे चोर परेशान नहीं करते, राजा अपमान नहीं करता, वह सभी शत्रुओं पर विजय प्राप्त करता है, क्रोध रहित (प्रसन्न-मन अपने घर आता है, सभा में समादृत होता है और जाति-बन्धुओं का उत्तम (श्रेष्ठ व्यक्ति) होता है। दूसरे का सत्कार कर के स्वयं सत्कार पाता है, दूसरों का गौरव कर स्वयं गौरव-युक्त होता है, प्रशंसा और यश प्राप्त करता है। पूजा करने वाला पूज पाता है और वन्दना करने वाला प्रतिवन्दना यश और कीर्ति को प्राप्त होता है। उसे गौवें प्राप्त होती हैं, खेत में बोया हुआ अन्न खूब उपजता है, पुत्रों के लिए फल प्राप्त होता है। जैसे खूब जड़ और शाखा फैलाये हुये निग्रोध-वृक्ष का मालवा लता कुछ बिगाड़ नहीं सकती, वैसे ही उसके शत्रु उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकते। ★

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# भारतीय वाद्य संगीत

भारत में संगीत को ब्रह्मप्राप्ति का साधन माना गया है। पौराणिक गाथाओं में संगीत का आरम्भ ब्रह्मा से ही माना जाता है। कई प्रकार के नृत्य, संगीत और यहां तक की कई वाद्यों को भी देवी-देवताओं के साथ जोड़ा हुआ है।

रुद्र के संगीत और नृत्य से तो सारे भारत-वासी परिचित ही हैं। उन के नृत्य का भाव आध्यात्मिक है और विकास अथवा प्रलय का प्रतीक माना जाता है। रुद्र का डमरु भी 'आकाश तत्व' का प्रतीक है क्योंकि आकाश से ही सारी ध्वनि उत्पन्न होती है। कृष्णरूप में विष्णु का ही नाम वंशीधर या मुरलीधर है। इसी प्रकार सर-स्वती का संगीत और काव्य से अभिन्न संबन्ध है।

इन्द्रलोक के गन्धर्व, किन्नर, नारद, विद्याधर और विश्ववसु इत्यादि सभी का संगीत के किसी न किसी अङ्ग से सम्बन्ध है। वाद्य-संगीत और नृत्य की सृष्टि इन्हीं विभूतियों ने की है भारत के लम्बे इतिहास में अनेक वाद्यों का आविष्कार हुआ है। और हर भारतीय वाद्य में पूरी मौलि-कता और बुद्धि विलक्षणता का परिचय मिलता है। अलग-अलग बनावट और ध्वनि के अनुसार साधारण से साधारण साज से लेकर बड़े-बड़े पेचीदा तक ६०० साज भारत में पाये जाते हैं। इन में तार वाले, फूंक से बजने वाले तथा थाप से बजाये जाने वाले सब तरह के साज शामिल हैं। कुछ वाद्यों का चलन अब समाप्तप्राय है। कुछ में समय के साथ परिवर्तन हुआ है और कुछ आज भी वैसे ही हैं, जैसे वे आज से सदियों पहले थे।

## प्राचीन वाद्य

अम्बुज, अलापिनी, परिवर्धिनी, विपंची, चित्रा, कच्छमी और मत्तकोकिला आदि का रूपांतर ही आज के वीणा, सितार, गोट्टुवाद्यम, विचित्र वीणा, सरोद सारंगी और इसराज आदि साज हैं। इसी प्रकार प्राचीन पटाहा, मुराज, भरदला, भेरी, दुन्दभी आदि का नवीन रूप मृदंगम् और ततला आदि हैं।

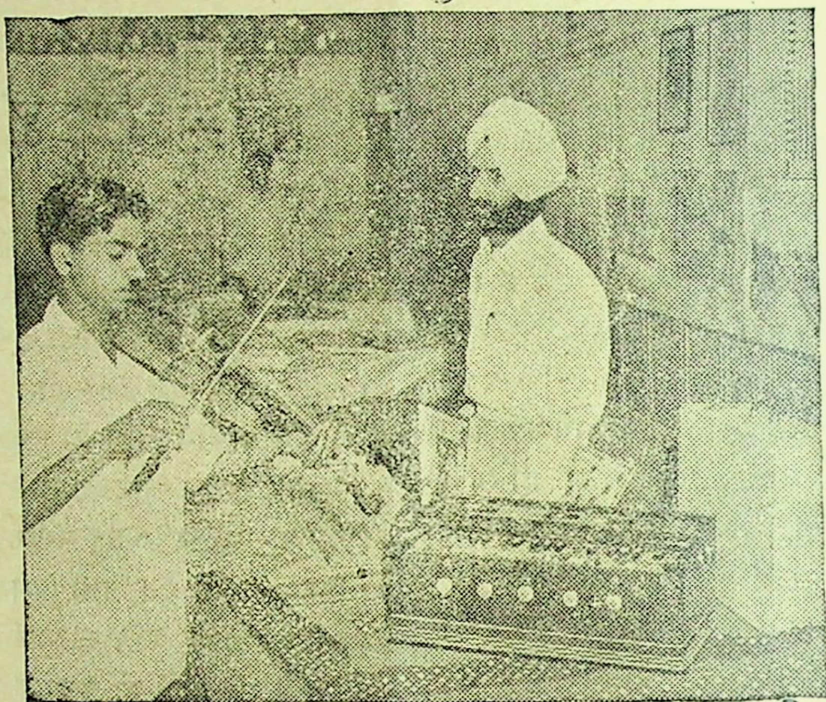
प्राचीन भारतीय वाद्यों का ज्ञान हमें अपने प्राचीन साहित्य और मूर्तिकला से मिलता है। संगीत सम्बन्धी संस्कृत वाङ्मय, वैदिक ऋचाओं भागवत पुराण, बौद्ध ग्रंथों और जातक कथाओं में भी हमें प्राचीन वाद्यों का प्रचुर उल्लेख मिलता है। भरतमुनि का 'नाट्यशास्त्र' और सारंगदेव का 'संगीत रत्नाकर' आदि संस्कृत ग्रन्थों में वाद्यों का विस्तृत वर्णन है। इसी प्रकार कालिदास की संस्कृत रचनाओं और तामिल और तेलुगु के साहित्य में भी वाद्यों की चर्चा है। अबुल फजल के प्रसिद्ध पारसी ग्रन्थ 'आइने-अकबरी' में मुगल कालीन वाद्यों का उल्लेख है।

नर्तक-नर्तकियों की प्राचीन मूर्तियों से भी भिन्न काल में प्रयुक्त होने वाले वाद्यों का हमें पता चलता है। कौन से साज खड़े होकर बजाये जाते थे और कौन से बैठ कर, यह भी इन मूर्तियों की मुद्राओं से स्पष्ट है। अजन्ता की गुफाओं की चित्रकारी से भी प्राचीन भारतीय वाद्यों और उनके बजाने के ढंग आदि का अच्छा परिचय मिलता है।

## वाद्यों का उत्तम संग्रह

कलकत्ता के विचित्रालय में भारतीय साजों का अनुपम संग्रह है। कंठ संगीत का भारत में सदा बहुत ऊंचा स्थान रहा है। पर इस का यह मतलब नहीं कि यहां कभी भी वाद्य संगीत को नीची दृष्टि से देखा गया हो। हमारे यहां वाद्य केवल संगत के लिए नहीं बल्कि स्वतन्त्र रूप से भी बजाये जाते थे और इन के बजने की एक स्वतन्त्र कला थी। भारतीय संगीत में स्वर की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



मधुरता को प्रधानता दी गई है और पश्चिमी संगीत में अनेक वाद्यों के स्वर ताल के मेल की। यही कारण है कि भारत में वाद्यवृन्द या 'आरकेस्ट्रा' जैसी कोई चीज विकसित नहीं हुई। पूजा आदि में अवश्य दो चार साज एक साथ बजाये जाते थे। बुद्ध की 'शब्द पूजा' में वीणा; छोटी-छोटी ढोलकें, बांसरी आदि कुछ साज बजाये जाते थे। इस प्रकार का उल्लेख मिलता है कि जब सम्राट अशोक तीर्थ-यात्रा करने जाते थे तो वाद्य-वादकों की एक मंडली उनके साथ रहती थी। गुप्तकाल में युद्ध के समय वीणा, मृदंग, पुष्कर, मुराज, तुरही, शंख, दुन्दभी और घंटे आदि का प्रयोग किये जाने का उल्लेख मिलता है।

चीनी तथा अन्य विदेशी यात्रियों ने भी अपने लेखों में भारतीय वाद्यों को उल्लेख किया है। बाण ने अपने 'हर्षचरित' में लिखा है कि जब सम्राट हर्ष अपने स्नानागार में प्रवेश करते थे, उस समय 'शृङ्ग' ( नरसिंहा ) और वीणा, ढोल आदि से संगीत बजाया जाता था।

मुगलकाल में 'नौबत' का रिवाज था, जिस में नौ लोग बजाते थे। वैसे नौबत में प्रायः नौ से अधिक गायक और साज बजाने वाले होते थे और यह शहरों और महलों के फाटकों की बुर्जियों में बजायी जाती थी। अकबर के नक्कारखाने में कुर्गा, नक्कारा, ढोल, सुरनई, नफीरी, करना और शृङ्गझनी आदि साज थे।

आधुनिक युग में उदयशंकर ने भारतीय वाद्य वृन्द ( आरकेस्ट्रा ) बनाने की दिशा में काफी योग दिया है। अ. भा. रेडियो की ओर से रविशंकर और टी. के. जयराम अय्यर के निर्देशन में वाद्य वृन्द की रचना की गई है, जिस से सभी रेडियो श्रोता परिचित होंगे। पर देश में वाद्य संगीत की उन्नति के लिए अभी बहुत से परीक्षण और कार्य करने होंगे तभी श्रोतागण इस के महत्व को समझ जायेंगे।

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# ऐकमत्यवर्ग के कुछ प्रसिद्ध शब्द

श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

इस लेख में मैं ऐकमत्यवर्ग के निम्न शब्दों का विवेचन कर के सूक्ष्म भेदों को ध्यान में रखते हुए संस्कृत और हिन्दी के समानार्थक शब्द निश्चित करने का प्रयत्न करूंगा।

Agreement, accord, Understanding, concord, harmony, unity.

Agreement=समयः, संवित् (सं०) स्वीकारपत्र (इकरार नामा) ऐग्रीमेन्ट एक अत्यन्त विधानात्मक शब्द है। इस से प्रायः शर्तों का अन्तिम निर्णय सूचित होता है। यह आवश्यक नहीं कि यह लिखित रूप में हो यद्यपि अंग्रेज़ी विधि के अनुसार जब तक यह लिखित रूप में न हो तब तक वैधरूप से वह प्रभावजनक नहीं होता। वैब्स्टर के पर्याय कोष में इस के विषय में ठीक ही लिखा है कि 'Agreement is the most positive-word, it usually implies a final settlement of terms.'

(Webster's Dictionary of Synonyms P. 36).

संस्कृत में ऐग्रीमेन्ट के लिये 'संवित् और समयः' इन शब्दों का प्रयोग होता है पर हिन्दी में समय शब्द का इस अर्थ में प्रयोग प्रचलित नहीं क्यों कि उस से काल का ही अधिकतर ग्रहण होता है। संवित् शब्द का प्रयोग अब प्रचलित हो रहा है यद्यपि सर्व साधारण उस को समझने में कठिनाई अनुभव करते हैं। विधि वा कानून में ऐग्रीमेन्ट के लिये स्वीकार-पत्र शब्द का प्रयोग संस्कृत और हिन्दी में सुगम है जिसे उर्दू में इकरारनामा के नाम से पुकारते हैं। Agreement के लिये प्रादेशिक भाषा कोषों में निम्न प्रकार के शब्द पाये जाते हैं।

बंगला—अन्वय, ऐक्य, एकमत।
कन्नड़—अनुमति, ऐक्य, एकवाक्यते।
तेलुगु—समयमु, सम्मतमु, समाधानमु, ऐकमत्य एकभावमु, ऐकमत्यमु।
मलयालम—निश्चयम्, समयम्, संवित्, ऐक्यम्, सम्मति, संवादम्, स्वीकारम्।
मराठी परस्पर सम्मति, करार, ठराव, करारनामा।
गुजराती—एकरूपता, संमति, अनुमत।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अनेक प्रादेशिक भाषाओं में भी ऐग्रीमेन्ट के लिए समय और संवित् ये संस्कृत के शब्द प्रचलित हैं। श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी M. A. LL. B., P. C. S. कृत 'विधि शब्द सागर' में 'ऐग्रीमेन्ट' का Contract से भेद करने के लिये ऐग्रीमेन्ट के लिये 'प्रतिज्ञा' और Contract के लिये संवित् शब्द का प्रयोग किया गया है। इस 'प्रतिज्ञा' शब्द का Promise से भेद करने के लिये प्रतिश्रुति शब्द का प्रयोग उचित समझा गया है।

Accord=सामञ्जस्यम्, ऐकमत्यम् (सं) ऐकमत्य (हिं)।

अंग्रेज़ी के ऐकौर्ड शब्द का प्रयोग सरकारों, वर्गों वा व्यक्तियों में परस्पर मतभेद पर्याप्त मात्रा में दूर हो कर ऐकमत्य के अनुकूल वातावरण बनाने के अर्थ में होता है। इस में यह भी भाव आता है कि सब बातों का विस्तार से अन्तिम निश्चय अभी नहीं हो पाया और निश्चय की शर्तें प्रकाशित किये जाने की अवस्था में नहीं हैं तथापि अन्तिम समाधान के योग्य अवस्थाएं पूरी की जा चुकी हैं। इस के लिये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संस्कृत में सामञ्जस्यम् और सुगमता की दृष्टि से ऐकमत्यम् शब्द का प्रयोग उचित है।

'The use of this term 'accord' often implies that all details have not yet been settled or that the terms of the agreement are not yet ready for publication, but that the conditions necessary for a final agreement have been fulfilled' Webster's Dictionary of Synonyms ( P. 36 ).

प्रादेशिक भाषा कोषों में इस के लिए निम्न शब्दों का प्रयोग पाया जाता है—

बं०—सम्मति, सामञ्जस्य, समन्वय।

कं०—सम्मति, स्वीकरण, सामरस्य।

ते०—अङ्गीकारमु, आनुगुण्यमु, ऐकमत्यमु, एकचित्तमु, ऐकताल्यम्।

म०—रुकार, शान्ततेचांतहु मिलाफ।

गु०—मनमेलाय, संमति, एकराग।

आ०—सम्मति, ऐक्यभाव।

इसलिए सामञ्जस्यम् और ऐकमत्यम् इन शब्दों का संस्कृत में और ऐकमत्य वा सहमति शब्द का Accord के लिए हिन्दी में प्रयोग उचित है। यद्यपि प्रायः प्रादेशिक भाषाओं में सम्मति शब्द का प्रयोग भी इस अर्थ में प्रचलित है तथापि हिन्दी में उस का प्रयोग Opinion के लिए ही सर्वत्र प्रचलित हो गया है अतः उस को ग्रहण करने में कठिनता है।

Concord=सहृदयम्, आनुकूल्यम् (सं०), सहृदयता, एकतानता (हि०)।

अंग्रेजी का कनकौर्ड शब्द Con, Cord इन लैटिन शब्दों से मिल कर बनता है। Con का अर्थ Cum—सम् इकट्ठा और Cord का हृदय यह अर्थ होता है इसलिए 'सहृदयं सांमनस्यम् अविद्वेषं कृणोमिवः' अथर्व ३. ३०. १ इत्यादि में प्रयुक्त सहृदयम्' इस शब्द का यह शब्दानुवाद है और संस्कृत में इस तथा आनुकूल्यम्, और एकतानता शब्दों का प्रयोग Concord के लिए करना सर्वथा उचित है। हिन्दी में सहृदय शब्द का विशेषण के रूप में अधिक प्रयुक्त होने के कारण सहृदयता अथवा एकतानता शब्द का प्रयोग किया जा सकता है। प्रादेशिक भाषा कोषों में Con cord के लिये निम्न शब्द प्रचलित हैं।

बं०—मिलन, एकता, अन्वय, एकतान, सुरेरमिल।

क०—मैत्री, सांगत्य, सन्धि, स्वरमैत्री, समानाधिकरण, अन्वय।

ते०—आनुकूल्यमु, सम्मति, ऐकमत्यमु, एकतानमु।

मल०—ऐक्यम्, चित्तैक्यम्, अविसंवादम्, अविरोधम्, प्रीति, प्रणयम्, सन्धि, निश्चयम्, अनुषङ्गम्, अन्वयम् तालैक्यम्, स्वरैकता।

मल० जुलतासम्बन्ध, मिलाफ, ऐक्य, मेल, समानाधिकरण।

गु०—एक राग, मेलाप, अविरोध।

आ०—मिलभाव, मिलन, एकमत।

इनमें से एकतानता, चित्तैक्यम्, आनुकूल्यम, साङ्गत्यम्, इत्यादि शब्दों का संस्कृत में प्रयोग किया जा सकता है। हिन्दी में सरलता की दृष्टि से एकतानता और सहृदयता शब्दों का प्रयोग अधिक उचित प्रतीत होता है।

Harmony=साम्मनस्यम्, सामरस्यम्, समतानता (सं०) समस्वरता (हिं०)।

अंग्रेजी के 'हार्मनी' शब्द के अन्दर जो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मुख्य भाव आता है और जो इसे ऐग्रीमेन्ट इत्यादि से भिन्न करता है उसका निर्देश जेम्स फर्नाल्ड कृत Standard Handbook of Synonyms में इन शब्दों में किया गया है—

'When tones, thoughts or feelings individually different, combine to form a Consistent and pleasing whole, there is harmony. Harmony is deeper and more essential than agreement.

( Handbook of Synonyms by V. Fernald Pages 228 ).

अर्थात जब स्वर, विचार और भावनाएं प्रत्येकशः पृथक् पृथक् होती हुई भी एक सम्बद्ध और हर्षदायक संयुक्तरूप धारण कर लेती है। 'हार्मनी' में Agreement की अपेक्षा अधिक गहराई और सच्चाई होती है। 'हार्मनी' की उपर्युक्त विशेषता और उसके मूलार्थ को ध्यान में रखते हुए ( जो लैटिन और ग्रीक् के Harmos शब्द से मिलता है और उसका अर्थ मेल वा जोड़ Joint Fitting होता है अंशों का मिलकर एक सम्बद्ध संयुक्त रूप बन जाना यह उसका मूल धात्वर्थ है। ) हम ने उसके लिए साम्मनस्यम्, सामरस्यम्, समतानता, स्वर मैत्री, स्वर माधुर्यम्, इन शब्दों को संस्कृत में और समतानता, स्वरमैत्री और स्वरमाधुर्य शब्दों को हिन्दी में चुना है। प्रादेशिक भाषा-कोषों में Harmony के लिए निम्न शब्दों का प्रयोग पाया जाता है—

बं०– समतान, स्वरमिल, स्वरसामञ्जस्य, ऐक्य।

आ०—मिल, एकता, मिलाप्रीति, सुवरमिल।

क०—सामरस्य, हितपरिणाम, मेल, स्वर-मेल, स्वरमैत्री, मधुरनाद।

ते०—एकस्वनमु, समतालमु, श्राव्यत, मधुरस्वरमु, स्वरमाधुर्यमु, अविरोधमु, ऐकमत्यमु, सम्मति, स्नेहमु।

मल०– तालैक्यम्, स्वरैक्यम्, स्वरसंगम् एकतालम्, सुश्राव्यत, स्वरमाधुर्यम्, सुस्वरत, संवादम्, अविरोधम्, ऐक्यम्, संगम्।

मल०– मेल, मिलाप, ऐक्य, एकवाक्यता, मधुर आवाज़।

गु०—मेल, मिलाप, ऐक्य, एकमत।

Unity=ऐक्यम्, एकता।

अंग्रेजी के युनिटी शब्द के लिए ऐक्यम् और हिन्दी में एकता शब्द का प्रयोग स्पष्ट और सर्वसम्मत है अतः उसके विवेचन की आवश्यकता नहीं।

Understanding=अन्योन्य निश्चयः, पारस्परिक निश्चय।

अंग्रेजी का 'अन्डरस्टैन्डिग्' यह शब्द स्वीकृत समाधान में से सबसे कम प्रभावजनक है। इस में कुछ निश्चित वचनों और प्रतिज्ञाओं की सत्ता और भिन्न-भिन्न वर्गों द्वारा उनके समादर का भाव सूचित होता है इस लिये उसके लिए अन्योन्य निश्चय व पारस्परिक निश्चय शब्द का संस्कृत और हिन्दी में प्रयोग उचित है।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# शान्ति का स्वप्न साकार होगा

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

विश्व भर के आर्यों की प्रतिनिधि संस्था, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से, बुद्ध-जयन्ती के शुभ अवसर पर देश-देशान्तरों से भारत में आए हुये महानुभावों का हृदय से स्वागत करता हूँ। भारत के धार्मिक इतिहास में एक ऐसा अन्धकारमय समय आ गया था जब जाति धर्म की सच्ची भावना को खो बैठी थी। धर्म का स्थान रूढ़ियों ने ले लिया था, पशु-हिंसा को मोक्ष की प्राप्ति का साधन माना जाने लगा था, जन्म के कारण ऊंच-नीच की भावना इतनी प्रबल हो गई थी कि कर्मशील तपस्वी ब्राह्मणों का अभाव सा हो गया था। केवल कुछेक रिवाजों को धर्म का नाम देकर धर्म के वास्तविक रूप चरित्र-निर्माण की उपेक्षा की जा रही थी। जाति की ऐसी शोचनीय दशा थी, जब भारत के एक सुन्दर प्रदेश में महात्मा बुद्ध ने जन्म लिया और यथार्थ ज्ञान प्राप्त करके आर्य धर्म का संदेश संसार भर को दिया। महात्मा बुद्ध द्वारा उपदिष्ट धर्म का सार आर्य-सत्यचतुष्टय में आ जाता है जिसकी धर्म-चक्र-प्रवर्तन सूत्र में विशद व्याख्या है। सम्मपद के धर्मिष्ठ वर्ग में आर्य की जो विशद व्याख्या की गई है उसने आर्य शब्द के गौरव को बहुत बढ़ा दिया है।

न तेन अरियो होति येन पाणानि हिंसति,
अहिंसा सब्ब पाणानं अरियोति पवुच्चति।

प्राणियों की हिंसा करने से कोई आर्य नहीं होता। सब प्राणियों की हिंसा न करने वाला मनुष्य ही आर्य कहलाता है।

मनुष्य जाति के कल्याण के लिए महात्मा बुद्ध ने जिस क्रियात्मक धर्म का उपदेश दिया उसे सहस्रों भिक्षुओं ने और महाराज अशोक धर्मिष्ठ नरपतियों ने संसार के कोने-कोने में फैला दिया आज भी पृथ्वी पर बौद्ध धर्म के अनुयायियों की संख्या अन्य सब धर्मों के अनुयायियों की अपेक्षा अधिक है।

समय का चक्र चलता गया। लगभग २५०० वर्षों के पश्चात् फिर देश पर वैसा ही अन्धकार छा गया जैसा बुद्ध के जन्म के समय छाया हुआ था। अब भी धर्म का स्थान रूढ़ि ने, तप का स्थान वेष ने, यज्ञ का स्थान पशुबलि ने और गुणों का स्थान जन्मगत जाति भेद ने ले लिया था। जिस महापुरुष ने उन्नीसवीं सदी में इन अनार्य प्रवृत्तियों को रोका और सच्चे आर्य धर्म का उद्धार करके फिर से उसी भावना को जागृत किया था जिसे महात्मा बुद्ध ने जागृत किया था तो वह महर्षि दयानन्द सरस्वती थे।

आर्य समाज महर्षि दयानन्द का सन्देश-वाहक है। वह रूढ़ियों का शत्रु, आर्य जीवन का समर्थक और जातपात तथा अस्पृश्यता का घोर विरोधी है। वह वेद के 'अहिंसा परमोधर्मः' इस उपदेश वाक्य में अटल विश्वास रखता है। अतः आर्य समाज आर्य-धर्म के बड़े प्रचारक महात्मा बुद्ध की पुण्य जयन्ती के अवसर पर अन्य देशों से भारत पावनी भूमि में पधारे हुये बन्धुओं का हृदय से स्वागत और अभिनन्दन करता है। हमें आशा रखनी चाहिए कि भूमण्डल के भिन्न-भिन्न देशों में रहने वाले परन्तु समान धर्म-बन्धुओं का यह शुभ समागम संसार के लिये कल्याणकारी होगा, मनुष्य जाति महात्मा बुद्ध के बतलाये मौलिक आर्य-सत्यों को अपना मार्ग प्रदर्शक बनायेगी और घोर स्वार्थ तथा परस्पर विरोध की ज्वाला में जलती हुई मनुष्य जाति परस्पर विश्वास तथा शान्ति की स्थापना के स्वप्न को पूरा होता देख सकेगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# आदर्श पत्र लेखक कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर

श्री बनारसीदास चतुर्वेदी

अपने साठ पैंसठ वर्ष के साहित्यिक जीवन में कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर को हजारों ही चिट्ठियां लिखनी पड़ी होंगी। उन में से कई सौ पत्र सुरक्षित भी रह गये हैं। जो पत्र हमारे देखने में आये हैं, उन में दीनबन्धु ऐन्ड्रूज को लिखे गये पत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं और वे 'मित्र के नाम पत्र' (लैटर्स टु ए फ्रैंड) नामक पुस्तक में प्रकाशित हो गये हैं। उन्होंने अपनी सौभाग्यवती पुत्रवधू प्रतिमा ठाकुर को जो चिट्ठियां लिखीं थीं, उन का भी संग्रह हम ने देखा है। कुछ पत्र विश्वभारती पत्रिका में भी छपे थे, कुछ रोलां और गोर नामक अङ्गरेजी किताब में भी। गुरुदेव के (कवीन्द्र को हम लोग शान्ति निकेतन में इसी नाम से पुकारते थे) चार पांच पत्र मेरे पास भी सुरक्षित हैं। जिन में दो बंगला भाषा में हैं, और दो तीन अंग्रेजी में। माडर्न रिव्यू की पुरानी फाइलों में भी उनके बंगला पत्रों का अंग्रेजी अनुवाद छपा था।

पत्रों के महत्व को गुरुदेव भली भांति जानते थे। उन्होंने मि० एन्ड्रूज को सन् १९२१ में लिखा था कि दो आदमियों के बीच जो दूरी होती है वह भी अपना खास महत्व रखती है और चिट्ठियों में जो भाषण शक्ति होती है, वह जिह्वा या ज़बान में नहीं होती।

दीनबन्धु एन्ड्रूज गुरुदेव के अनन्य भक्त तथा परम मित्र थे और उन्होंने अपने आप को गुरुदेव को समर्पित कर दिया था। दीनबन्धु का यह आत्मसमर्पण भारतीय इतिहास की एक खास घटना है और उस से दोनों देशों को लाभ हुआ। दीनबन्धु ने भारत की जो सेवा की उससे भला कौन इन्कार कर सकता है? और गुरुदेव के हृदय में इगलैंड के प्रति जो विश्वास बाकी रह गया था, उस का कारण दीनबन्धु ऐन्ड्रूज ही थे। एक बार गुरुदेव ने अपने एक पत्र में ऐण्ड्रूज के इस प्रेम की चर्चा बड़ी सहृदयतापूर्वक की थी।

न्यूयार्क से उन्होंने अपने १७ दिसम्बर १९२० के पत्र में लिखा था—

'जिस तरह बवण्डर में सूखी पत्तियां चक्कर काटती हैं, उसी तरह जब चन्दा उगाने की आकांक्षा की आंधी में मेरे विचार चकरा रहे थे, तब एक चित्र मेरे हाथ में आया – वह था सुजाता का बुद्ध भगवान को दुग्ध-अर्पण। उस चित्र का सन्देश मेरे दिल की गहराई पर पहुँच गया।' वह मानों मुझ से कह रहा था—

'दूध का प्याला बिना मांगे तभी तुम्हारे सामने आता है, जब तुम तपस्या कर लेते हो। वह प्रेम के साथ तुम्हें अर्पित किया जाता है और केवल प्रेम ही सत्य के प्रति अपना अर्घ्य-दान कर सकता है।' उसी समय तुम्हारी शकल मेरे दिमाग में आ गई। दूध का यह प्रेमपूर्ण प्याला मुझे तुम्हारे हाथों मिला है। बड़े आदमियों की हुण्डियों की अपेक्षा वह अनन्त गुना कीमती है। जब मैं एकान्त के जंगल में भूखा भटक रहा था बन्धुत्व और सहानुभूति के अभाव में तब तुम मेरे लिए प्रेम भरा प्याला लाये। यही दरअसल जीवन दान करने वाला भोजन है, जो एक प्राणी द्वारा दूसरे को बिना किसा मोल-भाव के दिया जाता है।

यदि हम उपमा अलंकार को आगे जारी रखें तो हमें कहना होगा कि कवीन्द्र श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अपनी इस सुजाता को दिल खोल कर जैसे सहृदयतापूर्ण पत्र लिखे हैं, वैसे उन्होंने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपनी पुत्रवधू श्रीमती प्रतिमा देवी को भी नहीं लिखे।

दीनबन्धु एण्ड्रूज को लिखे पत्रों में गुरुदेव ने मानों अपना हृदय ही उंडेल दिया है। मानव जीवन के अनेक प्रश्नों पर इन पत्रों में काफी प्रकाश डाला गया है। और इन पत्रों में कम से कम सौ सवा सौ वाक्य तो ऐसे निकलेंगे जिन्हें जीवन का मूलमन्त्र कह सकते हैं। कुछ उदाहरण देखिए :

'हमें अपनी छुट्टियों के लिये कोई खास कार्यक्रम नहीं बनाना चाहिये। छुट्टियों के दिन बिल्कुल नष्ट ही करने चाहियें, जब तक कि स्वयं आलस्य ही हमारे लिये भार स्वरूप न हो उठे।'

'जो कुछ मृत हो चुका है, उस से अपनी आत्मा का भोजन नहीं बनाना चाहिये, क्योंकि जो मृत है वह मारक है—मृत्यु को लाने वाला है। मृत्योर्मा अमृतं गमय...तब तक स्वच्छ प्रकाश के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकते जब तक कि हम ने अपना तमाम ऋण न चुका दिया हो और मरे हुए भूतकाल में हमारे जो बन्धन हैं, वे न टूट गये हों। अपने पुराने व्यक्तित्व से विदाई लेना अत्यन्त ही कठिन है। जब तक विदाई का क्षण नहीं आता तब तक इस बात का हमें पता नहीं लगता कि हमारे पुराने व्यक्तित्व ने अपनी जड़ें कितनी दूर तक जमा ली थीं और जीवन के रस को चूसने के लिए उस के प्यासे नसें कितनी गहराई तक चले गये थे। हमारे जीवन की अवधि थोड़ी है और सेवा के अवसर कम ही मिलते हैं, इस लिये हमें अपने विचारों के बीज उन आत्माओं में बोने चाहियें जो उस की अधिकारी हैं और जहां वे बीज फसल के रूप में उग सकेंगे।

एक अन्य पत्र के उद्धरण लीजिए :

'जब बसन्त ऋतु जाने वाली होती है तो मानों मैं अपनी घोर निद्रा से जग कर सोचता हूँ, यह निद्रा जिस में मुझे दुनियां को सन्देश भेजने पड़ते हैं कि मैं तो फालतू लोगों के समूह का हूँ और तब मैं जल्दी से उन आवारा प्राणियों के साथ गाने लगता हूँ। उसी वक्त कोई कान में कहता है इस आदमी ने तो समुद्र यात्रा की है। और तभी मेरा गला रुंध जाता है।'

'क्या यह बात दुनियां के लिये कल्याणकारी नहीं है, कि कवि लोग उन प्रस्तावों को बिल्कुल भूल जायें जो बड़ी-बड़ी सभाओं में पास किये जाते हैं।' अपनी माता की मृत्यु के बाद जब दीनबन्धु ऐण्ड्रूज अफ्रीका से लौट रहे थे, गुरुदेव ने उन्हें लिखा था—

'हम लोग आप की प्रतीक्षा कर रहे हैं, क्यों कि हम जानते हैं कि आप अपने हृदय में उस बुद्धि को ला रहे हैं, जो मृत्यु ने आप को प्रदान की है। और उस कोमल शक्ति को भी, जो दुःख से आप को मिली है।'

'सत्य से मुक्ति होती है स्वाधीनता मिलती है, केवल यही बात ठीक नहीं है। उस के साथ-साथ यह भी ठीक है कि स्वाधीनता हमें सत्य प्रदान करती है। इसीलिये बुद्ध भगवान ने अहं के बन्धनों से मुक्ति को महत्व दिया था, क्योंकि तब सत्य स्वयं ही आ जाता है।'

गुरुदेव को तरह-तरह के आदमियों से मिलना होता था और विभिन्न प्रकृति के मनुष्यों का आतिथ्य करना पड़ता था और इस से उन का जीवन अत्यन्त व्यस्त हो जाता था। एक पत्र में उन्होंने मि० ऐण्ड्रूज को लिखा था—

'क्या मैं कवि नहीं हूं? कोई दूसरा व्यक्ति बनने से मुझे क्या मतलब? लेकिन दुर्भाग्य यह है कि मैं एक सराय की तरह बन गया हूँ, जिस में अजीब-अजीब तरह के आदमी घुस बैठे हैं। लेकिन अब वक्त आ पहुंचा है, जब कि मैं इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मटियारगोरी को छोड़ दूं यह कोई बहुत मुनाफे की चीज नहीं है।

सन् १९२१ में गुरुदेव इङ्गलैंड गये थे और वहां से उन्होंने मि० एण्ड्रूज को लिखा था—

'इङ्गलैंड पहुँच कर मुझे हर्ष हुआ। यहां पर सब से पहले जिन लोगों से मुलाकात हुई उन में एच. डबल्यू नेलिसन का नाम उल्लेख योग्य है। जिस देश ने नेलिसन जैसा आदमी पैदा किया उस देश की आत्मा सचमुच जीवित है। किसी भी देश के विषय में निर्णय करते समय हमें उस के सर्वोत्तम मनुष्यों को ध्यान में रखना चाहिये और मुझे यह कहने में कोई भी संकोच नहीं कि अंग्रेज़ों में जो सर्वश्रेष्ठ हैं वे संसार की सर्वोच्च मनुष्यता के नमूने हैं।

जब ५ अप्रैल सन् १९४० को दीनबन्धु एण्ड्रूज का स्वर्गवास हो गया तो उस के पांच दिन बाद उन्होंने रोमा रोलां को लिखा था—

'पिछले दिनों में चार्ली एण्ड्रूज की मृत्यु से हमारे यहां दुःख की घटा छा गई है। वे मेरे प्रिय मित्र थे, उन से मेरा बहुत निकट का सम्पर्क था और वे मेरे साथी काम करने वाले थे। कलकत्ते के अस्पताल में दो महीने की बीमारी के बाद वे स्वर्गवासी हुए। उनकी मैत्री तथा उदारता का दान अखण्ड था। और उस के चले जाने से जो स्थान रिक्त हुआ है, उस का अनुमान करना कठिन है। हम लोगों की तो अकथनीय हानि हुई है। उनके जीवन से निरन्तर स्फूर्ति मिलती थी, वे एक प्रिय मित्र से भी अधिक थे। आशा है कि आप को मेरे दुःख में सहानुभूति होगी।

शान्ति निकेतन के वियोग से गुरुदेव बराबर दुखित रहते थे। चाहे कहीं भी हों, उन्हें शान्ति निकेतन की याद बराबर सताती थी। श्री फणि भूषण अधिकारी की कन्या श्री भक्ति देवी को उन्होंने अमरीका से लिखा था—

भक्ति, तुम हमारे आश्रम में आ गई हो, इस से मुझे बड़ी खुशी हुई है। इस समय मैं बहुत दूर हूँ, कुछ भी अच्छा नहीं लगता। वर्षा का समारोह वन-वन में, आकाश-आकाश में जम रहा था। कदम्ब वन, नूतन प्रफुल्लता से भर गया था, लेकिन मैं नवीन गीतों की डाली ले कर उपस्थित नहीं हुआ। शारदोत्सव के समय यहां आ गया। शेफालिका वृक्ष के नीचे सौंदर्य का सदाव्रत चल रहा होगा और आकाश में शुभ्र बादल धीरे-धीरे चल रहे होंगे। हवा में शीतलता का आभास होगा और तालवृक्षों के शिखर पर आलोक की स्पर्शमणि। शारदा देवी से संगीत की पेशगी लेकर भी मैं संगीत सभा में नहीं पहुँच पाया। साल भर के उत्सवों से गैर-हाज़िर हो गया। यदि दूसरों की नौकरी होती तो उसे नौकरी को एटलांटिक महासागर में डुबो कर चला जाता लेकिन अपने काम से तो छुट्टी नहीं मिलती। फिर भी दिन पर दिन गुजर रहे हैं और निकट आ रहा है मुक्ति का दिन। आखिर एक दिन रंगीन रास्ते से शालकुञ्ज में पहुंचूंगा।

गुरुदेव ने अपनी पुत्र वधू को जो पत्र लिखे थे वे घरेलू टाइप के हैं। उन में साहित्यिक छटा कम है, मतलब की बातें अधिक हैं। अपनी पुत्र वधू की शिक्षा को लेकर उन की सुख सुविधा के बारे में और उन के स्वास्थ्य इत्यादि के विषय में गुरुदेव बराबर चिन्तित रहते थे—

'तुम्हारे पढ़ने में जो बाधा पहुँची है, उस से मेरा मन उद्विग्न है। तुम्हें पढ़ाने के लिये जैसा अजित को कह आया था क्या उसी तरह तुम्हारी पढ़ाई चल रही है। अंग्रेजी पाठ प्रथम भाग समाप्त हो गया। तुम्हारे लिये एक किताब और भी ठीक कर दी थी क्या तुम उस को ठीक तौर पर समझ लेती हो? वह किताब

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अंग्रेजी पाठ के मुकाबिले में भारी नहीं हलकी है।'

आगे चल कर गुरुदेव की चिट्ठियों ने भारी गम्भीरता प्राप्त कर ली थी। उन्होंने अपनी एक चिट्ठी में प्रतिमा देवी को मृत्यु के विषय में लिखा था—

'मां, जीवन को मृत्यु के साथ मिला कर न देखने से सत्य का दर्शन नहीं हो सकता। हम लोग जब प्रतिदिन जीवन की उपलब्धि करते हैं, तब मृत्यु को उस का अंग समझ कर उपलब्धि नहीं करते, और इसी कारण हम अपनी प्रवृत्ति द्वारा संसार को जकड़ लेते हैं। हमारी वासना हमारा भयानक बन्धन बन जाती है। मृत्यु के साथ जीवन को ऐक्य भाव से देखने पर ही संसार का भार हल्का हो जाता है। इत्यादि।'

गुरुदेव के जो पत्र हमारे पास सुरक्षित हैं उनका सारांश ही दिया जा सकता है। गुरुदेव का सब से प्रथम पत्र जो मेरे पास मौजूद है वह सन् १९१५ का है और उस में 'फिजी द्वीप में मेरे २१ वर्ष' नामक पुस्तक की प्राप्ति स्वीकार की गई है। वह अंग्रेजी में है। बंगला भाषा के जो दो पत्रक हैं उस में एक का महत्व मेरे लिये इस कारण है कि उस में उन्होंने मुझे यह अनुमति प्रदान की थी कि मैं उन के किसी भी पत्रिका में प्रकाशित किसी भी लेख का अनुवाद कर के छपवा सकता हूँ।

आभार से कोनो लेख से कोनो पत्रिका इहति-प्रइन करिते पारयो, एइ अधिकार अपना के दितेछि। कोनो पत्रिकार काछे ऋण स्वीकार करिवार प्रयोजन नाइ।

गुरुदेव ने अपने अंग्रेजी पत्र में १५ सितंबर सन् १९२२ को मुझे लिखा था—

'अपने आश्रम को लौटने के बाद जो बोझ मेरे कन्धों पर आ पड़ा है, उस की कल्पना करना तुम्हारे लिये कठिन होगा। विश्वभारती मेरे जाग्रत घण्टों का प्रत्येक क्षण ले लेती है और रात को जो सोने के घंटे होते हैं, उस का भी कुछ हिस्सा।'

अपने अत्यन्त व्यस्त जीवन में गुरुदेव को हजारों ही पत्र लिखने पड़ते थे। वे संसार भर में फैले पड़े हैं। यदि उनका संग्रह हो जाय और उनका अनुवाद भी हमारी मातृभाषा हिन्दी में हो तो हमारे साहित्य का बड़ा उपकार होगा।

—

# शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व

डा० राजेन्द्र प्रसाद

यह अक्षरशः सत्य है कि मानव समाज आज दोराहे पर है। हमें यह फ़ैसला करना होगा कि वैज्ञानिक उन्नति को मानव के लिए वरदान बना हमें एक साथ मिलजुल कर रहना है अथवा अपने दृष्टिकोण को संकुचित कर निजी अस्तित्व के लिए विध्वंसक शास्त्रास्त्रों पर निर्भर रहना है। शस्त्रास्त्र पर निर्भर रहने का अर्थ पारस्परिक संघर्ष ही हो सकता है, और दुर्भाग्य से इस प्रकार के कई संघर्ष हम अपने जीवन में देख चुके हैं। इस मार्ग पर चलने का अर्थ विनाश, और सम्भवतः मानव समाज का अन्त, ही हो सकता है। भगवान बुद्ध द्वारा दिखाए हुए शांति-सह-अस्तित्व के मार्ग पर चल कर ही हम विनाशकारी युद्ध और उस से होने वाली व्यापक हानि से बच सकते हैं।

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल शिक्षा प्रणाली और उसका आधुनिक काल में प्रयोग

डॉ० विश्वम्भर शरण, एम. ए., पी. एच. डी.

तिरंगे के सम्मान के लिये रक्त बहाना, संविधान के अर्थ देश की वेदी पर बलिदान हो जाना, देश की रक्षा के लिये न्योछावर होना, ये सब सौभाग्य के लक्षण हैं। परन्तु ये सब गुण एक दिन में नहीं प्राप्त होते। अच्छी-अच्छी आदतें शनैः शनैः अभ्यास से प्राप्त होती हैं। वास्तव में इनका सूत्रपात माता के गर्भ में ही होता है और इस की पूर्ति गुरु के चरणों में अनेक साधनों और संस्कारों द्वारा होती है।

किसी सभ्यता का पुराना होना उस के व्यर्थ होने को सूचित नहीं करता, अपितु उस की उपयोगिता और स्थिरता का प्रमाण है. पाश्चात्य सभ्यता का यह डंका कि वह लौकिक रोगों को दूर करने की एक अचूक औषधि है. ढोल की पोल निकला है। इस समय दुनियां की नब्ज टटोलने से ऐसा प्रतीत होता है कि वह ऐसी वस्तुओं की खोज में हैं जो अनेक युगों के धक्के को सह कर भी अभी तक जीवित हैं। ऐसी स्थिति होते हुए भी हमें खेद है, हमारे भारतवर्ष में शिक्षित समाज के दिमाग में यह बात बस गई है कि उस की पुरानी संस्थाएं सब व्यर्थ हैं, और समाज, राजनीतिक तथा शिक्षा की सक्रिय उन्नति विदेशी साधनों ही द्वारा हो सकती है। यह केवल शताब्दियों की गुलामी की मनोवृत्ति है। बाहर की वस्तुओं से सबक लेना बुरा नहीं परन्तु गुलामों की तरह उन को अपनाना एक स्वतन्त्र देश को अब शोभा नहीं देता।

इस थीसिस में इस गुलामी के भावों को दूर करने का प्रयत्न किया गया है और बताया गया है कि हमारे देश में शिक्षा के क्षेत्र में भी रत्न छिपे हुए हैं और बाहर की चीजों को स्वीकार करते हुए भी इस बीसवीं सदी में हम अपनी प्रचीन शिक्षा प्रणाली का सफलतापूर्वक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में आदर पूर्वक प्रयोग कर सकते हैं।

शिक्षा के लक्ष्य को ही अगर हम इस समय विचारें तो हमें प्रतीत होगा कि गुरुकुल प्रणाली का लक्ष्य मनुष्यों को आदमी से देवता बनाना था। देवता का अर्थ उस मिट्टी की मूर्ति से नहीं है जो आक्रमणों और अनादरों का भली-भांति उत्तर न दे सके। बल्कि उस शक्ति से है जो आत्मिक गौरव रखते हुए संसार के कामों में निर्लिप्त हो कर भाग ले सके। क्या ऐसा व्यक्ति आचरण शून्य होगा? क्या ऐसा शख्स रोटी न कमा सकेगा? क्या ऐसा मनुष्य विद्या अथवा पुरुषार्थ विहीन रहेगा? क्या ऐसा जीव नागरिक बन कर गण राज्य में शासन न कर सकेगा और ग्लेडस्टन, चर्चिल, जार्ज वाशिंगटन और लिंकन की भांति देश का मुख उज्जवल न कर सकेगा? सारांश, जितने भी उद्देश्य शिक्षा के विशेषज्ञों ने बताये हैं इस गुरुकुल प्रणाली के लक्ष्य के अन्दर स्थान रखते हैं।

'सोई सर्वज्ञ गुणी सोइ दाता,
सोइ महि मंराडन पण्डित ज्ञाता।'
—तुलसीदास

यह बात माननी पड़ेगी कि पाठ्यक्रम साधन प्रबन्ध और अनुशासन भी लक्ष्य के ही अनुरूप होते हैं, इस लिये गुरुकुल प्रणाली के भी साधन इत्यादि लक्ष्य की पूर्ति के ही अनुकूल थे। उद्देश्य संसार से भागना नहीं था, बल्कि पूर्ण शक्तिशाली बन कर संसारी जीव के ऋण उतारना था।

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः
स सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः
—गीता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अब सवाल यह पैदा होता है कि क्या आधुनिक काल में गुरुकुल प्रणाली सम्भव है? अगर यह सोचें कि आज कल लड़के प्राचीन ढंग से जंगल में रहें, नंगे पैर चलें, मामूली कपड़ा पहने या न पहने इत्यादि तो यह बाहरी भेष चलना कठिन है, असम्भव है, परन्तु गुरुकुल के असूलों पर यदि काम हो तो यह प्रणाली आज कल भी सहज में चल सकती है।

गुरुकुल प्रणाली की विशेषता है, गुरु के समीप २४ घंटे रहना, खुले हवादार, शहर से दूर, शान्त वातावरण में रहना, गुरु अथवा गुरुकुल की सेवा करना सादा जीवन उच्च विचार रखना भारतीय सदाचार का पालन करना, अपने शरीर मस्तिष्क और आत्मा को बलिष्ट व पुष्ट करना, स्वाध्याय करना ब्रह्मचर्य व्रत धारण करना और जब विद्योपार्जन करें गुरु की आज्ञा में चलना इत्यादि-इत्यादि। यह सब बातें आसानी से आज कल भी हो सकती हैं। चाहे हम पक्के मकानों में रहें. चाहे झोपड़ियों में पढ़ें। चाहे अंग्रेजी पढ़े. चाहे संस्कृत, चाहे हिन्दी या उर्दू पढ़ें। कठिनाई एक बात की है कि हमें अपनी पुरानी बातों में, सिद्धान्तों में, विश्वास नहीं रहा। जब तक किसी विदेशी विद्वान की छाप लग कर कोई सिद्धान्त नहीं आता, हम लोग उसे स्वीकार नहीं करते।

विद्योपार्जन में धैर्य चाहिये, यह काम जल्दी का नहीं है। यह दो तीन महीने का काम नहीं है जैसा आज कल विद्यार्थी परीक्षा के निकट करते हैं। डिग्री लेना और शिक्षित होना वास्तव में दो बातें हैं। साक्षरता और शिक्षा में भी अन्तर है, एक आदमी अक्षर न जानता हो, मगर शिक्षित हो सकता है, जैसे शिवा जी व अकबर। एक व्यक्ति बी० ए० पास मगर असभ्य साक्षर हो सकता है परन्तु शिक्षित नहीं। गुरु की अवज्ञा में रह कर ही आदमी विद्वान् और शिक्षित बन सकता है वरन् नहीं। गोखले श्री राणाड़े की आज्ञा में पढ़े। श्री स्वामी दयानन्द ने अपने गुरु स्वामी बिरजानन्द जी की सेवा में अध्ययन किया।

आजकल स्थान-स्थान पर अनुशासन की कमी प्रतीत होती है। हड़ताल के नमूने देखने में आते हैं। शिक्षा संस्थाओं में पढ़ना कठिन हो जाता है विद्यार्थी का आचरण हृदय विदीर्ण करने वाला है। इसका कारण एक है—विद्यार्थीयों को ठीक देखभाल करने वाला कोई नहीं, माता-पिता को समय नहीं, स्कूल में अध्यापक केवल परीक्षा पर ज़ोर देते हैं, अगर जैसे बाग बगैर माली के, और जानवर बगैर चरवाहे के ख़राब हो जाते हैं वैसे ही बगैर २४ घंटे की देख-रेख के चंचल स्वभाव वाले बालक भी पथभ्रष्ट हो जाते हैं।

इसलिये आजकल की बुराइयों को दूर करने का उपाय केवल एक है कि विद्या का उद्देश्य आध्यात्मिक हो और विद्या गुरु के समीप नियमानुसार व्रत ग्रहण कर के ऋषि शैली के अनुसार हो, और गुरु लोग बालकों के चरित्र का निर्माण करना अपना प्रथम कर्तव्य समझें और समाज भी इस कार्य की पूर्ति में उन्हें पूरा सहयोग दे और आदर प्रदान करे।

ओ३म् सहनाववतु सहनौभुनक्तु
सहवीर्यं करवावहै।
तेजस्विना वधी तमस्तु
माविद्विषावहै। ओ३म

—कठोपनिषत्



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# ऋतुएं क्यों होती हैं ?

पृथ्वी पर ऋतु सम्बन्धी परिवर्तन क्यों होते रहते हैं ? सर्दी और गर्मी, वर्षा और सूखा, तथा तूफान और साफ मौसम के रूप में निरन्तर होते रहने वाले परिवर्तनों का मूल कारण क्या है ?

वैज्ञानिकों को इस प्रश्न का आंशिक कारण तो पता है, किन्तु वे यह बात निःसंकोच रूप से स्वीकार करते हैं कि मौसम में परिवर्तन लाने वाले बहुत से मूल कारणों के सम्बन्ध में अभी तक कोरी कल्पना से ही काम लिया जाता है। १६५७—५८ में संसार में मनाये जाने वाले भू-भौतिक वर्ष में ४० से अधिक देशों के वैज्ञानिकों का एक प्रमुख लक्ष्य यह होगा कि पृथ्वी के आसपास के वायु मण्डल के सम्बन्ध में नई जानकारी हासिल की जाये। उनका विश्वास है कि ऋतु परिवर्तन करने वाली शक्तियां इस विस्तृत एवं अज्ञात वायुमण्डल में मौजूद हैं।

जब मौसम में अचानक कोई ऐसी बात हो जाती है जिसके सम्बन्ध में पहले भविष्यवाणी न की गई हो. तब लोग उसे ऋतु के सम्बन्ध में सूचना देने वाले कर्मचारी की गल्ती बता देते हैं। ऋतु सम्बन्धी भविष्यवाणी में होने वाली अधिकांश गल्तियां मनुष्य की भूल-चूक का परिणाम नहीं होतीं। वैज्ञानिकों का कथन है कि उन गल्तियों का कारण अक्सर यह होता है कि हमें उन शक्तियों के विषय में बहुत कम ज्ञान है जो ऋतु में परिवर्तन लाती रहती हैं।

## वायुमण्डल की पड़ताल

सभी स्थानों के मौसम सम्बन्धी सूचनाएं देने वाले कर्मचारियों की एक सबसे बड़ी आवश्यकता भूमि के आसपास के वायुमण्डल के सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त करने की है। यह वायुमण्डल वायु का एक विस्तृत 'परदा' है जो भूमि के चारों ओर ५०० से ६०० मील दूर तक फैला हुआ है।

वायुमण्डल में क्या हो रहा है, यह मालूम करने के यत्न में संलग्न ऋतु अनुसन्धान कर्मचारी की स्थिति उस मछली के समान है जो समुद्र की गहराई में यह अनुमान लगाने का प्रयत्न कर रही हो कि समुद्र की सतह पर क्या हो रहा है। वास्तव में आज ऋतु के सम्बन्ध में सभी बातें पृथ्वी की सतह पर ही मालूम की जाती हैं। वायुमण्डल तथा ऋतु परिवर्तनों के कारणों के सम्बन्ध में अधिक जानकारी हासिल करने के लिए इस बात की अत्यावश्यक है कि ऐसे गुब्बारों का बहुत प्रयोग किया जाये जिनमें वायुमण्डल में होने वाली घटनाओं का रेकार्ड करने वाले यन्त्र लगे हों।

## गुब्बारों का उपयोग

अन्तरिक्ष-अनुसन्धान के लिए ऐसे गुब्बारे बनाये जाते हैं जो अपने साथ ऐसे यन्त्रों को ऊपर ले जा सकते हैं जिनके द्वारा वायुमण्डल के दबाव, तापमान, आर्द्रता, वायु की गति तथा वायुमण्डल के ऊपरी भाग में चलने वाली वायु धाराओं की गति का रेकार्ड हो जाता है। अधिकांश गुब्बारों में कैमरे लगे होते हैं जो भूमि के ऊपर उड़ने वाले गुब्बारों के साथ-साथ अपनी स्थिति बदलते रहते हैं। कुछ गुब्बारों में रेडियो ट्रांसमिटर लगे रहते हैं। जो भूमि के केन्द्रों को उन बातों के सम्बन्ध में संकेत भेजते हैं जो यन्त्रों द्वारा 'देखी' अथवा 'अनुभव' की जाती हैं।

अमेरिकी ऋतु-विभाग के एक अधिकारी ने हाल में बताया है कि पश्चिम के प्रायः सभी देशों द्वारा मौसमी अनुसन्धान करने के गुब्बारों का प्रयोग किया जाता है। उस ने बताया कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अमेरिका को यूरोप के सभी प्रमुख देशों से, जिन में रूस तथा उस के कठपुतली देश भी सम्मिलित हैं, गुब्बारों द्वारा हासिल किये गये ऋतु-समाचार प्राप्त होते है।

## रूस द्वारा १६४५ से गुब्बारों का प्रयोग

अमेरिकी अधिकारी ने बताया कि रूस में १६४५ से ऋतु सम्बन्धी अनुसन्धान के लिए बड़े पैमाने पर गुब्बारे उड़ाने की व्यवस्था है और उस ने गुब्बारों में लगे रेड़ियो ट्रान्समिटरों द्वारा प्राप्त सूचनाएं अङ्कित करने वाले केन्द्रों की संख्या में काफी वृद्धि कर ली है। रूस तथा अन्य देशों द्वारा जो गुब्बारे प्रयोग में लाये जाते हैं वे बिल्कुल वैसे ही हैं जैसे कि अमेरिका द्वारा प्रयोग में लाये जाते हैं।

उक्त ऋतु-अधिकारी ने बताया कि सभी देश गुब्बारों द्वारा एकत्र किये गये समाचारों का मुक्त रूप से आदान-प्रदान करते हैं। उदाहरण के तौर पर, रूस अमेरिका को समाचार देता है और अमेरिका बदले में वैसे ही समाचार रूस तथा अन्य देशों का देता है।

वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया है कि फिर भी, वायुमंडल के सम्बन्ध में आवश्यक बातें जानने के लिए अभी तक गुब्बारों का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग नहीं होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय भू-भौतिक वर्ष में वायुमंडल का अनुसन्धान करने के लिए गुब्बारों का विस्तृत प्रयोग किया जायेगा। १६५७ तथा १६५८ में वायुमंडल के स्वरूप तथा गति आदि के सम्बन्ध में नई जानकारी हासिल करने के लिए बहुत बड़ी संख्या में और संसार में सर्वत्र ऋतु संबन्धी गुब्बारे उड़ाये जायेंगे। इस से ऋतु-अनुसन्धान के क्षेत्र में विशेष लाभ होने की सम्भावना है।



# पुराने नक्षत्र नये नक्षत्रों का पोषण करते हैं

जो नए नक्षत्र पैदा हो रहे हैं वे उस सामग्री से पोषण पाते हैं जो पुराने नक्षत्र उगलते रहते हैं। यह सूचना अमेरिका की राष्ट्रीय वैज्ञानिक अकादमी ने प्रदान की है। पुराने और नए नक्षत्रों में तत्वों के बाहुल्य में जो अन्तर पाया गया है, उस का कारण भी पोषण का निरन्तर घूमने वाला यह चक्र बताया गया है।

माउण्ट विलसन और पैलोमर वेधशालाओं के डा० जैस्सी एल० ग्रीनस्टीन ने अपनी रिपोर्ट में बताया है कि पृथ्वी और सूर्य तत्वों के विकास की दृष्टि से अपेक्षाकृत पिछड़ी हुई दशा में हैं। नक्षत्रों से निकलने वाली गैसों के फलस्वरूप नए-नए नक्षत्र निरन्तर निर्मित हो रहे हैं। खगोलशास्त्री इस सिद्धान्त में जब साधारणतया विश्वास करने लगे हैं। डा० ग्रीनस्टीन ने बताया कि हाल में जो पर्यवेक्षण हुए हैं, उन से स्पष्ट है कि बहुत से पुराने नक्षत्र अनन्त आकाश में अपनी बहुत सी सामग्री सदैव खोते रहते हैं। इस खोई हुई सामग्री से नए नक्षत्रों का अन्ततोगत्वा निर्माण होता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# साहित्य-परिचय

समालोचना के लिए प्रत्येक पुस्तक की दो प्रतियां आनी आवश्यक हैं—सम्पादक।

## शिवानन्द दृष्टान्त मंजरी

लेखक–श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती। प्रकाशक–योग वेदान्त आरण्य विश्वविद्यालय, ऋषिकेश। आकार २०×३०/८, पृष्ठ संख्या १८०, मूल्य २।

स्वामी शिवानन्द जी ने इस पुस्तक में जीवन के गहन तत्वों को छोटी-छोटी रस प्रद कहानियों के द्वारा सरलता से समझाया है। अज्ञान के अन्धकार से आवृत जनों को ये दृष्टांत कर्तव्य पथ की ओर अग्रसर होने में सहायता करते हैं।

## शिवानन्द सुयश

लेखक–श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती। २०×३०/१६ आकार के २८ पृष्ठ। प्रकाशक–शिवानन्द आश्रम, ऋषिकेश।

स्वामी शिवानन्द जी की यह संक्षिप्त जीवनी है जिस में उन के प्रारम्भिक काल के जीवन के वर्णन के साथ-साथ उनकी वर्तमान प्रवृत्तियों का भी उल्लेख है।

## जप योग

लेखक–श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती। प्रकाशक, शिवानन्द आश्रम ऋषिकेश। २०×३०/१६ आकार के ११८ पृष्ठ, मूल्य २)।
स्वामी जी की मूल अंग्रेजी पुस्तक का यह हिन्दी रूपांतर सुश्री कान्ती कपूर ने प्रस्तुत किया है। इस पुस्तक में जप की महिमा का प्रतिपादन किया गया है। —रामेश वेदी।

## वेद का राष्ट्रिय गीत

आलोच्य ग्रंथ गुरुकुल स्वाध्याय मंजरी का २४ वां पुष्प है। इस में अथर्ववेद, काण्ड १२, सूक्त १ की, जिसे भूमि-सूक्त या पृथ्वी-सूक्त भी कहते हैं और जिस में कुल ६३ मन्त्र हैं, शब्दार्थ सहित विस्तृत व्याख्या की गई है। भाषा सरल, सुबोध और सरस है। भूमि-सूक्त वैदिक भारत के भावुक हृदय की अपनी मातृभूमि के जन-पशु, नदी-निर्झर, गिरी गह्वर वन-पर्वतों के प्रति काव्यमयी अभिव्यक्ति है। प्रत्येक मन्त्र से मातृभूमि भक्ति की धारा फूट पड़ती है। इसे राष्ट्रीय गीत कहा जा सकता है। सूक्त की विशेषता है उस की सार्वभौमिकता। इस में विश्व-राष्ट्र गीत बनने के पर्याप्त गुण हैं।

अब तक भूमि-सूक्त के हिन्दी में कई गद्य पद्यमय अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। प्रस्तुत व्याख्या की विशेषता है उस की पाद-टिप्पणियां, जो जिज्ञासुओं के लिए उपयोगी सिद्ध होंगी। विद्वान् व्याख्याकार ने प्रत्येक मन्त्र का भावबोधक शीर्षक भी दे दिया है, जिस से सामान्य पाठक को भावबोधन में सुविधा होगी। पुस्तक में ६४ पृष्ठों की लम्बी भूमिका दी गई है, जो प्रतिपाद्य विषय के अनुपात से अधिक स्थान घेरती है। यद्यपि इस में वेदविषयक प्राच्य पाश्चात्य विचारकों के अभिमत और उन की समीक्षा दी गई है, जिस में वेद-विषयक अनेक ज्ञातव्य बातों का समावेश हो गया है, तथापि ग्रन्थ के विवेच्य विषय से उन का विशेष सम्बंध नहीं।

अच्छा होता, यदि लेखक वैदिक गान पद्धति के शास्त्रीय विवेचन के साथ इस राष्ट्रगीत की गायन विधि पर भी प्रकाश डालते।

ग्रन्थ की छपाई सफाई उच्च कोटि की है। ग्रंथ वैदिक स्वाध्याय प्रेमियों के लिये बहुत उपयोगी है। —अवन्तिका।

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल समाचार

## ऋतु-रंग

जुलाई मास प्रारम्भ होते ही इस प्रदेश पर मेघराजा की कृपा प्रारम्भ हो गई है। प्राथमिक वर्षा ने ही धरती को आप्लावित कर दिया है। वन उपवनों और मैदानों में आनन्द और उल्लास छा गया है। खेतियाँ हरी-भरी हो उठी हैं। इन दिनों गंगा की नीलधारा खूब उफन उठी है। पावस का अवतरण होते ही पशु-पंखी भी प्रमुदित हो उठे हैं। प्रभात होते ही चहुँ ओर पपीहे तथा अन्य वनपंखी चहकना प्रारम्भ कर देते हैं। अभी तक मच्छरों का उपद्रव प्रारम्भ नहीं हुआ है। कुलवासियों का स्वास्थ्य सामान्यतया ठीक है।

## नवीन सत्र

ग्रीष्मकालीन दीर्घावकाश के पश्चात् ६ जुलाई से विश्वविद्यालय के पढ़ाई के समस्त विभाग खुल गए हैं; और नियमित पढ़ाईयाँ प्रारम्भ हो गई हैं।

## मान्य अतिथि

१ मद्रास विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग के अध्यक्ष श्री डाक्टर महादेवन सपरिवार तथा अपने शिष्यों सहित कुल में पधारे। आपने परिक्रमा कर के सभी विभागों का अवलोकन किया। अपनी लिखित सम्मति में गुरुकुल की प्रगति पर परितोष प्रकट किया। आप सन् १९३१ में भी गुरुकुल में पधारे थे।

२ बंकाक ( थाईलैंड ) के भिक्षु श्री थाटाधामा (पालि पंडित) थाई दूतावास द्वारा गुरुकुल में प्रेषित किए गए हैं। आप गुरुकुल में रह कर संस्कृत और हिन्दी का अध्ययन करेंगे और गुरुकुल के छात्रों को पाली पढ़ायेंगे।

## आयुर्वेद कमीशन

२१ जून को आयुर्वेद कमीशन (दवे समिति) के सदस्य श्री दयाशंकर दवे ( आरोग्य मंत्री—सौराष्ट्र ), श्री शांतिलाल शाह (आरोग्य मंत्री—बम्बई राज्य ), डाक्टर प्राणजीवन मेहता, श्री वासुदेवभाई द्विवेदी तथा श्री कुलकर्णी जी ( उत्तरप्रदेश आयुर्वेद विभाग के उपसंचालक ) आदि सज्जन गुरुकुल में पधारे। आप लोगों ने आयुर्वेद कॉलेज, शल्यक्रिया भवन, निदान प्रयोगशाला, चिकित्सालय, पंच-कर्म-भवन, प्रकृतिविद्या संग्रहालय, आयुर्वेदीय औषधि संग्रह, ग्रंथालय, पुरातत्व संग्रहालय आदि विभागों का निरीक्षण किया. कुलपति श्री इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने सब सदस्यों का श्रद्धानन्द अतिथि भवन में कुल की ओर से स्वागत किया तथा गुरुकुल की कार्य शैली से सदस्यों को परिचित किया। आयुर्वेद कालेज के विभिन्न विभागों की स्वच्छता और सुव्यवस्था देख कर सदस्यगण बहुत प्रसन्न हुए। संग्रहालय, वनस्पति-संग्रह, औषध-संग्रह, आदि के वैज्ञानिक आयोजन की आप लोगों ने विशेष प्रशंसा की। अपरान्ह में आयुर्वेद कालेज के उपाध्यायों से कमीशन के सदस्यों ने विस्तार से चर्चाएँ कर के उनकी साक्षियाँ अंकित कीं। रात को सदस्यों को गुरुकुल के कार्यों का चित्रपट प्रदर्शित किया गया।

## पदवियों की मान्यता

पंजाब सरकार ने गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय ( हरिद्वार ) को अलंकार और विद्याधिकारी की उपाधियों को अपने राज्य की बी० ए० और मैट्रिक पदवी के समकक्ष स्वीकार कर लिया है। इस प्रकार गुरुकुल के स्नातकों को पंजाब राज्य की सामान्य नौकरियों के लिए सुविधाएं प्राप्त हो गई हैं।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल पत्रिका

[ गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका ]

व्यवस्थापक--

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादक मण्डल--

श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति

श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार

श्री रामेश बेदी ( मन्त्री )

—०—

❀ विविध विषयों पर १६० सुन्दर रचनाएँ ।

❀ उच्चकोटि के लेखकों की पठनीय कृतियाँ ।

❀ सात्विक, शिष्ट और सुरुचिपूर्ण वाचन ।

❀ पचास चित्र, २०×३०/८ आकार के ३८४ पृष्ठ ।

❀ शिक्षातत्व, धर्मचिन्तन. जीवन कथा, इतिहास, पुरातत्व, कला. संस्कृति. आरोग्य, आयुर्वेद आदि विषयों पर स्थायी और उपयोगी लेख सामग्री कुल चार रुपये में ।

## प्रकाशन का आठवां वर्ष



गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# लेखकों तथा उनकी रचनाओं की सूची

पहले अकारादि क्रम से लेखक का नाम है। फिर लेख का शीर्षक और उस के आगे पृष्ठ संख्या है



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# लेखों की सूची

विषय के अनुसार अकारादि क्रम से

## वैदिक स्वाध्याय



## धर्म, आत्म दर्शन



## चरित्र निर्माण



## शिक्षा



## कोष, भाषा, लिपि



## इतिहास, पुरातत्व



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## विदेशों में भारतीय संस्कृति



## कला



## चिकित्सा



## हमारे देश को समृद्धि



## उद्योग



## संस्मरण, श्रद्धांजलियां



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## कृषि, प्रकृति अध्ययन



## साहित्य परिचय



## गुरुकुल



## विविध





CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# स्वाध्याय के लिए चुनी हुई पुस्तकें

## वैदिक साहित्य

ईशोपनिषद्भाष्य — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति २)
वेद का राष्ट्रिय गीत — श्री प्रियव्रत ५)
वेदोद्यान के चुने हुए फूल — श्री प्रियव्रत ५)
वरुण की नौका, २ भाग — श्री प्रियव्रत ६)
वैदिक विनय, ३ भाग — श्री अभय २), २), २)
वैदिक वीर-गर्जना — श्री रामनाथ ।।।=)
वैदिक-सूक्तियां — ,, १।।)
आत्म-समर्पण — श्री भगवद्दत्त १।।)
वैदिक स्वप्न-विज्ञान — ,, २)
वैदिक अध्यात्म-विद्या — ,, १।)
वैदिक ब्रह्मचर्य गीत — श्री अभय २)
ब्राह्मण की गौ — श्री अभय ।।।)
वेदगीताञ्जलि ( वैदिक गीतियां ) — श्री वेदव्रत २)
सोम-सरोवर, सजिल्द, अजिल्द — श्री चमूपति २), १।।)
वैदिक-कर्त्तव्य-शास्त्र — श्री धर्मदेव १।।)
अग्निहोत्र — श्री देवराज २।)

## संस्कृत ग्रन्थ

संस्कृत-प्रवेशिका, १, २, भाग — ।।।), ।।।=)
साहित्य-सुधा-संग्रह, १, २, ३ बिन्दु — १।), १।), १।)
पाणिनीयाष्टकम पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध — ७), ७)
पञ्चतन्त्र ( सटीक ) पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध — २), २।।)
सरल शब्दरूपावली — ।।=)

## ऐतिहासिक तथा जीवनी

भारतवर्ष का इतिहास ३ भाग — श्री रामदेव ६)
बृहत्तर भारत (सचित्र) सजिल्द, अजिल्द — ७), ६)
ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार, २ भाग — ।।।)
अपने देश की कथा — श्री सत्यकेतु १।=)
हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के अनुभव — ।।)
योगेश्वर कृष्ण — श्री चमूपति ४)
सम्राट् रघु — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति १।)
जीवन की झांकियां ३ भाग — ,, ।।) ।।), १)
जवाहरलाल नेहरू — ,, १।)
ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित्र — ,, २)
दिल्ली के वे स्मरणीय २० दिन — ,, ।।)

## धार्मिक तथा दार्शनिक

सन्ध्या-सुमन — श्री नित्यानन्द १।।)
स्वामी श्रद्धानन्द जी के उपदेश, तीन भाग — ३।।)
आत्म-मीमांसा — श्री नन्दलाल २)
वैदिक पशुयज्ञ-मीमांसा — श्री विश्वनाथ १)
अथर्ववेदीय मन्त्र-विद्या — श्री प्रियरत्न १।)
सन्ध्या-रहस्य — श्री विश्वनाथ २)
जीवन-संग्राम — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति १)

## स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें

आहार (भोजन की जानकारी) — श्री रामरक्ष ५)
आसव-अरिष्ट — श्री सत्यदेव २।।)
लहसुन:प्याज़ — श्री रामेश बेदी २।।)
शहद ( शहद की पूर्ण जानकारी ) — ,, ३)
तुलसी, दूसरा परिवर्द्धित संस्करण — ,, २)
सोंठ, तीसरा ,, — ,, १।।)
देहाती इलाज, तीसरा संस्करण — ,, १)
मिर्च ( काली, सफेद और लाल ) — ,, १)
सांपों की दुनियां, (सचित्र) सजिल्द — ,, ५)
त्रिफला, तीसरा संवर्द्धित संस्करण — ,, ३।)
नीम:बकायन (अनेक रोगों में उपयोग) — ,, १।)
पेठा : कद्दू (गुण व विस्तृत उपयोग) — ,, ।।)
देहात की दवाएं, सचित्र ।।।) — बरगद ।।।)
स्तूप निर्माण कला — श्री नारायण राव ३)
प्रमेह, श्वास, अर्शरोग — १।)
जल चिकित्सा — श्री देवराज १।।।)

## विविध पुस्तकें

विज्ञान प्रवेशिका, २ भाग — श्री यज्ञदत्त १)
गुणात्मक विश्लेषण ( बी. एस्. सी. के लिए ) — १)
भाषा-प्रवेशिका ( वर्धायोजनानुसार ) — ।।।)
आर्यभाषा पाठावली — श्री भवानी प्रसाद १।।)
आत्म बलिदान — श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति २)
स्वतन्त्र भारत की रूप रेखा — ,, १।।)
जमींदार — ,, २)
सरला की भाभी, १, २ भाग — ,, २), ३।।)

प्रकाशन मन्दिर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# ग्रीष्म ऋतु के उपहार

## भीमसेनी सुरमा

आंखों के लिये इस से बढ़ कर कोई दूसरा सुरमा नहीं है। यह आँखों के सब रोगों को लाभ पहुँचाता है। बच्चे व बूढ़े सब इस का प्रयोग कर सकते हैं। मूल्य नमूना ।|=) शीशी

## ब्राह्मी बूटी

बुद्धि को बढ़ाने व मस्तिष्क की कमजोरी दूर करने में इस से बढ़ कर दूसरी बूटी नहीं है। हमारे यहां हर समय ताजी रहती है।

मूल्य ३) सेर

## ब्राह्मी तेल

यह तेल शुद्ध ब्राह्मी के द्वारा बनाया जाता है। दिमाग को ठण्डक व तरावट देकर ताजगी लाता है। दिमाग की कमजोरी वाले रोगियों को यह तेल विशेष हितकर है।

मूल्य १|=) आध पाव

## भीमसेनी नेत्रबिन्दु

यह औषधि दुखती आँखों के लिये अक्सीर है। कुकरे, दर्द व लाली इस से दूर होते हैं।

मूल्य १) शीशी

## ब्राह्मी शर्बत

ब्राह्मी तेल की तरह यह शर्बत भी इस मौसम में सेवन करने योग्य उत्तम चीज़ है। प्रातःकाल एक गिलास शर्बत तमाम दिन ताज़गी रखेगा। मूल्य ३ बोतल १|| ) शीशी

## आमला तेल

यह तेल बढ़िया आमले से तैयार किया जाता है। इस से बालों का गिरना, अकाल में पकना तथा गञ्ज आदि रोग दूर होते हैं। बालों को रेशम की तरह मुलायम कर काला करता है। मूल्य १|) छोटी शीशी

## पायोकिल

पायोरिया रोग की परीक्षित औषधि है। इस के प्रयोग से दांतों से खून व पीप आना रुक जाता है तथा दांत चमकीले और दृढ़ हो जाते हैं। दैनिक प्रयोग के लिये भी उत्तम है।

मूल्य १||) छोटी शीशी

## बाल शर्बत

बच्चों के हरे पीले दस्त, कब्ज, उल्टी, खांसी तथा ज्वर आने पर विशेष गुणकारी है।

मूल्य १|) बड़ी शीशी |=) छोटी शीशी

**गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार।**


मुद्रक : श्री रामेश वेदी, गुरुकुल मुद्रणालय, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।
प्रकाशक : मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Jun



अपने परम्परागत पहरावे में माओ नागा

# गुरुकुल-पत्रिका

वर्ष ८ आषाढ़
अङ्क ११ २०१३

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल-पत्रिका

पूर्णाङ्क ९५
जून १९५६

व्यवस्थापक : श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति
सम्पादक समिति : श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति
श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार
श्री रामेश बेदी ( मन्त्री )


## इस अङ्क में



## अगले अङ्क में

| | |
|---|---|
| विदेशों में बौद्ध धर्म का विस्तार | श्री भदन्त आनन्द कौसल्यायन |
| बलिदान | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति |
| ऐकमत्यवर्ग के कुछ प्रसिद्ध शब्द | श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड |

अन्य अनेक विश्रुत लेखकों की सांस्कृतिक, साहित्यिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी रचनाएं।


मूल्य देश में ४) वार्षिक
विदेश में ६) वार्षिक

एक प्रति
छः आने


CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आ०-ह०- 

ओ३म्


# गुरुकुल-पत्रिका

[ गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका ]


## नाचिकेत उपाख्यान का रहस्य

श्री रामनाथ वेदालंकार

नचिकेता के पिता ने सर्वस्व दान कर दिया। दान की वस्तुओं में बूढ़ी गौओं को देख बालक के अन्तराल में प्रश्न उठा—ऐसे दान से क्या लाभ ? भोलेपन में वह पिता से प्रश्न कर उठा—पिता जी, मैं भी तो आप की सम्पत्ति हूँ, मेरा दान किसे करोगे ? भोली बालपन की बात सुन पिता चुप रहा। पर बालक के मुख से दुबारा तिबारा फिर वही प्रश्न सुन वह भुंझला उठा—जा, तुझे मैं मृत्यु को देता हूँ। आज्ञापालक बालक मृत्यु के पास जा पहुँचा। तीन रात्रि मृत्यु के द्वार पर वह भूखा बैठा रहा। तब मृत्यु ने कहा – तू मेरा अतिथि है, तीन रात्रि भूखा रहा है, उस के बदले तीन वर माँग ले।

नचिकेता ने कहा—गुरुदेव ! यदि आप प्रसन्न हैं तो पहला वर मैं यह माँगता हूँ कि मेरे पिता जो मुझ से रुष्ट हो गये थे पुनः मुझ से प्रसन्न हो जायें, और जब मैं आप के पास से लौट कर जाऊँ तब प्रसन्न हो कर मुझ से वार्तालाप करें। मृत्यु ने कहा—तथास्तु, दूसरा वर माँगो।

नचिकेता बोला– दूसरा वर मैं यह माँगता हूँ कि मुझे स्वर्ग प्राप्त कराने वाली अग्निविद्या ( याज्ञिक कर्मकाण्ड ) का उपदेश दीजिए। दूसरा वर भी मिल गया। तीसरे की वारी आयी। नचिकेता ने कहा—मृत मनुष्य के विषय में लोगों में बहुत सन्देह फैला हुआ है; कुछ कहते हैं कि मरने के पश्चात् भी आत्मा रहता है; कुछ कहते हैं नहीं रहता। इस में सत्य क्या है ? इस का रहस्य मुझे समझाइये। यह विकट प्रश्न सुन मृत्यु कहने लगा—हे नचिकेता, यह वर मुझ से न माँगो। इस के बदले और जो चाहो सो माँग लो। जितनी चाहो धन-दौलत माँग लो, लम्बी आयु माँग लो, हाथी-घोड़े माँग लो, राज्य माँग लो। पर यह पेचीदा प्रश्न मत पूछो। किन्तु नचिकेता न माना। उस ने कहा, जब आप वर देने को कहते हैं तो मुझे तो यही वर चाहिए। तब मृत्यु ने उस की अध्यात्मरुचि की प्रशंसा की और मरणोत्तर मनुष्य की क्या गति है इस का सब रहस्य उसे हृदयंगम करा दिया। उस ने बताया कि मनुष्य के मरने के बाद भी उस का आत्मा अवशिष्ट रहता है जो कर्मानुसार फल पाता है और जो कुछ लोग मुक्ति भी पा लेते हैं। मृत्यु ने उसे योगविद्या सिखाई, आत्मा-परमात्मा के दर्शन कराये और मुक्ति का अधिकारी बना दिया।

### मृत्यु कौन ?

यह कठ उपनिषद् के नाचिकेत उपाख्यान का सार है। नचिकेता और मृत्यु ये ही इस आख्यान के दो प्रमुख पात्र हैं। नचिकेता तो बालक था वाजश्रवस का पुत्र था। पर यह मृत्यु कौन है ? क्या नचिकेता सचमुच मृत्यु के पास गया था ? पर यह कैसे सम्भव है कि कोई बालक मृत्यु

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(मौत) के पास जाए, उससे वार्तालाप करे, और वर लेकर, यज्ञ विद्या पढ़कर, योग सीख कर वापिस भी आ जाये ? अतः यहां मृत्यु का अर्थ मौत नहीं हो सकता, कुछ और ही होना चाहिए। मृत्यु का अर्थ है 'आचार्य'। अथर्व वेद के ब्रह्मचर्यसूक्त में स्पष्ट ही कहा है—'आचार्यो मृत्युः। अथर्व० ११।५।१४'—अर्थात् आचार्य मृत्यु है। इस विषय में अथर्व० ६।१३३।३ भी द्रष्टव्य है—'मृत्योरहं ब्रह्मचारी यदस्मि'—मैं मृत्यु का ब्रह्मचारी हूं। आचार्य का नाम मृत्यु इस कारण है कि वह अज्ञानी बालक को मार कर ज्ञानी के रूप में नया जन्म देता है, ठीक वैसे ही जैसे कि मृत्यु मनुष्य को मार कर नया जन्म दिया करता है। आचार्य के इस मृत्यु रूप को उपनिषत्कार ने ऐसे सुन्दर रूप चित्रित किया है कि वह साक्षात् मृत्यु ही प्रतीत होने लगता है। इस उपाख्यान में मृत्यु का दूसरा नाम यम आया है। आचार्य यम' भी है क्यों कि वह ब्रह्मचारी को नियन्त्रण में रखता है. उस से ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन कर पाता है।

इस प्रकार कथानक के आलङ्कारिक रूप को हटा दें तो सीधी भाषा में हम यह कह सकते हैं, कि नचिकेता के पिता ने अपनी सब संपत्ति दान कर दी और अपने पुत्र नचिकेता को विद्याध्ययन करने के लिए गुरुकुल में मृत्युरूप आचार्य के पास भेज दिया।

## तीन रात्रि भूखा रहा

आचार्य के पास पहुँच कर नचिकेता तीन रात्रि भूखा रहा। यह ठीक ही है, क्यों कि उपनयन से पूर्व बालक को तीन रात्रि का उपवास करना होता है। दिन न कह कर रात्रि इस कारण कहा कि भूख लगने पर बालक दिन में लघ्वाहार के रूप में दूध, यवागू (जौ का दलिया) या आमिक्षा ( श्री खण्ड ) ले सकता है।

तीन रात्रि भूखा रहने का एक और भी रहस्यार्थ है। ब्रह्मचर्य सूक्त में कहा है—

आचार्य उपनयमानो ब्रह्म-
चारिणं कृणुते गर्भमन्तः।
तं रात्रीस्तिस्र उदरे बिभर्ति
तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवाः॥

अथर्व० ११।५।

अर्थात् 'आचार्य जब ब्रह्मचारी का उपनयन संस्कार करता है तब वह मानो उसे अपने गर्भ में रख लेता है। तीन रात्रि वह उसे अपने उदर में धारण करता है। तीन रात्रियों के पश्चात् जब उस का जन्म होता है तब देवजन उस के दर्शन करने आते हैं।' ब्रह्मचारी की ये तीन रात्रियां कौन सी हैं जिन में वह आचार्य के उदर में रहता है। उदर में रहने का अर्थ है आचार्याधीन गुरुकुल में रहना। अतः गुरुकुलवास-काल के तीन विभाग ही तीन रात्रियां हैं। प्रथम विभाग जिस में वह ज्ञानकाण्ड रूपी प्राथमिक शिक्षा ग्रहण करता है पहली रात्रि है। द्वितीय विभाग जिस में वह कर्मकाण्ड रूपी माध्यमिक शिक्षा लेता है दूसरी रात्रि है। तृतीय विभाग जिस में वह अध्यात्मकाण्ड रूपी उच्च शिक्षा ग्रहण करता है तीसरी रात्रि है। तीन दिन न कह कर तीन रात्रि कहने में यह स्वारस्य है कि ब्रह्मचारी के अन्दर यह त्रिविध अज्ञान होता है और अज्ञान की उपमा रात्रि से ही दी जाती है। जब प्रथम प्रकार का अज्ञान समाप्त हुआ तब मानो पहली रात्रि व्यतीत हो गई। तीनों प्रकार के अज्ञान से पार हो जाने पर तीनों रात्रियां व्यतीत हो जाती हैं और ब्रह्मचारी के सन्मुख ज्ञान का सूर्य उदित हो जाता है।

तो नचिकेता भी तीन रात्रि मृत्यु के घर पर रहा इस का यह अभिप्राय हुआ कि जब तक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उस के तीनों प्रकार के अज्ञान समाप्त नहीं हो गये तब तक वह आचार्याधीन गुरुकुल में रहा। भूखा रहने का अर्थ है भोगों को न भोगते हुए तपस्यापूर्वक रहना। ब्रह्मचर्याश्रम भोगों का आश्रम नहीं है, वह तो भूखा रहने का कठिन तपस्या का ही आश्रम है।

## तीन वर

एक-एक रात्रि भूखा रहने के बदले नचिकेता को एक-एक वर मिलता है। ठीक ही है, वर्तमान शिक्षणालयों में भी तो ऐसा ही होता है। जो प्रथम कुछ वर्षों तक तपस्यापूर्वक विद्याध्ययन करता है उसे प्राथमिक शिक्षा समाप्त कर लेने का प्रमाण पत्र मिल जाता है, यही आजकल का प्रथम वर है। इसी प्रकार माध्यमिक शिक्षा पूर्ण कर लेने पर माध्यमिक शिक्षा समाप्ति का प्रमाण पत्र रूपी द्वितीय और उच्च शिक्षा समाप्ति का प्रमाणपत्र रूपी तृतीय वर प्राप्त हो जाता है।

नचिकेता ने प्रथम वर मांगा पिता की प्रसन्नता का। उपनिषत्कार ने सर्वप्रथम यह वर मंगवा कर बालमनोविज्ञान का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है। एक छोटी आयु के बालक से ऐसी ही याचना की आशा की जा सकती है। वह पिता-माता या गुरु का प्रेम, सुन्दर पाठ्य-पुस्तकें आदि—इसी प्रकार की कोई वस्तु मांगेगा। नचिकेता ने भी वही मांगा। उसे स्मरण हो आया गुरुकुल भेजते समय का पिता का रोष और उस ने यह वर माँग लिया कि पिता जी मुझ पर प्रसन्न हो जायें। पर प्रथम वर को इस पिता की प्रसन्नता तक ही सीमित नहीं समझ लेना चाहिये। यह उपलक्षण है उन सब बातों का जिन की पूति शिक्षा के प्रथम काल में होनी आवश्यक होती है। एक प्रकार से यह पूर्वोक्त तीन विभागों ज्ञानकाण्ड का प्रतीक हो सकता है। नचिकेता की पहली रात्रि बीत गई, उस का वर उसे मिल गया। ज्ञानकाण्ड की प्राप्ति के पश्चात् कर्मकाण्ड की शिक्षा की आवश्यकता होती है। दूसरे वर में नचिकेता को आचार्य से विस्तृत कर्मकाण्ड का उपदेश भी मिल गया। अब तो नचिकेता सब वेद-वेदांगों का पण्डित हो गया, अपरा विद्या की विद्वत्ता उसे प्राप्त हो गयी। अब कमी रह गयी परा-विद्या की, अध्यात्मकाण्ड की। उस की दो रात्रियां समाप्त हो चुकी थीं, उन के वर उसे मिल चुके थे। पर अभी तो एक रात्रि और आचार्य के उदर में रहने का अवसर उसे मिला हुआ था। उसे वह हाथ से क्यों जाने देता! तीसरे वर में उस ने अध्यात्मज्ञान भी मांग लिया।

## यह वर मत मांग

नचिकेता ने कहा—भगवन्! मरने के बाद मनुष्य का कुछ अवशिष्ट रहता है या नहीं, मेरे इस सन्देह का आप निराकरण कीजिए, यही मेरा तीसरा वर है। देखने में यह प्रश्न बिल्कुल साधारण सा है। पर आचार्य ने इसे साधारण नहीं समझा। वह समझ गया कि इस प्रश्न में नचिकेता की समस्त अध्यात्मजिज्ञासा निहित है। मरने के बाद भी आत्मा रहता है इतना कह देने मात्र से नचिकेता की सन्तुष्टि नहीं होगी। वह तो प्रश्न पर प्रश्न उठाते, कदम पर कदम रखते ईश्वरानुभव तक पहुंचना चाहेगा। पर यह मार्ग तो बड़ा ही जटिल है। जितना यह आकर्षक है उतना ही कठिन भी है। अधिकांश मनुष्य इस पर चलना चाहते हुए भी नहीं चल पाते। प्रारम्भ कर के बीच में ही रुक जाते हैं, और फिर दूसरे मार्ग के राही हो जाते हैं। अतः आचार्य ने शिष्य की परीक्षा करनी चाही। उस के सामने अनेक सांसारिक प्रलोभन रक्खे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अन्य जो चाहे सो मांग ले, पर यह वर मत मांग। किन्तु शिष्य परीक्षा में खरा उतरा, उस की जिज्ञासा सच्ची निकली। सच्ची जिज्ञासा को देख कर आचार्य से अधिक और किसे प्रसन्नता होगी। आचार्य का रोम-रोम पुलकित हो उठा। उसने कहा—नचिकेता, तू धन्य है। मैं चाहता हूं मुझे, सदा तेरे जैसा ही शिष्य मिले।

नचिकेता को तीसरा वर भी मिल गया। उस ने न केवल यह जान लिया कि आत्मा अमर है, किन्तु आत्मा तथा परमात्मा के दर्शन कर वह भी मुक्त हो गया। तीन रात्रि भूखा रहने की उस की साधना फलीभूत हुई।

—

# महात्मा गौतमबुद्धः

श्री धर्मदेवो विद्यामार्तण्डः

(१)

यज्ञेषु हिंसां प्रसमीक्ष्य योऽसौ
दयार्द्रचेता व्यथितो बभूव।
तां वारयामास तथा महात्मा
तं बुद्धदेवं प्रणमामि शुद्धम्॥

(२)

मैत्रीं प्रमोदं करुणामुपेक्षां
य आदिशद् ब्रह्मविहारनाम्ना।
यो ब्रह्मनिष्ठो व्यचरत् पृथिव्यां
तं बुद्धदेवं प्रणमामि शुद्धम्॥

(३)

हिंस्या नहि प्राणभृतः सुरक्ष्या
यतो ह्यहिंसा परमोऽस्ति धर्मः।
इत्यादि तत्त्वानि पुनर्दिशन्तं
तं बुद्धदेवं प्रणमामि शुद्धम्॥

(४)

अनित्यतां लोकसुखस्य पश्यन्
यो राजपुत्रोऽपि भवन् मनस्वी।
निर्वाणमापात्र यती तपस्वी
तं बुद्धदेवं प्रणमामि शुद्धम्॥

(५)

जनान् दुराचाररतान् विलोक्य
धर्मस्य नाम्नाप्यपथे प्रवृत्तान्।
अष्टाङ्गमार्गं पुनरादिशन्तं
तं बुद्धदेवं प्रणमामि शुद्धम्॥

(६)

य आर्यसत्यान्यदिशन्मुदार्यः
आराधयन् मार्गमृषिप्रदिष्टम्।
सुशान्ति मूर्तिं निरतं च योगे
तं बुद्धदेवं प्रणमामि शुद्धम्॥

(७)

न ब्राह्मणः कोऽपि भवेद्धि जात्या
वर्णव्यवस्था गुणकर्ममूला।
सुखण्डयन्तं खलु जातिभेदं
तं बुद्धदेवं प्रणमामि शुद्धम्॥



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# पुराना बन्दरगाह—लोथल

लगभग चार हजार वर्ष पहले वर्तमान अहमदाबाद जिले में धोला तालुके के सरागवाला गांव की जगह पर लोथल नाम का एक बड़ा महत्वपूर्ण बन्दरगाह था। इस बन्दरगाह से यात्रियों और माल की बहुत यातायात होती थी और इस का सम्बन्ध सिन्धु-घाटी के सभी शहरों से था।

भारत सरकार के पुरातत्व विभाग की पश्चिम शाखा ने हाल में वहां की खुदाई की तो वहां सौ से भी अधिक ऐसी मुहरें मिलीं जिन पर तत्कालीन लिपि और पशुओं के चित्र खुदे हुए हैं। ये मुहरें सिन्ध घाटी की तत्कालीन हड़प्पा संस्कृति की याद दिलाती हैं। खुदाई से उस समय के जो चिन्ह और वस्तुएं मिली हैं, उन से पता लगता है कि लोथल एक बड़ा महत्व पूर्ण बन्दरगाह था।

## पशुओं के चित्रों की मुहरें

खुदाई करने पर पत्थर और पकी हुई मिट्टी की बनी जो मुहरें मिली हैं, उन में श्रिंग, हाथी, सांड आदि पशुओं और कई तरह के पक्षियों के चित्र खुदे हुए हैं। इन मुहरों पर जो कुछ लिखा हुआ है, उसे देख कर यह भी पता चलता है कि वह लिपि लगभग वैसी ही है जैसी सिन्ध घाटी के लोग लिखते थे।

## विशाल भट्ठी मिली

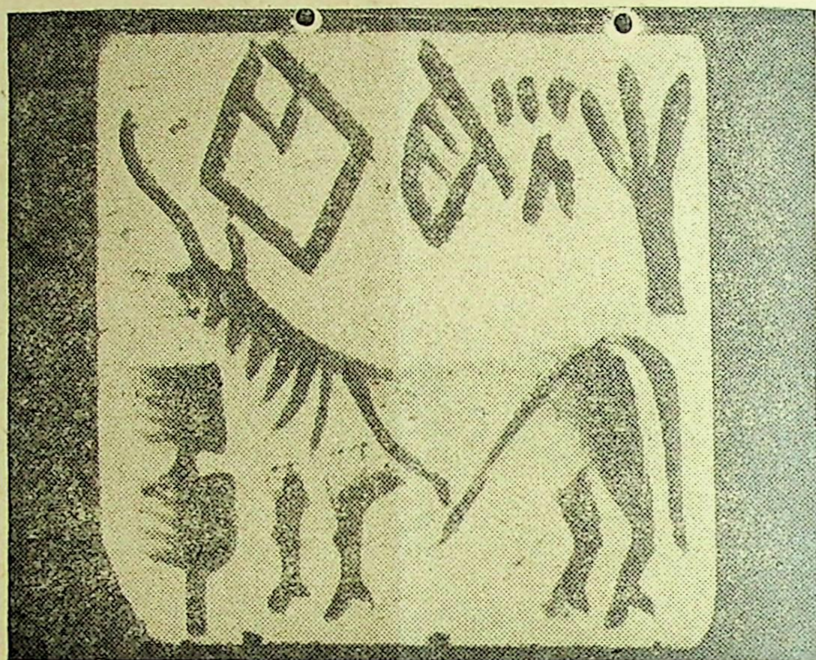
इस प्राचीन बन्दरगाह की जगह की खुदाई करते हुए एक विशाल भट्ठी भी मिली है। इस भट्ठी में ईंटों के आठ ठोस खंड हैं और उन के बीच में थोड़ी-थोड़ी जगह छूटी हुई है, जहां मिट्टी की बनी चीजें पकाई जाती थीं। भट्ठी का फर्श ईंटों का है और दीवारों पर गारे का पलस्तर है।

हड़प्पा और मोहंजोदड़ो की खुदाई से यह पता नहीं लग सका था कि उस समय मुद्रांकित वस्तुएं कैसे तैयार की जाती थीं, लेकिन अब इस भट्ठी से वह तरीका समझ में आ गया है।



लोथल में प्राप्त एक मुद्रा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



सिन्धु लिपि में अंकित एक मुद्रा

मालूम पड़ता है कि मुहरों की छाप गीली मिट्टी पर ले ली जाती थी और उन्हें भट्ठी में ईंटों की तहों पर रख कर पका लिया जाता था। पकते समय भट्ठी को गारे से लीप कर चारों ओर से पूरी तरह बन्द कर दिया जाता था। धीरे-धीरे मुद्रांकित वस्तुएं पक कर तैयार हो जाती थीं। भट्ठी में मुहरों की छाप वाली मिट्टी कई जगह मिली है।

भट्ठी के एक कोने में पकी हुई मिट्टी की ऐसी ९० वस्तुएं मिली हैं जिन पर सिन्ध लिपि और पशुओं के चित्र अंकित हैं। पास ही में राख, जली हुई लकड़ी आदि भी मिली हैं। इतनी बड़ी संख्या में मुद्रांकनों का एक ही जगह पर मिलना इस बात का द्योतक है कि लोथल बड़ा वैभवशाली बन्दरगाह था। मालूम पड़ता है कि व्यापारियों और औद्योगिकों में मुहरों की बहुत मांग थी।

मुहरों और मुद्रांकित वस्तुओं के अलावा पत्थर के वजन, तांबे के आंकड़े, पिनें, चूड़ियां, बर्तन, मनके आदि भी मिले हैं। कहीं-कहीं पत्थर के बने हथियारों के फल भी मिले हैं। मालूम पड़ता है मनके और पत्थर के फल बनाने का काम यहां बड़े पैमाने पर होता था। कई ऐसे बर्तन मिले हैं जिन पर खूबसूरत चित्र बने हुए हैं।

## नगर तीन बार बसा

खुदाई से मालूम पड़ता है कि यह नगर तीन बार बसा। पहली बस्ती में चारों ओर दीवारें नहीं थी। दूसरी में चारों ओर किले-बन्दी हो गयी थी और जहां दीवार में टूट-फूट हुई वहां उसे सहारा देने के लिए मिट्टी की ईंटों की दीवार साथ-साथ खड़ी कर दी गयी। आखिरी बार जब-जब यह नगर बसा तो इसके चारों ओर दीवारें नहीं बनायी गयीं।

कुछ जगहों पर मिट्टी की ईंटों के ४५×

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

४५×१८ के चबूतरे भी मिले हैं। मालूम होता है ये चबूतरे ऊँची सतह पर मकान बनाने के लिए बनाये गये थे। यहां के निवासियों को हमेशा ही बाढ़ का डर रहा होगा, क्योंकि वहां बाढ़ आने का भय हमेशा बना हुआ था। छः ऐसे इमारती ढांचे भी मिले हैं, जिन की बनावट हड़प्पा में मिले ढांचों से मिलती-जुलती है। लेकिन मालूम पड़ता है कि निकटवर्ती साबरमती और भगवे नदियों की बार-बार आने वाली बाढ़ों ने कुछ प्राचीन इमारती अवशेषों का सफाया कर दिया है।

—

# पंचनद-प्रदेशः

श्री इन्द्रो विद्यावाचस्पतिः

१

समाप्लुतः पंचनदाच्छवारिभिः
सुशोभितः पर्वतराजराजिभिः।
प्रपोषितः पुष्कलधान्यभूमिभिः
प्रदेश एष प्रकृते सुखालयः॥

२

इहामरा पाणिनिना कृता कृति–
र्यया निबद्धा नियमेषु भारती।
इहैव सा तक्षशिलाभवत्पुरा
यया प्रदीपो निगमस्य दीपितः॥

३

इहार्यजातिर्हिमवच्छिखाग्रतो-
ऽवतीर्य देशे सरितेव विस्तृता।
इहैव ते योधगणाः पुराभवन्
शकादयो यैर्बहुधा पराजिताः॥

४

यथोपरिष्टात्पतितं शिलालव–
न्नरो निजस्कन्ध पदे बिभर्त्यसौ।
तथोत्तरस्या दिश आगतं सदा
बलं रिपूणामयमग्रहीत्स्वयम्॥

५

बलेन युक्ता, वपुषा समुन्नताः
श्रमक्षमा, साहसमान-शालिनः।
स्थले ऽत्र यत्पंचजना वसन्त्यतो–
मुहुर्विलीनो ऽप्ययमद्य जीवति॥

६

रसस्य लुब्धेन खलेन राहुणा
धृतो ऽस्य दन्ते शकलोऽद्य दृश्यते।
न यात देवा सहसा निराशतां
तमः कदाचित्, तपनस्तु सर्वदा॥



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# इडली और दोशे का इतिहास

## ईस्वी सन् ११००-१६००

डॉ. पी. के. गोडे

भारतीय भोजन द्रव्यों के इतिहास का अभी तक विधिवत् अध्ययन नहीं किया गया। भारतवर्ष के भोजनों में प्रयुक्त पदार्थों में जो विभिन्न भागों में आज भी प्रचलित हैं, कौन से प्राचीन तथा देशी हैं, अभी भी अन्वेषण का विषय है। भारत के औषधिक तथा खाद्योपयोगी पौधों के इतिहास में अपने अध्ययन में मुझे पता लगा कि खाए जाने वाले पौधों में कितने ही १५०० वर्ष पूर्व हमारे देश भारत में विदेश से आयात हुए। भारतीय पाकविज्ञान का इतिहास भी, जो मुख्यतः भोजन द्रव्यों से जुड़ा है, अभी अन्वेषण करना तथा विस्तार-पूर्वक अभिलिखित होना आवश्यक है। इस के लिए हमें कतिपय भोज्य-पदार्थों के, जो अब भी भारत में प्रचलित हैं या प्राचीन व मध्ययुगीन भारत में प्रचलित थे, इतिहास का अध्ययन करना चाहिये। इस सम्बन्ध में हमें भोजन द्रव्यों पर लिखे ग्रन्थों, जैसे अम्बर के राजा सवाई जयसिंह (१६९९-१७४३ ई०) के आश्रित गिरधारी के 'भोजनसार' का, अध्ययन करना चाहिये। हिन्दी दोहों का यह विशालकाय ग्रन्थ कितने ही भोज्य पदार्थों को बताता है जो सवाई जयसिंह की भोजनशाला (१७३९ ई०) में, जब इस ग्रन्थ की रचना हुई, तैयार किये जाते थे। राजस्थान के पाकविज्ञान के इतिहास में यह एक निश्चित युगान्तर चिन्ह है। महाराष्ट्र में संत रामदास के परममित्र रघुनाथ गणेश नवहस्त (ई० सन् १६४०--१७१० के मध्य) ने 'भोजनकुतूहल' नामक एक ग्रन्थ का निर्माण किया। इस के पाठ और इस के लेखक पर मैंने कई निबन्ध प्रकाशित किए हैं। 'भोजन कुतूहल' और 'भोजनसार' दोनों ही १६०० ई० के पीछे के हैं। राजा सोमेश्वर के वश्विकोशीय ग्रन्थ 'मानसोल्लास' (११३० ई०) में भोजन पकाने पर 'अन्नभोग' नामक एक परिच्छेद है। लघु होने पर भी भारतीय पाकशास्त्र के इतिहास में इस का निश्चय ही स्थान है क्योंकि यह चालुक्यों के राजकाल में ११०० ई० के लगभग प्रचलित भोजन पकाने की विधियों का दिग्दर्शन कराता है। भारतीय भोजन द्रव्यों के पूर्व इतिहास के लिए हमें पहले वैद्यक-ग्रन्थों जैसे, चरक-संहिता, सुश्रुतसंहिता के अन्नपान (खाने पीने) संबन्धी परिच्छेदों का अध्ययन करना चाहिये। भारतीय भोज्यों के संबन्ध में कितनी ही उपयोगी सामग्री ईस्वी संवत् के आरम्भ से पूर्व लिखे गए बौद्ध धर्मग्रन्थों, जैसे चूलवग्ग, से भी संचय की जा सकती है।

अभी तक मैंने भोजन द्रव्यों पर कुछ लेख, यथा (१) दुग्ध तथा विशेषतया गोदुग्ध[१] (२) वरण (सं० अवरान्न वरान्न) उबले चावल के साथ खाई जाने वाली दालों से तैयार एक भोज्य पदार्थ[२] (३ जलेबी भारत के बहुत से भागों में लोकप्रिय मिठाई[३] और (४) तले चावल (पृथुक)

---

१. सरस्वती महल लाइब्रेरी का जर्नल (तंजौर) खण्ड ५, सं २, पृष्ठ १-७। हिन्दी अनुवाद कल्याण (गोरखपुर) गो अङ्क, १९४५ पृष्ठ ४०५, ६।

२. पूना ओरियन्टलिस्ट, खण्ड १२, सं १-४, पृष्ठ १-६, तथा जैन एण्टीक्वेरी, खण्ड १२, सं २, पृष्ठ ४५-५२।

३. न्यू इण्डियन एण्टीक्वेरी, खण्ड ६, पृष्ठ १६९ १८१।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तले धान्य[1] प्रकाशित किये हैं।

इस लेख में मैं कर्नाटक और दक्षिणी भारत में प्रचलित दो लोकप्रिय भोज्य पदार्थों (१) इडली और (२) दोशे के सबन्ध में सन् ११०० ई० और सन् १६०० ई० के बीच के कुछ संदर्भों को बताना चाहता हूँ। इन में शर्करा का प्रयोग नहीं होता। ये दक्षिण भारत, महाराष्ट्र और कर्नाटक के होटलों में बिकते हैं, और दक्षिण भारतीय कर्नाटक के लोक जहां भी जा कर रहें, इन्हें अपने घरों में तैयार करते हैं। महाराष्ट्र के लोक भी स्वाद लेकर इन्हें खाते हैं, पर कोई-कोई घर में भी तैयार करते हैं।

(१) इडली और दोशे का सबसे प्राचीन उल्लेख चालुक्य राजा सोमेश्वर के लगभग ११३० ई० में रचित ग्रन्थ 'मानसोल्लास' में मिलता है। इस ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड ( गायकवाड़ प्राच्य ग्रन्थमाला, बड़ौदा में प्रकाशित, १६३६) में 'अन्नभोग' या राजाओं के खान-पान पर एक परिच्छेद है ( पृष्ठ ११५-६ )। वास्तव में यह पाकविज्ञान पर छोटी सी पुस्तिका है, जो भारतीय भोजन द्रव्यों के इतिहास के विद्यार्थियों के लाभार्थ अनुवाद सहित स्वतन्त्र रूप से सम्पादित होने योग्य है। इस परिच्छेद में सोमेश्वर कितने ही भोजनों के नाम तथा दक्षिण में कर्नाटकवालों, तामिलों व मराठों में ११०० ई० के लगभग प्रचलित कई कई भोज्यपदार्थों के तैयार करने की विधियां देता है। इस परिच्छेद में निरामिष व सामिष दोनों प्रकार के भोजनों का वर्णन है ( देखिए इस के सम्पादक श्री. जी. के. श्री गोविन्दकर की भूमिका के पृष्ठ २१-३ )। दोशे या धोशक तैयार करने की विधि सोमेश्वर ने इस प्रकार दी है—

पृष्ठ ११८—

विडलं चाणकस्येव
पूर्वसम्भारसंस्कृतम् ।
ताप्यं तैले (ल) विलिप्तायां
धोशकं विपचेद् बुधः ॥ ९२ ॥
माषस्य राजमाषस्य वट्टाणस्य च धोशकान् ।
अनेनैव प्रकारेण विपचेत् पाकतत्त्ववित् ॥९३॥

धोशक चणक ( चने ) के आटे, माष (उड़द, मराठी = उड़ीद) और वट्टन ( मटर ) से बनाए जाते थे और तेल में पकते थे।

इडली या इडरिका बनाने की विधि इस प्रकार आगे दी गई है—

पृष्ठ ११९-२०—

आम्लीभूतं माषपिष्टम्
वटिकासु विनिक्षिपेत् ।
वस्त्रगर्भभिरन्याभि
पिधाय परिपाचयेत् ॥ ९९ ॥
अवतारयात्र मरीचं
चूर्णितं विकिरेद् अनु ।
घृताक्ता हिंगुसर्पिमयं
जीरकेन च धूपयेत् ॥ १०० ॥
सुशिता धवला
सलक्षण एता इडरिका वराः ॥

इडरिका या इडली किण्वित ( खमीर किए ) माश के बारीक आटे से गोले बना कर बनती थी, और फिर मरीच ( काली मिर्च ) घी, हींग और जीरा मसालों से सुगन्धित की जाती थी।

ईस्वी सन् ११३० के इस संस्कृत ग्रन्थ 'मानसोल्लास' के इडरिका वाले सन्दर्भ से मिलता जुलता 'इडुरिया' का निम्न संदर्भ[2] लक्ष्मणगनी

१. एनल्स ( भांडारकर प्राच्य अनुसन्धानशाला, पूना ), खण्ड २६, पृष्ठ ४३-६३।

२. देखिये, हरगोविन्ददास रचित 'पैसादहन्नव', कलकत्ता, १६२३-२८, पृष्ठ १६७।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचरित ११४३ ई० के प्राकृत ग्रन्थ सूपासनाह-चर्या'[1] से है—

पृष्ठ ४८५—प्राकृत मूल का, जो इड्डुरिया का वर्णन करता है. संस्कृत रूपांतर यों है—

अस्ति सुराष्ट्रो देशो घोष
इव सुतीर्थकृतशोभः ॥ ३ ॥
तत्रास्ति धनसमृद्धं गिरिनगरं,
नाम पट्टनं तस्मिन ।

१. देखिए, हरगोविंददास द्वारा सम्पादित 'सूपासनाहचर्या', बनारस १९१८–९ पृष्ठ ४८५ इस ग्रन्थ के रचनाकाल के लिए एम० विण्टरनित्ज़ द्वारा सम्पादित भारतीय साहित्य का इतिहास ( हिस्ट्री ऑव इंण्डियन लिटरेचर ), खण्ड २ पृष्ठ ५'६ । इस ग्रन्थ का रचयिता लक्ष्मणगनी था । वह हेमचन्द्र का शिष्य था । उसने गुजरात में अपने ग्रन्थ की 'धन्धुकाय' (आधुनिक धन्धुका) में रचना आरंभ की और गुजरात के राजा कुमारपाल के राज्यकाल में विक्रमी संवत् ११९९ (ईस्वी सन ११४३ ) में मण्डलीपुरी ( आधुनिक मांडल ) में इसे पूरा किया । इस ग्रन्थ में जैन धर्म तथा दर्शन सम्बन्धी कितनी ही कथाएं हैं । 'इड्डुरिया' का संदर्भ 'दत्तकथा' में मिलता है जो जैनियों के भोगपरिभोग-विरमाण 'व्रत' को समझाती है । यह व्रत सांसारिक मनोरंजनों से दूर रहने का विधान करता है। दत्त गिरिनगर के महेश्वर दत्त नामक श्रेष्ठी तथा उसकी पत्नी ललिता का पुत्र था । दत्त सांसारिक मनोरंजनों में आसक्त था और अपने दिन वेश्याओं के साथ विहारों में खान पान में व्यतीत करता था । इन विहारों का आयोजन वह अपने निवास के नगर के निकटस्थ वाटिकाओं में किया करता था ।

राजा रिपुबलमथनो मथनो,
नाम्ना सुप्रसिद्धः ॥ ४ ॥
तथा च महेश्वरदत्तः श्रेष्ठी,
न्यवसत् प्रचुरधनकलितः ।
ललिता तस्यास्ति प्रिया,
दत्तो नाम्ना तयोः सुतः ॥ ५ ॥
दुर्ललितगोष्ठीदितः पितृस्थो
विचरति प्रतिपुरम् अपि ।
विलसति वेश्यानां गृहे
विविध विलासैर्दुर्ललितः ॥ ६ ॥
पिबति सुरां तथा सरकम्,
सुरतप्रसक्तो गमयति दिवसानि।
अथान्यदा गतः स,
औद्यान्यां सपरिवारः ॥ ७ ॥
मधुमंडकमोदक मण्डितानाम्,
इड्डुरिक गुण्डरवटकानाम् ।
गुरुशकटानि भृत्वा वाटक
करमवयोश च तथैव ॥ ८ ॥
वीणावेणुप्रवीणं सुगायनवृन्दं,
समम् इवानयति ।
ततो गुरुगभीरसरसितल,
दत्तवचासम् ॥ ९ ॥

सुराष्ट्र देश में गिरिनगर नामक एक समृद्ध नगर था, जहां महेश्वरदत्त नामक एक धनी सेठ रहता था । उसका पुत्र दत्त था जो कितने ही स्थानों में घूमा, वेश्याओं के साथ रहा तथा जिसने सभी प्रकार के आनन्द लिए। उसने अपना जीवन सुरा पीने और निर्बोध विश्राम करने में बिताया। एक दिन वह एक झील के किनारे विहार करने गया, और अपने तम्बू वहां गड़वा दिये । आमोद-प्रमोद के लिए वह गाड़ी भरकर मधुमण्डक, मोदक 'इड्डुरिका' ( प्राकृत इड्डुरिया ) गुण्डरवाटक आदि ले गया । मनो-रंजन वृद्धि के लिए वह मौखिक और वाद्यसंगीत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में प्रवीण गायकों-वादकों को भी साथ ले गया।

उपरोक्त उदाहरण से पता चलता है कि बारहवीं शताब्दि के पूर्वार्द्ध में गुजरात और सुराष्ट्र में भी 'इडुगिया' (इडली : एक सुस्वादु भोज्य पदार्थ के रूप में लोकप्रिय थी।

३. यशवंतराव दाते और सी० जी० कर्वे का मराठी शब्दकोश (खण्ड १, १९३२ पृष्ठ ३१०) 'इडरी-ली' शब्द को कन्नड़ का लिखता है और इसे उड़ीद के खमीरी (किण्वित) आटे और नमक सहित चावल आदि से बने भोज्य पदार्थ से समझाता है। शब्दकोश में लिखित इसका प्रयोग इस प्रकार दिया है—

पृष्ठ ३१०—पूर्णचन्द्राचा अनुकारी,
चोंखालयाणेम् भजिजे इडरी।

—नारायण व्यास का ऋद्धिपुर वर्णन (८१)-सम्पादक जी० के० देशपाण्डे, १९२९।

उपरोक्त उद्धरण से इडरी रूप और वर्ण में (वृताकार और श्वेत होने से) पूर्ण चन्द्रमा सदृश कही गई है।

४. अपने 'विजयनगर साम्राज्य (ई० स० १३४६-१६४६) में सामाजिक और राजनैतिक जीवन' खण्ड २ मद्रास, १९३४ में डा० बी० ए० सलेटोरे विजयनगर साम्राज्य में प्रचलित कुछ भोज्य पदार्थों[1] के सम्बन्ध में कुछ सूचनाएं निम्न कवियों के काव्यों के उद्धारणों के आधार पर देते हैं।

(१) १४८५ ई०...तेरा कणावी बोमरस।

(२) १५०८ ई०...मंगरस तृतीय—सूत्रशास्त्र नामक अपने ग्रन्थ में।

(३) १६०० ई०...अरणाजी।

डा० सलेटोरे द्वारा (पृष्ठ ३१३) बोमरस के उद्धरण में हमें 'कडबु' नाम के एक भोज्य पदार्थ का नाम मिलता है भाण्डारकर प्राच्य अनुसन्धानशाला के एक दक्षिण भारतीय शास्त्री जिन्होंने मेरे लिए कन्नड़ पाठको पढ़ा इस 'कड़बु' का मिलान 'इडली' से करते हैं। मुझे यह पहचान मान्य नहीं है क्योंकि आज भी 'कडबु' महाराष्ट्र में तैयार की जाती है, और यह इडली से नितान्त भिन्न है।

मंगरस तृतीय अपने 'सूपशास्त्र में निम्न पदार्थों के तैयार करने की विधि बताते हैं—

(१) घरी विलंगायि (२) हालगारिगे (३) सुवुडु--रोटी (४) हिमाम्बु--पानक।

वह एक हिन्दु भोजन का विवरण भी देता है—देखिये कविचरित, खण्ड द्वितीय पृष्ठ १८८ कवि अरणाजी उट और मिठाई अरणाडी का भी वर्णन करता है– देखिए कविचरित, खण्ड २, पृष्ठ ३३७-७।

कन्नड विद्वान इन कवियों के ग्रन्थों को देखें, और बतावें कि क्या उनमें 'इडली' और 'दोशे'

---

१. भारतीय भोजन, द्रव्यों के इतिहास में रुचि रखने वालों के लिए मैं निम्न इतिहास स्रोतों को भी देख रहा हूँ जो डाक्टर बी० ए० सलेटोरे ने अपने 'सामाजिक और राजनैतिक जीवन इत्यादि' खण्ड २, की पाद टिप्पणी १ में दिए हैं—

(अ) वरगुण पण्डया (९ वीं शताब्दी) का अबसमुद्र अभिलेख एपिग्रेफिका इण्डिका, खण्ड ९।

(आ) कवि शांतिनाथ (सन् १०६८ ई०)–देखिये कवि चरित, खण्ड २, पृष्ठ ६।

(इ) 'पार्श्वनाथ पुराण' भी विभिन्न प्रकार के भक्ष्यों का वर्णन करता है, देखिए कवि चरित, खण्ड, १, पृष्ठ ३२७।

(ई) वाटर्स का 'युवान्' चुआन् खण्ड १ पृष्ठ १७८ भारत के भोज्य पदार्थ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का भी वर्णन है, जो मेरे प्रस्तुत निबन्ध का विषय है।

५. मराठा 'शब्दकोष' ( खण्ड १, १९३२ ) इडली के स्थान पर इडुरी शब्द देता है जैसा कि महाराष्ट्रीय सन्त एकनाथ ( सन् १५१३-९९ ई० ) की रचना रुक्मिणी स्वयंवर में मिलता है। इसकी रचना शक संवत् १४९३—ईस्वी सन् १५७१ में हुई[1]। शब्दकोष का इडुरिया वाला उद्धरण इस प्रकार है—

पृष्ठ ३११—

"पूर्ण परिपूर्ण पुरिया ।
सबाह्य गोड गुलवरिया ।
क्षीरसागरीयमचय क्षीरधारिया ।
इडूरिया सकुमारा ॥"

—रुक्मणी स्वयंवर, १४, १९१।

यद्यपि इडली एक कन्नड़ और ठेठ दक्षिण भारतीय भोज्य पदार्थ है, लगता है कि यह १२ वीं शताब्दी में गुजरात में, और १६ वीं शताब्दी में महाराष्ट्र में भी लोकप्रिय था जैसा कि एकनाथ द्वारा अन्य लोक प्रिय पदार्थों जैसे पुरिया, क्षीरधारिया, आदि के साथ इस का नाम लेने से पता चलता है।

६. हो सकता है कि दक्षिण भारत के संस्कृत और देशी भाषाओं के ग्रन्थों में 'इडली' और 'दोसे' के संदर्भ हों। इन ग्रन्थों से अनभिज्ञ होने के कारण इन संदर्भों की खोज मेरे लिए शक्य नहीं। नीचे 'इडली और दोशे के संबन्ध में मैं उद्धरण दे रहा हूं जो भांडारकर प्राच्य अनुसन्धान शाला में चम्पू साहित्य का विशेष अध्ययन करते, स्नातकोत्तर विद्यार्थी, श्री सी. आर. देशपाण्डे ने मुझे बताए।

रामानुजाचार्य के 'श्री रामानुज चम्पू' की रचना सन् १६०० ई० में हुई। इस का संपादन श्री पी. पी. एस. शास्त्री ( मद्रास राज्य प्राच्य माला सं. ६, मद्रास १९४२ ) द्वारा हुआ है। यह चम्पू प्रसिद्ध द्वैत दार्शनिक श्री रामानुज ( १०१७-११३७ ई० ) का ऐतिहासिक जीवनवृत है। इस चम्पू के तृतीय स्तबक का १९वां श्लोक इस प्रकार है—

पृष्ठ ३९—

अभ्यागम्य पदे पदे सविनयं संप्रार्थितो गेहिभिः
शुण्ठीजीरकरामठादिसुरभिगन्धकृता इड्डुली ।
दोशामंडलमिन्दुबिम्बधवलं सद्यो घृतेनाप्लुतम्
भक्तं सवर्णासवर्णसूपासहितं सामोदमास्वादयन् ॥

यह श्लोक अतिथियों के गृहस्वामियों द्वारा किए गए स्वागत का सुन्दर कवित्वपूर्ण वर्णन देता है। अतिथि ने उबले चावलों का निम्न भोज्य पदार्थों सहित, दिए भोज को प्रसन्न हो कर खाया—

१. इड्डुली—गोलाकार सूंठ, जीरे, हींग से सुवासित 'इडली'

२. ताजे घी में डुबाए चन्द्रबिंब गोल आकार के 'दोशे'

७. महाराष्ट्र के संत रामदास के परम मित्र रघुनाथ नवहस्त ( नवाथे )[2] ने भोजन द्रव्यों पर ई० सन् १६७५-१७०० में मध्य 'भोजन कुतुहल'[3] नामक ग्रन्थ की रचना की। इस ग्रन्थ

---

१. एकनाथ का काल तथा जीवन श्री एस. चित्राव शास्त्री के मध्ययुगीन चरित कोश, पूना, १९३७, पृष्ठ १७१-४ में अभिलिखित है। 'रुक्मणी स्वयंवर' की तिथि पृष्ठ १७३ पर दी है।

२. इस लेख पर मेरा निबन्ध 'बम्बई विश्वविद्यालय के जर्नल', १९४१ में देखिए।

३. 'भोजनकुतूहल' के हस्तलिपि के लिए देखिए, आफ्रेम्ट, cc I, ४१८, II, ९५, III ९०।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के प्रथम परिच्छेद में वह खाद्यपदार्थों, जिस में शाक, धान्य, फल आदि भी है, तथा उन भोज्य पदार्थों की भी, जो महाराष्ट्र तथा भारत के अन्य प्रदेशों में १७ वीं शताब्दी में प्रचलित थे, सूचि देता है। भण्डारकर प्राच्य अनुसन्धान शाला के राजकीय हस्तलेख पुस्तकालय में इस प्रथम परिच्छेद की एक हस्तलिपि है ( सं. ५९४-१८९९-१९१५ )। इस परिच्छेद की शीर्षकों के आधार पर व्याख्या मैंने एनल्स ( भं० प्रा० अ० शा० खण्ड २१ पृष्ठ २५४-२६३ ) में प्रकाशित की है। इस हस्तलिपि के १९ वें पन्ने पर वह 'घिराड़ी, पुरिका, गोधूमफेनी' आदि के साथ 'इडली' का उल्लेख भी करता है। यह संदर्भ दिखाता है कि १७ वीं शताब्दि में भी महाराष्ट्र में 'इडली' लोकप्रिय थी।

इस निबन्ध को मैं, विद्वानों से इस प्रार्थना के साथ समाप्त करता हूँ कि वे इन दो लोकप्रिय भोज्य पदार्थों 'इडली और दोशे' के सम्बन्ध में, उन स्रोतों की सूचनाएं भी दें, जो मुझे ज्ञात नहीं हैं।

—

# मंगल सूत्र

- स्वस्ति की अकांक्षा करने वाले बहुत से देवों ने और मनुष्यों ने तरह-तरह के मंगलों की कल्पना की है। भगवान अब बताइये कि उत्तम मंगल कौनसा है।

( महात्मा बुद्ध ने कहा— )

- मूर्खों की संगति न करना, पंडितों की संगति करना, और जो पूजनीय हैं उन की पूजा करना यही उत्तम मंगल है।
- अनुरूप प्रदेश में वास, पूर्व काल से लगाकर किया हुआ पुण्य, आत्मा का सम्यक् प्रणिधान यही उत्तम मंगल है।
- बहुश्रुतता, कलाकौशल, भलीभांति सीखी हुई नीति या विनय और सुभाषिणी वाणी, यही उत्तम मंगल है।
- माता-पिता की शुश्रूषा, पत्नी पुत्र की संभाल और बिना आकुलता के कार्य सम्पन्न करना, यही उत्तम मंगल है।
- दान और धर्माचरण, नाती-गोतियों की संभाल और ऐसा कर्म जिस के विरुद्ध कोई बोल न सके, यही उत्तम मंगल है।
- पाप से दूर और विरत रहना, मद्यपान से परहेज करना, धर्म के काम में प्रमाद न करना, यही उत्तम मङ्गल है।
- दूसरों का सम्मान करना, स्वयं नम्र होना, सन्तुष्टि, कृतज्ञता और समय-समय पर धर्म श्रवण यही उत्तम मङ्गल है।
- शांति सुवचन, श्रमणों का दर्शन, समय-समय पर धर्म चर्चा, यही उत्तम मङ्गल है।
- तप, ब्रह्मचर्य, आर्यसत्यों का दर्शन, निर्वाण का साक्षात्कार, यही उत्तम मङ्गल है।
- यश अपयश आदि लोकधर्म के आघात से जिसका चित्त जरा भी कम्पित नहीं होता, जो अ-शोक, रजरहित और क्षेमयुक्त हो, यही उत्ताम मङ्गल है।

इस प्रकार के मङ्गलों का सम्पादन करके, कहीं भी पराजित हुए बिना जो सर्वत्र स्वस्ति पाते हैं वही उन का उत्तम मङ्गल है।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# बलिदान

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

पिताजी निमोनिया के भयंकर आक्रमण से निकल चुके थे। अभी इलाज जारी था, और निर्बलता बहुत अधिक थी, परन्तु रोग का सिर कट चुका था।

मैं नित्य नियम के अनुसार दोपहर बाद बलिदान भवन गया। अर्जुन कार्यालय जहां मैं अब की तरह तब भी रहता था, बलिदान भवन से बहुत दूर नहीं था, अधिक से अधिक चार मिनट का पैदल रास्ता होगा। पिताजी की तबियत अच्छी थी। उस समय कुछ अन्य महानुभाव भी वहां बैठे थे। पिताजी को स्वास्थ्य लाभ करते देख कर सभी प्रसन्न थे। पिताजी ने सारी बीमारी का बड़ी धीरता से सामना किया, परन्तु एक बात इस बीमारी में जिह्वा पर रही। वे बार बार कहते थे, कि अब यह शरीर सेवा करने के योग्य नहीं रहा। अब तो एक ही इच्छा है कि अगले जन्म में ऐसा शरीर प्राप्त करें जो धर्म की सेवा के काम आ सके। ऐसे ही भाव उस दिन भी पिताजी ने प्रकट किये। इस पर हम सब ने निवेदन किया कि अब तो कोई खतरे की बात नहीं है। डा० अन्सारी ने भी कह दिया है कि रोग जा चुका है, कुछ ही दिनों में आप सर्वथा स्वस्थ हो जायेंगे। पिताजी ने मुस्करा कर जो उत्तर दिया उस का आशय यह था कि होगा तो वही जो भगवान् चाहेंगे, मैं तो केवल अपनी इच्छा प्रकट कर रहा हूँ।

थोड़ी देर तक बातचीत करने के पश्चात हम लोग उठ गये, क्योंकि पिताजी के नित्य कर्म से निवृत्त होने का समय हो गया था। केवल उन का सेवक धर्मसिंह उन के पास रहता था। उस ने चारपाई के पास कमोड रख दिया, पिताजी स्वयं उठ कर शौचादि से निवृत्त हुए, और फिर चारपाई पर लेट गये। हम लोग बलिदान भवन के दूसरे हिस्से में थोड़ी देर बातचीत कर के अपने-अपने स्थानों को चले गये।

मैं घर आकर चारपाई पर बैठा ही था कि बच्चा भागता हुआ आया और उस ने घबराये हुए स्वर में कहा—दादा जी को किसी ने गोली मार दी। घर के सब लोगों ने अचम्भे और अविश्वास से उस की बात को सुना, क्योंकि मैं उन्हें पिताजी के स्वास्थ्य की सन्तोषजनक उन्नति होने के समाचार सुना रहा था। यह समझ कर कि बच्चे ने बात समझने में भूल की है, मैंने उस से पूछा—तूने यह किस से सुना' उस ने उत्तर दिया—'आप पूछ लीजिये, सड़क पर जीवनलाल जी खड़े हैं, वे कह रहे हैं।'

मैं उस समय तीसरी मंजिल पर था। छज्जे पर खड़े जीवनलाल जी बहुत ही घबराई आवाज में मुझे पुकार रहे थे। मुझे देख कर वे बोले—स्वामी जी को किसी ने गोली मार दी।

मैंने पूछा—गोली मारने वाला पकड़ा गया या नहीं ?

जीवनलाल जी गोली की आवाज सुन कर सड़क पर ऐसी खबर देने के लिये भाग आये थे, उन्होंने उत्तर दिया,

'यह तो पता नहीं, शायद भाग गया हो'।

समाचार सुन कर मेरे पांव तले जमीन निकल गयी, परन्तु समाचार के मानने और समझने में देर न लगी, ऐसी आशंका तो कुछ दिनों से हो ही रही थी। इतने में घर के और लोग छज्जे पर पहुँच गये, और पूछने लगे कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्या बात है। परन्तु मैंने कोई उत्तर नहीं दिया—और यह कह कर कि 'मैं स्वयं देख कर आता हूँ, क्या बात है।' नंगे पांव सीढ़ियों से उतर गया। पीछे, पीछे घर के अन्य लोग—मेरी पत्नी, और सभी चल पड़े।

मैं भागता हुआ भवन के नीचे पहुंचा तो देखा कि कुछ आदमी इकट्ठे हो गये हैं, और दो चार ऊपर भी जा चुके हैं। मुझे देख कर सभी तरह-तरह के प्रश्न पूछने लगे, पर मैं किसी का भी उत्तर दिये बिना ही ऊपर चढ़ गया। वहां जाकर अन्दर घुसते ही मेरी पहली नजर पिता जी की चारपाई पर पड़ी, पिताजी की आंखें बन्द थीं, मानो सुखपूर्वक सोये हों। छाती के सामने भगवे कुर्ते पर रक्त दिखाई दे रहा था, जो असली परिचय की सूचना दे रहा था, अन्यथा पिताजी को देख कर एकदम यह अनुमान नहीं लग सकता था कि वे सजीव नहीं हैं।

दूसरी नजर सेवक धर्मसिंह पर पड़ी। वह कमरे के मध्य में जांघ को हाथ से दबाये पड़ा था। उस के चारों ओर खून फैला हुआ था, मैंने पूछा—'धर्मसिंह तुम्हारे भी गोली लगी है?'

धर्मसिंह ने उत्तर दिया—'हां, पण्डित जी, मेरे भी गोली लगी है। पर आप मेरी चिन्ता न करो, स्वामी जी को कई गोलियां लगी हैं, उन्हें सम्भालिये।' मैं तब तक पलंग के पास पहुंच चुका था। मैंने पिताजी की कलाई और माथे पर हाथ रखा, तो उसे बिल्कुल ठण्डा पाया। उसी समय मेरी दृष्टि पलंग के पीछे कमरे के कोने में जमीन पर औंधे मुंह लेटे हुए स्नातक धर्मपाल जी पर पड़ी। मैंने पूछा,

'धर्मपाल जी क्या आप के भी गोली लगी है?'

उन्होंने उत्तर दिया,

'मैंने गोली मारने वाले को दबा रखा है।'

मैंने घबरा कर पूछा,

क्या सहायता के लिए आऊं?

उन का उत्तर था—

'आप इस की चिन्ता न करें इसे मैं नहीं छोड़ूंगा। आप स्वामी जी को संभालिये।'

उस परिस्थिति में मेरा दिमाग कैसे ठिकाने रहा, मुझे इसी बात पर आश्चर्य है, इस समय बहुत से और महानुभाव भी वहां पहुँच चुके थे। वह भी विचार में भाग ले रहे थे। पहला काम यह किया गया कि डा० अन्सारी को टेलीफोन द्वारा बुलाया गया. और दूसरा काम यह हुआ कि कोतवाली में दुर्घटना की सूचना दी गई।

यह प्रबन्ध हो ही रहा था कि कमरे के दरवाजे पर हल्ला मच गया। मैं भाग कर दरवाजे पर गया तो देखता क्या हूँ कि हमारा स्वयंसेवक राजाराम हाथ में लम्बा चाकू लिये अन्दर घुसने की चेष्टा कर रहा है, और उसे बा० धनीराम जी ( मेरे बहनोई ) दोनों हाथों से पकड़ कर रोक रहे हैं, कुछ लोग कह रहे थे, इसे अन्दर जाने दो, और कुछ लोग उसे शांत कर रहे थे। पूछने पर राजाराम ने कहा—मैं उस पापी को मार कर छोड़ूंगा, मुझे मत रोको, नहीं तो एक की जगह कई खून हो जायेंगे। मैंने जाकर राजाराम का चाकू वाला हाथ पकड़ लिया। वह मुझे देख कर चिल्लाया—पंडित जी, आप भी मुझे रोक रहे हैं। हमारे जीते जी उस ने स्वामी के गोली मार दी—हम उसे अभी मार कर छोड़ेंगे।'

मैंने उसे समझाया कि यदि तुम उसे अभी मार दोगे तो इस का कोई प्रमाण न रहेगा कि वह हत्यारा है, और संसार पर सचाई प्रगट न होगी। यह समय शांत रहने का है, घबराने का नहीं। यह नहीं कि हमारे जोश के कारण पापी का पाप हमारे ही सिर लगा दिया जाय।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राजाराम खूब गठे हुए शरीर का, लम्बा चौड़ा नौजवान था। उस के चेहरे से बहादुरी टपकती थी। वह ट्राम्वे के दफ़्तर में चौकीदारी करता था, परन्तु उस की नौकरी जाति सेवा के काम में कभी बाधक नहीं होती थी, बिल्कुल निर्भय, सुन्दर डीलडौल के उस सच्चे नौजवान को देख कर हृदय में अभिमान पैदा होता था, कभी किसी बड़े से बड़े खतरे के काम की आज्ञा मिलने पर मैंने उसे क्षण भर के लिए भी सोचते या घबराते नहीं देखा, आज्ञा मिलते ही मैदान में कूद पड़ता—यह राजाराम का स्वभाव था। मैंने उस समय राजाराम की आंखों में रक्त बरसता देखा तो अन्य कोई उपाय न पाकर जोर स्वर से आज्ञा दी—

'राजाराम क्या कर रहे हो, क्या आज्ञा का उलङ्घन करोगे ? चले जाओ यहां से।'

राजाराम का हाथ ढीला हो गया, उसने एक बार खून भरी आंखों से उस कोठरी की ओर देखा, जहां धर्मपाल जी के आहिनी शिकंजे में पड़ा हुआ हत्यारा फड़फड़ा रहा था, और जिस वेग से ऊपर चढ़ा था, उसी वेग से धड़धड़ाता हुआ सीढ़ियों से उतर गया। सच्चा सिपाही आदेश का उलङ्घन न कर सका।

राजाराम वहां से तो चला गया, परन्तु उस का क्रोध शांत न हुआ, उस के पश्चात् दस मिनट के अन्दर ही अन्दर नये बाजार में तीन आदमी घायल हुये, जिन में से एक जान से मर गया। इस हत्या के अपराध में जिन तीन नौजवानों पर मुकदमा महीनों तक चलता रहा—अन्त में सब अभियुक्त बरी कर दिये गये।

बेचारा राजाराम हवालात में बीमार हो गया था, बाहर आकर उस की सेहत संभल न सकी—गिरती ही गयी, अन्त में वह बांका जवान असमय में ही,जेल में लगी हुई बीमारी का ग्रास बन गया।

इतने वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी जब कभी मैं राजाराम को याद करता हूं तो मेरे सामने उस की चढ़ी हुई मूछों वाला बहादुर चेहरा जीवित रूप से आ जाता है।

डा० अन्सारी और पुलिस को साथ ही साथ टेलीफोन किया गया था, पर डाक्टर साहब पहले ही आ पहुंचे। डाक्टर साहब अकेले नहीं आये, डा० अब्दुररहमान को साथ लेते आये थे। इस अन्तिम बीमारी में पिता जी का इलाज डा० अन्सारी ही कर रहे थे, और जब कभी उन्हें दिल्ली से बाहिर जाना पड़ता था तब वह अपना स्थानापन्न डा० अब्दुररहमान को बना जाते थे।

जब डाक्टर साहब को बुलावा पहुँचा, तब उन्होंने यही समझा कि शायद निमोनिया ने अपना उग्रतम रूप धारण कर लिया है। जिस से घबरा कर डाक्टर को बुलाया गया है। १६१६ से पिता जी का डा० अन्सारी से परिचय हुआ था। तब से अन्तिम समय तक पिता जी को सिवाय डा० अन्सारी के और किसी चिकित्सक का इलाज अनुकूल नहीं पड़ता था। पिता जी की अवस्था इतनी बढ़ गई थी कि जब निमोनिया के दिनों में डाक्टर जी को चार दिन के लिए भोपाल जाना पड़ा, तो पिता जी ने दूसरे डाक्टर से दवा ही नहीं ली। चार दिन तक इलाज केवल सेक प्लास्टर और परहेज तक ही परिमित रहा। जब डाक्टर साहब भोपाल से वापिस आये तब दवा ली। इस अटल श्रद्धा का श्रेय श्रद्धालु को दें या श्रद्धा के पात्र को, इस प्रश्न का उत्तर यह है कि वह श्रेय दोनों में समान रूप से बंटना चाहिये। पिताजी जिस में श्रद्धा रखते थे, अटल रखते थे, और डा० अन्सारी से जिस ने एक बार इलाज करवा लिया, उसे दूसरा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दरवाजा ससहाता ही नहीं था।

हां, तो जब डाक्टर अन्सारी बलिदान भवन में पहुंचे तो आश्चर्य और दुःख से स्तब्ध रह दरवाजे में घुसते ही सारे दृश्य को देख कर परिस्थिति को समझने की चेष्टा करते रहे—कुछ देर तक जहां के तहां खड़े रह गये - मानों पांव भूमि में गड़ गये हों। फिर आगे बढ़ कर पिता जी की नब्ज देखी—माथे और पेट को छुआ—आंखों के पर्दे पलट कर देखे और जो कुछ आवश्यक समझा देखा भाला, और अन्त में आंसू भरी आंखों से मेरी ओर देख कर कहा—

भाई, अब तो कुछ बाकी नहीं रहा, गोली सीधी छाती में लगी है। मृत्यु फौरन ही हो गई प्रतीत होती है, फिर डाक्टर जी धर्मसिंह की ओर मुड़े, और उसके घाव पर पट्टी बांधने लगे।

इतने में पुलिस आ पहुँची। एक इन्सपैक्टर, दो सब इन्सपैक्टर और बहुत से सिपाही बड़ी टट फट के साथ मैदान में उतरे, मानों जंग के लिये तैयार हो कर आये हों। अनहोनी हो जाने पर शान दिखाना यह हिन्दुस्तानी पुलिस की विशेषता है।

उस समय तक—और वह समय आध घंटे से कम न होगा—धर्मपाल जी खूनी को दबाये पड़े रहे। खूनी के जिस हाथ में भरा हुआ पिस्तौल था, उसे धर्मपाल जी ने एक हाथ से दबा रखा था, दूसरे हाथ से उस के सिर को फर्श में खूंटे की तरह गाड़ रखा था, और उस की पीठ पर अपनी छाती का पूरा जोर देकर लेटे हुए थे। कई लोगों ने बीच-बीच में सहायता के लिये हाथ बढ़ाया। उन सब को धर्मपाल जी ने दूर से हटा दिया। यह बिल्कुल ठीक था कि यदि हत्यारे पर धर्मपाल जी का शिकंजा कुछ भी ढीला पड़ जाता तो वह न जाने कितना अनर्थ कर के भाग निकलता।

सर्व साधारण को धर्मपाल जी के उस धैर्य और बल को देख कर बहुत आश्चर्य हुआ था—पर जो लोग उन्हें बचपन से जानते थे उन्हें कुछ भी आश्चर्य नहीं हुआ, विद्यार्थी अवस्था में ही साथियों पर उन की शारीरिक दृढ़ता का आतंक था उसके बड़े दुर्भाग्य उदित हुये समझो जो फुटवाल के मैदान में हाफवैक धर्मपाल के सामने पड़ जांय। यदि हाफवैक की लात सामने के खिलाड़ी की लात पर जा लगी तो मेजर एक्सीडेंट (भयानक दुर्घटना) का हो जाना अनिवार्य था। या तो हड्डी टूट जाती थी, अथवा टांग पर गेंद जैसा गोला सूज आता था यह बिल्कुल आकस्मिक था, कि अब्दुल रशीद का वास्ता धर्मपाल जी जैसे ठोस आदमी से पड़ा—परन्तु विधाता की इच्छा प्रायः ऐसी घटनाओं से पूरी होती हैं जिन्हें मनुष्य आकस्मिक कहता है। यह विधाता का विधान था कि पिताजी के बलिदान का कानूनी सबूत लाल हाथों के साथ ही गिरफ्तार हो। यह काम धर्मपाल जी जैसे व्यक्ति के हाथों से ही हो सकता था।

सच्चे और पक्के साथी मैंने बहुत देखे हैं, परन्तु धर्मपाल की अपेक्षा अधिक ठोस बात निभाने वाला संगी अब तक मेरे अनुभव में नहीं आया, वह पिताजी के शिष्य भीथ, और निजू मन्त्री भी-परन्तु वह सारा आध्यात्मिक सम्बन्ध था, घर से मंगा कर निर्वाह करते थे और धर्म भाव से पिताजी की सेवा करते थे, उन्हे उस घटना से जो यश प्राप्त हुआ, वह वस्तुतः उसके अधिकारी हैं।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# लोकनृत्यों में 'विभिन्नता में एकता'

देश के ग्राम और आदिवासी क्षेत्रों से इस बार दिल्ली में गणराज्य दिवस समारोह में भाग लेने, अपने परम्परागत रङ्ग-बिरङ्गे वस्त्रों से सुसज्जित एक हजार से भी अधिक लोक-नर्तक एकत्रित हुए थे। उन्होंने अनेक प्रकार के नाच और गानों का सुन्दर प्रदर्शन किया। असंख्य दर्शकों में राष्ट्रपति तथा प्रधान मन्त्री भी उपस्थित थे।

देश के सुदूर अंचलों से एकत्र हुए लोक-नर्तक देखते ही बनते थे। पूर्व भारत के आभूषणयुक्त आदिवासी, ढीले लम्बे कुरतों में पंजाबी गोल टोपी पहने हिमालय क्षेत्र के नर्तक और सुन्दर सुसज्जित दक्षिणी क्षेत्रों के नर्तक, एक ही धरती के पूत सब एकत्र थे। जनसाधारण के लिए इन नृत्यों में विशेष आकर्षण था। जनता इन्हें समझ और सराह सकती है। यहां के जनजीवन में नृत्य का बहुत प्राचीन काल से महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

इन विभिन्न प्रकार के नृत्यों से स्पष्ट था कि विभिन्न प्रकार के नृत्यों का स्रोत एक है और उन में साम्य है। वास्तव में नृत्य जनजीवन का अङ्ग रहा है। दैनिक जीवन की घटनाओं, जैसे फसल की बुआई, कटाई, पूजा, प्रेम, युद्ध आदि को उन में अभिव्यक्ति है।

इस वर्ष १८ प्रकार के विभिन्न नृत्य, गणराज्य दिवस समारोह पर देखने में आये।

## उत्तर भारत के लोकनृत्य

पंजाब के किसानों का झूमर नाच देखने योग्य था। नृत्य का आरम्भ उस्ताद की 'बोली' से हुआ, इस के बाद नर्तक हर्ष से नाचने लगे। पटियाव का 'लुदी' नृत्य भी बहुत मनोरंजक था। हिमाञ्चल प्रदेश के नर्तकों का 'चीनी' नृत्य बहुत सुन्दर था। स्त्रियों और पुरुषों की पोशाक ने नृत्य को और मनोरम बना दिया। उत्तर के पर्वतीय प्रदेश का 'कुलू' नृत्य भी काफी आकर्षक था। लद्दाखी लोगों के नाच पर चीन का प्रभाव स्पष्ट था।



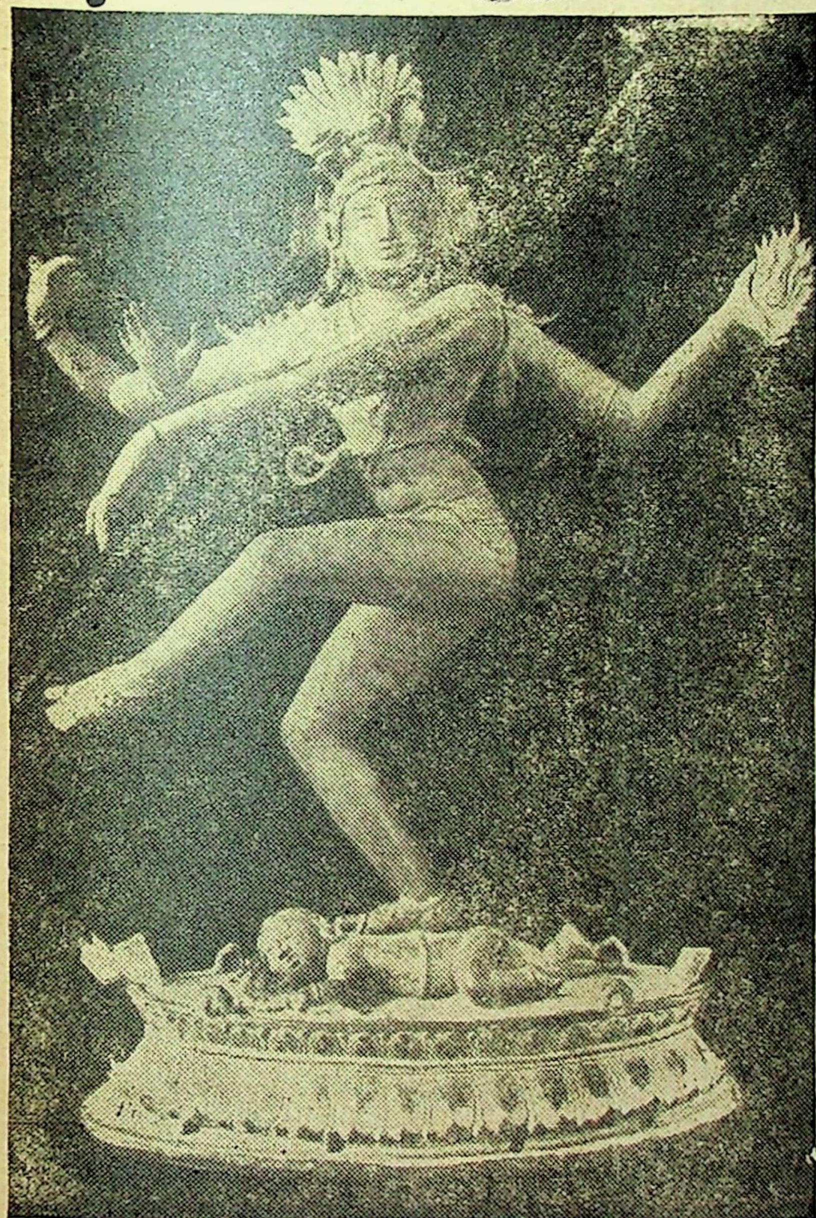
लामा नृत्य

## पश्चिम और मध्यभारत के नृत्य

पश्चिम तथा मध्य-भारत के नृत्यों में 'हाली नाच' बहुत श्रेष्ठ था। सूरत जिलों के 'दुबाला' जाति के स्त्री-पुरुषों ने इस में भाग लिया था। अधिकांशतः नर्तक किसान थे और नाच का विषय प्राकृतिक दृश्यों से सम्बन्धित था। इसी प्रकार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

महाराष्ट्र का 'दीपक' नृत्य भी बहुत सुन्दर था। राजस्थान के नर्तकों में 'कच्ची घोड़ी' का नाच दिखाया। नर्तकों ने कमर तक घोड़ों का ढाँचा पहन कर, पैदल सिपाहियों से युद्ध किया। सौराष्ट्र के लड़कों ने 'रास लीला' दिखायी। मध्यप्रदेश के बेगा आदिबासियों का करमा नृत्य और विन्ध्यप्रदेश का 'डंडा नाच' काफी आकर्षक था।



नटराज

## दक्षिण भारत के लोकनृत्य

दक्षिण भारत के ग्राम क्षेत्रों के लोकनृत्यों में ढोल और बांसुरी के संयोग से, मनोहरता और बढ़ गई। मैसूर के नर्तकों ने 'दोल्लू कुठिया' नृत्य दिखाया। इसे 'ढोल नृत्य' भी कहा जा सकता है। केरल का विशेष नृत्य 'मोपलाकाली' मलाबार के मुसलमानों ने प्रदर्शित किया। इस की गति देखने योग्य थी। इसी प्रकार तिरुवांकुर-कोचीन का 'वेलाकाली' नृत्य बहुत सुंदर था। हैदराबाद के गोंड नर्तकों ने नकाब पहन कर, तेंदुए की खाल लपेट कर अपना 'दाधेरीनाच दिखाया। भारत के प्राचीनतम निवासी नीलगिरि ( मद्रास ) के टोड़ा नर्तकों ने भी एक अद्भुत नाच दिखाया, जिस में प्रकृति के प्रकोप से बचने और वर्षा के लिए प्रार्थना की गई थी।

## पूर्वी भारत के नृत्य

पूर्वी भारत के आदिवासियों के नृत्य अपने निराले सौन्दर्य और विविधता की दृष्टि से उल्लेखनीय थे, जैसे उत्तर पूर्वी सीमा अभिकरण के नर्तकों का 'नागा नृत्य'। मणिपुर के तांगखुल लोगों का 'फीचक' नाच उल्लासपूर्ण था।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# कुलपति जयराम कजिन्स

## ( डाक्टर हेनरी जेम्स कजिन्स )

श्री शंकरदेव विद्यालंकार

विदेश में जन्म लेकर भी भारतवर्ष को अपनी भावना-भूमि, संस्कार भूमि और कर्मभूमि बना कर उस के उत्कर्ष के लिए अपने तन, मन प्राण समर्पित करने वाले व साधुचरित मेधावियों में अन्यतम डाक्टर जेम्स हेनरी कजिन्स ( कुलपति जयराम कजिन्स ) पिछले दिनों मदनपल्ली ( मद्रास राज्य ) में देवलोक वासी हो गए। अवसान के समय उन की आयु ८३ वर्ष की थी। अपने चरित्र द्वारा भारतवर्ष के साथ उन्होंने ऐसी एकात्मकता स्थापित कर ली थी कि उन्हें हम विदेशी नहीं कह सकते।

### प्रारम्भिक जीवन

डाक्टर कजिन्स का जन्म बेलफास्ट नगरी ( आयर्लैंड ) में २२ जुलाई सन् १८७३ में हुआ था। लंदनबरी के छात्रावासीय विद्यालय में प्रारम्भिक शिक्षण समाप्त कर के वहां के लार्ड मेयर के निजू मंत्री के रूप में आपने अपनी जीवन यात्रा प्रारम्भ की। परन्तु शीघ्र ही बेलफास्ट से डबलिन आकर आपने आयर्लैंड के विश्रुत साहित्य-कला-मर्मज्ञ श्री जार्ज विलियम रसेल और नोबल पुरस्कार विजेता सुकवि डब्ल्यू. बी. यीट्स के सान्निध्य में रह कर अपनी साहित्यिक प्रतिभा को विकसित और परिष्कृत किया। परिणामतया शीघ्र ही आप आयर्लैंड के नवीन साहित्य आन्दोलन में सम्मिलित हो गए। उसी समय आपने दो नाटक लिखे जो वहां के राष्ट्रीय रंगमंच पर अभिनीत हुए। इसी समय आप श्रीमती एनी बीसेन्ट के सम्पर्क में आए। श्रीमती बीसेन्ट की पुस्तक 'एसोटेरिक क्रिश्चियानिटी' ( ईसाइयत की रहस्यवादिता ) पढ़ कर तथा उन के व्याख्यानों को सुन कर आप अतिशय प्रभावित हुए। इन्हीं दिनों आप ने मार्गरेट नाम की एक प्रतिभाशालिनी संगीत-विशारद और कट्टर शाकभोजी कुमारी से विवाह किया। श्रीमती मार्गरेट कजिन्स आप के भावी जीवन में बड़ी सहायिका सिद्ध हुई। सन् १९१५ में आप लंदन आ गये। लंदन में ग्रॉंड रिचार्ड ने आप की कविताओं का संग्रह किया। इस काव्य संग्रह की 'पालमाल मेगजीन' और 'टाइम्स लिटरेरी सप्लिमेंट' ने भूरि-भूरि सराहना की।

उस युग में भारत में राष्ट्रीय पुनर्जागरण का आन्दोलन बड़े वेग से चल रहा था। आयर्लैंड के अनेक देशभक्तों की भारत के इस आंदोलन से बड़ी सहानुभूति थी। सो श्रीमती एनी बीसेन्ट की प्रेरणा से अपनी पत्नी सहित आप ८ अक्तूबर सन् १९१५ को भारत के लिए रवाना हो गए। बस तभी से आपने अपने को भारतवर्ष की सेवा के लिए सर्वात्मना समर्पित कर दिया।

भारत में आकर अदयार ( मद्रास में ) स्थिर होने में और भारतीय वातावरण में घुलमिल जाने में कजिन्स दम्पती को देर नहीं लगी। होमरूल आन्दोलन उन दिनों जोरों पर था। श्रीमती बीसेन्ट ने अपने नए प्रारम्भ किए हुए 'न्यू इण्डिया' पत्र के साहित्य-विभाग का आपको उप-संपादक बनाया। अब क्या था ? राष्ट्रीय चेतना से परिप्लावित और साहित्यिक सुकृतियों की प्रसविनी आप की कुशल लेखनी ने अपना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर्तव्य प्रारम्भकर दिया। सुकवि और सुसम्पादक के रूप में कजिन्स महोदय ने शीघ्र ही प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली। आपकी कविताओं और नाटकों के संकलन कोई सोलह जिल्दों में प्रकट हुए, जिन में गीतसंचय वाला खण्ड सन् १९१९ में प्रकट हुआ। आपकी गद्यात्मक साहित्यिक कृतियाँ भी कुछ कम गुणवाली नहीं थीं। वे कृतियाँ भी कोई २० जिल्दों में प्रकाशित हुई हैं।

## कला-मर्मज्ञ

भारतीय कला के मर्मज्ञ के रूप में पहले पहल सन् १९१५ में आप को लोगों ने पहचाना। आपने कलकत्ते की 'प्राच्य कला समिति' के कार्यों की समीक्षा करते हुए 'प्राची की कला' शीर्षक एक सुन्दर लेख लिखा। लेख में आपने सूचित किया था —

'यदि भारतीय कलाकार अपनी निजू पद्धति और दृष्टि को छोड़ देंगे तो भारत की कला दरिद्र हो जायगा।'

कुशल कला-मीमांसक के रूप में आपका कर्तव्य श्री गांगुली महोदय की 'दक्षिण भारत की काँस्य मूर्तियां' नामक पुस्तक की विवेचना से प्रारम्भ हुआ था। उस से प्रभावित हो कर आप को प्राच्य-कला-परिषद् कलकत्ता के प्रधान श्री जान वुडरफने परिषद् की वार्षिक कला प्रदर्शिनी के अवलोकन के लिए निमंत्रित करते हुए उस की समीक्षा लिखने को कहा था आप की वह समीक्षा स्टेट्समैन में प्रकट हुई थी। उस समीक्षा से कलकत्ते के कलाप्रेमी मंडल में बड़ी सनसनी फैल गई थी।

कलकत्ता से लौट कर मद्रास में भारतीय चित्रों की प्रथम प्रदर्शिनी का आयोजन करके आपने नवीन भारतीय कला-प्रवृत्ति के प्रति शिष्ट जनसमुदाय में अच्छी दिलचस्पी पैदा की। परिणाम यह हुआ कि बंगलौर, मैसूर आदि उच्च स्थानों पर प्रतिवर्ष नियमित रूप से कला प्रदर्शनियां जुटने लगी और इस प्रकार कजिन्स महोदय के प्रयत्नों से दक्षिण भारत के शिष्ट समुदाय में भारतीय कला के प्रति अच्छी अभिरुचि जागरित हुई, जो अब तक विद्यमान है।

साहित्यक्षेत्र में आप की प्रतिभा और प्रख्याति से प्रभावित हो कर जापान के टोकियो विश्वविद्यालय ने आपको पर्यटक-प्रोफेसर के रूप में निमंत्रित किया। वहां पर आप कोई एक वर्ष तक रहे। आँग्ल साहित्य विषयक आप के व्याख्यानों से प्रभावित हो कर टोकियो विश्वविद्यालय ने आप को 'डाक्टर' की उपाधि से विभूषित किया। कुछ समय पश्चात् न्यू इंडिया पत्र का सम्पादन छोड़ कर आप मदनपल्ली थियोसोफिकल कालेज के आचार्य बनाए गये।

## भारतीय नरेशों को कला की ओर प्रवृत करने वाले

आपकी ही प्रेरणा और परामर्श से मैसूर के महाराजा ने अपने यहां कलामन्दिर (आर्ट गैलरी) की स्थापना की। अध्यापन कार्य के साथ-साथ समय-समय पर भारत के विभिन्न प्रदेशों में परिभ्रमण कर के कला प्रदर्शनियों का आयोजन करते हुए आप स्वदेशी-कला पर व्याख्यान भी देते रहे। सन् १९२८ में आप भारतीय कलाओं पर व्याख्यान देने के लिए विश्व-यात्रा पर निकल पड़े। इस यात्रा में आपने इटली, फ्रांस, स्विट्जरलैण्ड और संयुक्त राज्य अमरीका का परिभ्रमण किया।

सन् १९३७ में आपन मन्दिर प्रवेश आंदोलन में बड़े उत्साह से भाग लिया। ट्रावणकोर में एक 'श्वेत ब्राह्मण के' रूप में एक मन्दिर में आप को प्रविष्ट किया गया और आप का भारतीय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नाम 'जयराम' रखा गया। उसी समय आप को 'कुलपति' की पदवी भी प्रदान की गई। तब से आप कुलपति जयराम कजिन्स नाम से प्रसिद्ध हो गए।

सन् १९३१ में ट्रावणकोर के नवीन महाराजा राजगद्दी पर आसीन हुए थे। उस समय एक नए राजमहल का निर्माण भी किया गया था। कजिन्स महोदय ने महाराजा को प्रीतिपूर्वक परामर्श दिया कि भारतीय नरेशों के महलों में भारतीय कला-लक्ष्मी की समुचित प्रतिष्ठा होनी चाहिए। महाराजा को आप का परामर्श बहुत पसन्द आया। एक राजकीय चित्रालय की स्थापना की गई। डाक्टर कजिन्स को ही इस चित्रालय की सज्जा और व्यवस्था का काम सौंपा गया। यह चित्रालय भारत के सुन्दरतम कलाकेन्द्रों में गिना जाता है। कला के क्षेत्र में की गई आपकी सेवाओं के सम्मान में ट्रावणकोर के महाराजा ने आप को 'वीरश्रृंखला' (सुवर्ण-मालिका) देकर सम्मानित किया।

सन १९३६ में बंगाल के सुविदित कलामीमांसक श्री अर्धेन्द्र कुमार गांगुली महाशय के घर पर भारतीय कलालक्ष्मी के अनन्य उपासक डाक्टर कजिन्स के सम्मान के लिए एक आयोजन किया गया था। उस में कलकत्ते के प्रायः सभी प्रतिष्ठित कलारसिक महानुभाव समवेत हुए थे। भारतीय कला-जागरण के पिता चित्राचार्य श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर रुग्ण होते हुए भी गुणपूजा के इस अनुष्ठान में प्रधान अतिथि के रूप में उपस्थित हुए थे। श्री ए. पी. बनर्जी द्वारा चित्रित एक मानपत्र शिल्पीगुरु श्री अवनीबाबू द्वारा कुलपति कजिन्स की सेवा में अर्पित किया गया था।

## विशिष्ट कृतियाँ

भारतवर्ष के विभिन्न विश्वविद्यालयों में कजिन्स महोदय ने भारतीय कलालक्ष्मी और संस्कृति के विभिन्न अंगों पर बड़े अध्ययनपूर्ण व्याख्यान दिए हैं। पिछले कतिपय वर्षों से आप ट्रावणकोर राज्य के कला विषयक परामर्शदाता थे। भारतीय संस्कृति के विविध पार्श्वों पर प्रकाश डालने वाली आप की कई कृतियां विशेष रूप से सम्मानित हुई हैं। जिन में से कुछ एक का नामोल्लेख करना वाचकों के लिए लाभकर होगा।

१. एशिया की सांस्कृतिक एकता।
२. पुरुषार्थ और पूजा।
३. सौन्दर्य का तत्वज्ञान।
४. समदर्शन।
५. कलाकार की श्रद्धा।
६. जीवन में सौन्दर्य का महत्व।

कजिन्स महोदय का जीवन बहुमुखी प्रतिभा और कृतिशीलता से समन्वित था। वे प्रतिभावान् कवि थे। समर्थ पत्रकार, भावनाशील अध्यापक और उत्साही समाज सुधारक थे। कलामीमांसक और कलात्मक कृतियों के आस्वादक के रूप में देश और विदेश के मनीषियों में उन की बड़ी प्रतिष्ठा थी। उन की भारत-भक्ति का प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं। भारतमाता की सेवा के लिए सन १९१५ में वे यहां आए और यहां की संस्कृति में उन्होंने अपने को आत्मसात् कर दिया।

कजिन्स महोदय की धर्मपत्नी श्रीमती मार्गरेट कजिन्स (जिन का कुछ वर्ष पूर्व अवसान हो गया था) भी बड़ी साध्वी और पति-परायणा देवी थी। भारत के महिला समुद्धार आंदोलन में वे प्राणपन से जूझती रहीं। सर्व भारतीय महिला-परिषद् की वे एक कर्मशीला अग्रनायिका थी। भारत-प्रेमी इस मनीषी-युगल ने 'हम दोनों' (वी टुगेदर) नाम से सन् १९५० में अपनी आत्मकथा लिखी थी। वह हमारे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देश के चरित्रकथा लेखन साहित्य की एक अनूठी वस्तु है। वृद्धावस्था के कारण अपनी भौतिक शक्तियों की क्षीणता के कारण कजिन्स महोदय कुछ वर्षों से वानप्रस्थी की तरह तापस जीवन बिताते हुए अड्यार के ब्रह्मचर्याश्रम में रह कर ध्यान और चिन्तन में अपना जीवन व्यतीत कर रहे थे। भारत की जातिय संस्कृति के लिए की गई उन की मूल्यवान सेवाओं के समादर में मद्रास राज्य की सरकार कजिन्स महोदय को कुछ पूजा-दक्षिणा ( पेन्शन भी दे रही थी। उन जैसे भारत भक्त सुरुचि एवं शोभा के पुजारी और संस्कृति-सेवक की क्षति-पूर्ति शीघ्र ही नहीं हो सकेगी। हम उन की सेवाओं के प्रति नतमस्तक हैं।

—

# मैत्री कैसी हो ?

- शांत पद को प्राप्त करने के बाद अर्थकुशल आदमी को यह करना उचित है—वह कार्य-क्षम, सीधा, नेक, सुवचनी, मृदु बने व अधिक अभिमान न रखे।
- संतुष्ट रहे, भरणपोषण थोड़े से हो सके, अपने निजी कार्य बहुत कम हों और आजीविका की जरूरतें कम हों, इन्द्रियां शांत हुई हों, दक्ष रहे ढीठ न हो और परिवार में अति लगाव न हो।
- समझदार जिसे दोष दें ऐसा कोई भी क्षुद्र आचरण स्वयं न करे. ( उस की ऐसी भावना हो कि ) सब सत्वों को सुख और क्षेम मिले और सब सुखितात्मा बनें।
- प्राणियों में अर्थात् भूतमात्रों में जो कोई हों, स्थावर हों या जंगम, लंबे हों या मोटे, मध्यम हों या छोटे, अणुरूप हों या स्थूल, देखे हुए हों या अनदेखे, दूर हों या पास, पैदा हुए हों या पैदा होने को हों, ऐसे किसी को भी छोड़े बिना सब के सब सुखितात्मा बनें।
- न कोई दूसरे को नीचा दिखावे, न कहीं किसी से अपने को ऊंचा चढ़ावे, न कोई रोष के कारण या बदला लेने के भाव से, दूसरों को दुःख हो, ऐसी इच्छा करे।
- जैसे माता अपने पुत्र की, अपने इकलौते पुत्र की, अपनी आयुष्य देकर भी रक्षा करती है, इसी तरह सर्व भूतों के प्रति अपरिमित प्रेम भावना रखनी चाहिये।
- मैत्री की भावना अखिल लोक के प्रति अपरिमित रखे, चाहे वह ऊपर हो, नीचे हो, बगल में हो, मैत्री तो अबाधित, वैर भेद-भाव रहित होनी चाहिये।
- खड़े या चलते हुए, बैठे या लेटे हुए, जब तक ओंघाई से घिर न जाय तब तक ऐसी ( मैत्री की ) स्मृति पर अधिष्ठान रखना चाहिए, इसी को, इस को ही ब्रह्मविहार कहा गया है।
- किसी भी वाद का, आग्रह किये बिना, जो आदमी शीलवान हो कर सत् दर्शन से सम्पन्न है और वासनाओं में लिप्सा को काबू में रखता है उस को निश्चय ही पुनर्जन्म नहीं होगा।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# पाली में बौद्ध धर्मग्रन्थ

पवित्र बौद्ध ग्रंथ इतनी अधिक भाषाओं में मिलते हैं कि कोई एक व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि वह उन सब से परिचित है। ये भाषाएं हैं—पाली, संस्कृत, चीनी, तिब्बती, जापानी, अपभ्रंश और बहुत सी मध्य एशियाई भाषाएं। इन में पाली भाषा के ही बौद्ध ग्रन्थ ऐसे हैं जो अभी तक पूरे के पूरे मिलते हैं और जो अङ्गरेजी तथा अन्य यूरोपीय भाषाओं में अनुवादों के द्वारा अधिक संख्या में पाठकों तक पहुंच सके हैं। आरम्भ की सब से महत्वपूर्ण प्राकृतियों में पाली भी एक है। भगवान् बुद्ध के उपदेशों को लिपिबद्ध करने के लिए स्थविरवादिन बौद्धों ने इसी भाषा को चुना। शायद बुद्ध भगवान् ने मागधी में उपदेश दिये थे, लेकिन भारत में उन का प्रसार होने पर वे स्थानीय बोलियों में रूपांतरित हो गए। आज भी श्रीलंका, बर्मा और दक्षिण पूर्व एशिया के बौद्ध पाली को अपनी धर्म भाषा मानते हैं।

सिंहली परम्परा के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि राजा वत्तगामनि ( ईसा पूर्व ८९-७७ ) के शासन काल में हिंसली भिक्षुओं की महापरिषद द्वारा अन्तिम स्वीकृति मिल जाने पर पाली में लेखन कार्य आरम्भ हुआ। राजगृह, वैशाली और पाटलीपुत्र की तीन परिषदों ने पहले इस भाषा की शब्दावली की रचना की थी और आवश्यक नियम बनाये थे। चार सदियों से भी पहले से पाली बोली जाने वाली भाषा के रूप में उपयोग में आ रही थी। साधारणतः पाली को तिपिटक ( संस्कृत में त्रिपिटक ) या तीन पिटारियां कहा जाता है। ये हैं—विनय, सुत्त और अभिधम्म।

## विनय पिटक

इस पिटक में निम्न ग्रन्थ आते हैं। (१) पतिमोक्ख, (२) सुत्त विभंग, (३) खंधक्स और (४) परिवार कहा जाता है कि विनय पिटक में भगवान् बुद्ध के वे कथन संग्रहीत हैं जिन के द्वारा संघ विषयक विभिन्न नियम निर्धारित किए गए। ये नियम प्रतिमोक्ख में मिलते हैं और सुत्त विभंग में उन ऐतिहासिक परिस्थितियों पर प्रकाश डाला गया है जिन के परिणामस्वरूप इन नियमों की घोषणा की गई। संधक्स के दो विभाग हैं—महावग्ग ( विशाल विभाग ) और चुल्लवग्ग ( छोटा विभाग )। महावग्ग में यह बताया गया है कि संघ में प्रवेश पाने, व्रत रखने आदि के क्या नियम हैं। इस के अतिरिक्त इस ग्रन्थ से प्राचीन भारत के लोगों की जीवन के सम्बन्ध में भी महत्वपूर्ण जानकारी मिलती है। इस में भगवान् बुद्ध के जीवन के विषय में भी काफी जानकारी मिलती है।

## सुत्त पिटक

तिपिटकों में सुत्त पिटक सब से बड़ा और सब से महत्वपूर्ण पिटक है। यह निम्नलिखित पांच निकायों में विभक्त है—

(१) दिघ निकाय। (२) मज्झिम निकाय। (३) संयुक्त निकाय। (४) अंगुत्तर निकाय। (५) खुद्दक निकाय। बताया जाता है कि इन में भगवान बुद्ध के प्रवचन संग्रहीत हैं।

अंतिम निकाय में निम्नलिखित विविध कृतियां हैं।

| | | |
|---|---|---|
| १ | धम्मपद | भगवान बुद्ध के ४२३ प्रवचनों का संग्रह जो २६ अध्यायों में हैं। |
| २ | उदन | भगवान बुद्ध के कथन और तत्कालीन परिस्थितियां |
| ३ | इतिवुत्तक | |
| ४ | खुद्दक-पथ | ( एक संक्षिप्त संग्रह ). |

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

| | | |
|---|---|---|
| ५ | सुत्त-निपथ | ( पांच अध्यायों में काव्यात्मक सुत्त ) |
| ६ | थेरगाथा | ( भिक्षुओं की कविताएं ) |
| ७ | थेरीगाथा | ( भिक्षुणियों की कविताएं ) |
| ८ | निद्देस | ( सुत्त-निपट के उत्तरार्ध की टीका। कहा जाता है यह टीका सारिपुत्त ने की। ) |
| ९ | जातक | ( भगवान बुद्ध के पूर्व जन्मों की कथाएं ) |
| १० | पतिसंभिदा | ( बौद्ध दर्शन सम्बन्धी प्रश्नोत्तरी ) |
| ११ | अपादान | ( बौद्ध साधुओं के वीरतापूर्ण और पुनीत कार्यों के विवरणों का संग्रह ) |
| १२ | बुद्धवंस | ( २४ बुद्धों की गाथाएं ) |
| १३ | विमानवत्थु | ( क्रमशः देवी और नीलारक्त निवासों का वर्णन ) |
| १४ | पेतावत्थु | |
| १५ | चरीय-पिटक | ( पद्य में जातकों का संग्रह ) |

सुत्त-पिटक को बुद्ध-धर्म की गद्य और पद्य में सर्वोत्कृष्ट साहित्यिक कृति माना जाता है। पहले चार संग्रहों में भगवान बुद्ध के प्रवचन हैं, जो या तो उन के उपदेश हैं, जिन के शुरू में प्रवचन के स्थान और अवसर के बारे में संक्षिप्त टिप्पणियां हैं; या वे गद्य में सम्भाषण हैं, जिन में कहीं-कहीं पद्य भी आ जाता है। खुद्दक निकाय को विशेषकर यूरोपियनों ने बहुत पसन्द किया है. क्योंकि इस में अति सुन्दर संक्षिप्त रचनाएं संगृहीत हैं। धम्मपद और सुत्त-निपट भी इसी श्रेणी के ग्रन्थ हैं। थेरगाथा और थेरीगाथा में भिक्षुओं और भिक्षुणियों की कविताएं हैं और जातकों में भगवान बुद्ध के पूर्व जन्मों की गाथाएं हैं।

## अभिधम्म पिटक

तीसरा पिटक अभिधम्म के नाम से प्रसिद्ध है। इस में आध्यात्म का बखान अधिक नहीं है। इस में भी उन्हीं विषयों की चर्चा की गयी है जो सुत्त पिटक में हैं, लेकिन इस में अधिक पांडित्यपूर्ण ढंग से उन का बखान किया गया है। इस पिटक में ये रचनाएं आती हैं :

१. धम्म-संगनी, २. विभंग, ३. कथा वत्थु, ४. पुग्गल-पनत्ती, ५. धातु-कथा, ६. यमक और ७. पत्थान।

ये सभी पुस्तकें बाद की हैं और इन में निकायों की अपेक्षा अधिक विस्तार से विषय का प्रतिपादन किया गया है। कहा जाता है कि जब बुद्ध भगवान देवताओं में प्रचार करने के लिए स्वर्ग गये तो उन्होंने अभिधम्म का पाठ किया था। बौद्ध धर्म के दीर्घकालीन इतिहास में इस पिटक को सदा ही बहुत सम्मान की दृष्टि से देखा जाता रहा है। इस में कथावत्थु भी सम्मिलित है जो, बताया जाता है, तीसरी परिषद के प्रधान, तिस्स मोग्गलिपुत्त ने लिखी। यह भी कहा गया है कि इस की रचना सम्राट अशोक के शासन काल में ईसा पूर्व २५० के आसपास हुई।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# धर्म और दर्शन में विरोध तथा सामञ्जस्य

श्री मनसुखा

धर्म और दर्शन में सामञ्जस्यता हिन्दू धर्म की एक मुख्य विशेषता रही। यूरोप में ईसाई धर्म वालों और दार्शनिकों में सदैव तू-तू मैं-मैं रही; कभी न पटी। और इस्लाम ने तो धर्म-श्रद्धा के लिए दर्शन और तर्क का सदैव विरोध ही किया : स्वतन्त्र विचार को एकदम ही दबा दिया।

लेकिन, क्या धर्म और दर्शन में सचमुच ही कोई मौलिक मतभेद है; क्या उन में कभी मेल हो ही नहीं सकता ? या—धर्म और दर्शन का साथ-साथ न चल पाना : बुद्धि ( तर्क ) और श्रद्धा ( विश्वास ) में तारतम्य (सामंजस्य) न होना एक प्रकार की कमजोरी है, एक प्रकार का विशेष दोष है, वह यदि गम्भीर हो तो बहुत ही खतरनाक है। कारण—मनुष्य के व्यक्तित्व और अध्यात्म के सुगठित विकास के लिए उस की तर्क-बुद्धि और धर्म-निष्ठा में सम्बन्ध विच्छेद नहीं होना चाहिए।

धर्म वालों का कहना है कि हमारी बातें ( मान्यताएँ ) आँख मूँद कर मान लो; उन पर तर्क ( दलील ) मत करो। यदि सोचो तो केवल उन के हक में ही : उन्हें पुष्ट करने के लिए ही। इस कारण स्वतन्त्र विचार करने वालों और विज्ञान वेत्ताओं से भी धर्म का सदा विरोध सा ही रहा। क्योंकि, यदि कोई मान्यता ( धारणा ) तर्क और परीक्षण की कसौटी पर खरी नहीं उतरती तो स्वतन्त्र बुद्धि को नहीं जंचती, न ही मान्य होती है। फिर भले ही वह कितनी ही पूज्य पुरातन अथवा प्रसारित-प्रचारित क्यों न हो। परन्तु स्वतन्त्र विचारकों को भी एक बात समझ लेनी चाहिए कि सामान्य ( दुष्ट=मलिन ) बुद्धि धार्मिक सत्यों को कदापि नहीं समझ सकती। इस लिए प्रथम अपरिपक्व अवस्था में विश्वास की आवश्यकता पड़ेगी ही। लेकिन अन्तिम तौर और पूर्ण तपश्चर्या के पश्चात् 'धार्मिक सत्य' भी उस ही प्रकार, 'व्यक्तिगत अनुभूति' द्वारा पुष्टि की गुञ्जाईश रखते हैं जिस प्रकार कि विज्ञान के सिद्धान्त, परीक्षण द्वारा प्रयोगशाला में।

दुर्भाग्य तो यह हुआ कि धर्म एक ओर विज्ञान का विरोध करता रहा या कम से कम उपेक्षा कर वहम चक्कर, अन्ध विश्वास और रूढ़िवाद में फंसा, दूसरी ओर कला विमुख होने से कहीं कहीं ( जैसे कि आर्यसमाज और इस्लाम में ) शुष्क और भाव-विहिना बनने लगा। इस्लाम में से जब जीवन दायनी आध्यात्मिक स्फूर्ति क्षीण हो गई तो कुछ कोरे फारमूले ( चन्द बेसमझे विश्वास लफजी सा रह गया। और हिन्दू धर्म तो किसी दूसरी दुनिया, मरने के बाद की इतनी फिकर में लगा कि इस प्रत्यक्ष दुनिया और ऐहिक सुख अर्थात् अभ्युदय को ही न सिर्फ भुला बैठा, बल्कि गंवा भी बैठा।

ये हुए तर्क-विहीन, कट्टर अथवा अन्ध-विश्वास या श्रद्धा के अवश्यम्भावी दुष्परिणाम।

परन्तु श्रद्धा-विहीन तर्क भी कोरी विडम्बना मात्र है। यदि जिन्दगी में विश्वास ही नहीं; यदि इस का इतमिनान ही नहीं कि यह जिन्दगी और इस के तजुर्बे अच्छे हैं 'श्रेयकर' तब भला क्यों तर्क किया जाए : जिया ही क्यों जाए ? कहोगे—सिर्फ दुःख उठाने के लिए। क्योंकि, पैदा हुए तो, तो जीना ही होगा। जब तक मौत न छुटाए इस जिन्दगी की कैद से छुटकारा नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सब तर्क-वादी दर्शन क्या तो चार्वाक की तरह भोग प्रधान ( भौतिकवादी ) होंगे या घोर निराशावादी। इस के अलावा कोई चारा नहीं।

लेकिन जीवन में आवश्यकता दोनों की ही है—श्रद्धा की भी और तर्क की भी। श्रद्धा की इस लिए कि जीवन की श्रेष्ठता ( सत्यं शिवं सुन्दरं ) में से विश्वास न उठे; जीवन हल्का, ढीला या फीका न पड़े। साथ ही साथ तर्क की भी जरूरत है, ताकि वह श्रद्धा, अन्धविश्वास या वहम द्वारा विकृत न हो जाए।

यही तो हिन्दू-धर्म की विशेषता थी। काश! कि हम उसे सुरक्षित रख पाते।

हम ने श्रद्धा-धर्म के लिए बुद्धि या तर्क को नहीं छोड़ा। विचार स्वातन्त्र्य को भी नहीं दबाया। हमारा तर्क भी सिवाय शायद चार्वाक को छोड़ कभी गुमराह न हुआ। उस मेधा (बुद्धि) ने सदैव स्वतः-प्रमाण जीवनदायिनी सुखद 'मुक्ति', 'अर्हन्त अवस्था' अथवा उच्च आनन्दमय आध्यात्मिक जीवन की ओर ही संकेत किया तथा साक्षात् अनुभूति द्वारा 'धार्मिक सत्यों' को सिद्ध कर 'बुद्धिगम्य श्रद्धा' को उत्पन्न, विकसित करने को कहा।

हमारा सच्चा शुद्ध सनातन धर्म यदि अपने मूल रूप में हो तो न विज्ञान के विरोध में है न कला के; नाही तर्क-विहीन है या कोरा निराशावाद अथवा किसी दूसरी दुनिया के बारे में मस्त और इस जिन्दगी से लापरवाह या उदासी ने बल्कि उपनिषद् में तो इहलोक और परलोक दोनों ही साधने की स्पष्ट आज्ञा है। न तो भौतिक उन्नति को छोड़ो और नाही अध्यात्म को। क्योंकि, बिना अभ्युदय के जीवन दूभर और दुःखमय है और बिना निःश्रेयस् के, सारहीन तथा अन्त में छलना—दुःखमात्र। लिहाजा, समन्वय की जरूरत है—भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति में एक ओर तथा श्रद्धा और तर्क में दूसरी ओर। यही कुछ तो हिन्दू-धर्म का सार है—मुख्य विशेषता है।

—

# प्रगति की ओर

- असम के उन तेल भण्डारों में जहां से असम आयल कम्पनी तेल निकालती है, १ करोड़ ८० लाख टन तेल जमा होने का अनुमान है।
- मार्च १९५६ में भारत में ३,६६,६५१ टन कच्चा लोहा निकाला गया। इस के पहले महीने में ३,७७,५५१ टन कच्चा लोहा निकाला गया था।
- पेराम्बूर के रेल डिब्बों के कारखाने में पहले साल में यानी अक्टूबर १९५६ के अन्त तक जितने डिब्बे तैयार करने का लक्ष्य रखा गया था अनुमान है उत्पादन उस से दुगना होगा।
- १९५१ में डाकखानों के सेविंग बैंक खाते में १ अरब ८५ करोड़ १० लाख रु० जमा था और १९५५ में बढ़ कर यह राशि २ अरब ५६ करोड़ ५० लाख रु० हो गयी।
- पिछले साल १,२६,३४.३२६ रु० के मूल्य की मोटर स्पिरिट का निर्यात हुआ। सब से अधिक स्पिरिट, २३,३६,८६८ रु० की आस्ट्रेलिया भेजी गयी।

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# बुद्ध भगवान का धर्मचक्र प्रवर्तन

डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी

आज से कोई ढाई हजार वर्ष पहले भगवान बुद्ध इस पवित्र भारत-भूमि में अवतरित हुए थे। उन का जन्म एक बड़े राजपरिवार में हुआ था, घर दास दासियों से भरा हुआ था, अन्न-वस्त्र और रत्न का भाण्डार था, परिजनों और पुरजनों का स्नेह भी उन्हें प्राप्त था। परन्तु उन्हें यह सब चीजें जंची नहीं। यह जो सुख और सम्पत्ति का आडम्बर है, वह क्या सचमुच मनुष्य को दुःखों और बन्धनों से मुक्त कर सकता है? कुमार सिद्धार्थ जो बाद में बोधि प्राप्त करने के बाद बुद्ध नाम से प्रथित हुए बहुत ही भावुक और चिन्तन-शील बालक थे। उन्होंने अपने इर्द-गिर्द विचरण करने वाले मनुष्यों और घटनाओं को सावधानी से देखा, और समझने का प्रयत्न किया। उन के मन में बारबार यह प्रश्न उठते रहे कि जरा से मरण से, व्याधि से क्या मनुष्य सचमुच छूट सकता है? ये जो दुनियां के धन्धे हैं, टीमटाम है, धन दौलत है दास दासियां हैं, सम्पत्ति के विशाल ठाठ हैं, वे क्या मनुष्य को जरा से, मरण से और व्याधियों से छुटकारा दिला सकते हैं? स्पष्ट उत्तर मिलता था, नहीं।

## सिद्धार्थ ने प्रव्रज्या ली

उन्होंने सब कुछ छोड़ कर प्रव्रज्या ग्रहण की। उन दिनों तपस्या में लोगों का बड़ा विश्वास था। कृच्छ्र तपस्वी लोगों के बड़े-बड़े सम्प्रदाय थे, शीत में, धूप में, कठिन से कठिन कष्ट पाकर, उपवास के द्वारा शरीर को सुखा कर और स्वेच्छा से स्वीकार किए गए अनेक कायक्लेश-जनक या पीड़ादायक साधनाओं को अङ्गीकार कर के परलोक में सुख पाने या मुक्ति पाने की अभिलाषा से लोग बुरी तरह ग्रस्त थे। प्रव्रज्या ग्रहण करने के बाद सिद्धार्थ ने इस कृच्छ्र तप का भी अनुभव प्राप्त किया। गया के पास उस बेला तीर्थ में वह वर्षों घोर तप में लीन रहे। उन्होंने यह अनुभव किया, कि जिस प्रकार अनेक भोगों के भोगने से जरा, मरण और व्याधि से छुटकारा नहीं मिलता, उसी प्रकार यह कृच्छ्र तप वाला मार्ग भी छुटकारे का साधन नहीं है। ये दोनों ही चरम सीमाएं हैं, वास्तविक मुक्ति का मार्ग कहीं इन दोनों के बीच में है। यह सोच कर उन्होंने कृच्छ्र तप का मार्ग छोड़ दिया, जिस के फलस्वरूप उनके प्रति श्रद्धापरायण पांच परि-व्राजक साथी, जिन्हें पंचवर्गीय भिक्षु कहा जाता है उन से रुष्ट हो गये। उन लोगों ने आपस में कहा कि छः वर्ष तक दुष्कर तपस्या करने भी यह बुद्ध नहीं हो सका, तो अब गांव-गांव भीख मांग कर और मोटा आहार कर के यह कैसे बुद्ध हो सकेगा। यह लोभी है, तपस्या के मार्ग से भ्रष्ट है। ऐसे मनुष्य से किसी बड़े तत्व के पाने की आशा करना उसी प्रकार व्यर्थ है, जैसे स्नान के इच्छुक व्यक्ति का ओस की बूंद की ओर ताकना। इस प्रकार सोच कर वे लोग बुद्ध को छोड़ कर वाराणसी के समीप इसिपतन तीर्थ (सारनाथ) की ओर चले गए।

परन्तु बुद्धदेव ने कृच्छ्र तप की व्यर्थता समझ ली। बौद्ध शास्त्रों में बताया गया है, कि सुजाता की पवित्र खीर को उन्होंने प्रसन्नता पूर्वक ग्रहण किया, वही उन के बुद्ध होने के बाद वाले, बोधि मेंड में वास कर के सात सप्ताह के उनचास दिनों के लिये आहार हुआ। इतने काल तक न स्नान किया, न आहार किया और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

न मुंह धोया। जिस बोधि वृक्ष के नीचे वे तप कर रहे थे, उस की ओर पीठ कर के दृढ़ चित्त हो उन्होंने प्रतिज्ञा की कि चाहे मेरा चमड़ा, नसें और हड्डी ही क्यों न बाकी रह जायं चाहे शरीर, मांस और रक्त तक क्यों न सूख जाय, सम्यक् संबोधि या परम-ज्ञान प्राप्त किए बिना मैं इस आसन को नहीं छोड़ूंगा वे पूर्वाभिमुख हो अपराजित आसन में, जिस के बारे में कहा जाता है कि सौ-सौ बिजलियों की कड़क से यह आसन छूटता नहीं, आसीन हुए।

## बोधि प्राप्ति

बुद्धदेव को बुद्धत्व प्राप्त हुआ। उन की प्रतिज्ञा सफल हुई। बोधि प्राप्त होने के बाद उन्होंने सोचा कि उन्हें जो ज्ञान प्राप्त हुआ है उसे सुनने का सब से श्रेष्ठ पात्र कौन है? सब से पहले उन की दृष्टि महान पंडित आलार-कालाम की ओर गई, पर वे एक सप्ताह पहले ही मर चुके थे। उस के बाद उन की दृष्टि उद्दक रामपुत्र की ओर गई, जिन्हें वे चतुर, मेधावी और अल्पमलिनचेता समझते थे। लेकिन यह भी उसी रात को मर चुके थे। तब भगवान की दृष्टि उन पंचवर्गीय भिक्षुओं की ओर गई, जो उन्हें छोड़ कर वात्त-श्रद्ध हो कर वाराणसी के इसिपतन तीर्थ की ओर चले गए थे। उन्हीं का स्मरण कर के भगवान ने इसिपतन की ओर मुंह किया। उन का जन्म और बोधि लाभ दोनों ही बैशाखी पूर्णिमा को हुए थे। इसिपतन में पंचवर्गीय भिक्षुओं के पास पहुंचते-पहुंचते आषाढ़ का दिन आ गया और आषाढ़ी पूर्णिमा को, जो परम्परा से व्यास पूर्णिमा और गुरू पूर्णिमा के नाम से पूजित थी, उन्होंने धर्म-चक्र का प्रवर्तन किया।

## प्रथम उपदेश

बौद्ध शास्त्रों में लिखा है कि पंचवर्गी भिक्षुओं को संबोधित कर के कहा, कि भिक्षुओ, दो प्रकार की चरम सीमाएं या अतियां हैं। इन को प्रव्रजितों को नहीं सेवन करना चाहिए। ये दो क्या हैं? पहली अति तो वह है, जो हीन, पथभ्रांतों लोगों के योग्य अनार्य सेवित, अनर्थ युक्त काम वासनाओं में लिप्त होना है। दूसरी अति वह है जो दुःख पर अनार्य सेवित, अनर्थ से युक्त कामी क्लेश में लगता है। एक काम सुख की अति है दूसरी कृच्छ्र तप की। इन दोनों ही अतियों के चक्कर में न पड़ कर तथागत ने बीच का मार्ग मध्यमा—प्रतिपदा—खोज निकाला। कैसा है यह मध्यमार्ग। तीन गुण इस में मुख्य रूप से हैं। यह दृष्टिदाता है, ज्ञान दाता है और शान्तिदाता है। इस से परिपूर्ण ज्ञान और निर्वाण प्राप्त होता है। इसी का नाम आर्य अष्टांगिक मार्ग है। अष्टांगिक अर्थात् आठ अङ्गों वाला मार्ग। आठ अङ्ग से तात्पर्य है? पहली बात है कि दृष्टि ठीक होनी चाहिए, कर्म भी सम्यक् या समुचित होना चाहिए फिर प्रयत्न, स्मृति और समाधि ठीक होनी चाहिए। इन सब की सम्यक् सिद्धि होने से ही आर्य अष्टांगिक मार्ग सिद्ध होता है।

बुद्धत्व प्राप्ति के पूर्व ही कुमार सिद्धार्थ संसार के प्राणियों के कष्ट में व्याकुल हो उठे थे। उन का हृदय करुणा का अपार पारावार था। जरा, मरण और व्याधि से पीड़ित जन-समूह को देख कर उन का हृदय गल जाता था। जिस समय वे तपस्या में लीन हो परम सत्य को प्राप्त करने के लिए यतमान थे, उस समय भी उन के हृदय गम्भीरतम में करुणा व्याकुल हाहाकार उठ रहा था। पंचवर्गीय भिक्षुओं को संबोधन कर के जब उन्होंने प्रथम धर्म का चक्कर घुमाया, उस दिन सब से प्रमुख बात

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उनके चित्त में यही थी। उन्होंने कहा भिक्षुओ, दुःख आर्य सत्य है, जरा सा बुढ़ापा भी दुःख है, व्याधि (रोग) भी दुःख है। अप्रियों का संयोग भी दुःख है, प्रियजनों या प्रिय वस्तुओं का वियोग भी दुःख है। इच्छा करने पर किसी इच्छित वस्तु का न मिलना भी दुःख है। संक्षेप में समझो तो रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान ये पांचों उपादान स्कंध दुःख हैं। इस प्रकार पहली बात जो संसार में सत्य है, जिस के कारण प्राणि मात्र पीड़ित व्यथित है, वह दुःख है।

परन्तु यदि दुःख सत्य है तो इसका कुछ कारण भी होना चाहिए। संसार में यदि सर्व-प्रमुख सत्य दुःख ही है तो जीवों को निराश होकर छटपटाते रहने के सिवा कोई चारा नहीं है। परन्तु भगवान बुद्ध ने केवल दुःख की सच्चाई बताकर मौन नहीं ग्रहण किया। उन्होंने बताया कि दुःख अवश्य सत्य है परन्तु दुःख समुदये यह दुःख का कारण भी आर्य सत्य है। दुःख का निरोध भी आर्य सत्य है और दुःख निरोध गामिनी प्रतिपदा अर्थात दुःख का निरोध करने वाला मार्ग भी आर्य सत्य है। इस प्र । दुःख जरूर बहुत बड़ी सच्चाई है परन्तु उसके कारण उसका निरोध और दुःख निरोध तक पहुंचाने वाला मार्ग भी उतने ही सत्य हैं। बुद्धदेव ने अपने आचरण और उपदेशों से दुःख के निरोध का मार्ग बताया। उन्होंने दुःख के स्वरूप को, उसके कारणों को उसके निरोध के यथार्थ रूप को और उस निरोध तक पहुंचाने वाले साधन मार्ग को भी समझाया। दीर्घकाल तक वह इस मुक्तिमार्ग का उपदेश घूम-घूम कर देते रहे।

## प्रेम और मैत्री धर्म

बुद्धदेव ने जो मार्ग बताया वह अन्तिम विश्लेषण पर प्रेम मैत्री और तितिक्षा का धर्म है। मनुष्य जितनी दूर तक ऊपर उठ सकता है, यह कर्म उसे उतनी ऊंचाई पर ले जाता है। बुद्ध के व्यक्तित्व और उपदिष्ट मार्ग दोनों एक ऐसा अद्भुत आकर्षण था कि जो उनके संपर्क में आया वह उन्ही का हो रहा, उनके परिनिर्वाण के कुछ ही सौ वर्षों के भीतर यह प्रेम और मैत्री का धर्म तत्कालीन समस्त ज्ञात जगत में फैल गया। जिन बर्बर जातियों के मन में क्रूरता और प्रतिहिंसा के अतिरिक्त और कोई बड़ी बात उठ ही नहीं सकती थी वे भी इस प्रेम और मैत्री के धर्म के सामने मंत्रमुग्ध होकर नतशीश हुई। प्रेम और मैत्री का धर्म संसार में अद्भुत सफलता के साथ उद्घोषित हुआ। ढाई हजार वर्ष बाद आज फिर वैशाख का वही पवित्र मास आया है जिसने बुद्ध भगवान जैसे महाप्राण धर्म प्रवर्तक को जन्म दिया। आज भी संसार को इस प्रेम और मैत्री के धर्म की आवश्यकता बनी हुई है। भारतवर्ष के निवासी यदि गर्व करें कि आज से ढाई हजार वर्ष पहले हमारे देश में ऐसा महामानव पैदा हुआ था जिसमें प्रेम और मैत्री के धर्म को विश्व व्यापक बनाया तो उनका गर्व उचित ही है। धन्य है भारत भूमि, धन्य है यह प्रेम और मैत्री का पाठन मन्त्र। आज से ढाई हजार वर्ष पहले इसने सिद्ध कर है, मनुष्य को विधाता ने प्रेम और मैत्री का संदेश वाहक बनाया है। युद्ध मारकाट और क्रूर, हिंसा उसका स्वाभाविक धर्म नहीं है, वह प्रेम और मैत्री का उपासक है। यह धर्म भी धन्य है।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल समाचार

## ऋतु-रंग

इस साल ग्रीष्म ऋतु में मौसम तरह-तरह के रंग पलटती रही। उत्सव के पश्चात् एप्रिल महीने का उत्तरार्ध खूब तपता रहा। परन्तु मई के महीने में अद्भुत परिवर्तन आ गया। यदा तदा बदलियाँ छाने लगी। पुरवैया बहने लगी और कई बार धीमी बारिशें होती रही। परिणाम यह आया कि कुल का प्राकृतिक वातावरण सुहावना और शीतल हो गया। जून प्रारम्भ होने से पहले ही कई बारिशें पड़ चुकी और चहुँओर हरियाली छा गई है। सामान्यतया कुल में प्रतिवर्ष जुलाई के प्रथम सप्ताह में वर्षा का मंगलाचरण हुआ करता है। परन्तु इस साल मई के उत्तरार्ध से ही मौनसून क्रियाशील हो रहा है। पावस-दूत चातक (काला पपीहा) २४ मई से शिवालक की घाटी में आकर पावस के स्वागत के लिए बराबर चहक रहे हैं। उधर पर्वतों पर तो पर्याप्त वर्षा होने के समाचार आए हैं। गंगा का पानी खूब गदला हो गया है। अतर्कित पावस का आगमन निहार कर किसान भी अचरज में आ गए हैं। ६ जून को मध्य रात्रि में बड़े जोर की आँधी और वर्षा आई परिणामतया बड़े-बड़े पेड़ टूट गए हैं। वाटिकाओं के अनेक फलदार पेड़ भी जड़ से उखड़ कर बरबाद हो गए हैं। कुलवासियों का स्वास्थ्य अच्छा है।

## मान्य अतिथि

दिल्ली विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ० गणेश सखाराम महाजनी तथा इतिहास के उपाध्याय श्री डॉ० विश्वेश्वरप्रसाद जी परिवार सहित ५ से ७ जून तक कुल में आकर रहे। आप दोनों महानुभाव विशेष रूप से गुरुकुल का अवलोकन करने के लिए ही पधारे थे। आप ने समस्त गुरुकुल-नगरी का परिभ्रमण कर के कुल की कार्यशैली और प्रगति का अवलोकन किया और बड़ा हर्ष और परितोष प्रकट किया। श्रीयुत महाजनी जी ने महाविद्यालय की शिक्षा व्यवस्था के विषय में कई कीमती परामर्श प्रदान किए। डाक्टर विश्वेश्वप्रसाद जी ने भी इतिहास शास्त्र के अध्ययन के विषय में सुन्दर सुझाव दिए। गुरुकुल के शांत-पावन और आकर्षक वातावरण का अनुभव कर के आपने तो यहां तक कहा—मैं तो यहाँ रम जाना चाहता हूं। दोनों ही मान्य मेहमानों के प्रीतिपूर्ण सान्निध्य से कुल के कार्यवाहक भी विशेष आह्लाद, आमोद और परितोष अनुभव करते रहे।

काशी के प्रतिष्ठित रईस और ललितकलाविज्ञ डाक्टर राय गोविन्दचन्द्र जी सपरिवार कुल में पधारे। आपने संग्रहालय में काँगड़ा-शैली के चित्रों का तथा अन्य पुरातत्व की वस्तुओं का बारीकी से अवलोकन कर बड़ी प्रसन्नता अनुभव की। वनस्पति-वाटिका को भी आपने बड़ी दिलचस्पी के साथ देखा।

## विशेष व्याख्यान

२६ मई को माननीय श्री चन्द्रभानु जी गुप्त (आरोग्य-मन्त्री, उत्तर प्रदेश) कुल में पधारे। वेद मंदिर में आप के सन्मान में कुलवासियों की एक सभा समवेत हुई। आपने सभा में कृषि विद्यालय और ग्राम सेवक विद्यालय के छात्रों को विशेष रूप से सम्बोधित करते हुए एक उद्बोधनात्मक भाषण दिया। आपने बताया कि आप यहां पर देहातों की सेवा करने के लिए तालीम प्राप्त कर रहे हैं। सो उस के लिए आपको ग्रामों की आर्थिक, सामाजिक और चारित्रिक समस्याओं का ठीक-ठीक अध्ययन करना चाहिए। उन के जीवन-स्तर को ऊंचा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उठाने के लिए आपको बहुत प्रयास करना पड़ेगा। उस के लिए बड़े धैर्य और नैष्ठिकपने से काम करना होगा। पंचवर्षीय योजना के विषय में भी आपने बहुत सी उपयोगी बातें समझाई।

### अतिथि गण

बाहर भी सर्वत्र ग्रीष्मावकाश होने से इन दिनों गुरुकुल में आने वाले दर्शकों की संख्या विशेष रहती है। बद्री केदार की तीर्थ यात्रा करने वाले भी अनेक प्रेक्षक गुरुकुल में आते हैं। पिछले दिनों पधारने वाले कुछ एक मान्य अतिथि इस प्रकार हैं—

प्राध्यापक भारतभूषण सरोज, दिल्ली विश्वविद्यालय। श्री रामदयाल जोशी, वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के संचालक। श्री विद्याशंकर शर्मा आगरा, गुलदस्ता के पूर्व सम्पादक। प्रो० विश्वनाथप्रसाद जी राजनीति विज्ञान के प्राध्यापक, पटना विश्वविद्यालय। ट्रेनिंग कालेज अमृतसर के आचार्य श्री हरनामसिंह जी तथा छात्रगण।

### नवीन छात्रावास

आयुर्वेद महाविद्यालय से लगी हुई अमराई के सामने नवीन छात्रावास की नींव भराई के शुभप्रसंग पर कुलवासियों ने मिलकर बृहद्यज्ञ किया। यज्ञ के अनन्तर कुलपति श्रीयुत इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने कहा—इस नए छात्रावास का प्रारम्भ हम श्रमदान से करते हैं। गुरुजनों और छात्रों के श्रमदान के पीछे यही भावना है कि हम श्रद्धापूर्वक इस कार्य में अपना योग दे रहे हैं।

इस के बाद सबसे पहले कुलपति जी ने कंकरीट और मसाले की टोकरी नींव भराई के लिए खाई में डाली और बाद को अन्य गुरुजनों ने भी वारी-वारी से अपने हाथों से टोकरियां उठाकर खाई को भरना प्रारम्भ किया। इस शुभ अवसर पर कुलवासियों में मिष्टान्न भी बांटा गया।

### शोक वृत्त

बड़े दुःख की बात है कि गत २७ मई रविवार को गुरुकुल के आयुर्वेद महाविद्यालय के उपाध्याय श्री वैद्य निरंजनदेव जी आयुर्वेदालंकार के उगती जवानी के २३ वर्ष के ज्येष्ठ पुत्र संतोषकुमार का नहर में तैरते हुए अकस्मात् ही डूब कर अवसान हो गया। इस दुर्घटना से कुल में एकदम शोक और उदासी छा गई। समस्त कुलवासी श्री वैद्य जी के प्रति हार्दिक समवेदना और सहानुभूति प्रकट हुए वियुक्त आत्मा की शांति और सुगति के लिए प्रार्थना करते हैं। ★

---

## वेद का राष्ट्रिय गीत

ले० श्री प्रियव्रत वेदवाचस्पति, आचार्य गुरुकुल कांगड़ी, पृष्ठ संख्या २५० । मूल्य ५)

अथर्ववेदान्तर्गत भूमिसूक्त ( अथर्व० १२।१ ) की यह राष्ट्रीय भावनापूर्ण सुन्दर-सरल सुबोध व्याख्या है। यह पुस्तक भारतीय कालेजों में वेद विषय के पाठ्यक्रम में रखने के योग्य है। इस से छात्रों को वेद की उदात्त भावनाओं का परिचय मिलेगा। ऐसी व्याख्यायें निस्सन्देह गौरव को बढ़ाने वाली हैं। शिक्षा विभाग को ऐसे उत्तम ग्रन्थों को प्रोत्साहन देना चाहिये। ग्रन्थ उपादेय तथा पठनीय है। वेद प्रेमी सज्जनों को इसे अवश्य पढ़ना चाहिये।

प्राप्तिस्थान—प्रकाशन विभाग, गुरुकुल काँगड़ी, हरिद्वार।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# स्वाध्याय के लिए चुनी हुई पुस्तकें

**वैदिक साहित्य**

| | | |
|---|---|---|
| ईशोपनिषद्भाष्य | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | २) |
| वेद का राष्ट्रिय गीत | श्री प्रियव्रत | ५) |
| वेदोद्यान के चुने हुए फूल | श्री प्रियव्रत | ५) |
| वरुण की नौका, २ भाग | श्री प्रियव्रत | ६) |
| वैदिक विनय, ३ भाग | श्री अभय | २), २), २) |
| वैदिक वीर-गर्जना | श्री रामनाथ | ॥=) |
| वैदिक-सूक्तियां | ,, | १॥) |
| आत्म-समर्पण | श्री भगवद्दत्त | १।) |
| वैदिक स्वप्न-विज्ञान | ,, | २) |
| वैदिक अध्यात्म-विद्या | ,, | १।) |
| वैदिक ब्रह्मचर्य गीत | श्री अभय | २) |
| ब्राह्मण की गौ | श्री अभय | ॥) |
| वेदगीताञ्जलि ( वैदिक गीतियां ) | श्री वेदव्रत | २) |
| साम-सरोवर, सजिल्द, अजिल्द | श्री चमूपति | २), १।) |
| वैदिक-कर्त्तव्य-शास्त्र | श्री धर्मदेव | १।) |
| अग्निहोत्र | श्री देवराज | २।) |

**संस्कृत ग्रन्थ**

| | |
|---|---|
| संस्कृत-प्रवेशिका, १, २, भाग | ।।), ॥=) |
| साहित्य-सुधा-संग्रह, १, २, ३ बिन्दु | १।), १।), १।) |
| पाणिनीयाष्टकम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध | ७), ७) |
| पञ्चतन्त्र ( सटीक ) पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध | २), २।) |
| सरल शब्दरूपावली | ।=) |

**ऐतिहासिक तथा जीवनी**

| | | |
|---|---|---|
| भारतवर्ष का इतिहास ३ भाग | श्री रामदेव | ६) |
| बृहत्तर भारत (सचित्र) सजिल्द, अजिल्द | | ७), ६) |
| ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार, २ भाग | | ॥) |
| अपने देश की कथा | श्री सत्यकेतु | १।=) |
| हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के अनुभव | | ॥) |
| योगेश्वर कृष्ण | श्री चमूपति | ४) |
| सम्राट् रघु | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | १।) |
| जीवन की झांकियां ३ भाग | ,, | ॥) ॥). १) |
| जवाहरलाल नेहरू | ,, | १।) |
| ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित्र | ,, | २) |
| दिल्ली के वे स्मरणीय २० दिन | ,, | ॥) |

**धार्मिक तथा दार्शनिक**

| | | |
|---|---|---|
| सन्ध्या-सुमन | श्री नित्यानन्द | १॥) |
| स्वामी श्रद्धानन्द जी के उपदेश. तीन भाग | | ३॥) |
| आत्म-मीमांसा | श्री नन्दलाल | २) |
| वैदिक पशुयज्ञ-मीमांसा | श्री विश्वनाथ | १) |
| अथर्ववेदीय मन्त्र-विद्या | श्री प्रियरत्न | १।) |
| सन्ध्या-रहस्य | श्री विश्वनाथ | २) |
| जीवन-संग्राम | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | १) |

**स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें**

| | | |
|---|---|---|
| आहार (भोजन की जानकारी ) | श्री रामरक्ष | ५) |
| आसव-अरिष्ट | श्री सत्यदेव | २॥) |
| लहसुन:प्याज़ | श्री रामेश वेदी | २॥) |
| शहद ( शहद की पूर्ण जानकारी ) | ,, | ३) |
| तुलसी, दूसरा परिवर्द्धित संस्करण | ,, | २) |
| सोंठ, तीसरा ,, | ,, | १॥) |
| देहाती इलाज, तीसरा संस्करण | ,, | १) |
| मिर्च ( काली, सफेद और लाल ) | ,, | १) |
| सांपों की दुनियां, (सचित्र) सजिल्द | ,, | ५) |
| त्रिफला, तीसरा संवर्द्धित संस्करण | ,, | ३।) |
| नीम:बकायन (अनेक रोगों में उपयोग) | ,, | १) |
| पेठा : कद्दू (गुण व विस्तृत उपयोग) | ,. | ॥) |
| देहात की दवाएं, सचित्र ॥) | बरगद | ॥) |
| स्तूप निर्माण कला | श्री नारायण राव | ३) |
| प्रमेह, श्वास, अर्शरोग | | १।) |
| जल चिकित्सा | श्री देवराज | १॥) |

**विविध पुस्तकें**

| | | |
|---|---|---|
| विज्ञान प्रवेशिका, २ भाग | श्री यज्ञदत्त | १) |
| गुणात्मक विश्लेषण ( बी. एस. सी. के लिए ) | | १) |
| भाषा-प्रवेशिका ( वर्धायोजनानुसार ) | | ॥।) |
| आर्यभाषा पाठावली | श्री भवानी प्रसाद | १॥) |
| आत्म बलिदान | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | २) |
| स्वतन्त्र भारत की रूप रेखा | ,, | १॥) |
| जमींदार | ,, | २) |
| सरला की भाभी, १, २ भाग | ,, | २), ३॥) |

प्रकाशन मन्दिर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# ग्रीष्म ऋतु के उपहार

## भीमसेनी सुरमा

आंखों के लिये इस से बढ़ कर कोई दूसरा सुरमा नहीं है। यह आँखों के सब रोगों को लाभ पहुँचाता है। बच्चे व बूढ़े सब इस का प्रयोग कर सकते हैं। मूल्य नमूना ।।=) शीशी

## ब्राह्मी बूटी

बुद्धि को बढ़ाने व मस्तिष्क की कमजोरी दूर करने में इस से बढ़ कर दूसरी बूटी नहीं है। हमारे यहां हर समय ताजी रहती है।

मूल्य ३) सेर

## ब्राह्मी तेल

यह तेल शुद्ध ब्राह्मी के द्वारा बनाया जाता है। दिमाग़ को ठण्डक व तरावट देकर ताज़गी लाता है। दिमाग़ की कमज़ोरी वाले रोगियों को यह तेल विशेष हितकर है।

मूल्य १।=) आध पाव

## भीमसेनी नेत्रबिन्दु

यह औषधि दुखती आँखों के लिये अकसीर है। कुकरे, दर्द व लाली इस से दूर होते हैं।

मूल्य १) शीशी

## ब्राह्मी शर्बत

ब्राह्मी तेल की तरह यह शर्बत भी इस मौसम में सेवन करने योग्य उत्तम चीज़ है। प्रातःकाल एक गिलास शर्बत तमाम दिन ताज़गी रखेगा। मूल्य ३) बोतल १।।-) शीशी

## आमला तेल

यह तेल बढ़िया आमले से तैयार किया जाता है। इस से बालों का गिरना, अकाल में पकना तथा गञ्ज आदि रोग दूर होते हैं। बालों को रेशम की तरह मुलायम कर काला करता है। मूल्य १।) छोटी शीशी

## पायोकिल

पायोरिया रोग की परीक्षित औषधि है। इस के प्रयोग से दांतों से खून व पीप आना रुक जाता है तथा दांत चमकीले और दृढ़ हो जाते हैं। दैनिक प्रयोग के लिये भी उत्तम है।

मूल्य १।।) छोटी शीशी

## बाल शर्बत

बच्चों के हरे पीले दस्त, कब्ज, उल्टी, खांसी तथा ज्वर आने पर विशेष गुणकारी है।

मूल्य १।) बड़ी शीशी ।=) छोटी शीशी

## गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार।


मुद्रक : श्री रामेश बेदी, गुरुकुल मुद्रणालय, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

प्रकाशक : मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



बुद्ध की एक प्राचीन मूर्ति (गुरुकुल संग्रहालय में सुरक्षित)

DIGITIZED C-DAC
2005-2006

# गुरुकुल-पत्रिका

वर्ष ८ वैशाख २०१३ अङ्क ९

गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

## गुरुकुल-पत्रिका

पूर्णाङ्क ९३

अप्रैल १९५६



व्यवस्थापक : श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

सम्पादक समिति : श्री सुखदेव दर्शनवाचस्पति

श्री शङ्करदेव विद्यालङ्कार

श्री रामेश बेदी ( मन्त्री )


### इस अङ्क में



### अगले अङ्क में

| | |
|---|---|
| एक नया अनुभव | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति |
| वेद में स्त्रियों का विवाहित जीवन | श्री प्रियव्रत वेदवाचस्पति |
| कला और अन्तर्दर्शन | श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती |

**अन्य अनेक विश्रुत लेखकों की सांस्कृतिक, साहित्यिक व स्वास्थ्य सम्बन्धी रचनाएं।**


**मूल्य देश में ४) वार्षिक**
**विदेश में ६) वार्षिक**

**एक प्रति**
**छः आने**


CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ


# गुरुकुल-पत्रिका

[ गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय की मासिक पत्रिका ]


मेरे पिता : संस्मरण—१४

## १९२४ का एकता सम्मेलन

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति

जैसे १९१९ के प्रारम्भ में भारत की राष्ट्रीयता और एकता के सुनहरे अनुभव की प्रारम्भिक स्मृतियाँ मेरे स्मृति पट पर अंकित हो गयी थीं, उसी प्रकार १९२४ के पहले साम्प्रदायिक दंगे की काली और कड़वी स्मृतियाँ भी अंकित हुए बिना न रहीं। वे दिन जब याद आते हैं, तो दिल कांप उठता है। यदि रौलटऐक्ट के आन्दोलन ने दिल्ली के अन्तरिक्ष में सुप्रभात का रूप बांध दिया था, तो कहना पड़ेगा कि १९२४ के फिसाद ने भयावनी रात्रि का दृश्य दिखला दिया। सुप्रभात के पीछे इतनी शीघ्र रात्रि आ जायगी यह आशंका किसी को नहीं थी।

दंगा अकस्मात् नहीं हुआ। उस की तैयारी और समय तक का निश्चय प्रत्यक्ष में हुआ। स्थानीय सरकार को उस उद्योगपर्व का एक-एक सर्ग मालूम था। एक ओर जाटों के इलाके पहाड़ी धीरज पर से कुर्बानी की गाय को धूमधाम से ले जाने की तैयारी हो रही थीं, और दूसरी ओर उस रास्ते को रोकने की योजना खुले तौर पर बनाई जा रही थी। सारा शहर जानता था, और स्थानीय सरकार भी जानती थी। सरकार ने उन योजनाओं को नहीं रोका—और ईद के मौके पर फिसाद हो गया।

फिसाद भी दिन दहाड़े अधिकारियों की नाक के नीचे हुआ। दिन के दो बजे होंगे। हजारों आदमियों की भीड़ के साथ कुर्बानी की गाय का जुलूस पहाड़ी धीरज पर से निकाला जा रहा था। उस के साथ पुलिस की गारद थी। जब वह जुलूस एक विशेष स्थान पर पहुँचा तब पहले से आशंकित दंगे पर हिन्दू मुसलमानों में मार काट और छीना झपटी शुरू हो गयी, लाठी चली, पत्थर चले और छुरे भी चले। कुर्बानी का जुलूस छिन्न-भिन्न हो गया और फिसादी लोग आसपास की गलियों में बिखर गये। वहां फिसाद ने बड़ा गन्दा और बीभत्स रूप धारण किया। बूढ़े, बच्चे और स्त्रियां किसी का भी लिहाज नहीं किया गया। मुसलमानों की भीड़ ने घरों में घुस कर हिन्दुओं को आहत किया और हत्याएँ भी कीं। घण्टाघर पर सिपाहियों की गोलियों से बहाये गये रुधिर ने जिस एकता की वाटिका को हरा-भरा किया था, उस दिन छुरों और लाठियों द्वारा बहाये गये रक्त ने तेजाब बन कर उसे जला दिया। १९२४ के सायंकाल स्थान-स्थान पर एकता और परस्पर प्रेम के खण्डहरों को शहर में जगह-जगह बिखरा हुआ देख कर ऐसा अनुभव होता कि १९१९ का जागरण मानों एक सपना था, जिसे शत्रु ने झटका देकर तोड़ दिया।

दिल्ली भारत का हृदय है, कलकत्ता और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बम्बई आकार में बड़े हैं उस में ऐश्वर्य और शिक्षा की बहुतायत है—यह सब कुछ होते हुए भी यह मानना पड़ेगा कि दिल्ली देश की अनुभव-शक्ति का केन्द्र है। उस के हर्ष और शोक का असर देश पर तुरन्त और व्यापी होता है। जब दिल्ली से एकता का झोंका उठा तब देश भर में सुखकारी पवन बहने लगा और जब दिल्ली में साम्प्रदायिक झगड़े का उत्पात मचा तो भारत पर प्रकाशित हो उठा। फलतः उठते हुए बवंडर को रोकने के लिए सितम्बर मास में देश के प्रतिनिधियों की एक बृहद् कान्फ्रेन्स बुलाई गई। जिस में सम्मिलित होने के लिए महात्मा गाँधी, पं० मदनमोहन मालवीय, मौलाना अब्दुल कलाम आज़ाद, मौलाना मुहम्मद अली जिन्ना आदि सार्वदेशिक हिन्दू मुसलमान नेता एकत्र हुए।

## सिंहावलोकन

महात्माजी साम्प्रदायिक दंगे के भयानक समाचारों को सुन कर दिल्ली आये, और सब्ज़ीमण्डी में मेसर्स नन्हेमल जानकीदास की कोठी में ठहरे। वहाँ उन्होंने २२ दिन का स्मरणीय उपवास किया। उस उपवास और उस के साथ हुए एकता सम्मेलन की स्मृतियों को स्पष्ट रूप से अङ्कित करने के लिए कुछ थोड़े से सिंहावलोकन की आवश्यकता है। पूरा चित्र समझने में पाठकों को उस से सहायता मिलेगी।

१९२२ के दिसम्बर मास के गुरु के बाग वाले मोर्चे के सम्बन्ध में अकाली सत्याग्रहियों को आशीर्वाद देने के लिए पिता जी अमृतसर गये। वहाँ, अकालतख्त के समीप हुई सार्वजनिक सभा में दिये व्याख्यान पर पञ्जाब की सरकार ने आपको गिरफ्तार कर लिया, वस्तुतः यह गिरफ्तारी पञ्जाब सरकार के दिमाग में दो साल से घूम रही थी। अमृतसर कांग्रेस के समय से ही ओडवायर के सलाहकार 'स्वामी' के विरुद्ध दांत पीस रहे थे। अवसर पाकर पंजाब सरकार ने पिता जी को १९१९ में अमृतसर में कांग्रेस करने के अपराध की सजा १९२२ में एक वर्ष कारागार के रूप में दे डाली।

१९२२ के अन्त में पिता जी जेल से मुक्त हो कर बाहर आ गये। जेल में संपूर्ण परिस्थिति पर शान्त विचार करने से आप जिस परिणाम पर पहुंचे उसे आप ने अपने संस्मरणों में निम्नलिखित भाषा में लिखा है—'मुझे निश्चय हुआ है कि अभी चरित्रगठन में बड़ी कमी है। कम से कम मैं तो ऐसे सांचे में ढला हूं कि कई अंशों में स्वयं सदाचार की कमी अपने अन्दर अनुभव करते हुए भी चरित्रहीन पुरुषों के साथ काम नहीं कर सकता। कांग्रेस, हिन्दू महा सभा, खिलाफत और अन्य अखिल भारत वर्षीय संस्थाओं को चलाने के लिए बड़े-बड़े व्यक्ति विद्यमान हैं, मुझ जैसे अल्प शक्ति वाले मनुष्य के लिए यही बड़ा काम है कि ब्रह्मचर्य के उद्धार और दलित जातियों के उत्थान का मार्ग जो अपने को सूझा है, उस का सन्देश आर्य जाति के आगे रखने का यत्न करूं।'

जेल से बाहिर आ कर अपने इसी संकल्प की पूर्ति में पिता जी ने काँग्रेस की वर्किंग कमेटी में इस आशय का प्रस्ताव भेजा कि कांग्रेस दलित भाइयों की मांगों को पूर्ण करने का तुरन्त यत्न करे। कांग्रेस कमेटी शाब्दिक रूप से दलितोद्धार के कार्य से सहानुभूति प्रकट करती हुई भी उस समय क्रियात्मक रूप से कुछ करने को तैयार नहीं थी। यह अनुभव कर के पिता जी ने १९२३ के जुलाई मास में कांग्रेस के प्रधान मंत्री पं० मोतीलाल जी नेहरू को कांग्रेस से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपना त्यागपत्र भेज दिया। पं० मोतीलाल जी नहीं चाहते थे कि पिताजी कांग्रेस से अलग हों, परन्तु आपके कई बार आग्रहपूर्ण पत्र लिखने पर कमेटी ने त्यागपत्र स्वीकार कर लिया।

इन्हीं दिनों आगरा जिले में मलकानों की शुद्धि का आन्दोलन जारी हो रहा था। आर्य समाज के प्रमुख नेता की हैसियत से आपकी भी उसमें सहानुभूति थी। शुद्धि कार्य के लिये जो शुद्धि सभा बनी, आप उस के प्रधान चुने गये।

जो मुसलमान मौलवी हिन्दुओं तथा अन्य धर्मावलम्बियों में इस्लाम की तबलीग करना अपना मजहबी फर्ज समझते थे, वह शुद्धि कार्य, शुद्धि सभा, और उसके साथ सम्बन्ध होने के कारण पिताजी से भी सख्त नाराज़ होगये, और मुसलमान पत्रों ने उनके विरुद्ध विषैला आन्दोलन आरम्भ कर दिया। मोपलाओं और मुल्तान के दंगों के कारण देश का साम्प्रदायिक वातावरण बिगड़ ही रहा था, उस बिगाड़ की जिम्मेदारी शुद्धि आंदोलन और पिताजी के सिर मढ़ कर मौलाना मुहम्मदअली जैसे राष्ट्रवादी कहलाने वाले मुसलमान भी शुद्धि कार्य को स्थगित कराने के प्रस्ताव उपस्थित करने लगे।

देश में बढ़ते हुए साम्प्रदायिक विक्षोभ को शांत करने के लिये १९२३ के दिसम्बर मास में कांग्रेस के विशेषाधिवेशन के साथ दिल्ली में एकता सम्मेलन का अधिवेशन भी किया गया था। उस सम्मेलन में जब पिताजी पर यह जोर डाला गया कि वह मलकानों की शुद्धि के कार्य को बन्द करादें तो आप ने अत्यन्त न्यायपूर्ण उत्तर दिया था कि "यदि मुसलमानों के सब प्रचारक वहां से लौट आयेंगे तो, मैं भी शुद्धि सभा को अपने कार्यकर्ताओं को आगरे से लौटा लेने के लिये सलाह दूंगा, और यदि सभा ने मेरा निवेदन न माना तो उक्त सभा के पद से अलग हो जाऊंगा।" मौलाना मुहम्मदअली ने उल्लेमाओं के पैरों में अपनी टोपी रखकर प्रार्थना की कि वे अपने प्रचारकों को वापिस बुलालें। परन्तु वे नहीं माने और शान्ति सभा बिना किसी परिणाम पर पहुंचे ही भंग हो गई थी।

१९२४ में बकरीद पर दिल्ली में वह दंगा हो गया, जिसका चर्चा मैं इस लेख के आरम्भ में कर आया हूँ। उस दंगे के समाचारों ने देश के राष्ट्रीय नेताओं को उद्विग्न कर दिया, जिसका परिणाम वह एकता सम्मेलन था, जिस पर महात्मा जी ने अपना प्रसिद्ध २१ दिनों का उपवास किया था।

## महात्मा जी का एकता सम्बन्धी लेख

यहाँ प्रसंगवश मैं महात्मा जी के हिन्दू-मुस्लिम एकता सम्बन्धी लेख की चर्चा भी कर देना चाहता हूं, जो यंगइंडिया में प्रकाशित हुआ था। उसमें महात्मा जी ने हिन्दू-मुस्लिम विरोध के कारणों पर विचार करते हुये जिस शैली का अनुसरण किया था, उससे सम्भव है, मुस्लिम संसार पर उनकी उदारता का सिक्का जमा हो, परन्तु भारत की राजनीति और सामाजिक दशा पर उसका बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ा। उस लेख में महात्मा जी ने कुरान और इस्लाम की खूब प्रशंसा की, और सत्यार्थप्रकाश और उसके मानने वालों के लिए बहुत तिरस्कार सूचक शब्दों का प्रयोग किया। पिताजी (स्वामी श्रद्धानन्द जी) पर तो उस लेख में विशेष कृपा की गई थी, यह मेरा ही नहीं, प्रायः सभी हिन्दू हृदय रखने वाले भारतवासियों का मत था, कि महात्मा जी ने उस लेख में स्वामी जी के सम्बन्ध में जो पक्षपातपूर्ण आलोचना की थी, उसने देश के साम्प्रदायिक वातावरण में बहुत ही विषैला धुआं फैला दिया। मैंने "वीर अर्जुन" में महात्मा जी के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उस लेख के विरुद्ध एक आवेशपूर्ण लेखमाला लिखी थी। उस लेखमाला को मैं अब पढ़ता हूँ तो महात्मा जी के लेख ने हिन्दुओं के हृदयों में सामान्यतः, और आर्य-समाजियों के हृदयों में विशेषतः जो घोर प्रतिक्रिया पैदा की थी, उस का कुछ अनुमान लगा सकता

मेरा विचार है कि महात्मा जी ने भी अपना लेख प्रकाशित हो जाने के पश्चात् यह अनुभव किया था कि वे उस लेख में आर्यसमाज और स्वामी जी के साथ अन्याय कर गये हैं। यंग इण्डिया में कई सम्पादकीय लेख लिख कर उन्होंने अपने प्रारम्भिक लेख के असर को धोने की चेष्टा की परन्तु जो जहर फैल चुका था, वह दूर न हो सका। उस लेख के दो बुरे परिणाम हुए। एक तो यह कि देश के बिगड़े हुए वातावरण की मुख्य जिम्मेदारी मुख्य रूप से आर्यसमाज और स्वामी जी पर डाली गई। जो सत्य के सर्वथा विरुद्ध थी और दूसरा यह कि साम्प्रदायिक मुसलमानों को यह विश्वास हो गया कि महात्मा गान्धी हम से डरते हैं हम चाहें, कुछ करें वे हमें अच्छा और दूसरों को बुरा कहेंगे।

आगामी १० वर्षों में भारत की राजनीति में जो अव्यवस्था आ गई, उस का मुख्य कारण वह दूषित मनोवृत्ति थी, जो यंग इण्डिया के एकता सम्बन्धी लेख से पैदा हुई।

—

# सऊदी अरब

सऊदी अरब का क्षेत्रफल लगभग १० लाख वर्ग मील है। इस के उत्तर में ईराक और और सीरिया, दक्षिण में यमन, हर्मुत और ओमन, पूर्व में फारस की खाड़ी और पश्चिम में लाल सागर है। इस की आबादी लगभग ७० लाख है और राजधानी मक्का है। अन्य प्रसिद्ध शहर रियाध, मदीना, जद्दा और हूफत हैं।

सऊदी अरब में गेहूँ, जौ, दालें, ज्वार-बाजरा, मक्का और धान पैदा होता है। मदीना में अच्छी किस्म के छुआरे बहुत पैदा होते हैं। अंगूर, अंजीर और तरबूज आदि फल भी पैदा होते हैं। पैदावार बढ़ाने में सहायता देने के लिये कई विदेशी विशेषज्ञ कृषि मन्त्रालय की देख-रेख में काम कर रहे हैं।

देश के राजस्व के मुख्य साधन यहां के तेल-क्षेत्र हैं, जो फारस की खाड़ी के तट पर स्थित हैं। १९५४ में प्रतिदिन ९,५३,००० बैरल तेल निकाला गया। तेल का मुख्य क्षेत्र आबकैक में है। अन्य क्षेत्र आइन दार और दमाम में हैं। १९५४ में इन तेल-क्षेत्रों में लगभग २२,००० व्यक्ति काम करते थे, जिन में भारत, सूदान, इटली, अदन, पाकिस्तान, अमेरिका और फिलिस्तीन आदि के निवासी भी थे। सऊदी अरब के तेल-स्रोत संसार में प्रसिद्ध हैं और प्रत्येक तेल-कूप से काफी तेल निकलता है।

सऊदी अरब का व्यापारिक सम्बन्ध संसार के कई देशों से है। यह भारत से चावल, आटा, दाल, चीनी, चाय, कहवा, सूखे फल, मसाले, सिले हुए कपड़े, सजावट का सामान, इमारती लकड़ी, रेशम का माल आदि मंगाता है। भारत से मंगाये जाने वाले माल का वार्षिक मूल्य लगभग ४,४०,१६,०५५ सऊदी रियाल है (एक रियाल लगभग १॥ रु० के बराबर होता है)। और भारत को भेजे जाने वाले माल का वार्षिक मूल्य लगभग १२,००० सऊदी रियाल है।

—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# शिक्षा—भगवान् के साक्षात्कार का एक साधन

श्री अनन्तशयनम् आयंगर, अध्यक्ष, लोकसभा

गुरुकुल विश्वविद्यालय के सदस्यो, सन्नारियो और भद्रजनो,

गुरुकुल विश्वविद्यालय के दीक्षान्त-प्रवचन के लिए निमन्त्रित कर के, मुझे आप ने जो सन्मान और गौरव प्रदान किया है उस के लिए मैं आप का अतिशय अनुगृहीत हूँ।

मेरे सन्मुख असीम शांति के साथ यह उत्तुंग हिमाचल खड़ा हुआ दिखाई दे रहा है। सृष्टि के उषाकाल से पतितपावनी भगवती भागीरथी के ये पुण्यजल शांत भाव से गिरिमालाओं से नीचे उतर रहे हैं। इस अतिशय मनभावने वातावरण को देखते ही मुझे एकाएक भारत के अतीत गौरव के दिन स्मरण हो आते हैं।

वह युग था जब कि ऋषि-मुनिगण शिक्षा के प्रसार के लिए आश्रम स्थापित किया करते थे और अपने अन्तेवासियों ( छात्रों ) को विद्या और ज्ञान के मूलभूत तत्वों की शिक्षा दिया करते थे। अपने इस प्रिय ध्येय के लिए वे अनासक्ति और समर्पण का जीवन व्यतीत करते थे। वे आचार्यजन अपने ब्रह्मचारियों के निकट-सानिध्य में रहते थे। वे उन को ज्ञान और विज्ञान की शिक्षा देते थे। आर्यावर्त्त की इस शिक्षा-विधि के गौरव का वर्णन करने से पूर्व मैं इस विद्या-निकेतन के प्रशंसित प्रतिष्ठापक और उन के सहकर्मियों की स्मृति को अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

१६ वीं शताब्दी के पिछले दिनों में भारतवर्ष में दो प्रकार की शिक्षा प्रचलित थीं। स्वदेशी ढंग पर चलने वाली पाठशालाएं और युनिवर्सिटी की रीति पर चलने वाले कालेज। स्वदेशी ढंग से चलने वाली पाठशालाओं की दशा शोचनीय थी। पश्चिमी शिक्षा के प्रचलन द्वारा देश में पश्चिमी संस्कृति अपने पैर जमा रही थी। इस नवागत शिक्षा और संस्कृति के सम्पर्क से हमारे देश का वातावरण प्रभावित होता जा रहा था। देशी पाठशालाओं में दीक्षित व्यक्ति इस परिवर्तित वातावरण के साथ अपने को ढालने में समर्थ नहीं थे। लार्ड मेकौले द्वारा भारत में प्रचालित शिक्षा प्रणाली का ध्येय ऐसे व्यक्तियों को पैदा करना था जो आगे जाकर अंग्रेज शासकों को शासन कार्य में सहायता दे सकें।

शिक्षा की इस प्रणाली में सांस्कृतिक और सामाजिक भावनाओं का सर्वथा अभाव था। अंग्रेज शासकों द्वारा उस समय जो शिक्षा-विधि प्रचलित की गई, उस का उद्देश्य प्रधान रूप से व्यापारिक था। वह शिक्षा और दीक्षा किस काम की जो मानव के आध्यात्मिक उत्थान में सहायक नहीं हो सकती? उस शिक्षा से क्या प्रयोजन जो हमें अपने मानव-बन्धुओं से स्नेह करना न सिखाए? जो हमें अपनी मातृभूमि के प्रति प्रेम-भावना को प्रबुद्ध न करे। परन्तु अवस्था यह थी कि १६ वीं शती के प्रारम्भ में जो शिक्षा-विधि प्रचलित थी वह भारतीय प्रजा में राष्ट्रिय-चेतना को विकसित नहीं कर रही थी।

ईसाई धर्म-प्रचारकों द्वारा बंगाल में सन् १८१७ के आस-पास कुछ शिक्षा-केन्द्र स्थापित किए गए परन्तु वे पाश्चात्य संस्कृति केन्द्र के रूप में परिणत हो गए। उन के द्वारा भारतीयों में पश्चिमी संस्कार प्रविष्ट हुए और वहीं के रीति-रिवाज और फैशन उन की चेतना में घर करने लगे। दूसरी ओर उस शिक्षा का प्रभाव यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हुआ कि हम भारतीय अपनी संस्कृति, अपने आचार-विचार, अपने धर्म-कर्म और अपने विद्या-वैभव से घृणा करने लगे। यह प्रक्रिया जब अपनी चरम सीमा को पहुंच गई तब हमारे देश के सुधी-जनों के मन में एक प्रतिक्रिया प्रबुद्ध हुई। यह स्वाभाविक ही था। भारत में बढ़ते हुए भौतिक-वाद और राष्ट्रियता-विरोधी तत्वों के विरोध में आवाज बुलंद की गई। बंगदेश में ब्रह्म-समाज की प्रवृत्ति द्वारा पश्चिमीपन की इस बाढ़ को रोकने के लिए उपनिषद् की शिक्षाओं के आधार पर एक बुद्धि-संगत धार्मिक आन्दोलन का श्रीगणेश हुआ। उस के कुछ समय उपरान्त ही महर्षि दयानन्द सरस्वती ने पश्चिमी भारत में आर्यसमाज के आन्दोलन का सूत्रपात किया। इस आन्दोलन द्वारा जनता में राष्ट्रिय चेतना को प्रदीप्त किया गया और बढ़ती हुई पश्चिमी सभ्यता की प्रवृत्ति को जोरदार चुनौती दी गई। महर्षि दयानन्द ने अपनी शिक्षा-विधि में भारत के अतीत गौरव की भावना को पुनः प्रस्थापित किया। महर्षि की शिक्षा-विधि वेदों की शिक्षाओं पर आधारित थी।

श्रीयुत केशवचन्द्र सेन और महर्षि दयानन्द द्वारा प्रारम्भ किए गए इन दोनों आन्दोलनों का जनता के मन पर आश्चर्य-जनक प्रभाव पड़ा। हमारी मातृभूमि ने मानो अपनी खोई हुई चेतना को पुनः प्राप्त किया। प्रजा के मन में आत्म-सन्मान और आत्म-विश्वास की भावना जाग उठी। देश ने मानो अपने आध्यात्मिक उत्तराधिकार का साक्षात्कार कर लिया। भारतीय प्रजा अनुभव करने लगी कि प्रचलित पाश्चात्य शिक्षा-विधि के स्थान पर प्राची की भावना से ओतप्रोत ऐसी शिक्षा-प्रणाली को हमें प्रस्थापित करना चाहिए जिस में पूर्व और पश्चिम की संस्कृतियों के उदात्त तत्वों का सुलभ समन्वय विद्यमान हो। महर्षि दयानन्द सन् १८८३ में दिवंगत हो गए। परन्तु उन के द्वारा संस्थापित संस्थाओं में उन का चरित्रबल और उन की शिक्षाओं का तेज, उत्साह और प्राण प्रतिबिम्बित हो रहा था। महर्षि दयानन्द जी द्वारा प्रबोधित गुरुकुल शिक्षा की भावना को क्रियात्मक रूप प्रदान करने का श्रेय श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी को प्राप्त हुआ।

सन् १९०२ में स्वामी श्रद्धानन्द जी ने एक प्राथमिक शिक्षा निकेतन के रूप में गुरुकुल की स्थापना की, जो आज एक पूर्ण विकसित आश्रमिक विश्वविद्यालय के रूप में परिणत हो चुका है, जिस में संप्रति चार महाविद्यालयों का समावेश है। श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी की अन्तरात्मा में एक ऋषि जैसी अन्तर्दृष्टि विद्यमान थी। उन्होंने अनुभव किया कि आत्मसंशोधन और राष्ट्रिय-पुनर्जागरण के आन्दोलन केवल शुद्धि की प्रवृत्ति ( मतपरिवर्तन = धार्मिक संशोधन ) तक ही सीमित नहीं हैं। आवश्यकता इस बात की है कि व्यक्तियों के चरित्र में जीवन की पवित्रता, न्यायप्रियता और नम्रता प्रस्फुटित हो। चरित्र की ये विशेषताएं साधना और तपस्या के द्वारा ही प्राप्त हो सकती हैं। एक ऋषि के अन्तर्दर्शन के समान उन्होंने अनुभव किया कि इस प्रकार का प्रशिक्षण बालकों के प्रारम्भिक जीवन में ही सम्भव है, जब कि मनुष्य जीवनक्रम चरित्र-निर्माण के क्षणों में से प्रवाहित हो रहा होता है।

श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी का यह विश्वास था कि शिक्षा ही आत्म-संशोधन का एक मात्र आधार है। प्राचीन आर्यवर्त में प्रचलित ब्रह्मचर्य-पालन और गुरु के आश्रम में रह कर शिक्षा-साधना की पद्धति को पुनर्जीवित करना उन का उद्देश्य था। साथ ही हिन्दी-भाषा के माध्यम द्वारा संस्कृत वाङ्मय के श्रेष्ठ तत्वों के साथ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पश्चिम के आधुनिक ज्ञान-विज्ञानों उदात्ततत्वों की शिक्षा देते हुए देश के बालकों का चरित्र-निर्माण करना और उन में राष्ट्रप्रेम की भावना को जगाना स्वामी जी का ध्येय था।

गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली के आदर्शों और उद्देश्यों से हम सब अच्छी तरह परिचित हैं। संक्षेप में वे इस प्रकार हैं—

क. चिरकाल से विस्मृत हुई ब्रह्मचर्य-प्रणाली को पुनर्जीवित करना तथा उसे शिक्षा का आधार बनाना।

ख. नागरिक जीवन के कलुषित प्रभावों से दूर हटा कर छात्रों को नैसर्गिक सौंदर्य के स्वस्थ, प्रोत्साहक और प्रेरणाप्रद वातावरण में रखना तथा उन के तन, मन और आत्मा के सन्तुलित विकास के लिए अवसर प्रदान करना।

ग. छात्रों का चरित्र-निर्माण करते हुए उन में भारतीय संस्कृति के प्रति अनुराग उत्पन्न करना तथा सरल जीवन और उदात्त विचार एवं 'ज्ञान के लिए ज्ञान' की भावना को प्रदीप्त करना

घ. गुरु और अन्तेवासी ( शिष्य ) के बीच में पिता-पुत्र का सा स्नेह-सम्बन्ध स्थापित करना।

ङ. विश्वविद्यालय के स्तर तक शिक्षा का माध्यम हिन्दीभाषा को रखते हुए अपनी शिक्षा-योजना में वैदिक-साहित्य और संस्कृत वाङ्मय के अध्यापन को, उस के गौरव के अनुरूप, समुचित स्थान प्रदान करना।

च. भारत की प्राचीन विद्याओं के अध्ययन के साथ-साथ आँग्लभाषा और आधुनिक विज्ञानों का अनुशीलन करना।

छ. देश भर में प्रचलित परीक्षा प्रणाली के दूषणों को दूर करना।

ज. प्राचीन भारतीय आदर्शों के अनुसार बिना शुल्क के शिक्षा प्रदान करना।

झ. भारतीय इतिहास, भारतीय दर्शन और भारतीय विज्ञानों के विषय में गवेषणा करना।

ञ. भारतीय राष्ट्रभाषा हिन्दी में आधुनिक ज्ञान विज्ञानों तथा प्राचीन संस्कृत विद्याओं के विषय में साहित्य निर्माण करना।

इन उद्देश्यों द्वारा हम वैदिक-संस्कृति का पुनरुज्जीवन कर सकते हैं। ये उद्देश्य किसी दल विशेष के नहीं हैं, नाहीं ये किन्हीं राजनीतिक सिद्धांतों के वशंवद हैं। इन उद्देश्यों में धर्म के वे शाश्वत और अपरिवर्तनीय तत्व निहित हैं, जो अपने स्वरूप में दैवी हैं और जो मानव के मन से उत्पन्न नहीं हो सकते।

यह सब कुछ कहते हुए मुझे भारतीय संस्कृति की विशेषताओं का सहज ही स्मरण हो आता है। यह संस्कृति अनेकों क्रांतियों और विरोधों के बावजूद अभी तक जीवित है। सहस्रों संवत्सर बीत गए। सैंकड़ों साम्राज्य खड़े हुए और भूमिसात् हो गए, अनेकों सभ्यताएं उठीं और नष्ट-भ्रष्ट हो गईं। परन्तु भारतवर्ष अभी तक जीवित है। उस की संस्कृति अभी तक प्रगति कर रही है। इस भारतभूमि के हमारे उन पूर्व-पुरुषों को धन्य है, जिन के अन्दर अन्यों को आत्मसात् करने की अद्भुत शक्ति विद्यमान थी। नाना रीतियों, नाना रिवाजों, नाना परंपराओं और नाना प्रभेदों के बावजूद भी इस संस्कृति के अन्दर एक ऐसी अमर एकता है, जो देश को शक्ति प्रदान करती है और उसे अक्षुण्ण रखती है।

हमारे वैदिक ऋषियों को ही इस बात का श्रेय है कि उन्होंने जीवन के समस्त पार्श्वों का अध्ययन किया और एक समन्वय तक पहुंचे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऋषियों का यह विश्वास था कि जगत् की अधिकांश समस्याओं का समाधान किया जा सकता है यदि जीवन की समीक्षा अनासक्त रूप में की जाय, और तभी एक उचित समन्वय पर पहुँच सकते हैं।

हमारे प्राचीन विचारकों के मत में शिक्षा भगवान् के साक्षात्कार का एक साधन है। अदूषित ज्ञान ही ब्रह्म ( ब्रह्मज्ञान ) के साक्षात्कार की कुञ्जी थी। उन की सम्मति में ब्रह्मविचार ही विद्या का उच्चतम स्वरूप था। भगवद्गीता के चतुर्थ अध्याय में श्रीकृष्ण जी कहते हैं—

तद्विद्धि प्रणिपातेन
परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं
ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥ ३४ ॥
यज्ज्ञात्वा य पुनर्मोहं
एवं यास्यसि पाँडव।
येन भूतान्यशेषेण
द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि ॥ ३५ ॥

कठोर परिश्रम और सेवा द्वारा ही ज्ञान प्राप्त हो सकता है और जब ब्रह्मज्ञान प्राप्त हो जाता है तो समस्त अज्ञान नष्ट हो जाता है। गीता के १८ वें अध्याय में श्रीकृष्ण जी अपने भक्तों को निर्देश करते हुए सूचित करते हैं अपना समस्त ध्यान 'ब्रह्म' में केन्द्रित करो। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि व्यक्ति अपने में भी भगवान् का दर्शन कर सकता है। एवं प्रत्येक व्यक्ति में भी; नहीं नहीं, समस्त विश्व में भी भगवान् का दर्शन कर सकता है तथा मानव जाति की सेवा कर सकता है। मानव-जाति की सेवा ही भगवान् की अर्चना है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भगद्गीता के समय में आध्यात्मिकता की विचारणा में परिवर्तन आ गया था। यज्ञ द्वारा भगवान् को संतुष्ट करने के पुराने विचार का स्थान निःस्वार्थ सेवा ने ले लिया था। हमारे पूर्वजों ने अनुभव कर लिया था कि प्रतिस्पर्धा का नियम जांगलिक नियम है। सहकारिता का विचार ही मानवीय संबन्धों का प्रेरक तत्व है। उन्होंने प्रेम द्वारा घृणा पर विजय पाई। सांमनस्य और सुसंवादिता के द्वारा विसंवाद पर विजय पाई। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि सब बुराइयों का मूल आकांक्षा है। कामना की अतिशयता ही हमें प्रतिस्पर्धा की ओर ले जाती है। अतएव उन महर्षियों ने जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं को भी संयत करने का प्रयत्न किया। अपने कार्य कलापों में संवादिता स्थापित करना और प्रतिस्पर्धा के भाव को बहिष्कृत करना ही उन के जीवन का लक्ष्य था।

यह अतिशय परितोष का विषय है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय शिक्षा के वैदिक आदर्शों को हृदयंगम करता है और समर्पण एवं मानवता की निःस्वार्थ सेवा की भावना से प्रेरित है।

जब मैं इस स्थान पर चहुंओर दृष्टिपात करता हूँ तो मैं बहुत प्रभावित होता हूं कि हमारे देश की विचार सम्पदा और संस्कृति पर प्रकृति ने कैसा कोमल और मंगलकारी प्रभाव डाला है। अनादि काल से भारतीय लोग प्रकृति की ओर आकृष्ट होते रहे हैं। उस प्रकृति के प्रति नहीं जिस के दाँत और पंजे रक्तरंजित हैं, अपितु उस प्रकृति के प्रति जो आनन्द और उल्लास का स्रोत है, जो शांति का धाम है।

पर्वतों की उपत्यकाओं और घाटियों के शांत पावन वातावरण में ऋषि-मुनि-जन जीवन की समस्याओं पर ध्यान और चिन्तन किया करते थे। प्रकृति की शांत एकांत गोद में मेधावी शिक्षकों के निरीक्षण में तपोवन और आश्रम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्थापित किए जाते थे। शिष्यजन व्यावहारिक जीवन की आवश्यक तैयारी उन आश्रमों में ही करते थे। प्रकृति उन के लिए केवल पृष्ठभूमि ही नहीं थी अपितु एक पूर्णतया जीवित जागरित पदार्थ था। उस की एक अपनी ही जीवन-लीला थी। वह प्राणों से परिस्पन्दित होती रहती थी। उन्होंने अनुभव किया था कि समस्त बाह्य वस्तुएं और विषय दिव्यशक्ति का ही आविर्भाव-रूप हैं। सभी पार्थिव पदार्थ एक ही सर्वनिष्ठ आत्मा से व्याप्त हैं। दैनिक जीवन के कोलाहल और चहल-पहल से दूर पर्वत की छाया में किसी वन-प्रान्तर में वे आश्रमवासी अपनी पर्णशालाएं बना कर रहते थे। वे वहां पर यही सीखते थे कि प्रकृति एक महान शिक्षिका है। उसके पास एक संदेश है। यहां तक कि एक छोटे से छोटा पदार्थ भी हमें बड़ी से बड़ी शिक्षा दे सकता है। एक सुकवि ने क्या ही अच्छा कहा है—

> 'हे नन्हे प्रसून, काश कि मैं तुम्हारे जीवन रहस्य का जान पाता। आखिर तुम क्या हो ? तुम्हारे मूल की महिमा जानते ही मैं तुम्हारा समग्र रूप जान लेता। और फिर तो मुझे यह भी अवगत हो जाता कि भगवान् क्या है और मानव क्या है ?'

विश्व के कुछ चुने हुये उत्तम उपहार प्रकृति की एकान्त गोद में ही मानव मष्तिष्क से निष्पन्न हुए थे।

गुरुकुल हिमालय की गोद में बसा हुआ है। यहां पर यह संसार के कोलाहलों, सरगर्मियों और परेशानियों से मुक्त है। मानसिक शक्तियों के विकास के लिए यहां का वातावरण आदर्श है। इस शिक्षा-सदन में अध्ययन करने वाले छात्रों को प्रकृति की मंगलकारी भावनाएं प्रभावित करती हैं।

स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् अब राष्ट्र का शासन-सूत्र हमारे ही हाथों में आ गया है। इस के साथ ही स्वाभाविक रूप में अनेक समस्याएं भी पैदा हो गई हैं, जिन का सन्तोषजनक समाधान हमें अभी ढूंढना है। हमें अपने देश की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाना है, लोगों के पेट भरने हैं, उन्हें रहने के लिए मकान देने हैं और उन के स्वास्थ्य की भी देखभाल करनी है। परन्तु इस भौतिक-कल्याण के साथ-साथ उन के मस्तिष्क को भी हमें पोषण प्रदान करना है। संसार इस समय चौराहे पर खड़ा है। जाति, रंग तथा धर्म के भेद के कारण राष्ट्रों के पारस्परिक विरोध, संघर्ष और तनाव आदि सामान्य सी बातें हो गई हैं। संसार को इस समय सहिष्णुता और एक दूसरे को समझने वाली वैदिक भावना की आवश्यकता है। राष्ट्रवासियों को स्वयं ही मोहनिद्रा से जाग कर मानवता का नेतृत्व करना है। अब अपने तथा समाज में से बुराइयों को दूर करने का समय आ पहुंचा है। काल की गति के साथ-साथ हमें भी बदलना है तथा अपने दृष्टिकोणों में भी परिवर्तन लाना है। हमें अपने अन्दर सेवा की भावना का विकास करना चाहिये, लेने की प्रवृत्ति ठीक नहीं, हमें तो दान करना चाहिये। इसी प्रकार शासन करने की प्रवृत्ति ठीक नहीं, सेवा की वृत्ति ही प्रशंसनीय है। सरकार के कन्धों पर इस समय भारी उत्तरदायित्व है। अतः यह कहने की आवश्यकता नहीं कि समुचित शिक्षा पर ही राष्ट्र की प्रसन्नता तथा शान्ति निर्भर है। संसार में इस समय बड़ी-बड़ी शक्तियां विद्यमान हैं। विनाश के लिए नए-नए अस्त्र शस्त्रादि का आविष्कार हमारी कोमल भावनाओं को समाप्त कर देगा और हमारी प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति की जड़ें खोखली हो जाएंगी। इसलिए हमें शीघ्रातिशीघ्र

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है, जो हमारी कोमल भावनाओं का विनाश न करे, प्रत्युत हमारे उदात्त गुणों को जीवित रखे तथा हमें मानवता की सेवा करने के योग्य बनाए। प्राचीन और अर्वाचीन का सुभग समन्वय ही हमें वांछित है। नवीन शिक्षा पद्धति के उत्तम तत्वों को वैदिक संस्कृति के अनुकूल बना कर हमें अभीष्ट की सिद्धि करनी होगा।

यह मानने में किसी को भी आपत्ति न होगी कि चरित्र-निर्माण ही शिक्षा का सर्वप्रथम उद्देश्य है। चरित्र-हीन बौद्धिक प्रतिभा का कोई मूल्य नहीं। समर्पण, समादर तथा भ्रातृप्रेम की भावनाओं का विकास कर के ही मानव की आत्मा तथा चरित्र का उन्नत किया जा सकता है। गुरुकुल शिक्षापद्धति इसी कारण वांछनीय है कि वह युवक विद्यार्थियों के चरित्र-निर्माण पर सर्वाधिक बल देती है। गुरुकुल विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों के लिए चारित्रिक विकास के प्रभूत अवसर हैं क्योंकि वह नगरों की उन शिक्षा-संस्थाओं की भांति नहीं जहां पर समाज का दूषित प्रभाव पड़ने की सम्भावना रहती है।

बड़ी प्रसन्नता का विषय है कि गुरुकुल विश्वविद्यालय की उपाधियों को सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त है और समय-समय पर इसे सरकारी आर्थिक सहायता भी मिलती रहती है। हमें आशा करनी चाहिये कि सरकार को देश के विभिन्न भागों में ऐसी संस्थाएँ स्थापित करने में कोई आपत्ति न होगी जिन से गुरुकुल का प्रेम तथा सेवा का स्पृहणीय सन्देश चहुंदिशी फैल जाय। इस समय हमें अपनी मातृभूमि की सांस्कृतिक परम्परा के प्रति अपने विश्वास को सुदृढ़ करना चाहिए।

अपना यह प्रवचन समाप्त करते हुए, मैं कुछ एक वचन अपने तरुण स्नातकों के प्रति निवेदन करना चाहता हूँ। प्रिय स्नातको, आप आर्य संस्कृति के उत्तराधिकारी हैं। अन्धकार में आप को अपनी मशाल बराबर प्रज्वलित रखनी होगी। आप को ही जनता को सत्पथ का प्रदर्शन करना होगा। जब वे गिर जायें तो आप को ही उन्हें उठाना होगा। आप का जीवन मानव जाति की सेवा में समर्पित है। इस लिए साहस और धीरता का पाथेयं ले कर संसार में आगे बढ़िये! आप की विद्या-संपदा—जो कि ऋषियों की ज्ञान-संपदा है—आप को शांति और समृद्धि प्रदान करेगी। [ गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के ५६ वें वार्षिकोत्सव पर १ वैशाख २०१३ को पढ़ा गया दिक्षान्त भाषण। ]

हिंदी भाषांतर—शंकरदेव विद्यालंकार।



प्लवा ह्येते अदृढ़ा यज्ञरूपा अष्टादशोक्तमवरं येषु कर्म।
एतच्छ्रेयो येऽभिनन्दन्ति मूढाजरा मृत्युं ते पुनरेवापियन्ति॥

मुण्डकोपनिषद्।

यह यज्ञरूपी किश्ती बहुत ही कच्ची है। यह कदापि इस संसार सागर से पार नहीं उतार सकती। जो मूर्ख लोग इस किश्ती में बैठ कर पार जाने की अभिलाषा रखते हैं, वे बुढ़ापा और मृत्युरूपी भँवरों में फिर-फिर आकर गिरते हैं। —

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# चीन की गुहाओं में

डॉ. रघुवीर और श्री सुदर्शना कुमारी

तेरहवीं गुहा ह्येन्-ह्वा-तुङ् अर्थात् नीलोत्पल गुहा है। यह गुहा उत्तर वेई के काल में आरम्भ की गई थी। इस गुहा में अनेक तिथियां दी गई हैं। गुहा की मुख्य मूर्ति शाक्य मुनि का मुख पूर्ण चन्द्र के समान गोल न होकर कुछ लम्बा है। जिस से उस की शोभा बढ़ गई है। परिधान की रेखाएं ओजस्विनी हैं। यह मूर्ति उत्तर वेई की परिपक्वता, तेजस्विता, महत्ता और उदारता का सुन्दर निदर्शन है।

चौदहवीं गुहा के प्रवेश द्वार पर सिंहयुग्म रक्षा कर रहे हैं। छत ६ हाथ ऊंची है। छत में पद्मपुष्प खोदने का विचार था पर वह अधूरा ही रह गया है।

पन्द्रहवीं गुहा की पिछली भित्ति में मुख्य बुद्ध दो अर्हत् और दो बोधिसत्त्व उत्कीर्ण किए गए हैं। कला की दृष्टि से मूर्तियाँ साधारण हैं। दाईं और बाईं भित्ति पर बनी हुई बौद्ध पंचमूर्ति की तिथि शिलालेख में ६६६+५७ विक्रम दी हुई है। इस गुहा के सामने का भाग अपूर्ण छोड़ा हुआ है।

सोलहवीं गुहा खण्डित गुहा है। यह अपूर्ण है। मैत्रेय को छोड़ कर सब मूर्तियों के उत्तमांग नष्ट हो चुके हैं। छत और कुट्टिम ठीक प्रकार से नहीं बने। ऐसा प्रतीत होता है कि काम बीच में छोड़ दिया गया। भित्तियों पर तीन तिथियों के शिलालेख हैं।

सत्रहवीं गुहा वेई-अक्षर-गुहा है। यद्यपि यह गुहा विशाल नहीं किन्तु उत्तर वेई की कला की सुन्दर प्रतिनिधि है। प्रभामण्डल अति हृदयङ्गम है। इस गुहा में भी अनेक तिथि वाले शिलालेख हैं।

अठारवीं गुहा का निर्माण उत्तर वेई में हुआ और जीर्णोद्धार थाङ्-काल में। गुहा कुछ लम्बी है। बुद्ध की मूर्ति का आसन अपूर्णघटित है। इस गुहा के शिलालेखों में तीन तिथियां हैं। पहली तिथि ५३७+५७ विक्रम है। द्वार पर गरुड़ की मूर्ति उत्कीर्ण है।

उन्नीसवीं फङ्-श्येनस्स में वैरोचन बुद्ध की सुमहती मूर्ति है। इस गुहा के सम्बन्ध में शिलालेख का वर्णन है कि थाङ् वंश के श्येन-हुङ् के तृतीय वर्ष (६७२+५७ विक्रम) में महाराज काओ-त्सुङ् ने अर्हद्-युग्म, बोधिसत्त्व युग्म, देव युग्म और वज्रधर युग्म सहित सुविशाल वैरोचन बुद्धमूर्ति के उत्कीर्ण करने का आदेश दिया। शाङ्-खेन् के द्वितीय वर्ष (६७५+५७ विक्रम) द्वादश मास के ३०वें दिन यह महत् कार्य समाप्त हुआ। इस के लिए महाराणी बू ने २० सहस्र क्वान् अपने पास से दान दिये। पांच वर्ष पश्चात् विहार की स्थापना हुई। इस विहार में १४ महापण्डित जिन की प्रज्ञा गम्भीर और शील उदात्त था इस विहार में लाए गए। शिलालेख में आगे वर्णन है—'जब से यह उत्तम धर्म पूर्व में आया है तब से अब तक सात सौ वर्ष से ऊपर हो चुके। बुद्ध विहार बनाने का पुण्य अग्रगण्य है।'

१६ वीं गुहा चीन की बौद्ध कला की चरम सीमा है। इस विहार निर्माण के महत्कर्म में श-चीस्स के ध्यान-आचार्य शान्-ताओ, फो-हाइ म्स के धर्माचार्य ह्वी च्येन सम्मिलित थे। निर्माण कार्य के अध्यक्ष शान् ताओ पुनीत भूमि सम्प्रदाय के महाप्रवर्तकों में से हैं।

मूर्तियां पर्वत में से खोदी गई हैं। यहां

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पहाड़ी की चौड़ाई ६८ हाथ की है और गहराई ८० हाथ। वैरोचन बुद्ध की ऊंचाई २२ हाथ से ऊपर है। आसन ६ हाथ ऊंचा है। प्रभामण्डल के शिखर से भूमि तक ऊंचाई ३० हाथ है। आसन वर्गाकार है। प्रत्येक कोने पर रक्षक खड़ा है। दोनों ओर योद्धा खुदे हुए हैं। सहस्रदल कमल पुष्प के तीन दलस्तर हैं प्रत्येक दल पर एक बुद्ध खुदा हैं।

भगवान् बुद्ध की सुन्दर विशाल मूर्ति महत्ता, वैभव और शांति की भावना उत्पन्न करती है। शरीर ओजःपूर्ण है। खेद है कि दोनों हाथ नष्ट हो चुके हैं और दोनों घुटने भी बहुत शीर्ण हो गए हैं। प्रभामण्डल नावाकार है। मध्य में कमल, कमल के चारों ओर बौद्ध मूर्तियां और अग्नि ज्वालाएं इसके अद्‌भुत अलंकार हैं। यह निःसंदेह और निर्विवाद है कि बलशालिनी ओजस्विता में यह वैरोचन मूर्ति न केवल लुङ्-मन् में किन्तु यांग वंश की समस्त कला के क्षेत्र में उत्कृष्टतम मूर्ति है।

वैरोचन के बाईं ओर काश्यप और दाईं ओर आनन्द हैं। दोनों की ऊंचाई बीस हाथ से अधिक है। मुखमुद्रा शान्त और भद्रता लिए हुये है। काश्यप और आनन्द के साथ के दोनों बोधिसत्त्व भी सौम्यता की मूर्ति हैं। किन्तु इनमें भी उत्तमांग कुछ अधिक भारी और शरीर कुछ छोटा पड़ता है। यह भेद मूर्तिकारों की दक्षता का भेद है।

दक्षिण और उत्तर की भित्ति में खुदे १८ हाथ ऊंचे वज्रधर देवों की महती मूर्तियां अजेय, अदम्य भावनाओं की व्यंजक हैं। किन्तु जो कला कौशल वैरोचन के निर्माण में दिखाई पड़ता है वह न अर्हतों में न बोधिसत्त्वों में और न इन मूर्तियों में है। प्राचीन समय में मूर्तियों के ऊपर वितान रहे होंगे। भित्ति में स्तम्भों के लिए छिद्र बने हुए हैं।

बीसवीं गुहा औषध योग गुहा है। द्वार के दोनों ओर औषधों के योग दिए हुए हैं।

२१ वीं गुहा कू-याङ्-तुङ् कहलाती है। शिलालेख के अनुसार राष्ट्र की समृद्धि के लिए इस गुहा का निर्माण किया गया था। गुहा आयताकार है। छत २० हाथ ऊंची है। कुट्टिम पर दो हाथ मिट्टी भरी गई। ४ हाथ ऊंचे आसन पर शाक्य मुनि विराजमान हैं। आसनों को सिंहों ने उठाया हुआ है पुरानी मूर्ति का जीर्णोद्धार करते हुए इतना अधिक लेप और रङ्ग चढ़ाया गया है कि इस की मौलिक शोभा सर्वथा मारी गई। मुख्य बुद्ध की ऊंचाई नौ हाथ है। मुख और परिधान की रेखाओं में मौलिक शोभा है। यदि मिट्टी का लेप ऊपर न किया जाता और उस पर रङ्ग न पोते जाते तो मूर्ति की आभा पूर्ण रूप में दृष्टिगोचर हो सकती

इस गुहा के शिलालेख केवल तिथियों और अन्य ऐतिहासिक सूचना के लिए ही प्रसिद्ध नहीं किन्तु सुलेख के लिए भी प्रथित हैं। हमने परस्पर भिन्न सौन्दर्यमय सुलेख की दृष्टि से ही २० लेखों की छापें ली हैं। चीनी लेख सौंदर्य विशारदों की दृष्टि से इन का मूल्य बहुत अधिक है।

श-खु स्स—यह कुहा पूर्वीय पहाड़ी में बनी है। बुद्ध आसन्दी में बैठे हैं। रूपाकृति भव्य है। यह मूर्ति थाङ् कला की उत्तम कृति मानी जाती है। बुद्ध की पीठ पीछे एक यवनिका बनी हुई है जिसमें भारत की गुप्तकला की छाया झलक रही है। गुहा की भित्तियों पर 'वज्रछेदिका' सूत्र उत्कीर्ण है तथा एक सहस्र छोटी बुद्ध मूर्तियां बनी हुई हैं। छत में कमल, उड़ती हुई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अप्सरायें और मेघ शोभायमान हैं। कला के शत्रु व्यापारियों की लोलुपता से मूर्तियों के उत्त-मांग लुप्त हैं।

हमको लुङ्मन में जितना समय लगाना चाहिए था उतना तो न लगा किन्तु जो भी थोड़ा समय मिला उसमें लुङ्-मन् की मनोरमता को नेत्रों द्वारा लगातार एकाग्र ध्यान से पार करने गए और हृदय में बद्धप्रतिष्ठित करते गए कि जीवन के शेष वर्षों तक इस रमणीयता का परिमल साथ रहे। यद्यपि लुङ्-मन् चीन की भूमि पर स्थित है और इसका श्रेयस् और गर्व चीनियों को है और होना चाहिये तथापि लुङ्-मन् भारत की आत्मा का ही तो खण्ड है। यहां चीनी प्रभाव और परिवर्तन अवश्य है किन्तु मूल और स्थूल दृष्टि से, आध्यात्मिक तथा कला की दृष्टि से भारत का इसमें हाथ है। लुङ्-मन में भारतीय वैभव के जो दर्शन हमको हुए उनसे हम कृत-कृत्य हो कर कोयले की खान की काली धूल से बचते हुये अपने निवास स्थान पर लौट आए।

जिस रस और आनन्द का अनुभव, जिस प्राचीन और नवीन काल की एकता की भावना आज हुई वह पहले कभी न हुई थी। हम को ऐसा लगा जैसे कि हम पन्द्रह सौ वर्ष पार कर पार्थिव शरीर और नेत्रों सहित गुप्तकाल में और गुप्तराष्ट्र में पदार्पण कर गए हों। यह अद्भुत और अविस्मरणीय है और रहेगा।

—

# आत्मा अमर है

न जायते म्रियते वा विपश्चित् नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।
अजो नित्य. शश्वतो ऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥

आत्मा अजन्मा है, अमर है. सदा से है, यह न उत्पन्न होता है, और न मरता है। जो उत्पन्न होता है और मरता है, वह केवल शरीर है। शरीर को मार भी डालो तो आत्मा नहीं मरता।

आत्मज्ञानी होने के लिये केवल इस बात को सुन लेना या कह देना पर्याप्त नहीं है। जो मनुष्य आत्मा को शरीर से पृथक् अनुभव करने लगे, और जिस की जीवनचर्या का आधार ही अनुभव हो जाय. वस्तुतः आत्मज्ञानी है।

कर्म करते हुए जीवन व्यतीत करो, परन्तु उस में लिप्त न हो। कर्म करते हुए उस में लिप्त न होना उसी मनुष्य के लिए सम्भव है, जो शरीर में रहता हुआ भी अपने आप को शरीर में लिप्त नहीं होने देता, अपितु उस का स्वामी बन कर रहता है।

★



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# असंगत वर्ग के शब्द

श्री धर्मदेव विद्यामार्तण्ड

इस लेख में मैं निम्न लिखित अंग्रेजी शब्दों के (जो प्रायः पर्यायवाची समझे जाते हैं) सूक्ष्म भेद का विवेचन करते हुए उनके उचित संस्कृत और हिन्दी समानार्थक शब्दों का निर्देश करना चाहता हूँ।

Absurd, foolish, silly, preposterous, irrational, monstuous, nonsensical, paradoxical, ridiculous, Unreasonable.

इन शब्दों की इतने अंश में समानता है कि वे बुद्धिविरुद्धता और अतएव उपहासजनकता का निर्देश करते हैं किन्तु इन का परस्पर अन्तर पर्याप्त है जैसे कि निम्न विवेचन से स्पष्ट हो जाएगा जो Webster's Dictionary of Synonyms और Standard Hand book of Synonyms, anonyms and prepositions by James Fernald आदि प्रामाणिक अंग्रेज़ी कोषों के आधार पर किया जा रहा है। इन सूक्ष्म भेदों को ध्यान में रखते हुए हम इन के लिये समुचित संस्कृत और हिंदी के समानार्थक शब्दों के निर्देश का प्रयत्न करेंगे।

Absurd = असङ्गतम्

ऐब्सर्ड शब्द के अन्दर सामान्यबुद्धि और तर्क विरुद्धता का भाव प्रधान है। इस के विषय में जेम्सफर्नाल्ड ने ठीक ही लिखा है कि—

Tnat is absutd which is contrary to the first principle of reasoning.'

**अर्थात् ऐब्सर्ड वह कहलाता है जो तर्क के प्रथम वा मौलिक सिद्धान्तों के ही विरुद्ध हो।** इस के लिये प्रादेशिक भाषाओं के कोषों में निम्न शब्दों का प्रयोग पाया जाता है—

बंगला—अयौक्तिक, हास्योद्रेककारी।

कन्नड़—असम्बद्ध, असंगत, अविवेक, हास्यास्पद।

मलयालम—अनर्थकमाय, न्यायविरुद्धमाय, अयुक्तम्, अनुपपन्नम्, युक्तिविरुद्धमाय, युक्तिहीनमाय (आय—विशेषणों में प्रयुक्त प्रत्यय है)।

तेलुगु—असंगतमैन-अयुक्तमैन न्यायविरुद्धमैन (ऐन—विशेषणों में प्रयुक्त प्रत्यय है)।

आसामी—असंगत, युक्तिविरुद्ध।

मराठी—असमंजस, अयोग्य, हास्यास्पद।

गुजराती—असंगत, अविवेकी, मूर्खाई।

हम ने अपने कोष में इस के लिये संस्कृत में असंगतम्, अयुक्तम् और हिन्दी में भी असङ्गत और अयुक्त शब्दों का प्रयोग किया है जो शब्द कन्नड़, मलयालम, तेलुगु, आसामी और मराठी कोषों में भी पाये जाते हैं। बंगला में प्रयुक्त अयौक्तिक शब्द अयुक्त के ही समानार्थक है।

Foolish = मौर्ख्यपूर्णः, मूर्खः

अंग्रेज़ी के फुलिश शब्द के लिये संस्कृत में मौर्ख्यपूर्णः (विचारादिः) अथवा मूर्खः (पुरुषः) और हिन्दी में मूर्खतापूर्ण तथा मूर्ख शब्दों का प्रयोग सर्वसम्मत है जिस के विवेचन की आवश्यकता नहीं।

Silly—निष्प्रयोजनम्, बालिशः, मूढः

अंग्रेज़ी के सिल्ली शब्द के विषय में वेब्स्टर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के कोष में लिखा है—

That is silly which seems witless, pointless or futile.'

अर्थात् सिल्ली वह कहलाता है जो बुद्धि-मत्तारहित अथवा निष्प्रयोजन हो। इस के लिये प्रादेशिक भाषा कोषों में निम्न शब्द पाये जाते हैं—

बंगला—मूर्ख, निर्बोध, अविज्ञ, असङ्गत।
कन्नड़—मूढ़, अविवेकी, बाललीले।
तेलुगु—अविवेकि, बुद्धिहीन।
मलयालम—मूढमाय, बालिशमाय, मनोबल-भिल्लात्त।
आसामी—मूर्ख, निर्बोध।
मराठा—मूर्ख, अविचारो, बुद्धिचा मन्द।
गुजराती—नादान, मूर्ख।

हमने सिल्ली के लिए पुरुष के लिए मूढ़ः, बालिशः इन शब्दों का संस्कृत में और मूढ़ और अविवेकी शब्दों का हिन्दी में प्रयोग उचित समझा है। विचारादि के विशेषण रूप में प्रयुक्त सिल्ली के लिए निष्प्रयोजन शब्द का प्रयोग अर्थ-दृष्टि से किया जा सकता है।

Ridiculous=उपहासजनकम्

अंग्रेज़ी के रिडिक्युलस शब्द के लिये उप-हासजनक शब्द का प्रयोग सर्वत्र प्रचलित और सर्वसम्मत है अतः उस के विवेचन की आवश्य-कता नहीं।

Monstruous=अस्वाभाविकम् घोरम्

अङ्गरेज़ी के 'मौन्स्ट्रुअस' शब्द के विषय में जेम्स फर्नाल्ड ने लिखा है कि 'Monstruous refers to some thing freakish or unnatural. इस लिये उस के लिये अस्वाभाविक और घोर इन शब्दों का प्रयोग हम ने उचित समझा है। प्रादेशिक भाषाओं के कोषों में से बङ्गला में अस्वाभाविक शब्द का और कन्नड़, तेलुगु और गुजराती भाषाओं में घोर शब्द का प्रयोग पाया जाता है। मराठी, मलयालम और आसामी कोषों में घोर के पर्यायवाची भयङ्कर, भीमाकृति और भयानक शब्दों का प्रयोग है।

Preposterous=सुस्पष्टमसङ्गतम्,
अत्यन्त असङ्गत

अङ्गरेज़ी के प्रिपौस्टरस् शब्द के विषय में वेब्स्टर् ने लिखा है कि "Preposterous is glaringly absurd." अर्थात इस में अत्यन्त और स्पष्टतौर पर असङ्गतता का भाव पाया जाता है इस लिए हम ने इस के लिए संस्कृत में सुस्पष्टमसङ्गतम् और हिन्दी में अत्यन्त असङ्गत शब्द का प्रयोग उचित समझा है। इस के लिए प्रादेशिक भाषाओं के कोषों में निम्न-लिखित शब्दों का प्रयोग पाया जाता है—

बङ्गला—असंगत, भ्रान्त, असंभव।
कन्नड़—स्वभावद विरुद्धवाद, विवेकके विप-रीतवाद, अतिक्रमवाद, असम्बद्ध-वाद (आद-प्रत्यय है)
तेलुगु—विपरीतमैन, असंगतमैन, अस्वाभा-विकमैन, अक्रममैन, अयुक्तमैन (ऐन-प्रत्यय है)
मलयालम—विपरीत क्रममाय, अयुक्तमाय।
मराठी—विपरीत, विसंगत, अगदी अयुक्त।
आसामी—असङ्गत, असम्भव, अस्वाभाविक।
गुजराती—विपरीत, अनर्थक।

इन में से बङ्गला, तेलुगु, और आसामी में असङ्गत और मराठी में विसङ्गत शब्द का प्रयोग है किन्तु उस का ऐब्सर्ड से भेद प्रदर्शन करने के लिए हम ने अत्यन्त असङ्गत शब्द का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रयोग उचित समझा है। अधिकतर प्रादेशिक भाषाकोषों में विपरीत शब्द का भी प्रयोग इसके लिये किया गया है जिसे ग्रहण किया जा सकता है।

Irrational = युक्तिविरुद्धम् ,अयौक्तिकम्

अंग्रेज़ी के इरैशनल् शब्द का अर्थ युक्ति विरुद्ध है अतः उसके लिये युक्तिविरुद्धम् और अयौक्तिकम् इन शब्दों का संस्कृत में और युक्तिविरुद्ध शब्द का हिन्दी में हमने अपने कोष में प्रयोग किया है। प्रादेशिक भाषाओं के कोषों में से बंगला और मराठी में अयौक्तिक शब्द का और तेलुगु में युक्तिविरुद्ध शब्द का प्रयोग पाया जाता है। अन्य कोषों में भी इसके साथ मिलते-जुलते शब्द हैं अतः इसके विस्तृत विवेचन की आवश्यकता नहीं।

Paradoxical = अंग्रेज़ी के पैराडौक्सिकल शब्द का अर्थ निर्देश करते हुए जेम्स फ़र्नाल्ड ने लिखा है—"A paradoxical statement appears at first thought contradictory or absurd, while it may be really true. अर्थात् पैराडौक्सिकल् स्टेटमेन्ट प्रथम विचार में परस्पर विरुद्ध और असंगत प्रतीत होती है जब वस्तुतः यह सत्य हो सकती है। अतः पैराडौक्स के लिये अयुक्ताभास अथवा असत्याभास शब्द का प्रयोग सर्वथा उचित है। प्रादेशिक भाषाकोषों में कन्नड़ में विरोधाभास, तेलुगु में असत्याभास, मराठी में विरोधाभास, असत्याभास और बंगला में कूटाभास शब्द का प्रयोग इसके लिये पाया जाता है। अतः Paradoxical के लिये असत्याभासात्मक अथवा अयुक्ताभासात्मक शब्दों का प्रयोग करना ठीक होगा।

Nonsensical = अनर्थकम्

अंग्रेज़ी के नौन सेन्सिकल् शब्द के विषय में जेम्स ने अपने कोष में लिखा है कि "Sounds Without meaning as F-fi-fo-fum' are non sensical." अर्थात् अर्थरहित शब्द ध्वनियों के लिये इस शब्द का प्रयोग होता है इस लिये हम ने उसके लिये 'अनर्थक' शब्द का प्रयोग अपने कोष में किया है। प्रादेशिक भाषाओं में से बंगला, तेलुगु, मलयालम, और और गुजराती कोषों में इस के लिये 'अनर्थक' शब्द का और मराठी में निरर्थक शब्द का प्रयोग पाया जाता है। सर्वसम्मत प्रयोग होने के कारण इसके अधिक विवेचन की आवश्यकता नहीं।

Un-reasonabie = युक्तिविरुद्धम् , अयौक्तिकम् , अयुक्तम्

अंग्रेज़ी का अनरीज़नेब्ल शब्द इरैशनल् (irrational) का ही पूर्णतया पर्यायवाची है अतः उसके लिये युक्ति विरुद्ध, अयौक्तिक अथवा अयुक्त इन शब्दों का प्रयोग करना ठीक है।

---

- अप्रैल १९५५ से दिसम्बर, १९५५ तक कुल ६ लाख ६५ हजार ४०० टन भारतीय जूट के तैयार माल का निर्यात हुआ। १९५४ के इन्हीं महीनों में ६ लाख ५२ हजार ७०० टन जूट के तैयार माल का निर्यात हुआ था।
- हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा त्रिपुरा में सड़कें बनाने के लिए केन्द्रीय सरकार ने २१ लाख रु० स्वीकृत किये हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# वेद में स्त्रियों की शिक्षा

श्री प्रियव्रत वेदवाचस्पति

पहले बालिकाओं की भविष्य जीवन की तैयारी अर्थात् शिक्षा को लीजिये। वेद में भविष्य के लिए तैयारी के जीवन को, विद्यार्थी जीवन को ब्रह्मचर्य काल कहा गया है। एक विद्यार्थी के जीवन का आदर्श क्या होना चाहिये यह ब्रह्मचर्य शब्द की रचना को देखने से ही साफ हो जाता है। पर इस समय हमें इस शब्द के अर्थों की बारीकियों में जाने की आवश्यकता नहीं है। मैं अधिक स्पष्टता से इस सम्बन्ध में वेद के अभिप्राय को आप के सामने रखना चाहता हूँ। अथर्ववेद का ब्रह्मचर्य सूक्त ( अथ० ११। ५ ) विद्यार्थी का शिक्षा काल किन परिस्थितियों में बीतना चाहिये, शिष्य को कैसे गुरुओं से शिक्षा मिलनी चाहिये, शिष्य और गुरु का पारस्परिक सम्बन्ध किस तरह का रहना चाहिये तथा विद्यार्थी को अपने शिक्षाकाल में क्या-क्या पढ़ना चाहिये इन सब बातों को बहुत ही सुन्दर ढंग से बताता है। ब्रह्मचर्य सूक्त में वर्णित इन सब बातों को यहां बता सकना संभव नहीं है। वहां पर विद्यार्थी को पढ़ाना क्या-क्या चाहिये इस सम्बन्ध में जो कुछ कहा गया है सिर्फ उसे ही थोड़े में बता कर मैं सन्तोष करूंगा। उस सूक्त के चौथे[1] मन्त्र में कहा गया है कि विद्यार्थी को चाहिये कि वह अपने अन्दर ज्ञान की आग को सदा प्रज्वलित रखे। उसे प्रज्वलित करने के लिये वह उस में पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्यौ इन तीन लोकों की समिधा बना कर डालता रहे अर्थात् इन तीन लोकों में—विश्व भर में—पाये जाने वाले पदार्थों के सम्बन्ध में सब विद्या-विज्ञानों को वह सीखता रहे। इस विद्या-प्राप्ति के साथ-साथ उसे चाहिये कि वह तीन बातों का ध्यान और रखे। एक तो यह कि वह हर वक्त आलस्य से रहित हो कर मुस्तैद, चौकन्ना, जागरुक, कटिबद्ध ( मेखलाधारी ) रहे। दूसरे उसे प्रतिदिन शारीरिक व्यायाम ( श्रम ) करते रहना चाहिये। तीसरे उसे अपना जीवन तपस्वी अर्थात् सादा और कष्ट-सहिष्णु बनाना चाहिये। उसी सूक्त में यह भी आदेश कर दिया गया है कि विद्यार्थी को भौतिक विद्या-विज्ञानों के साथ-साथ आत्मा-परमात्मा के ज्ञान या ब्रह्मविद्या को भी पूरी तरह सीखना चाहिये और इस प्रकार अपने को भविष्य जीवन के लिये सब तरह से तैयार और योग्य बना लेना चाहिये। उसी सूक्त में आगे चल कर कहा गया है कि कन्या को भी ब्रह्मचर्य का जीवन बिता कर ही विवाहित जीवन में प्रवेश करना चाहिये[1]। कन्या के ब्रह्मचर्य से जीवन बिताने का अभिप्राय है कि वह ब्रह्मचर्य के कर्तव्य कर्म को पूरा करे अर्थात् जो कुछ ब्रह्मचारी के लिये जानना और करना आवश्यक है उसे जाने और करे। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस सूक्त में बालिकाओं की शिक्षा पर भी उतना ही बल दिया गया है जितना कि बालकों की शिक्षा पर दिया गया है। अथर्ववेद के चौदहवें काण्ड में तो इस विषय को सर्वथा ही स्पष्ट कर दिया गया

१ इयं समित् पृथिवि द्यौर्द्वितीयो-
तान्तरिक्षं समिधा पृणाति।
ब्रह्मचारी समिधा मेखलया
श्रमेण लोकांस्तपसा पिपर्ति॥
अ० ११. ५. ४।

१ ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।
अ. ११. ५. १८।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है। उस काण्ड में स्त्री और पुरुष के विवाहित जीवन के कर्तव्य कर्मों का वर्णन किया गया है। वहां यह भी बताया गया है किस योग्यता के स्त्री और पुरुष को विवाहित जीवन में प्रवेश करना चाहिये। उसी काण्ड के प्रथम सूक्त का छठा मन्त्र 'चित्तिरा उपबर्हणं चक्षुरा अभ्यञ्जनं द्यौर्भूमिः कोश आसीद् यदयात सूर्या पतिम्[1]' है। इस मन्त्र में कन्या के माता-पिता को सम्बोधन कर के कहा गया है कि उन्हें चाहिये कि जब उन की कन्या विवाहित हो कर पति के घर में जाने लगे तो उसे दहेज दें। पर वह दहेज़ कैसा? 'चित्ति' अर्थात् दिमागी-शक्ति उस में गदैले-तकिये आदि की जगह हो, 'चक्षु' अर्थात् चीजों की गहराई में जाकर ध्यान से देखने की शक्ति उस में अञ्जन अर्थात् सुरमा आदि शृङ्गार की चीजों के स्थान में हो और द्युलोक और पृथ्वीलोक के बीच में आने वाले सारे जगत् का ज्ञान उस में 'कोश' अर्थात् रुपये पैसे की जगह हो। यह मन्त्र तो यहां तक बढ़ता है कि माता-पिता को चाहिये कि वे अपनी कन्या को दहेज भी दें तो वह ज्ञान का दहेज हो। यही दहेज वस्तुतः आवश्यक दहेज है। दूसरे दुनियादारी के दहेज कोई दे सकें तो दे दें न दे सकें तो न दें। इस की कोई विशेष चिन्ता नहीं। पर ज्ञान का दहेज़ तो कन्या को मिलना ही चाहिये। ऋग्वेद[2] में भी ऐसा ही उपदेश है। यह मन्त्र सुन लेने के पीछे वेद में स्त्रियों की शिक्षा के सम्बन्ध में क्या आदेश है इसे दिखाने के लिए किसी और प्रमाण की आवश्यकता नहीं रह जाती। पर इस सम्बन्ध में कुछ और प्रमाण भी दे देना अनुपयुक्त न होगा।

वेद के भिन्न-भिन्न स्थलों में स्त्री से इस प्रकार की बातें कही गई और प्रार्थना से की गई हैं कि 'हे पत्नी तू हमें ज्ञान का उपदेश कर[3]' 'पति को धन कमाने के ढङ्ग बता[4]' 'तू सब प्रकार के कर्मों का ज्ञान रखती है,[5]' तू सब कुछ जानने वाली हमें धनधान्य की पुष्टि दे,[6]' तू हमें अपनी बुद्धियों से धन दे,[7]' 'तू हमारे घर की प्रत्येक दिशा में ब्रह्म अर्थात् वैदिक ज्ञान का प्रयोग करे[8]'। इन सब वचनों से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि वेद की सम्मति में प्रत्येक स्त्री को विवाह से पहले जहां तक हो सके सब प्रकार के ज्ञान प्राप्त कर लेने चाहियें ताकि वह अपने गृहस्थ जीवन में उन से यथायोग्य उपयोग ले सके।

इस प्रकार हमने देखा है कि वेद का धर्म बालकों की तरह ही बालिकाओं की शिक्षा पर भी पूरा बल देता है और कहता है कि उन्हें भी बालकों की तरह संसार का प्रत्येक विज्ञान और प्रत्येक विद्या सिखाई जानी चाहिये।

## विवाहित जीवन

अब मैं वैदिक धर्म के अनुसार विवाहित

---

१. अ० १४. १. ६।

२. ऋग० १०. ८५. ७।

३. त्वं विदथमा वदासि। अ० १४. १. २०।

४. पतिं देवि राधसे चोदयस्व। अ० ७. ४६. ३।

५. देवीं सुकृतं विद्मनापसम्। अ० ७. ४७. १।

६. आद्य रायस्पोषं चिकितुषी ददातु। अ० ७. ४७. २।

७. यास्ते राके सुमतःय सुपेशसेः
याभिर्ददासि दाशुसे वसूनि।
ताभिर्नो अद्य सुमना उपागहि
सहस्त्रापोषं सुभगे रराणा॥
अ० ७. ४८. २।

८. ब्रह्मापरं युज्यतां ब्रह्मपूर्वं ब्रह्मान्ततो मध्यतो ब्रह्म सर्वतः। अ० १४. १. ६४।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जीवन में स्त्री की क्या स्थिति है इसे आप की सेवा में उपस्थित करूंगा। इस सम्बन्ध में हमें पहले यह देख लेना चाहिये कि विवाहित जीवन में प्रवेश करने के समय वर और वधू की आयु क्या होनी चाहिये। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते हुए वर और वधू का एक वार्तालाप ऋग्वेद के १० वें मण्डल के १८३ सूक्त में दिया गया है। वहां दोनों ओर से एक दूसरे को युवा युवती, पुत्रकाम और पुत्रकामा[1]। इन शब्दों से सम्बोधन किया गया है। जिस से स्पष्ट प्रकट होता है कि वेद की सम्मति में उन्हीं स्त्री-पुरुषों को विवाहित जीवन में प्रवेश करना चाहिये जो युवा अर्थात् जवान हो चुके हों और जिन में सन्तानोत्पत्ति की इच्छा उत्पन्न होने लग गई हो। इस प्रकार वेद बाल-विवाह की जड़ पर ही कुल्हाड़ा रख देता है। इसी प्रकार गृहस्थ में प्रवेश करते हुए वर-वधू के पारस्परिक वार्तालाप में या दूसरों द्वारा उन के सम्बोधन में वेद के भिन्न-भिन्न स्थलों में प्रयुक्त किये गये पतिकामा, जनिकामः[2] आदि विशेषणः भी इसी बात का उपदेश देते हैं कि स्त्री और पुरुष का विवाह उस समय होना चाहिये जब कि उन के अन्दर एक दूसरे के लिए चाह पैदा होनी आरम्भ हो जाये। यह चाह यौवन में ही स्त्री-पुरुष में उत्पन्न होती है। अतः दोनों का विवाह युवावस्था में होना ही स्वाभाविक है। इस सम्बन्ध में एक बात और देखने योग्य है। अथर्ववेद का १४ वां कांण्ड तथा ऋग्वेद का १०. ८५ सूक्त जो कि स्त्री और पुरुष के विवाहित जीवन के कर्तव्यकर्मों और धर्मों का प्रतिपादन करते हैं कन्या को कन्या या इस के पर्यायवाची शब्दों से स्मरण नहीं करते। वहां उस के लिये 'सूर्या' शब्द का प्रयोग करता है। इसी प्रकार वहां आरम्भ में ही वरों के लिये 'आदित्य' शब्द का प्रयोग किया गया है। अब यदि हम, ऋषि दयानन्द ने पुराने शास्त्रों के आधार पर वैदिक विद्यार्थी जीवन के—ब्रह्मचर्य के—जो तीन भेद किये हैं उन के आधार पर 'आदित्य' और 'सूर्या' शब्द का अभिप्राय समझना चाहे तो 'आदित्य' वह पुरुष कहलाता है जिसने ४८ वर्ष की आयु तक कभी स्वप्न में भी गन्दा विचार अपने मन में उत्पन्न नहीं होने दिया और जो अपनी जीवनी शक्ति का एक कतरा भी अपने शरीर से बाहर न होने देकर अपने दिमाग को विद्याओं से भरता रहा तथा योगाभ्यास से अपनी आत्मा उच्च और पवित्र बनाता रहा हो। ऐसा पुरुष आदित्य इस लिये कहलाता है कि वह किसी से दबता नहीं और संसार के अज्ञान और मिथ्या विश्वासों के अन्धकार को छिन्न-भिन्न करता रहता है जिस प्रकार कि यह भौतिक आदित्य-आकाश में चमकने वाला सूर्य-किसी से दबता नहीं और संसार के अन्धकार को छिन्न-भिन्न करता रहता है। इसी प्रकार जो बालिका २४–२५ साल की आयु तक कभी स्वप्न में भी अपने को अपवित्र न करती हुई अपने शरीर दिमाग और आत्मा को उन्नत करती है उसे आदित्या-ब्रह्मचारिणी कहा जाता है। सूर्य आदित्य का ही दूसरा पर्याय है। इस प्रकार वर को 'आदित्य' और वधु को 'सूर्या' अर्थात् आदित्या कहने का अभिप्राय यह है कि वेद की सम्मति में आदर्श विवाह यह है जो कि आदित्य ब्रह्मचारी बालक और आदित्या ब्रह्मचारिणी कन्या में सम्पन्न होता है। जो लोग उस ऊंचे आदर्श तक नहीं पहुंच सकते उन के लिये 'वसु' और 'रुद्र' ब्रह्मचर्य के निचले दो विकल्प हैं।

---

१. ऋग्० १०. १८३. १, २।

२. अ० २. ३०. ५।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कम से कम वसु ब्रह्मचर्य तो प्रत्येक बालक और बालिका को पूरा करना चाहिये। अर्थात् कम से कम २४–२५ वर्ष के ब्रह्मचारी पुरुष और १६-१७ वर्ष की ब्रह्मचारिणी कन्या से कम आयु के बालक और बालिकाओं का विवाह नहीं होना चाहिये। इस से कम आयु में विवाह करना पाप गिना गया है। लोग कहेंगे, तुम्हारा आदित्य ब्रह्मचर्य की कल्पना एक निरी स्वप्न जगत् की कल्पना सी है—एक न हो सकने वाली बात है। कभी इतनी ऊंची आयु तक भी बालिक और बालिकाएं अपने को इतना पवित्र, कि स्वप्न में भी बुरे विचार पैदा न हों, रख सकते हैं ? हम इतना ही कहना चाहते हैं कि कमज़ोर निश्चय लोगों को प्रत्येक नई बात प्रायः अशक्य लगा करती है। संसार की प्रायः सभी बड़ी बड़ी लहरें प्रारम्भ में अधिकांश लोगों को असम्भव लगती रही हैं। पर दृढ़ निश्चय वाले लोग उन के अनुसार बहुत कुछ कर दिखाते रहे हैं। प्रारम्भ में कौन समझता था कि सोशलिज्म और और बौल्शेविज्म भी सफल हो सकेंगे। पर आज संसार का एक बड़ा भाग उन के आगे सिर झुका रहा है। वैदिकधर्म का आदित्य ब्रह्मचर्य का आदर्श भी पूरा हो सकता है यदि हम में इस के लिये प्रेम और निश्चय की दृढ़ता हो। लोग कहते हैं कि आर्यसमाज की आवश्यकता नहीं रही। मैं तो कहता हूं, जब तक वेद का यह आदित्य ब्रह्मचर्य का आदर्श पूरा नहीं हो जाता—जब तक हम अपने बालक और बालिकाओं के लिये ऐसी परिस्थितियें पैदा नहीं कर सकते जिन में उन्हें आदित्य ब्रह्मचर्य की अवधि तक स्वप्न में भी पवित्र रहते हुए अपने शरीर, मन और आत्मा को सब प्रकार से योग्य बनाने का अवसर मिल सके तब तक, यदि और बातों को छोड़ भी दें तो भी, आर्यसमाज की संसार को आवश्यकता है। आर्य-समाज को अपने इस भारी कर्तव्य को समझना चाहिये।

वेद में वर-वधू के विवाह की आयु की अवधि दिखाने के पश्चात् हम यह दिखाना चाहते हैं कि वैदिक धर्म में उन्हीं स्त्री पुरुषों का विवाह सम्बन्ध हो सकता है जिन्होंने एक दूसरे को भले प्रकार जान लिया और देख लिया है। ऋग्वेद के १० वें मण्डल के १८३ वें सूक्त में विवाह करने की इच्छा वाली वधू अपने भावी पति को सम्बोधन करके कहती है—'हे वर! मैंने अपने मन से अच्छी प्रकार तुम्हें जान लिया है, तुम बहुत अच्छे ज्ञानी हो और गुरुकुल में तप का—सादगी और संयम का—जीवन व्यतीत करके आये हो और तुम्हें सन्तान की कामना है, आइये हम दोनों मिल कर सन्तानोंत्पत्ति करें[1]।' इसी प्रकार वर-वधू से कहता है—'हे वधू! मैंने तुम्हें अपने मन से जान लिया है, तुम उच्च गुणों वाली युवती हो और मुझे चाह रही हो, तुम्हें सन्तान की कामना भी है, आओ हम मिल कर सन्तानोत्पत्ति करें[2]।'

१. अपश्यं त्वा मनसा चेकितानं
तपसो जातं तपसो विभूतम्।
इह प्रजामिह रयिं रराणः
प्रजायस्व प्रजया पुत्रकाम॥
ऋग्० १०. १८३. १।

२. अपश्यं त्वा मनसा दीध्यानां
स्वायां तनू ऋत्व्ये नाधमानाम्।
उप मामुच्चा युवतिर्बभूयाः
प्रजायस्व प्रजया पुत्रकामे॥
ऋग्० १०. १८. ३. ५।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# पीलिया रोग

श्री रामनारायण शर्मा वैद्यशास्त्री

## पीलिया रोग क्या है ?

इस रोग में रक्त में पित्त अपने सामान्य प्रमाण से अधिक हो जाता है, जिस के कारण त्वचा में और श्लैष्मिक-कलाओं में पित्त का संचय होने लगता है। इस का परिणाम यह होता है कि रोगी की आँख, त्वचा, नाखून आदि बाह्य आकृति पीली हो जाती है। किन्हीं अवस्थाओं में उसे दृश्य वस्तु भी पीली दिखाई देती है, मूत्र हल्दी के रंग की तरह पीला हो जाता है। पित्त का निःसरण आन्त्र में न होने से पुरीष का वर्ण सफेद हो जाता है और बदबूदार कीचड़ जैसा मल-निःसरण होता है। आयुर्वेद की भाषा में इस रोग को 'कामला' और अंग्रेजी में 'जॉण्डिस' कहेंगे। चरक ने कोष्ठाश्रित कामला के लक्षणों में कहा है कि नेत्रों का वर्ण हल्दी का-सा, त्वचा-नख व आकृति का वर्ण भी हल्दी का-सा होता है। पुरीष-मूत्र लाल-पीले से होते हैं। देह का वर्ण बरसाती मेंढक सदृश होता है। चरक ने आगे शाखाश्रित कामला की चिकित्सा के प्रसंग में कहा है कि—जो कामला का रोगी तिलकल्क के सदृश श्वेत वर्ण के मल का निःसरण करता है वहाँ कफ द्वारा मार्ग अवरुद्ध हुआ जानना चाहिए। शाखास्थित पित्त के नाश के लिए वहाँ कफहर चिकित्सा अर्थात् अवरुद्ध मार्गों को खोलने की होनी चाहिए जिस से पित्त का निःसरण पित्त-नलिकाओं द्वारा पक्वाशय में होने लगे ; क्योंकि कफ के नाश से अवरुद्ध मार्ग खुल जाता है और पित्त अपने स्रोतों में स्वयं गति करने लगता है जिस से मल का वर्ण स्वाभाविक पीला हो जाता है। कामला के हेतु और सम्प्राप्ति में आयुर्वेद व एलोपैथी—दोनों का एक मत यह है कि वेगों के रोकने से अर्थात् पित्तस्राव का वेग अपने मार्ग में अश्मरी-कैन्सर, शोथ या कफ द्वारा अवरुद्ध हो जाने से वह रुका हुआ पित्त मार्गावरोधवश रक्तवाहिनियों द्वारा चूस लिया जाता है, जिस से रक्त में पित्त की अधिकता हो जाती है। इस प्रकार वह पित्त स्वस्थान से बाहर फेंका जाकर पुरुष के नेत्र, मूत्र, त्वचा का वर्ण तो हल्दी के सदृश कर देता है लेकिन आन्त्र में उस का श्रवण न होने से मल का वर्ण श्वेत ही रहता है। क्योंकि पित्त के शाखाओं ( रक्त आदि धातुओं तथा त्वचा, नेत्र, नख ) में आश्रित होने के कारण उस की आन्त्र ( कोष्ठ ) में अल्पता हो जाती है।

चरक के उक्त लेख से विदित होता है कि चरक ने कामला के दो भेद किए हैं—(१) कोष्ठाश्रित कामला जिस में पुरीष का वर्ण पीला व लाल होता है। इस में पित्त का स्राव आन्त्रों ( कोष्ठ ) में तो होता ही है लेकिन पित्ताधिक्य के कारण वह पित्त रक्त में भी परिभ्रमण करता है और (२) शाखाश्रित कामला जिस में पित्त का स्राव पित्तनलिकाओं के अवरोधवश कोष्ठ में न हो कर उस की गति रक्तादि शाखा-मार्गों में होने लगती है और इस प्रकार पुरीष का वर्ण श्वेत रहता है। एलोपैथी में भी इस के समान ही कारण-भेद की दृष्टि से कामला के मुख्य दो भेद किए हैं—( १ ) अर्थात् इस में वैकृत पित्त की रक्ताभिसरण में अधिकता होती है अथवा रक्त में पराश्रयी जीवों की उपस्थिति के कारण रक्त-कोषों के निरन्तर टूटने से उस का रंजक पित्त रक्ताभिसरण में स्वतन्त्रतया परिवहन करने लगता है जो परिणामस्वरूप नेत्र,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

त्वचा, नख, व श्लैश्मिक कलाओं में पीतता उत्पन्न करता है लेकिन मल को श्वेत नहीं करता क्योंकि इससे पित्तनलिकाओं में अवरोध नहीं होता अपितु रक्त में पित्त की उपस्थिति विषद्रव्य द्वारा रक्तकोषों के टूट जाने से उसके रंजकपित्त के रक्ताभिसरण में स्वतन्त्रतया गति करने से होती है। इसे कोष्ठाश्रित कामला कहना चाहिए। एलोपैथी में कामला का दूसरा भेद (अवरोधजन्य) है। इसमें पित्तनलिकाओं में अवरोध होने से पित्त का स्राव कोष्ठों में नहीं होता है और परिणामतः उसका परिवहन रक्तादि शाखाओं में होनेलगता है। इससे पुरीष में पित्त के न मिलने से उसका रंग श्वेत ही रहता है। इसे शाखाश्रित कामला कहना चाहिए। पित्तनलिकाओं के अवरोध के अनेक कारण हैं, उसके अनुसार इस अवरोध जन्य कामला के कई प्रभेद हो जाते हैं—इसका सब से पहला और प्रमुख प्रभेद पित्तनलिकाओं का प्रदाहजन्य शोथ है उसे प्रदाहशोथजन्य कामला कहते हैं।

प्रदाह शोथजन्य कामला—यह कामला के अन्य सब प्रभेदों की अपेक्षा अधिक होता है। इसमें पित्तनलिकाओं में जीवाणुओं के संक्रमण से प्रदाहजन्य शोथ हो जाता है जिससे नलिकाओं का आभ्यन्तर मार्ग तंग व संकीर्ण हो कर अवरुद्ध भी हो जाता है। पित्तनलिका का मुंह आन्त्रों के निकट सम्पर्क में होने से आन्त्रों के जीवाणुओं का संक्रमण पित्तनलिकाओं और उस से ऊपर पित्ताशय तक हो सकता है। शीत के प्रकोप तथा विषम आहार-विहार के प्रभाव से भी यह हो सकता है। इसके लक्षण यह होते हैं—त्वचा और आँख का शुक्ल भाग गहरे पीले रंग का, आलस्य, निद्रालुता, मलाक्त फटी हुई रेखाओं से युक्त जिह्वा, भोजन की अनिच्छा, कोष्ठबद्धता या अतिसार, मूत्र का रंग काला और पुरीष का रंग साधारण पीला तथा वह कीचड़ जैसा बदबूदार होता है। पुरीष में ये लक्षण कोष्ठ में अवरोधवश पित्त का निःसरण न होने से होते हैं जिसके परिणामस्वरूप रोगी घृत व वसा आदि को पचा नहीं सकता है और मल में शकृतरंजकपित्त की सर्वथा अनुपस्थिति होती है। इस प्रकार के कामला में त्वचा का रंग शनैः-शनैः पीला होकर अधिक गहरा पीला हो जाता है और तदनन्तर उसी क्रम से कम से कम हो कर लुप्त हो जाता है। इसके कारणों में 'संक्रमित यकृतशोथ', भी है।

अश्मरीजन्य कामला—इस में पित्तवह नलिकाओं का मार्ग अश्मरी से अवरुद्ध हो जाता है। रोग-लक्षण उपर्युक्त होते हैं, लेकिन अश्मरीजन्य वेदना, स्वेद, कंपकंपी, व्याकुलादि विशेष लक्षण होते हैं।

जीर्ण अवरोधजन्य कामला—इसमें पित्तवह स्रोतों के आभ्यन्तर मार्ग में रुकावट नहीं होती अपितु नलिकाओं पर बाहर से दबाव पड़ता है जिससे पित्तवह नलिकाएँ अवरुद्ध हो जाती हैं। पित्तनलिकाओं पर बाहर से दबाव उसके पार्श्ववर्ती अवयव क्लोमग्रन्थि के शीर्ष के अर्बुद के कारण हो सकता है। पित्तवह नलिकाओं पर अर्बुद का दबाव निरन्तर पड़ने से पित्तवह नलिकाओं में पूर्ण अवरोध उत्पन्न हो जाता है, जिसके कारण जीर्ण कामला के लक्षण पैदा होते हैं। इसमें त्वचा का रंग शनैः-शनै पीला होना शुरू होता है, फिर गहरा पीला और उससे भी गहरा पीला होकर अन्त में जैतून के रंग का हरिताभ पीला हो जाता है। इस प्रकार के दीर्घस्थायी कामला में त्वचा में अत्यधिक कण्डू उत्पन्न हो जाता है। अवरोधजन्य कामला में पित्त के रंजक द्रव्य जहां रक्ताभिसरण में गति लगते हैं, वहाँ पित्त के लवण भी रक्त में उपस्थित

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हो जाते हैं जिससे रक्तस्कन्दन की अवधि दीर्घ हो जाती है। अतः ऐसे रोगियों पर शल्यकर्म करना, सदैव रक्तस्राव पैदा होने का भय पैदा करता है।

शिशु कामला—यह सद्य प्रजात शिशुओं में होता है। सम्भवतः इस का एक कारण यह है कि शिशु के जन्म लेने के बाद ही उस के गर्भ-कालिक रक्त का सहसा नाश होना प्रारम्भ होता है जिस के परिणामस्वरूप रक्तरञ्जक पित्त रक्त में स्वतन्त्रतया गति करने लगता है। यह प्रायः जन्म के बाद सामान्य रूप से हुआ करता है और बिना कोई उपद्रव किये बिना इलाज के स्वयं शान्त भी हो जाता है। इस के सिवाय सम्भवतः इस का एक कारण यह भी होता है कि किन्हीं शिशुओं में गर्भकालिक पित्त प्रयोग में न आने से बहुत गाढ़ा होता है जिस कारण पित्त यकृत में चिरकाल तक स्थिर पड़ा रहता है। इस से उस पित्त का रक्त-परिवहन में पुन-राचूषण होता है और वह पित्त रक्त में जाकर कामला के लक्षण प्रकट करता है। शिशुकामला का एक दूसरा भेद वह होता है जिस में गर्भ-काल में ही पित्तानलिकाओं का मुख तथा मार्ग खुला न हो अपितु बन्द हो, यह अवस्था गंभीर और घातक होती है। यह अवस्था जन्मजात फिरङ्ग के कारण हो सकती है। इस में शीघ्र ही शल्यकर्म द्वारा पित्तनलिकाओं का मुंह व मार्ग खोलना चाहिए।

रक्तविश्लेषी कामला—जब किसी कारणवश रक्त के रक्त-कोष टूटने लगते हैं और उन का रंजक पित्त रक्तपरिवहन में स्वतन्त्रतया गति करने लगता है तब यह होता है। ऐसा प्रायः दो कारणों से होता है। ( १ ) रक्त के गंभीर रोगों—घातक पांडु अथवा रक्तकणों के आशा-तीत रूप से क्षय होने पर होता है। इस में घातक पांडु और कामला के लक्षण होते हैं। ( २ ) रक्त में वैज्ञानिक रूप से किसी विष के कारण रक्तकोषों का विश्लेषण होने से होता है। प्रायः सर्पविष, ट्राईनाइट्रो-टोल्यून, मलेरिया, जिस में तीव्रवेग से रक्तकणों का नाश होता है, में कामला के लक्षण प्रकट होते हैं।

व्यापक संक्रमित कामला- इस का प्रसार व्यापक रूप से होता है। यह 'स्पाइरोकीटा' या 'लैप्टौस्पाईरा-इक्टरो-हैमरेजिका' नामक जीवाणु के संक्रमण के कारण होता है जिस का सर्व-प्रथम अन्वेषण १९१४ में जापान में हुआ था। मनुष्य-शरीर में पहले पाँच छः दिनों में स्पाइरो-कीट्स रक्ताभिसरण में उपस्थित होते हैं तदनंतर मूत्र में प्रकट होते हैं। अभी तक ऐसा नहीं जाना गया कि ये 'स्पाइरोकीट्स' शरीर के भीतर किसी कीट-पतंग के काटने से प्रवेश करते हैं। किन्तु सम्भवतः छिली हुई त्वचा में से उन उन का सीधा संक्रमण रक्त में हो सकता है। इन का संक्रमण चूहों द्वारा भी होता है और विषाक्त स्पाइरोकीट्स उन के मूत्र में भी विद्य-मान रहते हैं जो उन में किसी प्रकार का विकृति-जनक लक्षण नहीं पैदा करते। पर सम्भवतः जल के द्वारा मनुष्य-शरीर में स्पाइरोकीट्स का संक्रमण हो सकता है। इस रोग का आक्रमण सहसा शिरोवेदना, कंपकंपी, अत्यधिक अङ्ग-साद और १०३ अंश से १०५ अंश फा० ताप-मान के साथ प्रारम्भ होता है। नाड़ी की गति अपेक्षाकृत मन्द होती है और शायद ही उस की गति प्रति मिनट १०० से ऊपर होती है। इस में क्षुधानाश, जीभ मलाक्त फटी हुई, उत्क्लेश, वमन और कोष्ठबद्धता होते हैं। प्रायः ओष्ठों पर पपड़ी और अङ्गों में वेदना होती है। इस के प्रारम्भ होने के चौथे दिन कामला के लक्षण प्रकट होते हैं जिस की चरमावस्था नौवें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तथा दसवें दिन होती हैं। इस में सर्वप्रमुख लक्षण शरीर के विभिन्न अवयवों से रक्तस्राव होना होता है। यह रक्तस्राव प्रायः नाक, आन्त्र और उदरकला की श्लैष्मिक झिल्लियों में अधिकतर देखा जाता है। यकृत का स्वरूप बढ़ जाता है, उस में स्पर्श करने से वेदना प्रतीत होती है लेकिन प्लीहा में शायद ही वृद्धि होती है। कामला के लक्षण पैदा होने पर दूसरे सप्ताह के बाद मूत्र में पित्त एल्ब्यूमिन और स्पाइरोकीट्स वर्तमान होते हैं और तब तक वर्तमान रह सकते हैं जब कामला के लक्षण लुप्त भी हो जाएँ। रक्त में ल्यूकोसाईट्ट (श्वेतकण) की वृद्धि हो जाती है। तापमान धीरे-धीरे सात से चौदह दिनों में उतरने लगता है। लेकिन तीसरे सप्ताह में ज्वर पुनः १०३ अंश फा० तक हो सकता है। अन्य लक्षण भी पुनः प्रकट हो जाते हैं और ये सात से दस दिनों तक रह कर पुनः लुप्त हो जाते हैं। इस रोग से मृत्यु बहुत कम होती है। इस के रोगियों की अधिकाँश संख्या रोग-मुक्त हो जाती है।

## दिल्ली का पीलिया रोग

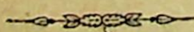
दिल्ली में जो पीलिया रोग फैल रहा है उस में प्रारम्भिक लक्षण ये देखे गए हैं—भूख न लगना, सिर दर्द, भयंकर कब्ज, पेट दर्द, जी मिचलाना (उत्क्लेश) वमन, और कंपकंपी के साथ साधारण ज्वर। इस के बाद पीलिया लक्षण प्रकट होते हैं जिस में आँखें पीली, पेशाब का रंग गहरा पीला, त्वचा का रंग पीला और मल का रंग श्वेत हो जाता है। यकृत् और पित्ताशय के स्थान पर दबाने से दर्द अनुभव होती है। किसी-किसी को खुजली भी हो सकती है। पीलिया पहले आँखों में प्रकट होता है और फिर क्रमशः सारे शरीर में फैल जाता है।

उक्त विवरण से यह तो स्पष्ट है कि दिल्ली में जो रोग व्यापक रूप से फैल रहा था, वह था तो पीलिया ही। लेकिन एलोपैथी और आयुर्वेदिक दृष्टि से उस को किस प्रकार के पीलिया में परिगणन करना चाहिए, यह हमने ऊपर जो कामला के भेद गिनाए हैं उन में से कोई होना चाहिए। क्योंकि दिल्ली में पीलिया रोग व्यापक व संक्रामक रूप से फैल रहा था अतः उस का कारण किसी प्रकार के विष या जीवाणुओं का शरीर में संक्रमित होना है। यह संक्रमण बाढ़ आने के बाद वहाँ जो मक्खियों, मच्छरों अथवा चूहों की वृद्धि हुई होगी उस से ही हुआ प्रतीत होता है। पिछले दिनों वहाँ जो अशुद्ध पानी पीने को मिला उस से भी इस रोग के संक्रमण होने की सम्भावना प्रकट की जा रही है।



# ज्ञातव्य बातें

- सन् १९५४ में भारत में बिजली का उपयोग करने वालों की संख्या बढ़ कर २१ लाख ६४ हजार ७८२ हो गयी। सन १९५० में यह संख्या १५ लाख ७३७ थी।
- दूसरी पञ्चवर्षीय आयोजना में गांवों में बिजली लगाने के लिए ७५ करोड़ रु० की व्यवस्था की जा रही है।
- सन १९५५-५६ की जनवरी में भारत सरकार को चीनी पर उत्पादन-शुल्क से १४ करोड़ ९ लाख रु० की आमदनी हुई।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पंचनदीय-संस्कृत-साहित्य-सम्मेलने

# अध्यक्षीय-भाषणम्

श्री इन्द्र विद्यावाचस्पतिः

पंचनदप्रदेशो मम जन्मस्थानम्। तत्र संस्कृत-सम्मेलननिमित्तमाहूय, देववाणीं सभाजयितुं, भवतः सर्वान् नमस्कर्तुं च भवद्भिर्मह्यमवसरो दत्त इत्यहं भवद्भ्यः प्रभूतान्धन्यवादान्वितरामि। इतिहासविज्ञा एवं कथयन्ति यदाद्यैः ऋषिभिरस्मिन्नेव पंचनदप्लाविते प्रदेशे ऋचः प्रगीताः, स्मृतिग्रन्थाश्च निर्मिताः। ततः कालादद्यपर्यन्तमनेके युगा उपयुगाश्च व्यतीताः, अस्मिन् प्रदेशे राजवंशाः समुत्थिताः पतिताश्च, आक्रान्तारः समागताः गताश्च, परमनेकासां संस्कृतीनां क्रीडास्थल भूत्वाऽपि प्रदेशोऽयमद्यापि प्राचीनामार्षसंस्कृतिं मनसा हृदयेन च सम्मानयतीत्यत्र अणुरपि सन्देहावसरो नास्ति। यथायं प्रदेशोऽस्माकम्मातृभूमेः उत्तरदिशास्थो रक्षादुर्गस्तथैवास्माकं संस्कृतेः धर्मस्य चापि रक्षादुर्गो भविष्यतीत्यहं सर्मात्मना आशासे।

यदास्माकन्देशः पराधीनतापाशे निबद्ध आसीत्तदा बहवो भारतीया स्वात्मानम् अन्वेष्टुम् इंग्लैण्डे अन्येषु वा विदेशेषु पर्यटन्त, परं स्वाधीनतालाभानन्तरं स्पष्टमिदं संजातं यदस्माकं राष्ट्रस्य अन्तरात्मा नोपलब्धुं शक्यते पाश्चात्यदेशेषु, नापि पातालदेशेषु, स तु शक्यते प्राप्तु स्वदेशस्य प्राचीने वाङ्मये, प्राचीनेषु शिलालेखेषु, प्राचीनासु च जनश्रुतिषु। तेषु चापि सर्वेषु प्रधानं वेदादारभ्य पातञ्जलमहाभाष्यपर्यन्तं समस्तं देव वाणीवाङ्मयं यस्मिन् हि भारतस्यान्तरात्मा सन्निहितः—

यस्यामदः सन्निहिताः समस्ता<br>
धर्मेतिहासस्मृति-दर्शनाद्याः।<br>
अस्माकमात्मस्थितिसारभूताः<br>
तां देववाणीं बहुशो नमामः॥

अस्माभिरधुनास्वाधीनभारतस्य नवसंविधाने हिन्दीभाषाराजभासात्वेनाङ्गीकृता, सापि संस्कृतभाषास्कन्धमारुह्यैव प्रचलितुं शक्नोति नान्यथा। एभिरेव कारणैः देशस्य नेतारः साम्प्रतमेतन्मन्यन्ते यत्सर्वेभ्यो भारतीयेभ्यः संस्कृतभाषायाः कार्यक्षमं ज्ञानमावश्यकं वर्तते। श्रद्धेयेन राष्ट्रपतिमहोदयेन उपराष्ट्रपतिमहोदयेन च बहुश उद्घोषितमेतन्मतमन्यैश्च शिक्षाविज्ञैर्देशनेतृभिरनुमोदितम्। तदद्य संस्कृतवाङ्मयस्य संस्कृतसाहित्यस्य च समुज्जीवितोपयोगित्वं साध्यकोटीं विहाय सिद्धकोटीं प्रविष्टमित्यसंदिग्धम्।

एतावन्मया संस्कृतस्य राष्ट्रियमहत्त्वमुपलक्ष्य निवेदितम्। वस्तुतः संस्कृतस्य अन्ताराष्ट्रियं महत्वं तु इतोऽपि बृहत्तमम्।

न स देशो न तद्राष्ट्रं यस्य साहित्यसंग्रहः।<br>
देववाणीमयैर्ग्रन्थैः शोभनै र्नैव शोभितः॥

प्रायः सर्वेषामेव सभ्यदेशानां प्रमुखपुस्तकालयेषु संस्कृतग्रन्था विनिहिताः सन्ति, तान्विना पुस्तकालयः अपूर्ण इति मन्यते। विविधासु विदेशीयभाषासु वेदस्मृति रामायणमहाभारतादिप्राचीनग्रन्थानां शाकुन्तलादिनवग्रन्थानां चानुवादाः प्रकाशिताः सन्ति, अद्यापि च प्रकाश्यन्ते। योरोपस्य,अमेरिकायाः, चीनाफगानिस्थानादिपौरस्त्यदेशानां च विश्वविद्यालयेषु न केवलं संस्कृतमध्याप्यते अपितु तेषु तत्रत्याः संस्कृतविशेषज्ञा अत्यन्तमादरणीया मन्यन्ते, प्रोत्साहनं च प्राप्नुवन्ति। पाश्चात्यविदुषां संस्कृताध्ययने तत्सम्बन्धिनि अनुसन्धानकार्ये प्रवृत्तिं च प्रेक्ष्य मनः अत्यन्तं मोदते।

देववाणी प्रायः सर्वासां भारतीयभाषाणां जननीति निर्विवादमेव, विशेषस्त्वयं यत्सा बहूनां

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रमुखपौरस्त्य-पाश्चात्यभाषाणां जननी, ज्येष्ठभगिनीं वेति सर्वैरपि विद्वद्भिः स्वीक्रियते। स्पष्टमेतद् यद्विश्वबन्धुत्वस्थापनाय संस्कृतभाषातोऽभ्यधिकशक्तिशालिनी प्रेममयी शृंखला नान्या उपलब्धुं शक्यते।

प्रसिद्धमेतद्यच्छिलावज्जडोऽपि जनः "तत्त्वमसीति" बोधितः स्वात्मानमनुपश्यति परं वयमेतादृशाः भावशून्या यद्विदेशीयपण्डितैः "युष्मद्भाषा सर्वभाषाग्रजा, सर्वश्रेष्ठा चेति" प्रतिबोधिता अपि न निजगौरवस्य प्रतीकभूतां देववाणीं प्रति तथा दत्तावधाना जाता यथास्माभिर्भवितव्यम्।

एषा दशासीद्विक्रमस्य विंशशताब्द्याः मध्यपर्यन्तम्। तं कालं वयमन्धकारकाल इति व्याहरामः। महाकविना सम्यगुक्तम्—"नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण", शास्त्राणि निर्दिशन्ति यन्महाप्रलयस्यापि समाप्तिर्भवति, निशा हि प्रतिदिनमेव प्रभाते विलीयते। विंशशताब्द्या उत्तरभागे भारतीयेतिहासस्य रात्रिरपि विलयं गता। बहुभिराचार्यैः सुधारकैश्च देशस्य दुर्दशाम्प्रेक्ष्य राष्ट्रस्य निद्राभंगाय डिण्डिमध्वनिः कृतो येनास्माकं व्यतीतगौरवं, विस्मृतं वाङ्मयं, स्मृतिपथादवतीर्णश्चेतिहासः पुनरपि जजागार। तदास्माभिरनुभूतं यदस्माभिरन्याभिः सर्वाभिः स्वकीयसम्पत्तिभिः सह देववाणीवाङ्मयमपि उपेक्षागर्ते पातितम्।

भारते संस्कृतपाण्डित्यस्य संस्कृतशिक्षायाश्च ह्रासस्य गाथा नितरां खेदकरी। आंग्लानाम्भारताधिपत्यात्पूर्वं सर्वस्मिन्देशे, तत्र तत्र, संस्कृतपाठशाला वितता आसन्। वाराणसी-नवद्वीप-मिथिलादिनगरेषु तु पाण्डित्यस्य भागीरथीव प्रवहति स्म। सहस्रशः छात्राः तस्यां नवद्वीपशास्त्रज्ञाः भवन्ति स्म। आंग्लराज्येन सह भारते आंग्लभाषायाः पाश्चात्यसंस्कृतेश्च यो महाञ्जलविप्लव इव पूरः समागतस्तेन प्राचीनानि संस्कृतस्य केन्द्राणि नष्टप्रायाणि कृतानि। यानि नवीनानि केन्द्राणि निर्मितानि तत्र न संस्कृतस्योच्चशिक्षा प्रदीयते, अपितु आंग्लभाषायां संस्कृतविषये कतिचिद् ग्रन्था अध्याप्यन्ते। फलतः वर्त्तमानराज्यसम्मतविश्वविद्यालयानां संस्कृतस्नातकाः देववाणीसरस्वतीरे भ्रमितुं शक्ताः, न तु तस्य मधुरं जलं पातुं, जले प्रविश्य स्नानानन्दमुपलब्धुं वा समर्थाः। विद्यालये तु संस्कृतशिक्षायाः नितरामभाव एव भविष्यतीत्याशंका जायते। या आचार्य-शास्त्र्यादिपरीक्षाः प्रचलिता आसन् ताः शीघ्रमेव नामशेषा भूत्वा ऐतिह्यांशतां प्राप्स्यन्तीति संभावना समुत्पन्ना। एकतः श्रद्धेयराष्ट्रपतेः उपराष्ट्रपतेश्च संस्कृतप्रशस्तिपराणि भाषणानि, अन्यतश्च शिक्षाविभागस्य संस्कृतम्प्रति उपेक्षाभावः—आश्चर्यकरोऽयं भावानां भावनानां च परस्परविरोधी व्याघातः।

संस्कृतज्ञानशिक्षणादिविषये पंचनदप्रदेशस्य दशा तु नितरां शोचनीया। देशस्य अन्येषु प्रदेशेषु विशेषरूपेण दक्षिणभागे अद्यापि संस्कृतप्रेम संस्कृतपाण्डित्यं च क्वचित्क्वचिदुपलभ्यते। तेषु प्रान्तेषु अनेके आंग्लभाषायां प्राप्तोपाधयोऽपि विद्वांसो देववाणीपारंगताः तन्मर्मज्ञाश्च उपलभ्यन्ते। परमस्मिन् पाणिनिमुनिजन्मपरिपूते प्रवेशे संस्कृतपाण्डित्यं सीमितमिव संजातम्। सन्ति विद्वांसो महाविद्वांसश्च, परन्तु तेषाम्मनसस्तादृश एव भावः, यादृशो राज्ञा दिलीपेन वशिष्ठमुनेः समक्षे प्रकाशितः। तेनोक्तमासीत्—

"नूनं मत्तः परं वंश्याः पिण्डविच्छेददर्शिनः।
न प्रकामभुजः श्राद्धे स्वधासंग्रहतत्पराः॥"

अस्मदनन्तरमस्मिन्प्रदेशे संस्कृतस्य का गतिर्भविष्यतित्येषा चिन्ता तान् प्रतिदिनं बाधते। सुसमाचारोऽयं समाचारपत्रेषु प्रकाशितः, प्रामा-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

णिकरूपेण समुद्घोषितश्च यत्पंचनदराज्यस्य मन्त्रिणः कुरुक्षेत्रतीर्थे संस्कृतविश्वविद्यालयमेकं संस्थापयितुमिच्छन्तीति। इदमपि श्रुतं यद्दानवीरेण बिड़लामहोदयेन पंचलक्षपरिमिता राशिस्तस्मै प्रदत्ता इति। शुभोऽयं समाचारस्तदर्थं तन्त्रिणो दानिनश्च धन्यवादानर्हन्ति। परन्तु क्षीणतोन्मुखस्य संस्कृतस्योद्धाराय एकस्मिन् अनेकेषु वा प्रान्तेषु विश्वविद्यालयस्थापनमात्रन्न पर्याप्तम्। विश्वविद्यालयाः संस्कृतस्योच्चशिक्षाम्प्रोत्साहयिष्यन्तीत्यत्र सन्देहो नास्ति. परन्तु केवलमेतावता सार्वदेशिकी संस्कृतस्य अधःप्रवृत्तिर्निवारिता भविष्यति। तदर्थं राज्येन जनैश्च एकचित्तीभूय कतिचिद्विशिष्टा उपायाः करणीयाः तेषु उपायेषु केचिदत्र मया निवेद्यन्ते—

(१) भारतीयबालकानाम्माध्यमिकशिक्षायां संस्कृतस्य अनिवार्यं स्थानम्भवेत,

(२) विज्ञानेतिहासादिविषयकाणां सुगमपुस्तकानां संस्कृतभाषायाम्प्रसारः प्रोत्साहनीय;

(३) विद्यालयेषु शिक्षणकार्यं कुर्वतां संस्कृताध्यापकानामांग्लभाषाशिक्षकसमानमेव मासिकं वेतनं पदं च निश्चेतव्यम्

(४) राजकीयसेवादृष्ट्या शास्त्रिपरीक्षोत्तीर्णाः बी० ए०-समानाः, आचार्यपरीक्षोत्तीर्णाश्च एम० ए -समाना मन्तव्याः। शास्त्राचार्यादिपरीक्षाणां योग्यतास्तरमुच्चैः कर्त्तुं, तत्तत्परीक्षार्थं पाठविधौ गणितविज्ञानेतिहासादिविषयाणामपि सन्निवेशः कर्त्तव्यः।

तिरुपतिपुरे विश्वसंस्कृतसम्मेनलस्य यदधिवेशनमभूत्तस्मिन् राज्यद्वारा प्रान्ते-प्रान्ते संस्कृतविश्वविद्यालयानां स्थापनाः तेषां सर्वेषां पाठविधौ साम्यस्थापनाय अखिलभारतीयसंस्कृतशिक्षापटलस्थापनस्य च अनुरोधः कृतः। सर्वेऽप्येते प्रस्तावाः नितरामुपयुक्ताः, सामयिकाश्च, राज्याधिकारिभिः प्रजाजनैश्च एकीभूय ते कर्मकोटीं प्रापणीया इति सर्वथा प्राप्तकालम्।

इत ऊर्ध्वं मया किंचित्संस्कृतपण्डितानां पुरतोऽस्ति निवेदनीयम्। यदि वयं संस्कृतभाषायाः प्रभूतम्प्रचारमिच्छामस्तदास्माभिरेष यत्नः करणीयो यत् सा सर्वैः जनैः सुखेन बोध्या ग्रन्थिरहिता च भवेत। भाषायाः काठिन्यं दुरूहत्वं च तस्याः प्रचारे बाधकन्तु भवत्येव, लेखकं वक्तारं च पाठकेभ्यः श्रोतृभ्यश्च व्यर्थं करोति। 'वक्तुरेव हि तज्जाड्यं, यत्र श्रोता न बुध्यते'। प्राचीनैः वाल्मीकि-व्यास-भास-कालिदासाद्यैर्महाकविभिर्या नैसर्गिकी वैदर्भी रीतिरंगीकृता सैव माषायाः तद्गतस्य वाङ्मयस्य च सार्वजनिकप्रचाराय श्रेयस्करी. न तु रीतिकालीना जटिलशब्दैः सुदीर्घसमासैः श्रवणकटुभिः सन्धिभिश्च युक्ता रीतिः। कल्पना क्रियताम् यत् केनापि महाविदुषा सार्वजनिकसभायां समुपस्थिताः संस्कृतज्ञा अल्पसंस्कृतज्ञाः संस्कृतानभिज्ञाश्च सदस्या एवं सम्बोधिताः—

"अयि वेदोपवेदवेदांगोपांगब्राह्मणोपनिषदैतिह्यपुराणादिसकलविद्यापारंगताः, न्याय-वैशेषिक-सांख्य-योग-मीमांसा-वेदान्त-बौद्ध-जैन-चार्वाकादिदर्शनचणाः, आन्वीक्षिकीन्यायविद्यादण्डनीत्यादिकलासु कुशलाः, सभासंचालनादिव्यावहारिकविद्यानिपुणाः श्रीमन्तो भवन्तो महाभागाः।" इदं श्रुत्वा श्रोतृणाम्मनसि "महानयं पण्डितः परन्तु महाकठिना संस्कृतवाणी" इत्येवं भावं विहाय न कोऽप्यन्यो भावः समुदेष्यति। यस्यां भाषायां शब्दाः सरलाः, समासाः अदीर्घा, सन्धयश्च स्वल्पाः स्युः, सा लेखकस्य वक्तुश्च यशो वर्धयति, श्रोतॄणां हृदयानि प्रसादयति, भाषां च लोकप्रियां ग्राह्याञ्च विदधाति।

यद्येवं राज्याधिकारिणः, संस्कृतविद्वांसः, सर्वे चान्ये देशवासिनः एकीभूय सहयोगवृत्त्या प्रयत्नं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुर्युस्तदा अचिरेणैव कालेन देशस्य गौरवभूता देववाणी पुनरपि भारतभूमिमिमां देवैरपि स्पृहणीयां कर्तुं शक्ष्यतीत्यत्र मम सन्देहोनास्ति।

अन्ते च मया एतत्प्रार्थ्यते—

"यथा प्रख्यापितः पूर्वं
देशोऽस्माकं जगद्गुरुः।
उदेतु सा पुनः पुण्या
दिव्या भारत-भारती॥"

—

# बबुई तुलसी

श्री रामेश बेदी

भारत में यह पौदा सदियों से मसालों में बरता जा रहा है। इङ्गलैंड में यह अपनी मसाले की सी सुगन्ध के कारण बहुत देर से लोकप्रिय है। तरी वाली सब्जियों और पुलावों में पत्ते डाले जाते हैं। कृत्रिम कछुए के शोर्वे और फेटर लेन चटनियों का यह अङ्ग है। फ्रेंच रसोई में भी न्याज़बो बहुत पसन्द की जाती है।

सुनहरी पीले रङ्ग का उड़नशील तेल सुगंधों (परफ़्यूमरी) में और अनेक प्रकार के पेयों में काम आता है।

## चिकित्सा में उपयोग

हकीमों के चार तुख्मों में एक बर्बरी के बीज हैं। इन्हें तुख्मे-रेहां कहते हैं। बङ्गाल में इन्हें तोकमारी कहते हैं। यह शब्द तुख्मे-रेहां का बिगड़ा हुआ रूप है।

## महास्रोतस के रोग

चिरस्थायी मलबन्ध में शर्बत के साथ बीज खिलाये जाते हैं। इन का फाण्ट भी पुरानी कब्ज़ में लाभ करता है। तेज़ दस्तावर दवा देने के बाद आँतों में क्षोभ को शान्त करने के लिए बीजों को ईसबगोल की तरह शर्बत से फँकाते हैं। प्रवाहिका (डिसेण्ट्री) और अतिसार में बीज लाभदायक होते हैं। बड़ों को चार माशे से आठ माशे तक शर्बत के साथ या खाँड मिला कर पानी के साथ फंका देने से बहुत लाभ होता है। बीजों के लेने की एक विधि यह है कि इन्हें थोड़े से पानी में भिगो छोड़ते हैं। भिगोने से ये फूल कर एक लेसदार पदार्थ में बन जाते हैं। इसे बीजों का लुआब या शीतनिर्यास कहते हैं। इस में खाँड मिला कर उपर्युक्त अवस्थाओं में खिलाते हैं। पुरानी पेचिश (डिसेण्ट्री) में बीजों के चूर्ण को बबूल की गोंद के साथ गुलाब के अर्क में लुआब बना कर खिलाते हैं या बीजों का फाण्ट बना कर देते हैं। अनाम में शीतनिर्यास वमन और अतिसार को दूर करने के लिए दिया जाता है। यह मुख की दुर्गन्ध को भी दूर करता है।

पत्तों का रस पेट के कीड़ों को मारता है। अजीर्ण तथा उदरशूल में और पेट के कीड़ों को मारने के लिए स्वरस पिलाते हैं। अफारे में देने से पेट की वायु निकल जाती है जिस से रोगी को सांस लेने में सुविधा हो जाती है। अग्निदीपन के लिए फूलों का भी प्रयोग किया जाता है।



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# गुरुकुल महोत्सव

१२ एप्रिल का मनोहर प्रभात। कुलभूमि में चहुँ ओर वार्षिक महोत्सव के प्रारम्भ होने का उल्लास छा रहा है। यह देखिए उत्सव के विशाल पट-मंडप की छाया में ब्रह्मचारिगण मांगलिक होमाग्नि प्रदीप्त कर के मन्त्र-पाठ पूर्वक उत्सव का प्रारम्भ कर रहे हैं। बृहद्-यज्ञ के समाप्त होने पर मंडप के पूर्वीय द्वार के सामने ओंकार की पताका को मुक्त व्योम में फहराने की क्रिया श्री स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक के हाथों से हो रही है। कुल के बालचर-बटु करीने से खड़े होकर पताका गीत गा रहे हैं।

इतने मांगलिक अनुष्ठानों के पश्चात् श्री पन्नालाल पीयूष के मधुर प्रार्थना-गीत हुए और फिर श्री स्वामी ब्रह्ममुनि जी का धर्मोपदेश हुआ। तदनन्तर श्री धर्मदेव जी विद्या-मार्तण्ड के सभापतित्व में वेद सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन में गुरुकुल के ब्र० विनोद कुमार, ब्र० दिलीप, ब्र० हेमसिंह, ब्र० प्रशान्त और ब्र० सुरेशकुमार आदि छात्रों ने वेद में गोपालन, अथर्ववेद का व्यापार-सूक्त, क्या अथर्ववेद जादू-टोनों का वेद है, आदि विषयों पर खोजपूर्ण निबन्ध पढ़े। वेदोपाध्याय श्री पं० रामनाथ जी वेदालंकार ने भी 'यज्ञों में पशुओं की चर्बी का प्रयोग' इस विषय पर एक अध्ययनपूर्ण निबन्ध का पाठ किया।

अपराह्न में दिल्ली विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष डाक्टर नरेन्द्रनाथ चौधरी की अध्यक्षता में देववाणी सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन में ब्र० अवधेश, ब्र० शांतिस्वरूप, ब्र० सत्यप्रकाश, ब्र० धर्मवीर, ब्र० सूर्यप्रकाश, ब्र० जगन्नाथ, ब्र० प्रशांतकुमार और ब्र० सुरेशकुमार आदि छात्रों ने "अल्प-शिक्षिते अस्मिन् भारतवर्षे प्रजातन्त्र-प्रणाली समुचिता न वा" इस विषय पर संस्कृत भाषा में सुन्दर वाद-विवाद प्रस्तुत किया। सभापति जी ने देववाणी के गौरव और उस के अध्ययन के महत्व पर प्रवचन किया।

रात्रि को कवि सम्मेलन की बड़ी रौनक रही। श्री देवराज दिनेश के सभापतित्व में रात को १२ बजे तक श्रोतागण काव्यमाधुरी का पान करते रहते। श्री बुद्धदेव विद्यालंकार, श्रीराम-शर्मा प्रेम, श्री अनिलकुमार विद्यालंकार, श्री शंभुनाथ आयुर्वेदालंकार, श्री रमानाथ अवस्थी, श्री कमल साहित्यालंकार, श्री सत्यव्रत सुगम, श्री महेशचन्द्र सिंहल, श्री दिनेश कुकरेती और श्री विराज आदि अनेक सुकवियों ने अपने काव्य-पाठ से श्रोताओं को लाभान्वित किया।

## द्वितीय दिवस

आज प्रातःकाल से ही दीक्षांत समारोह के कारण कुल में आनन्द छाया हुआ था। साढ़े आठ बजे महाविद्यालय-भवन के चौगान में सब कुलवासियों ने मिल कर कुलपताका-गीत द्वारा अपनी प्रिय कुलमाता की संवर्धना की। उस के बाद प्रतिवर्ष की भाँति सब कुलवासी शोभायात्रा ( जुलूस ) के रूप में व्यवस्थित होकर दीक्षांत-मंडप की ओर प्रस्थित हुए। आगे-आगे मंगल-वाद्य बज रहे थे। नौ बजे मांगलिक शंखध्वनि के पश्चात् दीक्षान्त-विधि प्रारम्भ हुई। कुल-वन्दना गाई गई और फिर पवित्र होमाग्नि के समक्ष नवस्नातकों को आचार्य श्री प्रियव्रत जी ने व्रत ग्रहण करवाया। इसी समय नवस्नातकों को विश्वविद्यालय के नियत वेष के रूप में चोले पहनाए गए! श्री आचार्य जी ने सब नवस्नातकों को प्रमाण पत्र प्रदान किए तथा स्नातकों ने नत-मस्तक हो कर सद्विद्य के प्रसार, मानवजाति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की सेवा और अपनी विद्यादात्री मातृसंस्था के के प्रति श्रद्धावान रहने की प्रतिज्ञाएँ की। श्री आचार्य जी ने अन्तिम पाठ के रूप में उपनिषद् के उस प्रसिद्ध प्रवचन ( सत्यवद, धर्मंचर आदि ) द्वारा नवस्नातकों को उद्बोधित किया।

इस के अनन्तर कुलपति श्री इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने आज के सभारम्भ के प्रधान अतिथि श्रीयुत अनन्तशयनम् आयंगर महोदय की विद्वत्ता, शालीनता, सरलता, उदारता और स्वसंस्कृतिप्रियता का परिचय देकर उन का अभि-



श्रीयुत अनंतशयनम् आयंगर

नन्दन किया और दीक्षान्त प्रवचन करने की प्रार्थना की। तुमुलहर्षध्वनि और माल्य-प्रदान के पश्चात्, माननीय आयंगर जी ने हिन्दी में ही दीक्षांत उपदेश किया। ( भाषण अन्यत्र दिया गया है )। दिल्ली विश्वविद्यालय की ओर से वहाँ के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष श्री डाक्टर नरेन्द्रनाथ जी चौधरी ने नवस्नातकों को देववाणी संस्कृत में आशीर्वचन कहे। पुराने स्नातकों की ओर से श्री दीनदयालु जी शास्त्री ने नवस्नातकों का स्वागत किया। नवस्नातकों की ओर से ब्र० गोपाल वेदालंकार ने भावपूर्ण भाषा में गुरुजनों और साथियों से विदाई ली और कृतज्ञता के विचार प्रकट किए। श्री स्वामी नारायणानन्द जी ने संन्यासी महात्माओं की ओर से नवस्नातकों को आशीर्वाद दिया और अन्त में स्वामिनी सभा के प्रधान के प्रतिनिधि के रूप में उपप्रधान श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार ने वैदिक वचनों द्वारा आशीर्वाद प्रदान किए। कुलगीत के पश्चात् समारोह समाप्त हुआ।

अपराह्न में भजनों के पश्चात् श्री क्षितीश जी वेदालंकार ने ऐतिहासिक पृष्ठभूमिका रचते हुए भारत की एकता पर बड़ा प्रोत्साहक भाषण दिया। आपने प्रांतवाद और भाषावाद की प्रचलित प्रवृत्तियों के दुष्परिणामों का चित्र प्रस्तुत करते हुए मातृभूमि की एकता को अक्षुण्ण बनाने की अपील की।

तत्पश्चात् गुरुकुलाचार्य श्री प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति ने भारतीय संस्कृति के अध्ययन, उन्नयन और संरक्षण की दिशा में किए गए गुरुकुल के प्रयत्नों का उल्लेख करते हुए आर्य जनता से कुल के लिए धन की अपील की।

रात को श्री स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक ने शिक्षा की सफलता पर व्याख्यान दिया। आपने बताया कि सच्ची शिक्षा मनुष्य का चारित्रिक निर्माण करती है और साथ ही वह उसे भौतिक दृष्टि से भी आत्मनिर्भर बनाती है इसलिए नवीन भारत में शिक्षा का पुनः निर्माण करते हुए हमें जीवन की सर्व-देशीय प्रगति साधने वाली शिक्षायोजना बनानी चाहिए।

## तृतीय दिवस

प्रातर्होम और भजन-कीर्तन के पश्चात् श्री



पं० यशपाल जी सिद्धान्तालंकार ने प्रभु प्राप्ति विषय पर बोलते हुए कहा कि जगत् की अशांति का प्रधान कारण यह है कि मनुष्य का सारा समय भौतिक विषयों में लगा रहता है। मनुष्य प्रभु चिन्तन में पाँच पल भी नहीं लगा सकता और फिर आत्मिक शांति चाहता है। इस के पश्चात् श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार के सभापतित्व में सरस्वती सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन में ब्र० सुरेशकुमार, ब्र० दिलीप, ब्र० हेमसिंह, ब्र० प्रशांतकुमार और ब्र० योगेन्द्रकुमार त्रिपाठी ने हिंदी भाषा में 'जगत की आधुनिक समस्याएँ वर्णाश्रम व्यवस्था द्वारा ही हल हो सकती है, इस विषय पर मनोहर वाद विवाद प्रस्तुत किया।

दोपहर बाद श्री पन्नालाल जी पीयूष के मनोहर भजनों के पश्चात् श्री स्वामी नारायणानन्द जी का उपदेश तथा श्री पं० शिवकुमार शास्त्री का भाषण हुआ और फिर श्री यशपाल जी सिद्धान्तालंकार के सभापतित्व में राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन में स्वाधीन भारत में स्वतन्त्र रूप से चलने वाले शिक्षणालयों की कार्य दिशा कैसी होनी चाहिए इस विषय पर अनेक विद्वानों ने अपने विचार प्रकट किए।

रात को भजनों के पश्चात् श्रीयुत विश्वनाथ त्यागी ने अपने विचारोत्तेजक भाषण में बताया कि स्वाधीनता के पश्चात् नवभारत के निर्माण में आर्यसमाज को अपना विशेष योग देना चाहिए। उस के लिए यह आवश्यक है कि आर्यसमाज के विद्वान् भारत के विद्याकेन्द्रों के विचारकों से ज्ञानचर्चा कर के वैदिक आदर्शों के आधार पर जीवन-निर्माण की योजनाएँ बनाएँ। पश्चिमी लोग अब भारतीय जीवन दर्शन और तत्वज्ञान की शिक्षा के लिए अच्छी मात्रा में आ रहे हैं, उन्हें आर्यसंस्कृति का विशुद्धस्वरूप आर्य समाज ही समझा सकता है।

तत्पश्चात् श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार ने ऋग्वेद के प्रसिद्ध सिन्धु सूक्त के अर्थ लगाने में पाश्चात्य विद्वानों ने कितनी भयंकर भूलें की हैं – इस बात का विशद विवेचन किया। आपने बताया कि वह सारा 'सूक्त' का वर्णन करता है— नदियों का नहीं। भाषाशास्त्र और भूगोल शास्त्र के आधार पर आपने पाश्चात्य स्थापनाओं का खूब खण्डन किया।

## चतुर्थ दिवस

प्रभात में गुरुकुलाचार्य श्री प्रियव्रत जी ने नवप्रविष्ट छात्रों का उपनयन कर के उन्हें गायत्री मन्त्र का उपदेश दिया और उन का वेदारम्भ संस्कार कर के ब्रह्मचारी के कर्तव्यों को समझाया।

अपराह्न में श्री पन्नालाल जी पीयूष के मधुर और भावपूर्ण भजनों के पश्चात् श्री शिवकुमार जी शास्त्री का व्याख्यान हुआ। फिर श्री धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड के सभापतित्व में दलितोद्धार सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। सम्मेलन में विभिन्न वक्ताओं ने बताया कि संविधान में दलितों को सवर्णों के समान अधिकारों की घोषणा कर देने मात्र से हमारा काम पूर्ण नहीं हो जाता। जब तक उन का सामाजिक दृष्टि से उत्कर्ष साधन नहीं होता तब तक यह समस्या पूर्ववत् विकट ही बनी रहेगी। सभापति जी ने इस विषय में आर्य समाज के दृष्टिकोण को ही सब से अधिक उपादेय बताया।

रात को हरिद्वार के श्रवणनाथ मठ के अधिपति श्री स्वामी शंकरानन्द जी के सभापतित्व में छात्रों का व्यायाम सम्मेलन सम्पन्न हुआ। इस

की सेवा और अपनी विद्यादात्री मातृसंस्था के के प्रति श्रद्धावान रहने की प्रतिज्ञाएँ की। श्री आचार्य जी ने अन्तिम पाठ के रूप में उपनिषद् के उस प्रसिद्ध प्रवचन ( सत्यवद, धर्मचर आदि ) द्वारा नवस्नातकों को उद्बोधित किया।

इस के अनन्तर कुलपति श्री इन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने आज के सभारम्भ के प्रधान अतिथि श्रीयुत अनन्तशयनम् आयंगर महोदय की विद्वत्ता, शालीनता, सरलता, उदारता और स्वसंस्कृतिप्रियता का परिचय देकर उन का अभि-



श्रीयुत अनंतशयनम् आयंगर

नन्दन किया और दीक्षान्त प्रवचन करने की प्रार्थना की। तुमुलहर्षध्वनि और माल्य-प्रदान के पश्चात् माननीय आयंगर जी ने हिन्दी में ही दीक्षांत उपदेश किया। ( भाषण अन्यत्र दिया गया है )। दिल्ली विश्वविद्यालय की ओर से वहाँ के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष श्री डाक्टर नरेन्द्रनाथ जी चौधरी ने नवस्नातकों को देववाणी संस्कृत में आशीर्वचन कहे। पुराने स्नातकों की ओर से श्री दीनदयालु जी शास्त्री ने नवस्नातकों का स्वागत किया। नवस्नातकों की ओर से ब्र० गोपाल वेदालंकार ने भावपूर्ण भाषा में गुरुजनों और साथियों से विदाई ली और कृतज्ञता के विचार प्रकट किए। श्री स्वामी नारायणानन्द जी ने संन्यासी महात्माओं की ओर से नवस्नातकों को आशीर्वाद दिया और अन्त में स्वामिनी सभा के प्रधान के प्रतिनिधि के रूप में उपप्रधान श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार ने वैदिक वचनों द्वारा आशीर्वाद प्रदान किए। कुलगीत के पश्चात् समारोह समाप्त हुआ।

अपराह्न में भजनों के पश्चात् श्री क्षितीश जी वेदालंकार ने ऐतिहासिक पृष्ठभूमिका रचते हुए भारत की एकता पर बड़ा प्रोत्साहक भाषण दिया। आपने प्रांतवाद और भाषावाद की प्रचलित प्रवृत्तियों के दुष्परिणामों का चित्र प्रस्तुत करते हुए मातृभूमि की एकता को अक्षुण्ण बनाने की अपील की।

तत्पश्चात् गुरुकुलाचार्य श्री प्रियव्रत जी वेदवाचस्पति ने भारतीय संस्कृति के अध्ययन, उन्नयन और संरक्षण की दिशा में किए गए गुरुकुल के प्रयत्नों का उल्लेख करते हुए आर्य जनता से कुल के लिए धन की अपील की।

रात को श्री स्वामी सत्यदेव जी परिव्राजक ने शिक्षा की सफलता पर व्याख्यान दिया। आपने बताया कि सच्ची शिक्षा मनुष्य का चारित्रिक निर्माण करती है और साथ ही वह उसे भौतिक दृष्टि से भी आत्मनिर्भर बनाती है इसलिए नवीन भारत में शिक्षा का पुनः निर्माण करते हुए हमें जीवन की सर्व-देशीय प्रगति साधने वाली शिक्षायोजना बनानी चाहिए।

## तृतीय दिवस

प्रातर्होम और भजन-कीर्तन के पश्चात् श्री



पं० यशपाल जी सिद्धान्तालंकार ने प्रभु प्राप्ति विषय पर बोलते हुए कहा कि जगत् की अशांति का प्रधान कारण यह है कि मनुष्य का सारा समय भौतिक विषयों में लगा रहता है। मनुष्य प्रभु चिन्तन में पाँच पल भी नहीं लगा सकता और फिर आत्मिक शांति चाहता है। इस के पश्चात् श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार के सभापतित्व में सरस्वती सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन में ब्र० सुरेशकुमार, ब्र० दिलीप, ब्र० हेमसिंह, ब्र० प्रशांतकुमार और ब्र० योगेन्द्रकुमार त्रिपाठी ने हिंदी भाषा में 'जगत की आधुनिक समस्याएँ वर्णाश्रम व्यवस्था द्वारा ही हल हो सकती है, इस विषय पर मनोहर वाद विवाद प्रस्तुत किया।

दोपहर बाद श्री पन्नालाल जी पीयूष के मनोहर भजनों के पश्चात् श्री स्वामी नारायणानन्द जी का उपदेश तथा श्री पं० शिवकुमार शास्त्री का भाषण हुआ और फिर श्री यशपाल जी सिद्धान्तालंकार के सभापतित्व में राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन में स्वाधीन भारत में स्वतन्त्र रूप से चलने वाले शिक्षणालयों की कार्य दिशा कैसी होनी चाहिए इस विषय पर अनेक विद्वानों ने अपने विचार प्रकट किए।

रात को भजनों के पश्चात् श्रीयुत विश्वनाथ त्यागी ने अपने विचारोत्तेजक भाषण में बताया कि स्वाधीनता के पश्चात् नवभारत के निर्माण में आर्यसमाज को अपना विशेष योग देना चाहिए। उस के लिए यह आवश्यक है कि आर्यसमाज के विद्वान् भारत के विद्याकेन्द्रों के विचारकों से ज्ञानचर्चा कर के वैदिक आदर्शों के आधार पर जीवन-निर्माण की योजनाएँ बनाएँ। पश्चिमी लोग अब भारतीय जीवन दर्शन और तत्वज्ञान की शिक्षा के लिए अच्छी मात्रा में आ रहे हैं, उन्हें आर्यसंस्कृति का विशुद्धस्वरूप आर्य समाज ही समझा सकता है।

तत्पश्चात् श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार ने ऋग्वेद के प्रसिद्ध सिन्धु सूक्त के अर्थ लगाने में पाश्चात्य विद्वानों ने कितनी भयंकर भूलें की हैं- इस बात का विशद विवेचन किया। आपने बताया कि वह सारा 'सूक्त' का वर्णन करता है— नदियों का नहीं। भाषाशास्त्र और भूगोल शास्त्र के आधार पर आपने पाश्चात्य स्थापनाओं का खूब खण्डन क्रिया।

## चतुर्थ दिवस

प्रभात में गुरुकुलाचार्य श्री प्रियव्रत जी ने नवप्रविष्ट छात्रों का उपनयन कर के उन्हें गायत्री मन्त्र का उपदेश दिया और उन का वेदारम्भ संस्कार कर के ब्रह्मचारी के कर्तव्यों को समझाया।

अपराह्न में श्री पन्नालाल जी पीयूष के मधुर और भावपूर्ण भजनों के पश्चात् श्री शिवकुमार जी शास्त्री का व्याख्यान हुआ। फिर श्री धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड के सभापतित्व में दलितोद्धार सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। सम्मेलन में विभिन्न वक्ताओं ने बताया कि संविधान में दलितों को सवर्णों के समान अधिकारों की घोषणा कर देने मात्र से हमारा काम पूर्ण नहीं हो जाता। जब तक उन का सामाजिक दृष्टि से उत्कर्ष साधन नहीं होता तब तक यह समस्या पूर्ववत् विकट ही बनी रहेगी। सभापति जी ने इस विषय में आर्य समाज के दृष्टिकोण को ही सब से अधिक उपादेय बताया।

रात को हरिद्वार के श्रवणनाथ मठ के अधिपति श्री स्वामी शंकरानन्द जी के सभापतित्व में छात्रों का व्यायाम सम्मेलन सम्पन्न हुआ। इस

के विद्यालय के छात्रों के सामूहिक व्यायाम के खेल दर्शनीय थे। कालेज के छात्रों के अङ्गबल के प्रयोग भी आकर्षक थे। इस प्रकार उत्सव सानन्द समाप्त हुआ।



# वेद का राष्ट्रीय गीत

लेखक–श्री प्रियव्रत वेदवाचस्पति। आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, प्रकाशन मन्दिर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय। मूल्य ५)।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध विद्वान आचार्य पं० प्रियव्रत वेदवाचस्पति की लिखी 'वेद का राष्ट्रीय गीत' यह पुस्तक अत्यन्त सुन्दर है। अथर्ववेद के १२ वें कांड का प्रथम सूक्त 'मातृभूमि सूक्त' के नाम से अत्यन्त प्रसिद्ध सूक्त है।

यह सूक्त हम ने सब से प्रथम सन् १९०६ में संस्कृत भाष्य के साथ मराठी में छापा था। २००० पुस्तकें छापी थीं। छप कर हमारे पास सौ दो सौ पुस्तकें आयीं होंगी। इस का बहुत विज्ञापन भी नहीं हुआ था। इतने में अंग्रेज सरकार ने इस पुस्तक की सब कापियां बम्बई प्रेस से ही जप्त की और जला दीं। इसी समय प्रयाग के किसी देश भक्त लेखक ने इस का हिन्दी अनुवाद छापा था। उस की भी तीन हजार प्रतियां जप्त कर के अंग्रेज सरकार ने जला दी थीं। इस तरह पहिले ६ महीनों में ही इस की मराठी और हिंदी की मिला कर लगभग पांच हज़ार प्रतियां अंग्रेजी सरकार ने जला दीं थीं। इतना प्रभावी यह राष्ट्रगीत है। तत्पश्चात् इस का मुद्रण करने पर जो प्रतिबन्ध लगा था वह अंग्रेज सरकार के जाने तक रहा। अब अपनी सरकार है इसलिए यह पुस्तक सुख से प्रकाशित हो सकती है। यदि यह पुस्तक अंग्रेजी सरकार के राज्य में प्रकाशित होती तो इस की भी अवस्था ऐसी ही होती। वैदिक राष्ट्रगीत का ऐसा और इतना प्रभाव है। इस राष्ट्रीय गीत का रहस्यसहित अर्थ प्रकाशित करने के कारण विद्वान लेखक प्रशंसा के लिए योग्य है।

प्रथम ६८ पृष्ठों की भूमिका में अनेक उपयुक्त विषयों की चर्चा की है। यह भूमिका इतनी अच्छी है कि वह हर एक पाठक के विचार पूर्वक पढ़ने योग्य है। वेद के विषय में प्राचीन आधुनिक विद्वानों की सम्मतियां यह इसका विभाग विशेष देखने योग्य है।

वेद के राष्ट्रीय गीत का और स्पष्टीकरण इस पुस्तक के द्वितीय भाग में १४४ पृष्ठों में प्रकाशित किया है प्रत्येक मंत्र का पृथक् पृथक् शीर्षक देकर बड़ा ही उपयुक्त तथा राष्ट्रीय भावना बढ़ाने वाला स्पष्टीकरण देने से विद्वान लेखक के विषय में बड़ा आदर उत्पन्न होता है। वेद के उपयुक्त विषयों के ऐसे ही ग्रन्थ विद्वानों के द्वारा प्रकाशित होने चाहियें। गुरुकुल का प्रकाशन मन्दिर इस क्षेत्र में अच्छा कार्य कर रहा है। इस कार्य से गुरुकुल की शोभा बढ़ रही है।

यह राष्ट्रीय गीत वेद के उत्तम सूक्तों में से एक है। प्रत्येक मन्त्र में कुछ न कुछ अच्छा ही बोध है। इसलिये हम पाठकों से यही अनुरोध करेंगे कि वे इस सूक्त के प्रत्येक मन्त्र का मनन-पूर्वक पाठ करें और राष्ट्रभक्ति से अपने मन प्रफुल्लित करें। —वैदिक धर्म, जुलाई ५५।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# स्वाध्याय के लिए चुनी हुई पुस्तकें

## वैदिक साहित्य

| | | |
|---|---|---|
| ईशोपनिषद्भाष्य | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | २) |
| वेद का राष्ट्रिय गीत | श्री प्रियव्रत | ५) |
| वेदोद्यान के चुने हुए फूल | श्री प्रियव्रत | ५) |
| वरुण की नौका, २ भाग | श्री प्रियव्रत | ६) |
| वैदिक विनय, ३ भाग | श्री अभय | २), २), २) |
| वैदिक वीर-गर्जना | श्री रामनाथ | ।।।=) |
| वैदिक-सूक्तियां | ,, | १।।।) |
| आत्म-समर्पण | श्री भगवद्दत्त | १।।) |
| वैदिक स्वप्न-विज्ञान | ,, | २) |
| वैदिक अध्यात्म-विद्या | ,, | १।) |
| वैदिक ब्रह्मचर्य गीत | श्री अभय | २) |
| ब्राह्मण की गौ | श्री अभय | ।।।) |
| वेदगीताञ्जलि ( वैदिक गीतियां ) | श्री वेदव्रत | २) |
| सोम-सरोवर, सजिल्द, अजिल्द | श्री चमूपति | २), १॥) |
| वैदिक-कर्त्तव्य-शास्त्र | श्री धर्मदेव | १।।) |
| अग्निहोत्र | श्री देवराज | २।) |

## संस्कृत ग्रन्थ

| | |
|---|---|
| संस्कृत-प्रवेशिका, १, २, भाग | ।।।), ।।।=) |
| साहित्य-सुधा-संग्रह, १, २, ३ बिन्दु | १।), १।), १।) |
| पाणिनीयाष्टकम् पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध | ७), ७) |
| पञ्चतन्त्र ( सटीक ) पूर्वार्द्ध, उत्तरार्द्ध | २), २।) |
| सरल शब्दरूपावली | ।।=) |

## ऐतिहासिक तथा जीवनी

| | | |
|---|---|---|
| भारतवर्ष का इतिहास ३ भाग | श्री रामदेव | ६) |
| बृहत्तर भारत (सचित्र) सजिल्द, अजिल्द | | ७), ६) |
| ऋषि दयानन्द का पत्र-व्यवहार, २ भाग | | ।।।) |
| अपने देश की कथा | श्री सत्यकेतु | १।=) |
| हैदराबाद आर्य सत्याग्रह के अनुभव | | ।।) |
| योगेश्वर कृष्ण | श्री चमूपति | ४) |
| सम्राट् रघु | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | १।) |
| जीवन की झांकियां ३ भाग | ,, | ।।) ।।), १) |
| जवाहरलाल नेहरू | ,, | १।) |
| ऋषि दयानन्द का जीवन-चरित्र | ,, | २) |
| दिल्ली के वे स्मरणीय २० दिन | ,, | ।।) |

## धार्मिक तथा दार्शनिक

| | | |
|---|---|---|
| सन्ध्या-सुमन | श्री नित्यानन्द | १।।) |
| स्वामी श्रद्धानन्द जी के उपदेश, तीन भाग | | ३।।) |
| आत्म-मीमांसा | श्री नन्दलाल | २) |
| वैदिक पशुयज्ञ-मीमांसा | श्री विश्वनाथ | १) |
| अथर्ववेदीय मन्त्र-विद्या | श्री प्रियरत्न | १।) |
| सन्ध्या-रहस्य | श्री विश्वनाथ | २) |
| जीवन-संग्राम | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | १) |

## स्वास्थ्य सम्बन्धी पुस्तकें

| | | |
|---|---|---|
| आहार (भोजन की जानकारी ) | श्री रामरक्ष | ५) |
| आसव-अरिष्ट | श्री सत्यदेव | २।।) |
| लहसुन:प्याज़ | श्री रामेश वेदी | २।।) |
| शहद ( शहद की पूर्ण जानकारी ) | ,, | ३) |
| तुलसी, दूसरा परिवर्द्धित संस्करण | ,, | २) |
| सोंठ, तीसरा ,, | ,, | १।।) |
| देहाती इलाज, तीसरा संस्करण | ,, | १) |
| मिर्च ( काली, सफेद और लाल ) | ,, | १) |
| सांपों की दुनियां, (सचित्र) सजिल्द | ,, | ५) |
| त्रिफला, तीसरा संवर्द्धित संस्करण | ,, | ३।) |
| नीम:बकायन (अनेक रोगों में उपयोग) | ,, | १।) |
| पेठा : कद्दू (गुण व विस्तृत उपयोग) | ,, | ।।) |
| देहात की दवाएं, सचित्र ।।।) | बरगद | ।।।) |
| स्तूप निर्माण कला | श्री नारायण राव | ३) |
| प्रमेह, श्वास, अर्शरोग | | १।) |
| जल चिकित्सा | श्री देवराज | १।।।) |

## विविध पुस्तकें

| | | |
|---|---|---|
| विज्ञान प्रवेशिका, २ भाग | श्री यज्ञदत्त | १) |
| गुणात्मक विश्लेषण ( बी. एस्. सी. के लिए ) | | १) |
| भाषा-प्रवेशिका ( वर्धायोजनानुसार ) | | ।।।) |
| आर्यभाषा पाठावली | श्री भवानी प्रसाद | १।।) |
| आत्म बलिदान | श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति | २) |
| स्वतन्त्र भारत की रूप रेखा | ,, | १।।) |
| जमींदार | ,, | २) |
| सरला की भाभी, १, २ भाग | ,, | २), ३।।) |

प्रकाशन मन्दिर, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

# ग्रीष्म ऋतु के उपहार

## भीमसेनी सुरमा

आंखों के लिये इस से बढ़ कर कोई दूसरा सुरमा नहीं है। यह आँखों के सब रोगों को लाभ पहुँचाता है। बच्चे व बूढ़े सब इस का प्रयोग कर सकते हैं। मूल्य नमूना ।।≈) शीशी

## ब्राह्मी बूटी

बुद्धि को बढ़ाने व मस्तिष्क की कमज़ोरी दूर करने में इस से बढ़ कर दूसरी बूटी नहीं है। हमारे यहां हर समय ताज़ी रहती है।

मूल्य ३) सेर

## ब्राह्मी तेल

यह तेल शुद्ध ब्राह्मी के द्वारा बनाया जाता है। दिमाग़ को ठण्डक व तरावट देकर ताज़गी लाता है। दिमाग़ की कमज़ोरी वाले रोगियों को यह तेल विशेष हितकर है।

मूल्य १।≈) शीशी

## भीमसेनी नेत्रबिन्दु

यह ओषधि दुखती आँखों के लिये अकसीर है। कुकरे, दर्द व लाली इस से दूर होते हैं।

मूल्य १) शीशी

## ब्राह्मी शर्बत

ब्राह्मी तेल की तरह यह शर्बत भी इस मौसम में सेवन करने योग्य उत्तम चीज़ है। प्रातःकाल एक गिलास शर्बत तमाम दिन ताज़गी रखेगा। मूल्य १।।≈) शीशी

## आमला तेल

यह तेल बढ़िया आमले से तैयार किया जाता है। इस से बालों का गिरना, अकाल में पकना तथा गञ्ज आदि रोग दूर होते हैं। बालों को रेशम की तरह मुलायम कर काला करता है मूल्य १।) शीशी

## पायोकिल

पायोरिया रोग की परीक्षित ओषधि है। इस के प्रयोग से दांतों से खून व पीप आना रुक जाता है तथा दांत चमकीले और दृढ़ हो जाते हैं। दैनिक प्रयोग के लिये भी उत्तम है।

मूल्य १।) शीशी

## बाल शर्बत

बच्चों के हरे पीले दस्त, कब्ज, उल्टी, खांसी तथा ज्वर आने पर विशेष गुणकारी है।

मूल्य ।≈) शीशी

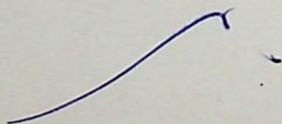
## गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार।


मुद्रक : श्री रमेश बेदी, गुरुकुल मुद्रणालय, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

प्रकाशक : मुख्याधिष्ठाता, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA



CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA